ज्ञ

शिमलामें, वाइसरायसे मिलने के लिए जाते हुए

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

७३

(१२ सितम्बर, १९४० – १५ अप्रैल, १९४१)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डका आरम्भ बम्बईमें अ० भा० कां० कमेटी द्वारा पारित प्रस्तावसे होता है। इस प्रस्तावमें यह घोषणा की गई थी कि अधिकांश भारतीय जनताकी इच्छाके विरुद्ध भारतको युद्धमें घसीटने तथा जनमतकी स्वतन्त्र अभिव्यक्तिको दवाने की नीतिका अनुसरण करके ब्रिटिश सरकार "कांग्रेसको भारतीय जनताके सम्मान और प्राथमिक अधिकारोंकी रक्षाके लिए संघर्ष करने को बाध्य कर रही है।" इस प्रस्तावमें गांधीजी से कांग्रेसका मार्गदर्शन करने की प्रार्थना भी की गई थी (पृ० २)। लेकिन कोई कार्रवाई करने से पहले गांधीजी ने वाइसराय से भेंट करने की इच्छा जाहिर की और २७ सितम्बरको शिमलामें यह मुलाकात सम्पन्न हुई। गांधीजी ने बताया कि "वाइसराय अपनी बातचीतमें सर्वथा सौजन्यपूर्ण थे, लेकिन वे झुकने के लिए तैयार नहीं थे" (पृ० ८१)। १७ अक्तूबरको विनोबा भावेने प्रथम सत्याग्रहीके रूपमें सविनय अवज्ञा आरम्भ की लेकिन २१ अक्तूबरको उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। जवाहरलाल नेहरूको, जिन्हें सविनय अवज्ञा आन्दोलनका दूसरा सत्याग्रही बनाना तय हुआ था, ३१ अक्तूबरको सविनय अवज्ञा करने से पहले ही गिरफ्तार कर लिया गया और चार सालकी कैदकी सजा दे दी गई। हालाँकि अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावमें आश्वासन दिया गया था कि कांग्रेसकी ऐसी कोई इच्छा नहीं है कि "अहिंसात्मक प्रतिरोधको . . . उस हदसे आगे बढ़ाये जिस हदतक जनताके अधिकारोंकी रक्षाके लिए आवश्यक हो" (पृ० २), इस उत्तेजनात्मक कार्रवाईने गांधीजी को सविनय अवज्ञाको कार्य-समितिके सदस्यों, विधान-सभाओंके सदस्यों तथा अ० भा० कां० क० के सदस्योंतक बढ़ाने के लिए मजबूर कर दिया (पृ० १७५) तथा ३ जनवरी, १९४१ को कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजादकी गिरफ्तारीके बाद इसके क्षेत्रको और बढ़ा दिया गया और निश्चय किया गया कि गाँव समितियोंसे लेकर प्रान्तीय समितियोंतक के सभी सदस्योंमेंसे प्रतिनिधि कांग्रेसजन जेल जायें। इसके पीछे विचार यह था कि "अन्ततः प्रत्येक कांग्रेसजन अपनी जिम्मेदारी पर स्वयं कदम उठाये। वह स्वयं अपना ही अध्यक्ष बने, किसी दूसरेका नहीं।" "किसी पूर्णरूपेण अहिंसायुक्त संस्था या समाजके विषयमें" गांधीजी की यही कल्पना थी। (पृ० ३०७)।

सविनय अवज्ञाको मात्र वाणी-स्वातन्त्र्यतक ही सीमित रखा गया, यानी "युद्ध-मात्रके विरुद्ध या मौजूदा युद्धमें मदद देने के विरुद्ध प्रचारके अधिकारतक" (पृ० ११२)। कांग्रेस नेताओंके लिए यह मुख्यतः राजनीतिक प्रश्न था। ब्रिटिश सरकार द्वारा कांग्रेसकी सशर्त सहयोगकी माँगको अस्वीकार कर देने के बाद (खण्ड ७१) कांग्रेसने इस बातपर जोर दिया कि "साम्राज्यवादकी रक्षाके लिए" लोगोंको ऐसे युद्धमें शरीक होने से इनकार करने का अधिकार है जिसमें उन्हें उनकी इच्छाके विरुद्ध घसीटा जा

रहा हो। ब्रिटिश सरकारने यह दावा किया कि भारतसे उन्हें मिलनेवाला सहयोग स्वेच्छापूर्वक दिया गया सहयोग है। लेकिन, जैसा कि चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने बताया, यह दावा तभी उचित ठहराया जा सकता था जब उन लोगोंको, जो युद्धमें शरीक न होने के पक्षमें प्रचार कर रहे थे, दबाया न जाये (पृ० ६१-६२)। गांधीजी ने बार-बार इस बातको दोहराया कि वे ऐसा कोई भी कार्य नहीं करेंगे जिसका उद्देश्य ब्रिटिश सरकारको परेशानीमें डालना हो। लेकिन उन्होंने बम्बई प्रस्तावमें यह बात स्पष्ट कर दी कि "स्वेच्छासे स्वीकार किया हुआ यह आत्मनियन्त्रण आत्म-विनाश की हदतक तो नहीं ले जा सकता" (पृ० २)। अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें गांधीजी ने ऐलान किया कि "भाषण और लेखनकी स्वतन्त्रता स्वराज्यकी नींव है। यदि आधारशिला ही खतरेमें है तो आपको उस आधारशिलाकी रक्षाके लिए पूरी ताकतसे प्रयत्न करना है" (पृ० २३)। गांधीजी ने माँग की कि ब्रिटिश सरकार राजाओंसे, जमींदारोंसे या किसी भी बड़े-छोटेसे मदद पाती है तो जरूर पाये लेकिन "हमारी आवाज भी सुनी जाने दीजिए।" तभी ब्रिटिश सरकार इस बातका दावा कर सकती थी कि वह भारतमें सम्मानपूर्ण ढंगसे नियमोंका पालन कर रही है (पृ० २०)।

किन्तु गांधीजी के लिए प्रश्न केवल राजनीतिक ही नहीं था। यूरोपके युद्धरत देशों द्वारा "बर्बर पशुता" के प्रदर्शनसे क्षुब्ध होकर गांधीजी ने यह प्रचार करने की स्वतन्त्रताकी माँग की कि "अहिंसा युद्धका स्थान ले सकती है" (पृ० ३७)। गांधीजी ने पूरी शक्तिके साथ कहा कि "स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र जैसे पवित्र हेतु भी जब निर्दोष रक्तसे रँगे जाते हैं तो वे अपनी पवित्रता खोकर पापमूलक बन जाते हैं।" क्योंकि "विनाशकी उन्मत्त लीला चाहे तानाशाहीके नामसे चलाई जाये, चाहे प्रजातन्त्रवाद तथा स्वतन्त्रताके पवित्र नाम लेकर, मारे गये अनाथ और बेघर हुए लोगोंके लिए तो कोई फर्क नहीं पड़ता।" गांधीजीको यह पूरा विश्वास था कि "ईश्वरने मुझे जगतको बेहतर रास्ता बतानेका निमित्त बनाया है" (पृ० ५६)। "हरिजन" में विनोबा भावे द्वारा व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा शुरू करने की योजनाकी घोषणा करते हुए उन्होंने लिखा, "किसे मालूम है कि मुझे सिर्फ ब्रिटेन और हिन्दुस्तानके दरम्यान ही नहीं बल्कि सारे जगतकी युद्धरत कौमोंके बीच सुलह और शान्तिकी स्थापनाका निमित्त नहीं बनना है?" (पृ० ११३)। गांधीजी इस सम्बन्धमें आश्वस्त थे कि हिटलरवादको केवल अहिंसाके तरीकेसे पराजित किया जा सकता है (पृ० २२४)। वह अपने इस विश्वासपर दृढ़ थे कि "पतितसे पतित व्यक्तिपर भी अहिंसाका अनुकूल प्रभाव पड़ सकता है" (पृ० ३५१) और इसी विश्वासका सहारा लेकर गांधीजीने हिटलरको एक खुला पत्र भी लिखा (यह पत्र भी भारत सरकारने दबा दिया जैसे गांधीजी द्वारा हिटलरको ही २३ जुलाई १९३९ को लिखा पत्र उसने दबा दिया था) जिसमें उन्होंने हिटलरसे "मानवताके नामपर युद्ध रोक देनेकी अपील" की और जर्मनी तथा ब्रिटेनके बीच विवादास्पद मुद्दोंको एक ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरणके सामने रखने की सिफारिश की जिसे दोनों मिलकर पसन्द करें। यह अपील, जैसा कि गांधीजी ने कहा "उन करोड़ों यूरोपवासियोंकी

शान्तिकी मूक पुकार" से प्रेरित थी जो गांधीजी को सुनाई दे रही थी क्योंकि उनके कान करोड़ों मूक लोगोंकी पुकार सुनने के अभ्यस्त हैं" (पृ० २७७)। गांधीजी को विश्वास था कि अहिंसाकी शक्तिपर अपनी अटूट आस्थाको कार्यरूप देकर वे भारत, ब्रिटेन और मानवताकी सेवा कर रहे हैं। उन्होंने कहा: "मैं ब्रिटेनको नुकसान पहुँचाकर भारतकी भलाई नहीं चाहता और इसी तरह जर्मनीको नुकसान पहुँचाकर ब्रिटेनका कल्याण नहीं चाहता। हिटलर तो दुनियामें आते और जाते रहेंगे। जो लोग सोचते हैं कि हिटलरके मर जाने अथवा पराजित हो जाने पर हिटलरी भावना भी मर जायेगी वे भारी भूल कर रहे हैं। विचारणीय प्रश्न तो यह है कि हम उस भावनाका मुकाबला कैसे करते हैं — हिंसासे या अहिंसासे। अगर हम उसका मुकाबला हिंसासे करते हैं तो हम उस दुर्भावनाको प्रोत्साहन देते हैं। अगर हम उसका मुकाबला अहिंसासे करते हैं तो हम उसे निर्बीज कर देते हैं" (पृ० ३५४)।

इसीलिए गांधीजी के लिए राजनीतिक स्वतन्त्रताका यह राष्ट्रीय आन्दोलन अहिंसा की शक्तिका प्रदर्शन करने की दृष्टिसे एक अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्वका नैतिक आन्दोलन था, और इस मुद्दे पर उन्होंने कांग्रेसको अपने विचारोंसे सहमत कराने की कोशिश भी की। जून-जुलाईमें कांग्रेसने गांधीजी को देशकी सुरक्षाके लिए भी हिंसाको न अपनाने के प्रश्नको लेकर कांग्रेसका नेतृत्व करने से मुक्त कर दिया था (खण्ड ७२), लेकिन फिर गांधीजीने अ० भा० कमेटीको अपने बम्बई प्रस्तावमें यह घोषणा करने के लिए सहमत कर लिया कि "कमेटीका अहिंसाकी नीतिमें और अहिंसाके व्यवहारमें दृढ़ विश्वास है — न केवल स्वराज्यके लिए किये जानेवाले संघर्षके सन्दर्भ में, अपितु जहाँतक उसका प्रयोग सम्भव हो सकता है वहाँतक स्वतन्त्र भारतके सन्दर्भमें भी।" इसके लिए गांधीजी चाहते थे कि "कांग्रेसको अहिंसात्मक रूपसे अपना विकास करने की पूरी आजादी दे दी जाये" (पृ० २, ३५३)। अहिंसाके सम्बन्धमें गांधीजी की अपनी समझ उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी। सत्याग्रहके तत्त्वको अब वे अधिक गहराईसे समझने लगे थे। उनकी दृष्टिमें सत्याग्रह "केवल अखबारी प्रचारपर ही निर्भर नहीं है। यदि सत्याग्रह वास्तविक है... तो स्वयं उसमें इतना वेग है कि वह चलता रहेगा।... सुचिन्तित और संयमित विचारमें वाणी और लेखसे कहीं ज्यादा शक्ति है..." (पृ० १३४-३५)। जवाहरलाल नेहरूको भी एक पत्रमें उन्होंने लिखा: "हमारे कार्यक्रमको प्रकाशमें लानेवाले हर उचित उपायका तो मैं उपयोग कर लूंगा मगर मेरा यह विश्वास रहेगा कि विनियमित विचार अपना असर आप पैदा करता है।... इतना ही है कि प्रत्यक्ष रूपमें यह दिखा देने के लिए कि विशुद्ध अहिंसामें क्या ताकत होती है, मुझे अपने ढंगसे चलने दिया जाये" (पृ० १३६)।

वे जिस संघर्षका विचार कर रहे थे उसमें ऐसी ही विशुद्ध अहिंसाकी अभिव्यक्ति होनी थी। लेकिन इसका रूप क्या होगा, गांधीजी को यह मालूम नहीं था। अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें उन्होंने कहा कि "भविष्यमें क्या कार्रवाई करनी होगी, इस सम्बन्धमें मेरे आगे दुर्भेद्य अन्धकार है" तथा "और किसी जगहकी अपेक्षा सेवाग्राममें मैं बेहतर और स्पष्ट ढंगसे विचार कर सकूंगा" (पृ० २२)। उन्होंने बैठकमें

यह बता दिया कि किसी भी हालतमें सामूहिक अवज्ञा तो होनी ही नहीं है, क्योंकि "ऐसे समयमें जब अंग्रेज जनता और अंग्रेज सरकारका अस्तित्व ही खतरेमें है मैं उन्हें परेशान करने का दोषी नहीं बनूँगा" (पृ० १६)। यहाँतक कि वाइसरायके साथ बातचीत विफल होने के बाद भी, जब प्रत्यक्ष कार्रवाई अवश्यम्भावी थी, गांधीजी ने सत्याग्रहियोंको यह सलाह दी कि वे यह बात ध्यानमें रखें कि "प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी रूपमें भी सविनय अवज्ञा नहीं की जानी है।" उन्होंने सत्याग्रहियोंसे कहा कि "इसके खिलाफ यदि कुछ भी हुआ तो इससे हमारा उद्देश्य कमजोर पड़ेगा, क्योंकि उससे आपका सेनापति, जिसे तनिक भी अनुशासनहीनता सहन नहीं है, हतोत्साह हो जायेगा" (पृ० ८०)। उन्होंने एक पत्रमें लिखा: "इस वक्त मैं सम्पूर्ण अहिंसाका दर्शन कराना चाहता हूँ — जैसी मैं जानता हूँ — सिवाय दो-तीनके किसीको भेजना नहीं चाहता हूँ (पृ० १४३)। वाइसराय को लिखे पत्रमें उन्होंने यह स्पष्ट किया कि वे अहिंसाको सुनिश्चित करने के लिए असाधारण रूपसे सावधानी बरत रहे हैं और... इस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर इस आन्दोलन को यथासम्भव कमसे-कम व्यक्तियों, विशिष्ट व्यक्तियों तक सीमित रख रहे हैं (पृ० १४७)।

आरम्भमें तो गांधीजीने विनोबा भावेको एकमात्र सत्याग्रहीके रूपमें नामजद किया और स्पष्ट किया कि उनके द्वारा सविनय अवज्ञा इस तरह चलाई जायेगी कि दूसरे लोग सीधे या परोक्ष रूपसे उसमें भाग नहीं लेंगे। इसके पीछे विचार यह था कि "तमाम कार्रवाई मनुष्यसे जितनी बन पड़े उतनी अहिंसक बनाई जाये।" यहाँतक कि एक व्यक्तिकी अहिंसक कार्रवाई भी प्रभावशाली हो सकती है क्योंकि "हिंसात्मक कार्यका प्रभाव तो गणित द्वारा मापा जा सकता है, परन्तु अहिंसक कार्य के प्रभावका माप ऐसे नहीं हो सकता . . ." (पृ० १०९)। विनोबा संस्कृतके पण्डित थे। उन्होंने आश्रममें अहमदाबादमें उसकी स्थापनाके समय ही प्रवेश किया था और वे इसके आदर्शोंके प्रति ईमानदार रहे थे। वे आश्रममें सब प्रकारकी सेवा — रसोईसे लेकर पाखाना-सफाई तक — में हिस्सा ले चुके थे। वे साम्प्रदायिक एकतामें गांधीजी के अटूट विश्वासके हिमायती रहे थे और उन्होंने गांधीजी द्वारा समय-समय पर चलाये गये रचनात्मक कार्यक्रमोंकेमें सक्रिय भाग भी लिया था। इसलिये वे गांधीजीकी दृष्टिमें इस "अन्तिम सत्याग्रह" के लिये जिसे वे "जितना दोषरहित बनाया जा सकता है" बनाना चाहते थे, प्रथम सेनानीके रूपमें पूर्णतया उपयुक्त व्यक्ति थे (पृ० १११)। विनोबा भावेके भाषण "बहुत ही ऊँचे धरातल" से निकलते थे और गांधीजीके निर्देशोंका वे जिस तरह पालन करते थे वह "विनम्र तथा अहिंसात्मक आचरण" के लिए एक सबक था (पृ० १२८)।

सरकार तथा वाइसरायके साथ गांधीजीके पत्र-व्यवहारमें भी यही बात देखनेको मिलती है। उन्होंने न केवल स्वयंको सविनय अवज्ञासे अलग रखा, क्योंकि "कांग्रेस की किसी और कार्रवाईकी बनिस्बत" उनके कैद होनेसे "सरकारी परेशानी" और भी बढ़ सकती थी (पृ० ११३), बल्कि वाइसरायके साथ पत्र-व्यवहारमें अत्यन्त मैत्रीपूर्ण रुख अपनाया। उन्होंने सार्वजनिक रूपसे यह घोषणा की कि उनके और वाइसरायके

बीच दोस्तीकी जो गाँठ बंध चुकी है वह कभी टूट नहीं सकती (पृ० ८४)। वाइसराय भी उनकी इस भावनाका आदर करते थे और जैसा कि उन्होंने कहा, गांधीजी और सरकारके विचारोंके इस टकरावसे वाइसरायको बहुत दुःख पहुँचा था (पृ० ७९, ५०७)। इन्हीं व्यक्तिगत सम्बन्धोंका परिणाम था कि जब सरकारने 'हरिजन' और अन्य दो साप्ताहिकोंको यह निर्देश दिया कि वे पहलेसे चीफ प्रेस एडवाइजरको बताये बिना विनोबाके व्याख्यानोंकी रिपोर्ट अथवा सविनय अवज्ञासे सम्बन्धित कोई आगेकी बात न छापें, तो गांधीजीने फैसलेकी अवहेलना किये बिना और कानूनी कार्रवाईका जोखिम उठाये बिना वाइसरायके निर्णयको मान लिया और 'हरिजन' साप्ताहिकोंका प्रकाशन स्थगित कर दिया। उन्होंने कहा कि इस प्रकारका उनका आत्म-समर्पण "सत्याग्रहका एक पदार्थपाठ है" (पृ० १३३-३४, १४९-५०) और इसी तरह जब हिटलरके नाम गांधीजीके खुले पत्रको भेजा जाने से रोक दिया गया तो उन्होंने उसे प्रकाशित न होने देने में सरकारको हार्दिक सहयोग दिया क्योंकि यह "उनकी इच्छाकी बानगी है कि अधिकारियोंको परेशानीमें न डाला जाये" (पृ० ३१३-१४)। घनश्यामदास बिड़लाको लिखे पत्र में गांधीजीने यह स्वीकार किया कि कुल मिलाकर सरकार "सज्जनतासे लड़ाई लड़ रही है" (पृ० ७६०)।

नेहरूजीकी गिरफ्तारीके बाद जब सविनय अवज्ञाके क्षेत्रको विस्तृत करने का निश्चय किया गया तो गांधीजी ने सत्याग्रहियोंको ऐसे निर्देश दिये जिनसे कि इस आन्दोलनका उच्च स्तर कायम रह सके और "वह सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन"का रूप न अख्तियार कर सके। सत्याग्रहियोंका चुनाव गांधीजी ने अपने ही हाथमें रखा। प्रत्येक सत्याग्रहीके लिये अपने जिला-मजिस्ट्रेटको सविनय अवज्ञाके समय, स्थान और सविनय अवज्ञाके स्वरूपकी सूचना देनी आवश्यक थी। यह भी तय किया गया कि शहरोंमें इस प्रयोजनके लिए प्रदर्शन और सभाएँ न की जायें, गाँवोंमें सविनय अवज्ञाके लिए उपयुक्त तरीका यह सुझाया गया कि सत्याग्रही किसी एक दिशामें पैदल चल पड़े और चलते हुए रास्तेमें मिलनेवाले व्यक्तियोंको नीचे दिया नारा सुनाता रहे और इस क्रमको तबतक जारी रखे जबतक कि उसे गिरफ्तार न कर लिया जाये। नारा यह था: "धन और जनसे ब्रिटेनके युद्ध प्रयत्नोंको सहायता पहुँचाना गलत है। करणीय केवल एक कार्य है — अहिंसात्मक प्रतिरोधके जरिये सभी प्रकारके युद्धका प्रतिरोध करना" (पृ० १६९-७०)। गांधीजी ने सत्याग्रहके अभिन्न अंगके रूपमें रचनात्मक कार्यको हमेशा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माना था और अब जबकि स्थितिको देखते हुए इसके सविनय अवज्ञावाले अंगका उपयोग कमसे-कम कर दिया गया था इसका महत्त्व पहले से भी अधिक बढ़ गया था, इसीलिए गांधीजीने पूरे देशसे "निरन्तर रचनात्मक कार्यको अमलमें लाकर पूरे दिलसे अपना सहयोग" देनेकी अपील की, जिसका अर्थ था, "जीवनके हर क्षेत्रमें अधिकाधिक न्यायवृत्ति"। उन्होंने कहा कि "जबतक समाजमें शुद्धतम न्यायवृत्ति और समानताकी हवा न फैलेगी तबतक यहाँ अहिंसात्मक वातावरण पैदा होनेवाला नहीं है" (पृ० ११२)। सत्याग्रह भी "तभी प्रभावोत्पादक बन सकता है जब उसके पीछे बड़े पैमाने पर रचनात्मक प्रयास हो" और ऐसा कार्य "किसी अहिंसक संस्थाके सभी सदस्योंके लिए अनिवार्य कर्त्तव्य है" (पृ० ४२६)।

सत्याग्रहीके लिए रचनात्मक कार्यका वही महत्त्व है "जो हिंसावादियोंके लिए शस्त्रोंका" (पृ० ३८)। इस कारण स्वतन्त्रता दिवसकी प्रतिज्ञामें संशोधन करके एक अनुच्छेद जोड़ दिया गया जिसमें सभी भारतवासियों और कांग्रेसजनों तथा दूसरे लोगोंसे "दुगने उत्साहके साथ रचनात्मक कार्यक्रममें भाग लेने"की सिफारिश की गई थी (पृ० ३०५)।

इस खण्डमें शामिल किये गये पत्रोंमेंसे एक पत्र सुभाषचन्द्र बोसको भी है, जिन्होंने फॉरवर्ड ब्लॉकके सविनय अवज्ञामें शामिल होने का सुझाव दिया था। गांधीजी और बोसके विचारोंमें मौलिक भेद होने के कारण यह सम्भव तो नहीं था लेकिन फिर भी गांधीजी ने कहा, "फिलहाल हम एक दूसरेसे स्नेह रखें और एक ही परिवारके सदस्य बने रहें, जो हम वास्तवमें हैं" (पृ० २८८)।

हिन्दी-उर्दूके प्रश्नपर हिन्दी साहित्य सम्मेलनने गांधीजी द्वारा सुझाई नीतिका त्याग कर दिया था और इस कारण गांधीजी और पुरुषोत्तमदास टंडनके बीच मतभेद पैदा हो गया था। गांधीजीने अपना धर्मसंकट टंडनजीके सामने रखा: "अगर मैं सम्मेलनमें रहूँ तो मैं अवनतिका भागीदार बनता हूँ। छोड़ूँ तो झगड़ेका मूल बनूँ। (पृ० ३९९)। अलीगढ़ विश्वविद्यालयके एक मुसलमान शोध छात्रने गांधीजी द्वारा गैर-मुसलमान होने के बावजूद अहिंसाके पक्षमें बार-बार 'कुरान शरीफ'का हवाला देने पर एतराज किया था। इसपर गांधीजीने उत्तर दिया: "अगर एक दिन ऐसा आये कि जब धर्म-पुस्तकोंका अध्ययन और उनके अर्थ करने की छूट सिर्फ उन लोगोंको ही हो जो उसी धर्मका बिल्ला लगाये हुए हैं, तो वह जगतके लिए एक अशुभ दिन होगा" (पृ० ५४)। वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषदके गृह सदस्य सर रेजिनल्ड मैक्सवेलने गांधीजी को जब यह सलाह दी कि वे "भारतवासियोंके नाम भी एक घोषणापत्र प्रकाशित करवा देते और शान्त होकर बैठ जाते" तो प्रत्युत्तरमें गांधीजी ने कहा कि "सत्यकी सतत शोध और प्रकट सत्यके आधारपर कार्य करना ही तो सत्याग्रह है।" उन्होंने आगे कहा: "मैं तो मूलतः एक कर्मशील और सुधारक व्यक्ति हूँ तथा राजनीतिक क्षेत्रमें एक अभूतपूर्व प्रयोग कर रहा हूँ।" (पृ० २२३)। एक कर्मशील व्यक्तिके रूपमें ही गांधीजी ने एक अन्य पत्रमें लिखा: "अनियन्त्रित भावना उतनी ही बेकार है, जितनी अप्रयुक्त भाप" (पृ० ४७२)। दूसरोंकी तुनुक-मिजाजी सहन करना गांधीजी हमेशा ही गुण नहीं मानते थे। इसके परिणाम-स्वरूप अगर हमारी "निडरता बढ़ती जाये तो वह अहिंसा है अन्यथा कायरता" (पृ० ४३१)।

अपने दैनिक अनुभवके बारेमें बताते हुए गांधीजी ने एक पत्र-लेखकको लिखा: "रामनाम स्मरण जब श्वासोच्छ्वासवत स्वाभाविक होता है, तब दूसरे कामोंमें विघ्नकर नहीं होता लेकिन बल देता है" जैसे "तंबूरेका सुर दूसरे सुरोंको बल देता है" (पृ० २७३)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं :

संस्थाएँ : साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास एवं संग्रहालय; नवजीवन न्यास तथा गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार, गांधी दर्शन और नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली; नगरपालिका संग्रहालय, इलाहाबाद; इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन; राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता; विश्वभारती, शान्तिनिकेतन; उड़ीसा और तमिलनाडु सरकार तथा अखिल भारतीय महिला सम्मेलन।

व्यक्ति : श्रीमती अमृतकौर; श्री अमृतलाल चटर्जी, कलकत्ता; श्री आनन्द तो० हिंगोरानी; श्री ए० के० सेन, कलकत्ता; श्रीमती एफ० मेरी बार; डा० एम० एस० अग्रवाल, दिल्ली; श्रीमती एस० अम्बुजम्माल, मद्रास; श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला; श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, बम्बई; डॉ० कान्तिलाल गांधी, बम्बई; श्री किशनसिंह चावड़ा, बड़ौदा; श्री के० सूर्यप्रकाशराव; श्री गजानन एन० कानिटकर; श्री गिरिधारी कृपलानी, आगरा; श्री गुलाम रसूल कुरैशी; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री जगन्नाथ, बम्बई; श्री जयरामदास दौलतराम; श्री डाह्याभाई म० पटेल, अहमदाबाद; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्री परीक्षितलाल मजमूदार, अहमदाबाद; श्री पुरुषोत्तम के० जेराजाणी, बम्बई; श्री पृथ्वीसिंह; श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड़; श्री बनारसीलाल बजाज, बनारस; श्रीमती मंजुलाबहन मेहता, बम्बई; श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, बम्बई; श्रीमती मीराबहन, गार्डेन, आस्ट्रिया; श्री मुन्नालाल शाह, सेवाग्राम; श्रीमती रामेश्वरी नेहरू; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्री वल्लभराम वैद्य, अहमदाबाद; श्रीमती वांदा दिनोव्स्का; श्रीमती विजयाबहन पंचोली, सणोसरा; श्रीमती शारदाबहन गो० चोखावाला, सूरत; श्री शिवाभाई जी० पटेल, बोचासन, श्री सी० आर० नरसिंहन, मद्रास और श्री सी० ए० तुलपुले, पूना।

पुस्तकें : '(द) इंडियन एनुअल रजिस्टर, १०४१' (खण्ड १ और २); 'गांधी १९१५-४८ : ए डिटेल्ड क्रॉनॉलॉजी'; 'गांधी और राजस्थान'; 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद'; '(द) पार्टिंग आफ द वेज'; 'महात्मा : लाइफ आफ मोहनदास करमचन्द गांधी, खण्ड ६'; '(ए) बंच आफ ओल्ड लेटर्स'; 'बापुना पत्रो–४ : मणिबहेन पटेलने'; 'बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने'; 'बापुनी प्रसादी'; 'बापू—कनवर्सेशन्स ऐण्ड करेस्पांडेंस'; 'बापूकी छायामें', 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष'; बापूके पत्र–८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम'; 'बापूज

लेटर्स टु मीरा'; 'स्टेटस ऑफ इंडियन प्रिंसेज'; 'हिन्दू अमेरिका' और '(द) हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस'।

पत्र-पत्रिकाएँ : 'टाइम्स ऑफ इंडिया', 'टू इयर्स ऑफ वर्क', 'फ्री प्रेस जर्नल' 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'भावनगर समाचार', 'लीडर,' विकासगृहकी रिपोर्ट', 'सर्वोदय', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हरिजनसेवक', 'हितवाद', 'हिन्दुस्तान टाइम्स', और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय और श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली; नगरपालिका संग्रहालय, इलाहाबाद; इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें मदद देनेके लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जों की स्पष्ट भूलोंको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है, और मूलमें शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणोंमें संशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषण और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें, जो गांधीजीके नहीं हैं, कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

इस ग्रंथमालामें प्रकाशित प्रथम खण्डका जहाँ-जहाँ उल्लेख किया गया है, वह जून १९७० का संस्करण है।

साधन-सूत्रोंमें "एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका; 'जी० एन० राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध सामग्रीका 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिट द्वारा तैयार कराई गई रीलोंका' 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स आफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीख-वार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका प्रस्ताव

[१५ सितम्बर, १९४०][1]

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने २७ जुलाई, १९४० को पूनामें हुई उसकी गत बैठकके बाद जो घटनाएँ घटी हैं, उनपर और पिछले अगस्तमें वर्धामें कार्य-समितिने जो प्रस्ताव पारित किये हैं[2] उनपर सावधानीसे गौर किया है। कमेटी इन प्रस्तावोंका समर्थन और अनुमोदन करती है।

भारतमें गतिरोधको समाप्त करने के लिए और ब्रिटिश राष्ट्रके साथ मिलकर अपने राष्ट्रीय ध्येयको आगे बढ़ाने के लिए कार्य-समितिने महात्मा गांधीका सहयोग खोना स्वीकार करके भी अपने ७ जुलाईके दिल्लीके प्रस्ताव द्वारा, जिसे बादमें अ० भा० कां० कमेटीने पूनामें अपनी स्वीकृति दे दी थी,[3] ब्रिटिश सरकारके समक्ष एक सुझाव रखा था। ब्रिटिश सरकारने इस सुझावको जिस ढंगसे अस्वीकृत किया उससे यह बात असन्दिग्ध रूपसे स्पष्ट हो गई कि भारतकी स्वतन्त्रताको स्वीकार करने का उसका कोई इरादा नहीं है और यदि उसका बस चलेगा तो वह अंग्रेजों द्वारा शोषण किये जाने के लिए इस देशको अनिश्चित कालतक गुलामीमें ही जकड़े रहेगी। ब्रिटिश

१. प्रस्तावका मसौदा गांधीजी ने तैयार किया था (देखिए पृ० १२) और १५ सितम्बरको जवाहरलाल नेहरू द्वारा यह प्रस्ताव पेश किया गया तथा १६ को पारित किया गया था।

२. गवर्नरकी कार्यकारिणी परिषद्के विस्तार और युद्ध सलाहकार परिषद्की स्थापनाके सम्बन्धमें वाइसरायने ८ अगस्तको घोषणा (देखिए खण्ड ७२, परिशिष्ट ७) की थी। इस घोषणापर कांग्रेस कार्य-समितिने २१ अगस्तको एक प्रस्ताव पारित किया (देखिए खण्ड ७२, परिशिष्ट ८)। वाइसरायने यह भी बताया था कि युद्धके तुरन्त बाद नया संविधान बनाने के लिए "भारतीय हितोंके प्रमुख वर्गोंके प्रतिनिधियोंकी एक समिति" गठित की जायेगी। उन्होंने आगे कहा था कि "शान्ति और भारतके कल्याणके हमारे जो वर्तमान उत्तरदायित्व हैं उन्हें हम किसी ऐसी सरकारको सौंपने की बात सोच नहीं सकते जिसकी सत्ता भारतके राष्ट्रीय जीवनका बहुत बड़ा तथा शक्तिशाली वर्ग स्पष्ट रूपसे अस्वीकार करता है।" कार्य-समितिने अपने प्रस्तावमें कहा कि वाइसरायकी घोषणा न केवल कांग्रेसकी माँग पूरी नहीं करती बल्कि स्वतन्त्रता-प्राप्तिके मार्गमें अड़चन भी डालती है।

३. २५ से २८ जुलाई तक पूनामें होनेवाली अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें कार्य-समिति द्वारा पारित उस प्रस्तावकी अभिपुष्टि की गई थी, जिसमें स्वाधीनताकी और केन्द्रमें एक राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डलकी स्थापनाकी माँग की गई थी। इसमें स्पष्ट किया गया था कि "कांग्रेस स्वाधीनता-संग्राम में अहिंसाके सिद्धान्तका पालन अटल रूपसे करती रहेगी, लेकिन वर्तमान परिस्थितिमें कांग्रेस इस बातकी घोषणा करने में असमर्थ है कि भारतकी राष्ट्रीय सुरक्षाके मामलेमें भी अहिंसाका सिद्धान्त लागू होना चाहिए।" दिल्ली-प्रस्तावके पाठ और उसपर गांधीजीकी टिप्पणीके लिए देखिए खण्ड ७२, पृ० २८८-९०।

सरकारके इस निर्णयसे पता चलता है कि वह भारतपर अपनी इच्छा थोपकर रहेगी। उसकी हालकी नीतिसे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि वह इस बातको भी सहन नहीं करेगी कि जर्मनीके खिलाफ युद्धमें अधिकांश भारतीय जनताकी इच्छाके खिलाफ भारतको घसीटने की और इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए इस देशके साधनों और जन-शक्तिका अनुचित उपयोग करने की सार्वजनिक भर्त्सनातक स्वतन्त्रतापूर्वक की जाये।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी एक ऐसी नीतिके आगे नहीं झुक सकती जो भारतके स्वतन्त्रताके सहज अधिकारको अस्वीकार करती हो, जो जनमतकी स्वतन्त्र अभिव्यक्तिको दबाती हो, और जिसका नतीजा भारतीयोंका अधःपतन तथा उनकी गुलामीका जारी रहना हो सकता है। इस नीतिका अनुसरण करके ब्रिटिश सरकारने एक असह्य स्थिति पैदा कर दी है और वह कांग्रेसको भारतीय जनताके सम्मान और प्राथमिक अधिकारोंकी रक्षाके लिए संघर्ष करनेको बाध्य कर रही है। कांग्रेस भारतकी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए गांधीजी के नेतृत्वमें अहिंसक उपायोंका ही अवलम्बन करने के लिए प्रतिबद्ध है। इसलिए राष्ट्रीय स्वाधीनताके लिए किये जा रहे आन्दोलनमें इस गम्भीर संकटके अवसरपर क्या किया जाना चाहिए, इस सम्बन्धमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी उनसे [गांधीजी से] कांग्रेसका मार्ग-दर्शन करने की प्रार्थना करती है। दिल्लीका प्रस्ताव, जिसकी अ० भा० कां० कमेटी द्वारा पूनामें पुष्टि की गई थी और जिसके कारण वे ऐसा नहीं कर सके थे, अब लागू नहीं होता। वह अब रद्द हो चुका है।

अ० भा० कां० कमेटी ब्रिटेनकी और युद्धमें फँसे हुए अन्य सभी देशोंकी जनताके साथ सहानुभूति प्रकट करती है। संकट और खतरेकी घड़ीमें ब्रिटिश राष्ट्रने जैसी बहादुरी और कष्टोंको सहने की शक्ति दिखाई है, उसके लिए कांग्रेसजन उसकी सराहना किये बिना नहीं रह सकते। उनके प्रति कांग्रेसजनोंकी कोई दुर्भावना नहीं हो सकती और सत्याग्रहकी भावना कांग्रेसको कोई भी ऐसा कार्य करने से रोकती है जिसका उद्देश्य उनको परेशानीमें डालना हो। परन्तु स्वेच्छासे स्वीकार किया हुआ यह आत्म-नियन्त्रण आत्म-विनाशकी हदतक तो नहीं ले जाया जा सकता। अहिंसा पर आधारित अपनी नीतिपर अमल करने की पूरी स्वतन्त्रताका तो कांग्रेसको आग्रह रखना ही होगा। किन्तु फिलहाल कांग्रेसकी ऐसी कोई इच्छा नहीं है कि अहिंसात्मक प्रतिरोधको, यदि वह जरूरी ही हो जाये तो, उस हदसे आगे बढ़ाये जिस हदतक जनताके अधिकारोंकी रक्षाके लिए आवश्यक हो।

कांग्रेसकी अहिंसाकी नीतिके सम्बन्धमें जो चन्द गलतफहमियाँ पैदा हो गई हैं उन्हें देखते हुए अ० भा० कां० कमेटी यह फिरसे बता देना चाहती है और यह बात स्पष्ट कर देना चाहती है कि चाहे पिछले प्रस्तावोंमें ऐसी कोई चीज रही हो, जिसके कारण ये गलतफहमियाँ पैदा हुई हों, तथापि कांग्रेसकी यह नीति जारी है। इस कमेटीका अहिंसाकी इस नीतिमें और अहिंसाके व्यवहारमें दृढ़ विश्वास है— न केवल स्वराज्यके लिए किये जानेवाले संघर्षके सन्दर्भमें, अपितु जहाँतक इसका प्रयोग सम्भव हो सकता है वहाँतक स्वतन्त्र भारतके सन्दर्भमें भी। समितिको विश्वास

है, और संसारकी अभी हालकी घटनाओंसे यह स्पष्ट भी हो गया है कि यदि संसारको आत्म-विनाश नहीं करना है और जंगलीपनकी स्थितिमें वापस नहीं जाना है, तो सारी दुनियामें पूर्ण निरस्त्रीकरण और एक नये तथा आजकी अपेक्षा अधिक न्याय-संगत राजनीतिक तथा आर्थिक ढाँचेकी स्थापना आवश्यक है। इसलिए स्वतन्त्र भारत संसार-भरमें निरस्त्रीकरणके पक्षमें अपनी पूरी शक्ति लगा देगा और उसे खुद इस दिशामें पहलकदमी करनेको तैयार रहना चाहिए। इस तरहकी पहलकदमी अनिवार्यतः बाहरी और आन्तरिक परिस्थितियोंपर निर्भर होगी, परन्तु [स्वतन्त्र भारतकी] सरकार निरस्त्रीकरणकी इस नीतिको कार्यान्वित करनेका भरसक प्रयास करेगी। प्रभावकारी निरस्त्रीकरण और राष्ट्रोंके बीच होनेवाले युद्धोंकी समाप्तिके फलस्वरूप संसारमें शान्तिकी स्थापना अन्ततोगत्वा युद्ध और राष्ट्रोंके पारस्परिक संघर्षोंके कारणोंको समाप्त करने पर निर्भर है। एक देशका दूसरे देशपर शासन और एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्रका शोषण समाप्त करके इन कारणोंको जड़-मूलसे उखाड़ फेंकना चाहिए। भारत इस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए शान्तिपूर्वक प्रयत्न करता रहेगा और इसी उद्देश्यको ध्यानमें रखकर भारतकी जनता एक स्वतन्त्र एवं स्वाधीन राष्ट्रका दर्जा प्राप्त करना चाहती है। इस तरहकी स्वतन्त्रता संसारकी शान्ति और प्रगतिके लिए स्वतन्त्र राष्ट्रोंके पारस्परिक सौहार्दके आधारपर अन्य देशोंके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करनेकी पूर्व-भूमिका होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-९-१९४०

२. पत्र : अमृतकौरको

बम्बई
१५ सितम्बर, १९४०

प्रिय अमृत,

यह पत्र अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें लिख रहा हूँ। मेरा शरीर यहाँ है तथापि मन वहीं है। तुम्हारे वहाँ रहने से मैं निश्चिन्त रहता हूँ। तुम्हारी रिपोर्टें कामकाजकी बातों तक सीमित हैं और बहुत अच्छी हैं। आशा है कि मीयादी बुखारके बीमारकी स्थितिमें यथोचित सुधार हो रहा है। मैंने दिनशासे[1] सरला देवीके[2] बारेमें विस्तारसे बातचीत की है। उनका दृढ़ मत है कि यदि सरला देवीका इलाज प्राकृतिक चिकित्सासे होना है, तो वे अपने-आपको उनकी निगरानीमें रखें। जब भी वे पूना जा सकें, वे उन्हें अपनी देख-रेखमें रखनेके लिए तैयार हैं। यदि वे नहीं जातीं तो उनकी राय है कि वे तभी अच्छी हो सकेंगी जब उनका

१. नैसर्गिक उपचार चिकित्सालय, पूनाके डॉ० दिनशा के० मेहता
२. सरला देवी चौधरानी

डाक्टरकी निगरानीमें कुनैन देकर इलाज किया जाये। तिल्लीका घटना निहायत जरूरी है। उन्हें अपने शरीरके साथ खिलवाड़ नहीं करना चाहिए। यह पत्र उन्हें पढ़कर सुना देना। यदि वे दिनशाके पास जाने का निश्चय करें तो फौरन चली जायें। इलाजके बिलके बारेमें वे कुछ न सोचें। यदि उन्हें वहाँ नहीं जाना हो तो वे सिविल अस्पताल चली जायें और निश्चित रूपसे रोग-मुक्त हो जायें। जो भी विधि उन्हें अच्छी लगे, झूठे संकोचवश उसे अपनाने में न हिचकें।

मुझे लगता है मैं मंगलवारसे पहले रवाना नहीं हो सकता। इसलिए तुम बुधवारको हमारे वहाँ पहुँचने की आशा रख सकती हो।

राजनीतिक स्थितिका तुम्हें महादेव और समाचारपत्रोंसे पता लग जायेगा।

यद्यपि काम बहुत है तो भी उसका बोझ मैं आरामसे उठा पा रहा हूँ। ईश्वर का धन्यवाद है। मुझे खुशी है कि शम्मीकी[1] हालत ऐसी नहीं है कि तुम्हें शिमला जाना पड़े।

आशा है कि अपने न्यूनतम आरामके लिए तुम्हें शिमलाके नौकरका अभाव नहीं खटक रहा होगा।

शारदा[2] और उसकी माता[3] वहाँ पहुँच गई होंगी और वह तथा शिशु[4] दोनों अच्छे होंगे।

मुझे खुशी है कि परचुरे शास्त्री[5] तथा अकबर[6] ठीक हैं।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९९४)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३०३ से भी

१. अमृतकौरके भाई तथा सेवानिवृत्त शल्य-चिकित्सक, लेफ्टिनेंट-कर्नल शमशेरसिंह

२. शारदा गो० चोखावाला

३. शकरीबहन चि० शाह

४. आनन्द गो० चोखावाला

५. एक कुष्ठ रोगी, जो नवम्बर, १९३९ में सेवाग्राम आये थे और वहाँ मृत्यु-पर्यन्त ५ सितम्बर, १९४५ तक रहे।

६. अकबरभाई चावड़ा

३. सन्देश : मिल-मजदूरोंको

१५ सितम्बर, १९४०

मजदूर भाइयोंसे खादीकी सिफारिशके लिए मैं क्या कहूँ? अगर वे अभी भी नहीं समझे हैं कि खादी उनके लिए निर्बलोंका बल है, हड़तालके समयका आधार है और आत्म-सम्मानकी रक्षाका महान साधन है, तो फिर और ज्यादा मैं क्या कहूँ? लेकिन यह दुःखकी बात है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य: नारायण म० देसाई

४. भाषण: अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी, बम्बईमें – १

१५ सितम्बर, १९४०

मैंने मौलाना साहबसे[1] प्रार्थना की थी कि आजका प्रस्ताव[2] एक ऐसी चीज है कि जिसके ऊपर मुझे उन्हें तुरन्त बोलने देना होगा कि जिससे कोई दूसरा उसपर बोले उसके पहले मैं उसका क्या अर्थ करता हूँ और लगभग मृत्यु-शय्यापर पड़ा हुआ भी क्यों इतनी जिम्मेदारी उठाने पर तैयार हुआ हूँ, आप लोगोंसे क्या उम्मीद रखता हूँ, यह मैं अपने [शब्दों]में आपके सामने रख सकूँ; और जो इसके बारेमें होना हो वह बादमें हो। मौलाना साहबने और कार्यवाहक समितिके दूसरे सदस्योंने मेरी माँग कबूल की। मेरी जिन्दगीमें मैंने काफी जिम्मेदारियाँ उठाई हैं, मगर मेरा खयाल है कि आज जो जिम्मेदारी मैं उठा रहा हूँ वह सबसे भारी है। यह जान-बूझकर मैंने उठाई है। मगर मुझे कबूल करना चाहिए कि मैं नहीं जानता क्यों मेरे दिलमें बड़ी हिचकिचाहट है। शंका है कि कहाँतक मैं आपको राजी कर सकूँगा। ऐसे ही मैं नहीं जानता कि मैं खुदको कहाँतक राजी कर सकूँगा। नतीजा क्या होगा यह तो मेरे खयालसे भी बाहर है। मगर यह अच्छा है। पचास सालसे ज्यादा अर्सेसे मैंने यही तालीम पाई है और औरोंको भी दी है, कि परिणामकी इन्सान बिलकुल फिक्र न करते हुए सिर्फ साधनका ही खयाल करे। इसीमें सफलताकी कुंजी है। सचमुच हम फिक्र सिर्फ साधनकी ही कर सकते हैं। वही हमारे हाथमें है। उसके

१. अबुल कलाम आजाद, कांग्रेसके अध्यक्ष
२. देखिए पृ० १-३।

और हमारे बीचमें कोई रुकावट नहीं आ सकती। मगर नतीजेकी खबर किसको है? जहाँ मैं जाना चाहता हूँ वहाँ मैं पहुँच सकूँगा या नहीं, यह कौन जानता है। मार्गमें इतनी बेशुमार रुकावटें हैं कि मुझे वहाँ पहुँचने से रोक सकती हैं। स्वयं मेरे दिलके अन्दर छिपे हुए दुश्मन हैं। उन सबका खयाल करते ही मेरा दिल दहल जाता है। मगर मेरे लिए इतना काफी है कि मैं जानता हूँ कि मुझे कहाँ पहुँचना है, किस रास्तेसे जाना है। इसलिए मैं मनमें यह श्रद्धा रखकर निकलता हूँ कि जो रास्ता मैंने पकड़ा है अगर वह योग्य है, सीधा है, सच्चा है तो मेरी कोशिशका नतीजा वही होगा जो मैं चाहता हूँ, दूसरा नहीं। मेरे इस विचारके पीछे सिर्फ श्रद्धा ही नहीं मगर पचास सालकी जिन्दगीका तजुर्बा भी है। इसलिए इस भारी जिम्मेदारीको उठाते हुए न ही मुझे मेरी हिचकिचाहट रोकती है और न मेरा डर मुझे डरा सकता है। नावमें कदम रखने से पहले आदमीको हजार हिचकिचाहटके लिए, खटकेके लिए, सोच-विचारके लिए गुंजाइश हो सकती है। उसमें बैठ जाने और उसे नदीमें छोड़ देने के बाद नहीं।

तो फिर मुझे डर क्यों है? मेरे दिलमें हिचकिचाहट क्यों है? रास्तेकी योग्यताके बारेमें मेरे मनमें शक नहीं। मुझे शक है तो इस बातका कि आपका दिलो-दिमाग मेरे साथ इस काममें मैं रख सकूँगा या नहीं। पहले तो मैं सारे हिन्दुस्तानमें दौरा किया करता था, मगर आज मेरी वह हालत नहीं रही। आज अगर चाहूँ तो भी पहलेकी तरह दौरा नहीं कर सकता। मुझे मेरी मर्यादा समझनी चाहिए। मैं इतना पागल नहीं हूँ कि अपने ७० से ज्यादा उम्रको भूल जाऊँ और अभी ५० वर्षका ही हूँ ऐसे समझकर काम करने लगूँ। इसलिए सेवाग्राममें बैठे-बैठे ही जो सेवा हो सकती है वह करनेकी कोशिश करता हूँ। यहाँ बम्बईको भी बड़ी मुश्किलसे आया हूँ। अगर जिम्मेदारी उठानी थी तो इसके सिवा कोई चारा नहीं था। मुझे जो डर है वह इस बातका है कि जो सम्बन्ध एक समय मेरा आपके साथ था वह आज छूट गया है। जमानेका रंग हमेशा बदलता रहता है, आज भी बदल रहा है। बीस साल पहले जो लोग कांग्रेसमें थे वे आज नहीं रहे। जो पुराने थे वे चल दिये। जो तब नौजवान थे वे अब वैसे नहीं रहे।

आप जानते हैं कि वर्धामें मेरे कहने पर कार्यवाहक समितिने मुझे रिहाई दी थी। मैंने उन्हें कहा कि आप सबके हृदय और बुद्धि अगर मैं अपने साथ नहीं रख सकता तो यही बेहतर है कि आपसे अलग हो जाऊँ, अलग होकर भी सेवा तो कांग्रेसकी ही किया करूँगा। इन लोगोंको भी लगा कि मैं जो नई चीज पैदा करना चाहता हूँ वह उन्हें साथ लेकर नहीं कर सकूँगा। हम अलग हुए, मगर उसके बाद न ही मैं चैनसे रह सका और न ही वे। भूल किसकी है यह समझमें नहीं आता था। आदमी भूलोंका पुतला है यह तो मैं अनेक बार कह चुका हूँ। हम आपसमें दलील तो किया करते थे। इसी अर्सेके बीच दिल्लीका ठहराव हुआ। कांग्रेसने सरकारके आगे एक सीधी-सादी बात पेश की। मगर वह सरकारको न जँची। मुझे कबूल करना चाहिए कि इससे मैं खुश हुआ, क्योंकि यह खयाल करते

ही मेरा हृदय काँप उठता था कि कांग्रेस जो बीस बरससे अहिंसाका नाम लेती आई है, जिसने अनेक मौकोंपर हजारों सभा-मंचके ऊपरसे करोड़ों लोगोंको अहिंसाकी दोहाई सुनाई है, वह कांग्रेस आज यह एक नई जिम्मेदारी उठायेगी कि लोग अहिंसक वृत्ति छोड़कर युद्ध-वृत्तिको पैदा करनेकी कोशिश करेंगे। खिलाफतके जमानेसे अली-भाइयों तक कांग्रेसने क्या इस बातका ढिंढोरा पीट-पीटकर मुल्कके और दुनियाके आगे ऐलान नहीं किया कि खिलाफत, स्वराज्य, मुल्कके और दुनिया इत्यादिके सब सवालोंका फैसला हम अहिंसाकी मारफत ही करेंगे, सिविल नाफरमानी करेंगे, मगर वह भी अहिंसक ही करेंगे? सो भी एक ऐसी सल्तनतके सामने जो आज प्रति-दिन दस करोड़ रुपया गोले-बारूदपर खर्च करती है। बावजूद इसके हमने अमनका रास्ता अख्तियार किया और हिन्दू-मुसलमान दोनोंने अहिंसामय ही सब कार्रवाई की। आपको मालूम होना चाहिए कि कलकत्तेके खास कांग्रेस अधिवेशनमें मूल प्रस्ताव[1] मैंने ही पेश किया था, जिसमें सिर्फ खिलाफत और पंजाबके हत्या-काण्डके अन्यायोंका ही जिक्र था। पण्डित मोतीलालजीने कहा, "इसमें स्वराज कहाँ है?" मेरी रायमें तो स्वराज इन दो बातोंके गर्भमें था ही। अगर इन दोनों माँगोंमें हम कामयाब होते तो स्वराज अपने-आप मिलता। मगर फिर भी मैंने उनकी सूचना कबूल कर ली। और तबसे हम कहते आये हैं कि हम अहिंसासे ही सल्तनतको मिटा सकेंगे। उसके पाशमें से अहिंसाकी मारफत ही मुक्त हो सकेंगे। इसलिए मैंने महसूस किया कि किस मुँहसे आज हम कांग्रेसको हिंसायुक्त मानसवाली (war-minded) बनने को कहें। दिल्लीमें हमने ऐलान तो यह किया था कि हिन्दुस्तानको यदि पूरी तरह स्वतन्त्र करार दिया जाये तो हम लड़ाईमें पूरा-पूरा हिस्सा लेंगे। इसका मतलब तो यह हुआ कि स्वतन्त्रता लेने के लिए हम अपनी अहिंसाको बरबाद करने को तैयार हैं। यह कितनी भयानक बात है कि जिन करोड़ों लोगोंके प्रतिनिधिके तौरपर हम बोलते हैं, जिनके आगे बरसोंसे हम अहिंसाकी बात करते आये हैं उनके ही आगे हम उससे उलटी बात करने को आज तैयार हो गये!

कांग्रेसकी ताकत कोई उसके दफ्तरमें दर्ज हुए सदस्योंपर निर्भर नहीं। कांग्रेसकी ताकत इन सदस्योंके पीछे जो करोड़ोंकी जनता है उनसे मिलती है। कांग्रेस कोई हिन्दूकी नहीं। वह हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई सबकी है। हिन्दुओंकी संख्या भले उसमें अधिक हो, परन्तु वह जितनी हिन्दूकी है उतनी ही मुसलमानकी, पारसीकी, ईसाईकी भी है। किसी भी मुसलमानको उसमें शरीक होने की मनाही थोड़े ही है? इसका नमूना तो हमारी आँखोंके सामने है। कोई बड़ी मुसलमान जमातको लेकर मौलाना साहब आज हमारे सदर नहीं बने हैं। तो भी वह महासभाको, आपको, मुझे और कार्यवाहक समितिको अपनी उँगली पर नचाते हैं। इसके लिए उन्हें कोई हिन्दू नहीं बनना पड़ा। इनसे ज्यादा धुरन्धर आलिम मुसलमान आज कौन है? फिर हमारे सामने यह खान भाई बैठे हैं, क्या वह

१. देखिए खण्ड १८, पृ० २४७-८।

किसी तरह भी कम मुसलमान हैं? मगर उनका प्रभाव तो इतना है कि जो बात और कोई न करा सके आज वह मुझसे करा सकते हैं। डॉ० खान साहबने मुझे कहा कि एक यह चरखा मुझसे नहीं चलता। मैंने उन्हें कहा कि चरखा नहीं चलाया जाता तो चलाओ कुदाली। ऐसे ही कांग्रेस क्या पारसीकी नहीं? उनकी संख्या तो मुसलमानोंसे भी बहुत कम है। परन्तु सबसे पहले हमने दादाभाई नौरोजीको अपना सदर बनाया। उनके बाद बम्बईके बेताज बादशाह फिरोजशाह मेहता हमारे सदर हुए और उन्होंने कांग्रेसको बनाया। वह तो शाहदिल थे। उनके नजदीक पारसी, मुसलमान, ईसाई आदिका भेद-भाव था ही नहीं। बचपनसे इन सबसे मैं यही सीखा हूँ कि जो कोई देशकी आजादी चाहता है और देशकी खिदमत करता है वह कांग्रेसका कब्जा ले सकता है। मुसलमानोंको कांग्रेसका कब्जा लेनेसे कौन रोक सकता है? पंजाबमें, बंगालमें, सिंधमें, [बल्कि] बम्बईमें [भी,] जहाँ उनका अल्पमत है, उन्हें कांग्रेसका कब्जा लेने से कौन रोक सकता है? अगर कोई हिन्दू ऐसा अभिमान रखता है कि हिन्दुओंकी बड़ी संख्या है इसलिए कांग्रेसपर उनका ठेका है, तो मैं कहता हूँ कि वह कांग्रेससे निकल जाये। यह बात सही है कि कांग्रेसकी कार्रवाई बहुमतसे चलती है। मगर वह स्थिति इसलिए और तबतक कि बहुमतके साथ न्याय है। कई लोग कांग्रेसपर इल्जाम लगाते हैं कि कांग्रेस फासीज्म दाखिल करना चाहती है। मगर इतना तो जो लोग यह इल्जाम लगाते हैं वह भी कबूल करेंगे कि कांग्रेसके पास अहिंसाके सिवा दूसरा कोई हथियार नहीं है। उसका सारे-का-सारा काम शान्तिसे ही चलता है। तो फिर फासीज्मवाले आरोपका कुछ मतलब नहीं रहता। क्योंकि फासीज्म डंडे-तलवारके बगैर चल ही नहीं सकता, न इम्पीरियलिज्म ऐसे चल सकता है, न नाजीज्म। चूँकि हम शान्तिसे अपना काम करते हैं इसलिए मुट्ठी-भर अल्पसंख्यावाले लोगोंको भी हमें अपने साथ रखना पड़ता है। ऐसा न करें तो वह हमारे रास्तेमें रुकावट डाल सकते हैं। मैंने जो सत्याग्रहका कीमिया मुल्कको बताया है वह सबके लिए है। उसकी मददसे ८० हजार भी ८ करोड़का रास्ता बन्द कर सकते हैं। और आठ करोड़ क्या, इक्कीस करोड़ को भी हम सभीके ऊपर सवारी करने से रोक सकते हैं।

महासभामें एक पक्ष ऐसा भी है जो कहता है कि गांधीका रास्ता ठीक नहीं है। यह लोग मजदूरोंकी व्यापक हड़तालें, सामुदायिक कानून-भंग इत्यादि करने देने के आन्दोलन चलाना चाहते हैं। अहिंसाकी नीति उन्हें मान्य नहीं। यह भी एक रास्ता है सही। मगर यह कांग्रेसका रास्ता नहीं। जिसे अहिंसा-नीति मान्य है उसे यह मानना ही पड़ेगा कि महासभा किसी एक कौमकी नहीं है। और बहुमत है सो भी अल्पमतके ऊपर शासन चलानेके लिए या सीनाजोरी दिखानेके लिए नहीं, मगर सेवा करनेके लिए है। इस तरीकेसे अगर बहुमतवाले अपना काम चलायें तो अल्पमतवालोंको यह अपनी तरफ सहज ही खींच लेंगे। कांग्रेसका इतिहास भी इसी चीजका दृष्टान्त है। कांग्रेसके दफ्तरमें कागजात बतायेंगे कि उसके सदस्योंकी संख्या दिन-ब-दिन बढ़ती गई है। इसके साथ-साथ इसकी प्रतिष्ठा भी बढ़ती गई है।

इसकी वजह यह है कि कांग्रेसके पास जो बहुमतका बल है वह असलमें नैतिक बल है, पशुबल नहीं। यह हकका, सचाईका बल है। बहुमतके इस बलके साथ अगर शान्तिका बल भी मिले तो फिर तो कहना ही क्या?

सम्भव है कि आपके सामने बोलने का यह मेरा आखिरी ही मौका हो, और मुझे तो आपसे काम लेना है। इसलिए पेट-भरके मैं आपसे बातें कर लेना चाहता हूँ। कांग्रेस क्या चीज है वह मैंने आपको बता दिया। यदि यह आपके गले न उतरता हो तो आप इस प्रस्तावको फेंक दें। अगर इस बातको आपका हृदय और बुद्धि न माने तो आप और मैं एक-दूसरेको धोखा देंगे। और जो परिणाम हम चाहते हैं वह भी नहीं आयेगा। जहाजके कप्तानको जहाजके अधिकारियोंका हृदय और बुद्धिपूर्वक सहकार न मिले तो उस जहाजको जरूर डूबना ही होगा। आपने मुझे कप्तान माना है — और मैं हूँ — तब फिर आप सब, प्रथम अधिकारीसे लेकर खलासी तक सब, एकमन और एकदिल होकर मेरा साथ दें। न देंगे तो हम खुद तो सब डूबेंगे ही, मगर भविष्यके इतिहासमें लिखा जायेगा कि जिन करोड़ोंके नामसे हम काम कर रहे थे उन्हें हमने दगा दिया। खुद समुद्रकी भेंट हुए और मुल्कका भी सत्यानाश किया।

इसलिए पहली जरूरी बात यह है कि समझ-बूझकर हृदय और बुद्धिसे आप मेरा साथ दें। आपको हर सप्ताह मैं सूचना तो दिया ही करूँगा। मैं खुद जेल जाना नहीं चाहता। सरकार चाहे तो ले जा सकती है, मगर मैं इरादतन नहीं जाऊँगा। खुद सिविल नाफरमानी नहीं करूँगा। अगर मेरी जबान ही बन्द करना चाहेंगे तो मुझसे चुप न रहा जायेगा। मगर सरकार एक हदतक मुझे पहचानती है। अगर मैं खुद जेल जाने को तैयार न होऊँ तो वह मुझे जेल नहीं ले जायेगी। और जो लोग जेलसे बाहर होंगे उन्हें समय-समयपर सूचना देता रहूँगा और उसके अनुसार चलनेको कहूँगा। अगर आप उस तरह नहीं चलेंगे और पीछेसे कहेंगे कि 'हम तो आपके साधनके तौरपर आपके कामके नहीं थे, यह बात आप क्यों न समझ सके' तो आप मुझे धोखा देंगे। इससे तो यही अच्छा है कि आप मुझे अभी रुखसत दे दें और इस प्रस्तावको फेंक दें। आप ऐसा करेंगे तो वह मुझे या कार्यवाहक समितिको बुरा नहीं लगेगा। आखिर तो प्रस्ताव आपके सामने आपकी पसन्दगीके लिए रखा गया है न? अगर आपको वह पसन्द न हो तो उसे गिरा देने का आपको पूरा-पूरा हक है।

अब मैं प्रस्ताव पर आऊँ। प्रस्ताव छोटा है। इसके एक हिस्सेमें यह बताया है कि हम किस चीजको मानते हैं। हम अमनको मानते हैं। अमनको जहाँ तक मुमकिन हो वहाँतक ले जाना चाहते हैं। आजादी हासिल करने के लिए तो हम अहिंसासे काम लेना चाहते ही हैं, मगर स्वराज हाथ आने पर भी जहाँतक हो सके अहिंसासे ही उस स्वराजको चलाना चाहेंगे। मगर जब स्वराज आयेगा तब तो तन्त्र सिर्फ कांग्रेसवादियोंके हाथोंमें ही तो नहीं होगा। अन्य पक्ष — कांग्रेस के विरोधी भी — उसमें शामिल होंगे। उस समय प्रौढ़ मताधिकार होगा। यानी

हिन्दू, मुसलमान और जिन्हें हम अपनी मूर्खतासे अस्पृश्य मानते हैं उन सब कौमोंके पक्की उम्रवाले स्त्री-पुरुष अपने प्रतिनिधि चुनेंगे और वह पार्लियामेंटमें आयेंगे। ऐसी पंचरंगी पार्लियामेंट क्या करेगी, वह हम क्या जानें? मगर मेरी उम्मीद है कि उस समय कांग्रेसके प्रतिनिधियोंका मत अहिंसाके पक्षमें पड़ेगा, और यदि उनका बहुमत होगा तो वह अहिंसासे ही राज चलायेंगे। कांग्रेसके पास कांग्रेसकी हैसियतसे दूसरा कोई रास्ता ही नहीं है। आजतक हम कहते आये हैं कि अहिंसासे, शान्तिसे स्वराज लेंगे। तो आज हम किस तरह स्वराजकी खातिर सल्तनतकी लड़ाईमें मदद कर सकते हैं? मदद न करने के दूसरे कारण भी हैं। फर्ज करो कि आज सल्तनत हमारी सब माँगें कबूल कर ले और कहे कि 'भविष्यमें जो चाहे करना, मगर आज तो फौज बनाओ।' तो भी मुझे लगता है कि आज हमें उन्हें यही कहना होगा कि 'हम आपका साथ नहीं दे सकते। आपकी हार हो, यह हम नहीं चाहते। आपकी हार-जीत भगवानके हाथमें है। मगर रुपये या सिपाही देकर हम तुम्हारी किसी सूरतमें भी मदद नहीं कर सकते। आप चाहे कितना इनाम भी दें तो भी कांग्रेस यह कदम न उठायेगी।'

दूसरी भी एक बात इस प्रस्तावमें कही है। आज जब कि ब्रिटिश जनता अपनी हस्तीके लिए अपना जान-माल फिदा करने को तैयार हुई है तो ऐसे समय पर सत्याग्रही यह न कहेगा कि 'हमें अब स्वराज देना है या नहीं?' वह तो खामोश ही हो जायेगा। कहेगा, 'इस मुसीबतमें पड़े हुएका मुकाबला क्या करना?' फतह पाने पर वह हमें कुछ नहीं देंगे यह मानकर आज हम स्वराजका युद्ध नहीं शुरू कर सकते। दुश्मन आज कमज़ोर है, इसलिए उसकी कमजोरीका फायदा उठाकर उससे राज-सत्ता हासिल की जाये, यह सत्याग्रहीका काम नहीं है। हमें तो अपनी ताकतसे यह सत्ता लेनी है। इसलिए आज हम कहते हैं कि आपकी कसौटीके वक्त हम आपको परेशान करना नहीं चाहते।

तो फिर सवाल यह उठता है कि यह प्रस्ताव यहाँ लाया ही क्यों जाये? क्योंकि इसके मुताबिक हम कुछ भी करें, उससे उनके लिए मुश्किलकी हालत तो जरूर पैदा हो जायेगी। इसका जवाब यह है कि आज परिस्थिति ही ऐसी है कि अगर हम कुछ नहीं करते तो हमारी हस्ती खतरेमें पड़ती है। हमें नाबूद करना न भी चाहते हों तो भी इसका नतीजा यही होता है। लड़ाईमें मदद न देनेवालों का जवाब इसके सामने यह है कि जब कि रामगढ़में[1] पुकार-पुकारकर कह चुके हैं कि मदद न देने के लिए औरोंको समझाने का हमारा हक है। हम उन्हें कहेंगे कि 'हिन्दुस्तान जबरदस्तीसे आपका कभी साथ न देगा। और इस तरह लड़ाईमें आपका साथ देकर हमें हमारी आजादी भी हासिल नहीं करनी।' यह कहने की छूट हमें होनी ही चाहिए। नागरिकताके अधिकारोंमें यह एक अधिकार भी शामिल है, और यह संरक्षित न हो, तबतक स्वराज नहीं मिल सकता। जबतक अहिंसा पर कायम रहते हुए हम जो-कुछ करना चाहें वह कर सकें, तबतक हमारी इन

१. बिहारमें, जहाँ मार्च १९४० में कांग्रेसकी बैठक हुई थी; देखिए खण्ड ७१।

लोगोंके साथ कोई तकरार पैदा नहीं होती। और अगर बड़ी संख्यामें लोग यह बात कहें तो फिर यह दावा सल्तनत कैसे कर सकती है कि हिन्दुस्तान लड़ाईमें हमारे साथ है? हमें उन्हें यह साफ-साफ कहने का हक है कि 'हिन्दुस्तान लड़ाईमें शामिल है', यह ऐलान करने में आपने सख्त गलती की है। आपने खुद कानून बनाकर हमें प्रान्तोंमें स्वतन्त्रता दी। इन प्रान्तोंमें डोमिनियन स्टेटस[1] की-सी हालत थी, ऐसा माना जाता था। बेशक 'सेफगार्ड'[2] मौजूद थे। मगर वह तो सिर्फ इसलिए कि नातजुर्बेकारीकी वजहसे शायद हमें राजतन्त्र चलाना ना आवे। अमलमें इनका उपयोग कभी करने में नहीं आया था। यह सब-कुछ होते हुए भी मध्यवर्ती सरकारके पास जो सत्ता थी उसका अन्यायसे उपयोग किया गया और जाहिर किया गया कि लड़ाईमें हिन्दुस्तान उनके साथ है। राजाओंको भले सरकार अपने साथ गिने, मगर उनकी रियाया लड़ाईमें सरकारके साथ है, यह कौन कह सकता है? क्या स्वतन्त्र कहलाते हुए इन प्रान्तोंकी सम्मति तक लेने की जरूरत न थी? और तो छोड़ो। क्या बंगाल या पंजाबसे भी मशवरा किया था? जहाँ नव्वे फी-सदी मुसलमान हैं ऐसे सरहद्द प्रान्तको भी पूछा तक था क्या? इससे हम समझ गये कि जिसे प्रान्तिक स्वतन्त्रताके नामसे पुकारा जाता है वह महज एक ढकोसला है, एक बच्चोंका खिलौना-मात्र है। इसलिए इसे हमने फेंक दिया। फेंक देने के बाद भी एक बरस तक हमने सब्र किया। चुपचाप पड़े रहे। इसका मुझे अफसोस नहीं। इससे हमारी ताकत बढ़ी है—मेरी तो बढ़ी ही है। कारण कि इसके बगैर हम जिस बोलीमें आज बोलते हैं उस बोलीमें कहीं बोल सकते थे?

इसके बाद हमने एक ऐसा प्रस्ताव किया कि जो हमें तकलीफ देनेवाला था। मगर उसकी भी सल्तनतने कद्र न की, न कुछ भी परवाह की। उन्होंने तो वाइसरायको तीस करोड़का खुदमुख्तार बादशाह बना दिया। वाइसराय[3] मेरे दोस्त हैं और मेरी आशा है कि रहेंगे, मगर इस तरह एक आदमीके हाथमें इतनी सब ताकत देने का क्या मतलब? यह मुझे चुभता है। किसकी इजाजतसे आज वह ऐलान करते हैं कि हिन्दुस्तान इस युद्धमें ब्रिटेनके साथ है? और कुछ नहीं तो इतना तो करते कि लड़ाईमें हिन्दुस्तानकी शिरकतके ऐलानमें से कांग्रेसको तो अलग रखें। लेकिन ऐसा कुछ न हुआ। इस हालतमें अगर आज हम हमारा विरोध जाहिर न करें तो हमारी हस्ती मिट जायेगी। हमारी हस्ती मिटने का प्रसंग लगभग आज आ गया है। तो ऐसे मौकेपर हम क्या करें या कहें? इतना तो कहें कि 'हमें जेलमें बेशक भेजो मगर हम तो जो चीज मानते हैं उसे जाहिर करेंगे ही। हमारी हस्तीको मिटने न देंगे।'

तो भी इतनी मर्यादा हमने रख ली है कि लड़ाई बड़े पायेपर न होगी। मैं पहले कह चुका हूँ कि हमारी यह लड़ाई आजादीके लिए नहीं है। यह लोग आज

१. औपनिवेशिक दर्जा
२. संरक्षण
३. लॉर्ड लिनलिथगो

हमें कहते हैं कि 'आओ, हमारे जहाजमें आकर सवार हो। तुम भी बचो और हमें भी बचाओ।' मगर हम कहते हैं कि 'नहीं'। क्योंकि हम हमारी हस्तीके लिए इनपर आधार नहीं रखते। किसीपर भी आधार नहीं रखते। मुझे न जर्मनीका डर है, न जापानका, न किसीका भी। ब्रिटेनकी हार हो, यह मैं नहीं चाहता। मैं तो कहता हूँ कि वह जीते। वह बहादुर कौम है। मगर मेरे मुल्कपर उनका शासन कायम रहे, इसके साये तले सदाके लिए हम रहें, यह मुझसे कभी बरदाश्त नहीं हो सकता। इसलिए मैं इनके जहाजमें सवार होना भी नहीं चाहता। अगर होऊँ तो जो हाल आज जर्मनी और ब्रिटेनका हुआ है वही हमारा भी होगा। आज जो जंगली काम यह लोग कर रहे हैं इनमें मैं कैसे शामिल होऊँ? मैं तो दूर बैठे-बैठे ही कहूँगा, 'क्यों एक-दूसरेका गला काटते हो? हथियार छोड़ो। भाई बनो। एक यूरोपके आप सब हैं। इसलिए आप सब भाई ही हैं। क्या आप हिन्दुस्तान हासिल करने के लिए आपसमें लड़ते हैं? तो आप सबको यह समझना चाहिए कि हिन्दुस्तान न जर्मनीका होगा, न जापानका। यह हिन्दुस्तानियोंका है और रहेगा। जबतक एक भी कांग्रेस-वादी जीता है तबतक यह किसी गैरका नहीं होगा। उसके खेत हो चुकने के बाद चाहे कुछ भी हो।' सत्याग्रहीका हमेशा यह विश्वास रहेगा कि ईश्वर जो करता है वह भलाईके लिए ही करता है। इसलिए वह हँसते-मुँह मरेगा और मरते हुए भी वह दुश्मनसे दुश्मनी नहीं करेगा, मगर कहेगा कि यह मुझे मारता है, क्योंकि वह अज्ञानमें मग्न है, बेवकूफ बन गया है।

अब इस प्रस्तावके मसौदेके बारेमें दो शब्द कहूँ। इससे पहले कांग्रेसके प्रस्ताव के मसौदे मैं ही बनाया करता था। मगर अब प्रस्ताव घड़नेवाला एक बुलन्द व्यक्ति हमें मिला हैं। इसलिए इस प्रस्तावकी भाषा मेरी है मगर उसपर जवाहरलालने रंग चढ़ाया है। मैं कोई जवाहरलालजी की तरह तो अंग्रेजी जबान जानता नहीं। इसलिए मेरा प्रस्ताव मैंने उन्हें सुधारने के लिए सौंपा। मुझे कहना चाहिए कि इसमें अहिंसाकी जो व्याख्या है वह जवाहरलालजी की है। इसे मैं निकाल डालना चाहता था। जवाहरलालजी भी इसपर राजी हो गये थे। मगर मौलाना साहबने वह करने न दिया। यह सब कहने का मेरा मतलब यह है कि यह सब-का-सब प्रस्ताव मेरा ही है। इस प्रस्तावमें कहा है: "हम ब्रिटिश सल्तनतका बुरा नहीं चाहते, हमें तो सबकी दोस्ती चाहिए।" इंग्लैण्डका एक भी बालक मरे तो मुझे इसका सदमा लगता है। सेंट पॉलके गिरजाघरको नुकसान पहुँचे तो उसका मुझे इतना ही आघात पहुँचता है जितना काशी विश्वनाथके मन्दिरको या जुम्मा मस्जिदको नुकसान पहुँचने से मुझे पहुँचेगा। इसलिए सेंट पॉलपर बम गिरने की खबर सुनकर मुझे सख्त सदमा पहुँचा। इस गिरजेने किसीका क्या बिगाड़ा था? मगर खाली अपना दुःख प्रकट करने से क्या फायदा? इस बारेमें मैं अंग्रेजोंका शागिर्द हूँ। आज जब कि लन्दन शहरपर बमके गोलोंकी बरसात बरस रही है, वहाँके लोग अपना काम बिना किसी घबराहट करते ही रहते हैं। नाचते हैं, कूदते हैं, हँसी-विनोद करते हैं। ग्यारह बरसका एक बच्चा भी पाठशालासे अपने बापको लिखता है कि उसे विलायत छोड़कर कनाडा

नहीं जाना। इस प्रकारकी बहादुरीमें ये लोग हमारे गुरु होनेके लायक हैं। इसलिए इन लोगोंसे हमने जो चीज सीखी है उसे मैं कैसे भूल जाऊँ? इनके प्रति मेरी सहानुभूति बताते हुए भी मेरा धर्म मैं कैसे भूल जाऊँ? ये लोग आज ऐसी नाजुक हालतमें पड़े हैं कि यदि वे लन्दन भी खो बैठें, इंग्लैण्ड भी खोया जाये, तो भी वह हार थोड़े ही कबूल करनेवाले हैं? कनाडा जायेंगे, न्यूजीलैण्ड जायेंगे, आस्ट्रेलिया जायेंगे और वहाँसे लड़ेंगे। इसलिए इनके साथ दिलसोजी बताते हुए भी हम अपना कर्त्तव्य नहीं भूल सकते। इसीलिए मैंने कहा कि हम इस मौकेपर आजादीके लिए न लड़ें, मगर जिसपर आजादीकी बुनियाद है उसे हम कैसे भूल जायें? यह चीज आज खतरेमें पड़ी है, इसकी खातिर सत्याग्रहका कदम आज हमें उठाना है।

मगर इस कदमके मुतल्लिक भी हमने मर्यादा रखी है। कार्यवाहक समिति कहती है कि हमने तो सब-कुछ गांधीको सौंप दिया। सिविल नाफरमानीकी कला हम गांधीजी से सीखे हैं, तो भले एक और बाजी उसे खेल लेने दें। वह जिन्दा है, तब तक वह भले लड़ा करे। इसलिए उन्होंने सारी-की-सारी रहनुमाई मेरे ऊपर छोड़ दी है। इसके अन्दर सिविल नाफरमानी, अहिंसक अहसयोग वगैरा चीजें आ जाती हैं। मगर मैं नहीं जानता कि मैं आज आपको कौन-सा कदम उठानेको कहूँगा। मेरे सामने अभी इस घड़ी तो अँधेरा ही है। यह प्रस्ताव स्वीकार करके अँधेरेमें पड़े हुए एक आदमीको आप अपना नाखुदा बना रहे हैं, यह आपको समझना चाहिए।

जो लोग समझौता या मन्त्रणा नहीं चाहते उनको मैं यह सुना देना चाहता हूँ कि इस प्रस्तावके गर्भमें वह चीज भी भरी है। मैं हमेशा बीचका रास्ता निकालनेवाला आदमी रहा हूँ। मैं तो यह प्रस्ताव लेकर वाइसराय साहबके पास जाऊँगा और उन्हें पूछूँगा कि हमारी स्वतन्त्रता आपने क्यों छीन ली है? अगर वह कहेंगे, 'तुम्हें अहिंसाकी मर्यादाके अन्दर रहकर जो बोलना हो वह बोलनेकी छूट है', तो मैं नहीं लड़ूँगा, न लड़नेकी सलाह आपको दूँगा। इस तरह इस प्रस्तावमें यह बताया गया है कि हमारी लड़ाईकी मर्यादा क्या है। जो हिंसाके रास्तेको स्वीकार करता है उसे हम नहीं बचा सकते। सल्तनतको हम परेशान करना नहीं चाहते, मगर परेशान न करनेकी हमारी इस वृत्तिको हम खुदकुशीकी हदतक भी नहीं ले जा सकते।

अन्तमें इस प्रस्तावमें आशा प्रकट की गई है कि अगर हम अहिंसाको हृदय और बुद्धिसे स्वीकार करके इसपर अमल करेंगे, तो एक दिन ऐसा आयेगा कि सारी दुनिया हमारे पास आकर पूछेगी कि लड़ाईसे हम छुटकारा कैसे पा सकते हैं। आज ब्रिटेन हर रोज १०-१२ करोड़ रुपये लड़ाईमें खर्च करता है। हम ३० करोड़ लोग एक आवाजसे उन्हें क्यों न कह सकें कि यह बेहिसाब रुपयेका पानी क्यों किया जा रहा है? इससे तो हमारे यहाँ करोड़ों गरीब लोगोंकी भूख मिट सकती है। मैं उनकी बहादुरीकी तारीफ करता हूँ, मगर उनकी अक्लकी तारीफ नहीं कर सकता। आज जो काम वह कर रहे हैं वह सरासर बेवकूफी है। हमें जो लगता

है वह आपको हम साफ-साफ सुना सकें और शान्तिसे अपनी आजादी हासिल कर सकें, तो हम एक दिन सारी दुनियामें भी शान्तिका राज्य स्थापित कर सकेंगे। मगर आज यह सब एक स्वप्न-सा है। छोटे मुँहसे बड़ी बात करना है।

अगर यह हम कर सकें तो आजादी तो हमारी जेबमें ही है। इतना ही नहीं, हम दुनियाके आगे एक शानदार मिसाल कायम कर सकते हैं। हिटलरका बुद्धि-बल आज मेरे दिमागको परेशान किये देता है। लेकिन मेरे नजदीक यह बुद्धि-बल निकम्मा है। आज जो चीज मैंने हिन्दुस्तानके आगे रखी है वह ऐसी है कि हिटलर, मुसोलिनी, स्टालिन, चर्चिल ये सब मिलकर इसका मुकाबला करें तो भी इसे हरा नहीं सकते।

सिर्फ एक और बात अब मुझे आखिरमें कहनी है। मुझे मालूम नहीं कि आपको मैं क्या करनेको कहूँगा। हाँ, इतना मुझे मालूम है कि कौन-सी चीज इसमें शामिल नहीं। अगर हमें आखिर सिविल नाफरमानी करनी ही पड़े तो भी वह सामुदायिक नहीं होगी। मेरे दिलमें जो है वह व्यक्तिगत सिविल नाफरमानी ही है। और दूसरी चीजें भी हैं। मेरी आशा है कि मैंने जो जिम्मेदारी आज ओढ़ी है उसका आपको पूरा-पूरा हिसाब दे सकूँगा। किन्तु अगर कोई ऐसा मौका आ जाये कि मेरी शक्तिका दिवाला निकल जाये, तो मैं मौलाना साहब या आपमें से जो उस वक्त जेलसे बाहर होंगे उन्हें साफ लफ्जोंमें कह दूंगा कि अब आप अपनी तरकीब आजमायें। मैं आशा करता हूँ कि ईश्वर मुझे आपको सच्ची राह बतानेकी अक्ल, हिम्मत और होशियारी दे।

अगर यह सब बातें आपको न जँचें तो मैं फिर आपसे कहता हूँ कि आप इस प्रस्तावको फेंक दें। और अगर यह बात आपको जँच गई है तो फिर मैं आपसे यह आशा करूँगा कि आप मेरे सन्देशवाहक बन जायें। जिन लोगोंके दिलमें हिंसा है, जो तार काटने, रेलकी पटरी उखाड़ने, तूफान मचानेकी नीतिको मानते हैं, उन्हें मैं आजिजीसे दरखास्त करूँगा कि जब हिन्दुस्तानमें एक जबरदस्त प्रयोग चल रहा है तब उसमें वे रुकावट न डालें, वर्ना मेरा नेतृत्व निकम्मा हो जायेगा। मैं नेतृत्व छोड़ दूं या कांग्रेस अहिंसाकी नीतिको छोड़ दे। फिर जो जी चाहे सो वे करें।

हरिजन सेवक, २१-९-१९४०

५. भाषण : अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी, बम्बईमें–२[1]

१५ सितम्बर, १९४०

मैं जानता हूँ कि आपने बड़े ही धैर्यके साथ मेरी बात सुनी है।[2] आज तो मैं आपका विशेष रूपसे आभारी हूँ, क्योंकि आज मैंने कई ऐसी बातें कही हैं जिन्होंने शायद आपको अप्रसन्न किया हो। लेकिन मेरा यह इरादा कभी नहीं था कि इस बड़े कामके लिए, जो मेरे और आपके सामने पेश है, जिन लोगोंको मैं तैयार करना चाहता हूँ, उन्हें अप्रसन्न करूँ। मुझे आपसे विस्तारपूर्वक बात करनी है, क्योंकि मुझे इस कामका बोझ उठाना है। मैं कोई तैयार भाषण लेकर नहीं आया हूँ। जैसे-जैसे मैं बोलता जाऊँगा, विचार आते जायेंगे।

एक बात जो काफी समयसे मेरे मनमें घूमती रही है, उसीसे शुरू करूँ। जब युद्ध छिड़ा और मैं वाइसरायसे मिलने शिमला गया, तो मैंने अगले दिन प्रतिनिधिकी हैसियतसे नहीं बल्कि व्यक्तिगत रूपसे एक वक्तव्य[3] जारी किया था। एक मित्रने[4] अब मुझे याद दिलाया है कि यदि मैं उसी वक्तव्यपर डटा रहता तो कितना अच्छा होता, हालाँकि मैं कांग्रेसको अपने साथ नहीं ले जा सकता था। और मेरे इस उत्तरदायित्वको सँभालने के अवसरपर उन्होंने कामना की है कि ईश्वर मेरा मार्ग-दर्शन कर मुझे मूल स्थितिपर ले आये और मैं मैदानसे हट जाऊँ। मेरे मनमें उनके लिए बड़ा आदर है। मैं उस वक्तव्यको न तो भूला हूँ, और न मुझे खेद व्यक्त करना है या सफाई देनी है। यदि ऐसी ही चीज फिर हो—इतिहास बहुवा अपनेको दुहराता ही है—और मुझे दूसरे वाइसरायके पास जाना पड़े, तो मैं फिर वही वक्तव्य देना चाहूँगा।

यद्यपि मैं केवल वैयक्तिक रूपसे बोला था, पर मेरे भीतरसे कांग्रेसी ही बोल रहा था। वाइसरायने भी मुझे इसलिए नहीं बुलवाया था कि मैं मो० क० गांधी हूँ। मो० क० गांधीसे उन्हें कुछ लेना-देना नहीं है। जिस व्यक्तिके हाथमें राजदण्ड होता है उसके निकट मात्र किसी व्यक्तिकी कोई गिनती नहीं है। उन्होंने मुझे इसलिए बुलाया, क्योंकि उन्होंने सोचा कि मैं कांग्रेसके विचारोंका प्रतिनिधित्व करूँगा और कांग्रेसजनोंके मनमें अपनी बातके लिए विश्वास पैदा कर सकूँगा।

१. महादेव देसाईके अनुसार गांधीजीके अंग्रेजीमें दिये गये भाषणकी इस रिपोर्टको स्वयं गांधीजी ने देखा और सुधारा था।

२. अंग्रेजीमें दिये इस भाषणके पूर्व गांधीजी हिन्दीमें बोले थे; देखिए पिछला शीर्षक।

३. ५ सितम्बर, १९३९ को; देखिए खण्ड ७०, पृ० १७८-८०।

४. संकेत वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीकी ओर है; देखिए खण्ड ७२, पृ० ३३२।

उस स्थितिसे मैं एक व्यक्तिके रूपमें नहीं बल्कि एक कांग्रेसीके रूपमें पीछे हटा, और इसलिए हटा कि मैं एक भी कांग्रेसीको सहमत नहीं कर सका। हर्षकी बात है कि कार्य-समितिमें ऐसे लोग हैं जो बेहद ईमानदार हैं और जिनमें मुझसे यह कहने का साहस था कि यद्यपि वह आपका वक्तव्य है, पर हमारा मन उसे स्वीकार करने को नहीं होता। उन्होंने यह भी कहा कि हमें पिछला कटु अनुभव है और इसलिए हम उस स्थितिको नहीं अपना सकेंगे। इस प्रकार वह प्रस्ताव[1] आया जो युद्ध आरम्भ होने के तुरन्त बाद कांग्रेसने पारित किया। और एक प्रतिनिधिके रूपमें मैं प्रस्तावसे सहमत हुआ, हालाँकि मैंने उनसे कहा कि यदि मैं कांग्रेसियोंको सहमत कर सकता तो मेरी मूल स्थितिको अपनाना ही सबसे अच्छा रहता। यदि मैंने कार्य-समितिके सदस्योंपर दबाव डाला होता कि वे मेरी स्थिति स्वीकार कर लें तो वे वैसा कर लेते, पर वह स्वीकृति मात्र यान्त्रिक होती। वक्तव्य वाइसरायको या किसी भी व्यक्तिको धोखा देने के लिए नहीं दिया गया था। वह सीधा हृदयसे निकला था। वह कोई नाटकीय प्रदर्शन नहीं था। उसमें मैंने संसार, वाइसराय तथा कांग्रेस के सामने अपना सम्पूर्ण हृदय ही खोल दिया था। यदि मेरे ये शब्द उनके हृदयमें गूंज पैदा न कर सकते, तो वे वाइसरायके या महान अंग्रेज राष्ट्रके या भारतके किसी कामके न होते। मेरी भावना अब भी वही है। यदि मैं अपन दृष्टिकोणके सही होने का विश्वास कांग्रेसको नहीं दिला पाता, तो वह हमें आगे नहीं ले जाता। वह गलत कदम होता और इसलिए उठाया नहीं गया। इस पृष्ठभूमिके बाद अब मैं इस प्रस्ताव पर आता हूँ।

मैंने बार-बार यह बात कही है कि ऐसे समयमें जब अंग्रेज जनता और अंग्रेज सरकारका अस्तित्व ही खतरेमें है, मैं उन्हें परेशान करने का दोषी नहीं बनूंगा। मैं यदि ऐसा करता हूँ तो मैं अपने सत्याग्रहके प्रति सच्चा नहीं होऊँगा, अहिंसाके प्रति सच्चा नहीं होऊँगा, उस सत्यके प्रति सच्चा नहीं होऊँगा जो मुझे बहुत प्यारा है, और इसीलिए मैं वैसा नहीं कर सकता। वही व्यक्ति अब आपके सामने सत्याग्रह आन्दोलनका बोझ अपने कन्धोंपर लेने के लिए खड़ा है। क्यों? एक समय ऐसा आता है जब व्यक्ति दुर्बलतावश बुराईको अच्छाई समझ लेता है, और अच्छाई स्वयं जब अपने सन्दर्भसे तथा उस उद्देश्यसे जिसके लिए वह समर्पित थी कट जाती है तो बुराई बन जाती है। मैंने महसूस किया कि यदि मैं कांग्रेसकी मददके लिए नहीं जाता हूँ और उसकी पतवार नहीं सँभालता हूँ, चाहे मैं वैसा भयके साथ और काँपते हुए ही करूँ, तो मैं अपने प्रति सच्चा नहीं रहूँगा।

मुझे लगता है कि जो कदम हम उठा रहे हैं, उसे उठाकर हम न केवल कांग्रेसकी बल्कि सारे भारतकी सेवा कर रहे हैं। और हम केवल पूरे भारतकी ही सेवा नहीं कर रहे हैं। इतिहास लिखेगा — और अंग्रेज किसी दिन इस बातको समझ सकेंगे — कि हमने अंग्रेज राष्ट्रकी मदद की और वे यह भी महसूस करेंगे कि हमने अपना

१. १० अक्तूबर, १९३९ का; देखिए खण्ड ७०, परिशिष्ट ११।

कर्त्तव्य पूरा निभाया और हममें वही बहादुरी और निडरता थी जिसका अंग्रेजोंको गर्व है और जिसके लिए वे मशहूर हैं। मैं अंग्रेजोंका गहरा मित्र होनेका दावा रखता हूँ, इसलिए विनम्रताके झूठे खयालसे या लोग मेरे बारेमें अन्यथा समझेंगे इस खयाल से या इस खयालसे कि खुद अंग्रेज मुझसे नाराज हो जायेंगे, यदि मैं यह चेतावनी नहीं देता हूँ कि अब जो स्थिति है उसमें आत्मसंयम गुण नहीं, अवगुण हो जाता है, क्योंकि वह कांग्रेस संस्थाको ही समाप्त कर देगा और उस भावनाको खत्म कर देगा जिससे यह संयम रखा जाता रहा है — तो मैं अमत्रीपूर्ण आचरणका दोषी होऊँगा।

जब मैं यह कहता हूँ, तो मैं केवल कांग्रेसकी ओरसे नहीं कहता, बल्कि उन सबकी ओरसे कहता हूँ जो राष्ट्रीय स्वतन्त्रताके पक्षमें हैं — उनमें मुसलमान, पारसी, ईसाई आदि सभी लोग हैं; इतना ही नहीं, मैं तो इनमें भारतकी विशुद्ध स्वतन्त्रताकी आकांक्षाका प्रतिनिधित्व करनेवाले कांग्रेसके विरोधियोंको भी शामिल करता हूँ। यदि इस समय मैं यह कहूँ कि 'अंग्रेजोंको परेशान न करो' तो मैं उन सबके प्रति झूठा बनूंगा। मुझे तोतेकी तरह 'परेशान न करो' की रट नहीं लगानी चाहिए। तब वह रट मेरी मुक्तिके लिए या मेरी अच्छाईकी रक्षाके लिए उतनी ही उपयोगी होगी जितनी कि तोतेकी ईश्वरके नामकी रट। वह उसे मुक्ति नहीं दिला सकती, क्योंकि वह केवल यान्त्रिक और मौखिक प्रयास है, जिसके पीछे कोई समझ नहीं है। इसलिए यदि राष्ट्रके इतिहासकी इस संकटपूर्ण घड़ीमें मैं ऐसा संयम बरतूँ, तो वह बेकार होगा। मैं यदि सेवाग्राममें छिप जाऊँ और कहूँ, 'नहीं, मैंने आपको बता दिया है, परेशान न करो', तो मैं अपने प्रति बिलकुल बेईमान होऊँगा।

इस प्रस्तावकी भाषा मुख्यत: मेरी है। यह पण्डित जवाहरलाल नेहरूको जँची। मैं कांग्रेसके प्रस्तावोंका मसौदा तैयार करनेवाला हुआ करता था। अब उन्होंने मेरा स्थान ले लिया है। उन्होंने देखा कि यदि हमें अहिंसात्मक सत्याग्रहके प्रति उस हदतक सच्चा रहना है, जिस हदतक कि हम चाहते हैं, तो वह प्रस्ताव अनिवार्य है। कार्य-समितिने इस शब्दावलीको सोच-समझकर, इसके फलितार्थोंको समझते हुए स्वीकार किया है। परिणाम यह है: यदि हम अंग्रेज सरकारसे यह वचन पा लेते हैं कि कांग्रेस युद्ध-विरोधी प्रचार और युद्धके सम्बन्धमें सरकारसे असहयोगका प्रचार कर सकती है, तो हम सविनय अवज्ञा नहीं करेंगे।

मैं नहीं चाहता कि इंग्लैण्ड पराजित हो जाये या अपमानित हो। जब मैं सुनता हूँ कि सेंट पॉलका बड़ा गिरजाघर क्षतिग्रस्त हुआ है तो मुझे चोट पहुँचती है। इससे मुझे उतना ही दुःख होता है जितना दुःख यह सुनकर होगा कि काशी विश्वनाथका मन्दिर या जामा-मसजिद क्षतिग्रस्त हो गई। मैं काशी विश्वनाथ मन्दिर और जामा-मसजिद तथा सेंट पॉलके बड़े गिरजाघरको अपनी जान देकर भी बचाना चाहूँगा। लेकिन उन्हें बचानेके लिए मैं एक भी व्यक्तिकी जान नहीं लूंगा। अंग्रेज लोगोंसे मेरा यही मौलिक मतभेद है। फिर भी मेरी उनके साथ सहानुभूति है। अंग्रेजोंके, कांग्रेसियोंके या जिन तक मेरी आवाज पहुँचती है, ऐसे किन्हीं भी अन्य लोगोंके मनमें इस विषयमें कोई गलतफहमी नहीं रहनी चाहिए कि मेरी सहानुभूति

किधर है। ऐसा इसलिए नहीं है कि मैं अंग्रेज राष्ट्रको प्यार करता हूँ और जर्मनोंसे घृणा। मैं ऐसा नहीं मानता कि राष्ट्रके रूपमें जर्मन या इटालियन अंग्रेजोंसे बुरे हैं। हम सबमें एक-जैसी कमजोरियाँ हैं। हम सब विशाल मानव-परिवारके सदस्य हैं। मैं कोई भी भेद मानने से इनकार करता हूँ। मैं भारतीयोंके लिए कोई श्रेष्ठताका दावा नहीं कर सकता। हममें भी वही सब गुण-दोष हैं। मानव-जाति कोई सर्वथा अलग-थलग हिस्सोंमें नहीं बँटी हुई है कि हम एकसे दूसरेमें जा ही न सकें। वे चाहे एक हजार कमरोंमें रहते हों, लेकिन वे सब एक-दूसरेसे सम्बद्ध हैं। मैं यह नहीं कहूँगा कि 'भारतका महत्त्व सर्वोपरि होना चाहिए, भले सारी दुनियाका नाश हो जाये।' यह मेरा सन्देश नहीं है। भारत सर्वप्रधान होना चाहिए, लेकिन साथमें संसारके अन्य राष्ट्रोंका भी भला होना चाहिए। मैं भारतको तथा उसकी स्वतन्त्रताको सिर्फ तभी सही-सलामत रख सकता हूँ जब मेरा सद्भाव केवल उसी मानव-परिवारके लिए न होकर, जो पृथ्वीके इस 'भारत' कहलानेवाले छोटे-से हिस्सेमें रहता है, पूरे मानव-परिवारके लिए हो। भारत अन्य छोटे राष्ट्रोंकी तुलनामें काफी बड़ा है, लेकिन विशाल संसारमें या ब्रह्माण्डमें वह क्या है?

मैं क्या चाहता हूँ, इस विषयमें कोई गलती नहीं होनी चाहिए। मैं चाहता हूँ कि मेरा व्यक्तित्व अक्षुण्ण रहे। यदि मैं उसे गँवा देता हूँ तो मैं भारतके किसी कामका नहीं रह जाऊँगा और अंग्रेज लोगोंके तथा मानव-जातिके तो कतई कामका नहीं रह जाऊँगा। मेरी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता वैसी ही है जैसी राष्ट्रकी स्वतन्त्रता। वे समानार्थी हैं। मैं अपने लिए कोई ज्यादा स्वतन्त्रताका दावा नहीं करता। इसलिए मेरी स्वतन्त्रता आप सबकी स्वतन्त्रताके बराबर है, उससे ज्यादा नहीं। मुझे लगता है कि यदि मेरी स्वतन्त्रता खतरेमें है तो आपकी भी खतरेमें है। मैं इस बातकी स्वतन्त्रताकी माँग करता हूँ कि बम्बईकी सड़कोंसे निकलूँ और कहूँ कि मुझे इस युद्धसे कोई वास्ता नहीं है, क्योंकि मुझे इस युद्धमें तथा इस भ्रातृ-हत्यामें, जो यूरोपमें चल रही है, विश्वास नहीं है। मैं बहादुरीकी सराहना करता हूँ। लेकिन इस बहादुरीसे क्या लाभ? मैं इस मूर्खता तथा घोर अज्ञानपर शोक करता हूँ। ये लोग नहीं जानते कि ये किस चीजके लिए युद्ध कर रहे हैं। समुद्र पार चल रहे इस युद्धको मैं इसी दृष्टिसे देखता हूँ। मेरे लिए इसमें हिस्सा ले सकना असम्भव है; और न ही मैं यह चाहता हूँ कि कांग्रेस इसमें हिस्सा ले।

मैं जिस रूपमें हिस्सा लेना चाहूँगा वह शान्ति-स्थापना करनेवाले के रूपमें होगा। यदि अंग्रेज लोगोंने बुद्धिमानीके साथ कांग्रेसकी नहीं बल्कि सारे भारतकी स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली होती, और यदि भारतके अन्य दलोंने भी हमारे साथ सहयोग किया होता, तो हमने इन राष्ट्रोंके बीच शान्ति-स्थापना करनेवाले का सम्माननीय स्थान ले लिया होता। मेरी आकांक्षा ऐसी ही है। आज मैं जानता हूँ कि यह दिवास्वप्न है। लेकिन कभी-कभी व्यक्ति अपने दिवास्वप्नोंमें रहता है। मैं अपने दिवास्वप्नोंमें रह रहा हूँ और विश्वको मात्र दिखावटी अच्छे मानवोंसे नहीं, बल्कि वस्तुतः अच्छे मानवोंसे भरा चित्रित करता हूँ। समाजवादी अपने आदर्शकी बात

करते हुए कहते हैं कि यह समाजका एक नया ढाँचा होगा, एक नये ढंगकी व्यवस्था होगी। मैं भी एक नये ढंगकी व्यवस्थाकी आकांक्षा कर रहा हूँ, जो विश्वको अचम्भे में डाल देगी। यदि आप इन दिवास्वप्नोंको देखने की कोशिश करें, तो आप भी मेरी तरह अपनेको ऊँचा उठा महसूस करेंगे।

और अब मैं आपकी 'टिन-पॉट'[1] कांग्रेस पर आता हूँ—'टिन-पॉट' वह दूसरोंकी नजरमें है, मेरी नजरमें नहीं। यदि हम सावधानी नहीं बरतेंगे तो कांग्रेस का लोप हो जायेगा, और यदि कांग्रेसका लोप हो जायेगा तो राष्ट्रीय भावनाका लोप हो जायेगा। कांग्रेसी एकके बाद एक चुन-चुनकर जेल भेजे जा रहे हैं। लोगों को हम पकड़े जाते देखते रहें, यह सत्याग्रह नहीं है। इससे कहीं ज्यादा अच्छा यह है कि हम सब विरोधीके खूनी जबड़ोंमें स्वयं दौड़कर चले जायें। आखिर, जैसा कि मौलाना साहबने एक बार कहा था, भारत एक बहुत बड़ी जेल ही है। हमें जेलके सींखचे तोड़कर दासताकी इस जेलसे बाहर निकल आना चाहिए। ननकाना साहबकी दुःखद घटना[2] के समय उन्होंने सिखोंसे कहा था, "आप एक गुरुद्वारेकी रक्षा कर सकते हैं, लेकिन इस बहुत बड़े गुरुद्वारे–भारतका क्या होगा? हमें इसे दासतासे मुक्त कराना है।" उन शब्दोंकी सचाई आज भी मेरे कानोंमें गूँजती रहती है। यदि राष्ट्रकी इस स्वतन्त्रताका या स्वतन्त्रताके आन्दोलनका दम घोंटे जाने की सम्भावना है तो मैं कहता हूँ कि आत्म-संयमका गुण एक दोष बनने जा रहा है। संयमके गुणको इस हदतक नहीं ले जाया जा सकता कि राष्ट्रीय भावना ही समाप्त हो जाये, फिर वह भावना चाहे कांग्रेसियोंमें हो या गैर-कांग्रेसियोंमें।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन या कोई भी कार्रवाई करने से पहले मैं चाहता हूँ कि वाइसरायकी घोषणा और भारत-मन्त्रीके वक्तव्यसे[3] लेकर अभीतक सरकारने जो भी किया है और वह जिस नीतिपर चलती रही है—इस सबका मैं जो अर्थ करता हूँ वह मैं सरकारको स्पष्ट कर दूँ। इन सबने कुल मिलाकर मेरे मनपर यह पक्की छाप छोड़ी है कि कुछ गलत हो रहा है, पूरे राष्ट्रके प्रति कुछ अन्याय किया जा रहा है और स्वतन्त्रताकी आवाज दबा दी जानेवाली है। यह बात प्रस्ताव में ध्वनित है। यह ठीक इसी भाषामें नहीं है जिसका कि मैं प्रयोग कर रहा हूँ, लेकिन आप यह अर्थ इसमें दिनकी रोशनीकी तरह साफ देखेंगे।

अपनी स्थिति पूरी तरह स्पष्ट करने के लिए मैं वाइसरायसे यह प्रार्थना करने की सोच रहा हूँ कि वे कृपया मुझे भेंटका मौका दें; और मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वे यह मौका देंगे। मैं अपनी कठिनाइयाँ उनके सामने रखूँगा; मैं कांग्रेसकी कठिनाइयाँ उनके सामने रखूँगा। मैं उनके पास आपके नामपर जाऊँगा। मैं उन्हें

१. अंग्रेजीका एक मुहावरा, जिसका अर्थ है घटिया ढंगकी चीज।

२. पंजाबमें, जहाँ २० फरवरी, १९२१ को बहुत-से सिख गुरुद्वारेमें प्रविष्ट होनेके कारण मारे गये थे; देखिए खण्ड १९।

३. एल० एस० एमरीका वक्तव्य, जिन्होंने १४ अगस्तको हाउस ऑफ कॉमन्समें भारतपर बहस शुरू की थी।

बताऊँगा कि हम लोग इस हालतपर पहुँच गये हैं: 'हम आपको परेशान करना नहीं चाहते और युद्ध-प्रयत्नोंके सम्बन्धमें आपको आपके उद्देश्यसे विचलित भी नहीं करना चाहते। हम अपने रास्ते चलते हैं और आप अपने रास्तेपर अविचलित चलिए, लेकिन समान आधार अहिंसा हो। यदि हम लोगोंको अपने साथ ले जाते हैं तो हमारे लोगोंकी तरफसे कोई युद्ध-प्रयत्न नहीं होगा। दूसरी ओर, यदि आप नैतिक दबावके सिवा किसी और दबावका प्रयोग किये बिना देखते हैं कि लोग युद्ध-प्रयत्नमें मदद देते हैं, तो हमें शिकायत करने का कोई कारण नहीं होगा। यदि आप राजाओंसे, जमींदारोंसे या किसी भी बड़े-छोटेसे मदद पाते हैं, तो जरूर पायें; लेकिन हमारी आवाज भी सुनी जाने दीजिए। यदि आप मेरा सुझाव स्वीकार कर लेते हैं, तो यह आपके लिए बहुत ज्यादा सम्मानजनक और निश्चय ही गौरवकी बात होगी। जिन्दगी और मौतके संघर्षमें जुटे होने पर भी आपका हमें इस बातकी स्वतन्त्रता देना आपके लिए सम्मानजनक होगा। आपके पास हमारी आवाज घोंट देने की असीम ताकत होते हुए भी, यदि आप यह महान् कदम उठायें और हमें यथासम्भव इस बातकी पूरी स्वतन्त्रता दें कि हम अहिंसाका पूरा पालन करते हुए भारतके लोगोंसे कहें कि वे युद्ध-प्रयत्नोंमें भाग न लें, तो यह आपके लिए सम्मानजनक बात होगी।'

युद्ध-प्रयत्नमें मदद देने से इनकार करने के लिए लोग चाहे जो तर्क दें, किन्तु मैं जो तर्क देता हूँ वही एक ऐसा तर्क है जो कांग्रेसजनोंके मुँहसे अच्छा लगेगा। लेकिन मैं सभी लोगोंसे उसी तर्कतक सीमित रहने की आशा नहीं करता। जिन लोगोंको मेरी तरह अन्तरात्मासे आपत्ति है, वे मेरा तर्क अपनायेंगे। जो लोग अंग्रेजी साम्राज्यवादसे उकता चुके हैं, वे उस तर्कका प्रयोग करेंगे। अन्य लोग और दूसरे तर्क रखेंगे। यह सब बोलने की स्वतन्त्रताके अन्दर माना जाना चाहिए, बशर्ते कि वे सब अहिंसाको अपनाये रहें और वे जो-कुछ कहें, साफ-साफ कहें, गुप्त ढंगसे न कहें। ये मेरे सेनापति होने के गूढ़ार्थ हैं। यदि इनसे आपको सन्तोष न हो तो आपको यह प्रस्ताव तुरन्त अस्वीकार कर देना चाहिए। जबतक आप युद्ध-प्रयत्नमें आदमियों और धनसे सहयोग न करने का प्रचार कर सकते हैं, तबतक सविनय अवज्ञा नहीं होनी चाहिए। लेकिन यदि आपको उसकी स्वतन्त्रता नहीं है, तो कोई स्वराज्य नहीं है बल्कि सतत दासता है। मैं चाहूँगा कि अंग्रेज लोग और वाइसराय संसारको यह बता सकें कि उन्होंने भारतीय नेताओंको इस बातकी आजादी दे दी है कि वे अपने लोगोंमें जैसा चाहें वैसा प्रचार कर सकते हैं। तब अंग्रेज संसारसे कह सकते हैं: 'हमें हमारे आचरणसे परखिए। यहाँ भारतमें हम सम्मानपूर्ण ढंगसे नियमोंका पालन कर रहे हैं।'

अंग्रेजोंकी यदि दिल्लीके प्रस्तावपर अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं हुई, तो मुझे उसकी परवाह नहीं है। वे कह सकते हैं, 'इस वक्त सरकारी काम-काजकी जो व्यवस्था है उसमें आप दखल नहीं दे सकते। मुक्ति अपने समयपर आपको मिलेगी। संकटकी इस घड़ीमें हमें परेशान न कीजिए।' मैं उस तर्कको समझूँगा। मुझे उससे सहानुभूति होगी। वे जो-कुछ कहते हैं उसमें जबतक जालसाजी या धोखा-धड़ी नहीं

होगी, तबतक मैं अपना हाथ रोके रखूँगा। हमें स्वतन्त्रता देना उनके लिए असम्भव है। यदि स्वतन्त्रता आनी है तो वह हमारी अपनी आन्तरिक शक्तिसे, हमारे अपने मतभेद मिटाने से, समाजके सभी वर्गोंकी एकतासे आयेगी। वह स्वर्गसे नहीं उतर सकती, न ही उसे एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रको उपहारके रूपमें दे सकता है। पता नहीं, मैं कार्य-समितिके सदस्योंकी भावनाओंका प्रतिनिधित्व कर रहा हूँ या नहीं, क्योंकि मैंने उनसे इन बातोंपर चर्चा नहीं की है। लेकिन आपको मुझे मेरी तमाम सीमाओंके साथ तथा यह जानते हुए स्वीकार करना होगा कि मैं किस तरह सोचता हूँ और क्या सोचता हूँ।

वाइसराय कह सकते हैं, 'आप एक स्वप्नद्रष्टा हैं।' मैं अपने उद्देश्यमें असफल हो सकता हूँ, लेकिन हम झगड़ा नहीं करेंगे। यदि वे कहते हैं कि वे लाचार हैं, तो मैं अपनेको लाचार महसूस नहीं करूँगा। मैंने जो स्थिति अख्तियार की है उसे मैं अवश्य निबाहूँगा। जब मैं राममनोहर लोहिया और जयप्रकाश नारायणको, जिनसे ज्यादा बहादुर और सच्चे आदमियोंसे मेरा परिचय नहीं है, जेलमें देखता हूँ, तो मैं चुपचाप बैठा नहीं रह सकता। उन्होंने हिंसाका प्रचार नहीं किया है; उन्होंने केवल रामगढ़-प्रस्तावके[1] आदेशोंका पालन किया है। उनके लिए वह एक सम्मानका प्रश्न था।

मैंने आत्मसंयम रखा है और मैं आत्मसंयम रखूँगा। मैं गिरफ्तार होना नहीं चाहूँगा। मैं सविनय अवज्ञा करना नहीं चाहता। मैं अपनेको जोखिममें नहीं डालूँगा। इस लड़ाईमें मैं ऐसा कुछ नहीं करूँगा जिससे गिरफ्तार किया जाऊँ। लेकिन यदि सरकार तय कर लेती है तो मुझे गिरफ्तार करने में उसे कोई कठिनाई नहीं होगी। मैं अपने होठोंपर ताला नहीं लगा सकूँगा और न अपनी कलम रोक सकूँगा। मुझे जेलमें रख सकना उनके लिए कठिन होगा — इसलिए नहीं कि भारत विद्रोह कर देगा। यदि भारत वैसा करता है तो वह उसकी गलती होगी। मुझे भीतरसे कुछ ऐसा लगता है कि वे मुझे जेलमें नहीं रख सकेंगे।

मैं वाइसरायके सामने अपने विचार रखूँगा। हो सकता है कि मैं अपने उद्देश्य में सफल न होऊँ। लेकिन मैंने कभी निराशाके साथ कोई काम हाथमें नहीं लिया। यह हो सकता है कि मैंने यह जानते हुए काम हाथमें लिया हो कि मुझे दुर्भेद्य दीवारका सामना करना पड़ सकता है, लेकिन मैं बहुधा दुर्भेद्य दीवारोंमें से निकल चुका हूँ। मैं इस विश्वास और आशाके साथ वाइसरायके पास जाऊँगा कि वे कांग्रेसकी भारतमें 'युद्ध नहीं' का प्रचार करने की पूरी आजादीकी माँगका औचित्य समझ जायेंगे। हर व्यक्तिको कलमसे और जबानसे यह प्रचार करने की पूरी आजादी होनी चाहिए कि 'हम साम्राज्यवादकी मदद नहीं कर सकते, हम लूट-पाटमें मदद नहीं दे सकते।'

आपकी ओरसे मैं सत्याग्रहको टालने का भरसक प्रयत्न करूँगा। जब वह होगा तो क्या रूप धारण करेगा, मैं नहीं जानता। लेकिन मैं इतना जानता हूँ कि सामुदायिक सविनय अवज्ञा नहीं होगी, क्योंकि इस मौकेपर सामुदायिक सविनय अवज्ञाकी जरूरत

१. देखिए खण्ड ७१, परिशिष्ट ६।

नहीं है। भविष्यमें क्या कार्रवाई करनी होगी, इस सम्बन्धमें मेरे आगे दुर्भेद्य अन्धकार है। मेरे पास कोई रहस्य नहीं है। मैं नहीं जानता कि मैं कैसे आपका नेतृत्व करूँगा, आपके सामने क्या काम रखूँगा। मैं आशा करता हूँ कि हम जो भी कदम उठायेंगे वह कांग्रेसकी परम्पराओंके और अवसरके अनुरूप होगा।

मैंने अकसर कहा है कि कांग्रेस क्या सोच रही है, यह मैं नहीं जानता, क्योंकि मैंने अपने-आपको सेवाग्राममें रमा दिया है। कांग्रेसकी कठिनाईके कारण ही मैं अपनेको बम्बई खींच लाया हूँ, और इस कर्त्तव्यसे मुक्त होते ही आप मुझे फिर सेवाग्राममें पायेंगे। लेकिन सेवाग्राममें रमा होने के बावजूद मेरे पास इस संघर्षका नेतृत्व करने की शक्ति और सूझ-बूझ है। और किसी जगहकी अपेक्षा सेवाग्राममें मैं बेहतर और स्पष्ट ढंगसे विचार कर सकूँगा, सिर्फ इसलिए कि मैंने वहाँ अपने विकासके लिए एक वातावरण बना रखा है। समय बीतने के साथ-साथ मेरा शरीर अवश्य क्षीण होगा, लेकिन मुझे आशा है कि मेरी बुद्धि क्षीण नहीं होगी। ऐसा लगता है कि उम्र बढ़ने के साथ-साथ मैं चीजोंको ज्यादा साफ देख पा रहा हूँ। यह आत्म-वंचना हो सकती है, पर इसमें कोई पाखण्ड नहीं है। आत्म-वंचना कभी-कभी अच्छी होती है, क्योंकि वह व्यक्तिको प्रसन्न रहने में और निराश न होने में मदद देती है। इसलिए मुझे सेवाग्रामसे बाहर खींचना आपकी गलती होगी; और मैं वादा करता हूँ कि नेतृत्वके अपने काममें मैं खरा उतरूँगा।

कांग्रेसमें कई दल हैं। हम सब एक ही मतके नहीं हैं। कांग्रेसमें अनुशासनहीनता है। मैं जानता हूँ कि दिनोंदिन बढ़नेवाले एक बड़े जन-संगठनमें यह चीज अनिवार्य है। यदि पूर्णतया अनुशासनहीनता ही हो और अनुशासन बिलकुल न हो, तो संस्था पतनके रास्तेपर जाने लगती है। यह नहीं कहा जाना चाहिए कि आप कांग्रेसमें तो आते हैं, पर आपका अहिंसामें विश्वास नहीं है। अपने हृदयमें हिंसा रखते हुए आप कांग्रेसकी शपथपर कैसे दस्तखत कर सकते हैं? मैं अहिंसाकी नीतिका पूरा-पूरा पालन चाहता हूँ। यह नीति जबतक कायम है, तबतक यह धर्म-जैसी है। क्योंकि जबतक हम उसे मान रहे हैं तबतक तो धर्मकी तरह ही है — मेरा तो जीवन-पर्यंत यह धर्म है; और आपका, जबतक कि आप इसे मानते हैं, यह धर्म है। कांग्रेससे इस्तीफा दे दीजिए और आप इससे मुक्त हो जायेंगे। हम जो भाषा प्रयोगमें लायें, जो विचार मनमें रखें, उनके बारेमें हमें साफ रहना चाहिए, क्योंकि विचारोंकी अभिव्यक्तिके अलावा भाषा है ही क्या? अपने विचार बिलकुल ठीक और सच्चे रखें, इससे आप स्वराज्यको जल्दी ले आयेंगे, भले ही सारा संसार आपके विरुद्ध हो। आप ९० लाख पौंड प्रति-दिन खर्च किये बिना या एक भी घर जलाये बिना स्वराज्य पा जायेंगे। यदि आप अपनी नीतिके सच्चे हैं तो मुझे विश्वास है कि आप इन चीजोंमें से कुछ भी किये बिना स्वतन्त्रताकी आलीशान अट्टालिका खड़ी कर लेंगे।

अब मैं हिंसाके पक्षपाती दलसे कुछ कहता हूँ। यदि आपसे हो सके तो तरीकों को गड्डमड्ड न कीजिए। आपने कुछ वर्षोंसे अपने-आपको संयममें रखा है। कुछ वर्ष और अपनेको संयममें रखिए। हमारी लड़ाई छोटी नहीं है। यदि आप अपनेको संयममें रखेंगे तो आपकी कुछ हानि नहीं होगी।

भाषण और लेखनकी स्वतन्त्रता स्वराज्यकी नींव है। यदि आधार-शिला ही खतरेमें है तो आपको उस आधार-शिलाकी रक्षाके लिए पूरी ताकतसे प्रयत्न करना है। ईश्वर आपकी मदद करे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-९-१९४०

६. भाषण : अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी, बम्बईमें – ३

१६ सितम्बर, १९४०

अबतक तो मैं आपका कप्तान नहीं हूँ। यह तब ही होगा जब कि आप यह प्रस्ताव[1] मंजूर कर लेंगे। आज तो मैं कांग्रेसका चार आने चन्दा देनेवाला सदस्य भी नहीं हूँ। सिर्फ आपकी कृपा और कार्य-समितिकी मंजूरीसे आपके सामने आ सका हूँ। आज मैं आपको एक-दो महत्त्वकी बातें सुनाना चाहता हूँ।

मौलाना साहबने तो आज यहाँ आने से मुझे रिहाई दे दी थी, लेकिन मैंने ही कहा कि समिति प्रस्तावको मंजूर करे, उसके पहले मैं जान तो लूँ कि उनके खयालात कैसे हैं, कैसे बोलते हैं, जिससे मुझे शायद कुछ प्रेरणा भी मिले। और सचमुच मुझे यहाँ काफी जानने को और सीखने को भी मिला है। एक बात तो मैंने यह सीखी कि इतने साल तक अहिंसाकी तालीम मिलने पर भी कई लोगोंने मर्यादा छोड़कर अपशब्द कहे। मुझे आश्चर्य होता है कि आप लोग इतना भी सोच नहीं सके कि आप लोग जो चाहते हैं वह तो इस प्रस्तावमें है ही। मैं देखता हूँ कि मैंने जो एक महत्त्वकी बात आपको कल बताई थी वह अखबारोंमें ठीक नहीं छपी है। मैं आज उसे स्पष्ट करना चाहता हूँ। इस प्रस्तावको बनाने में कार्य-समितिने स्वराज्यकी नींव बाँधी है।

यदि आप मुझसे 'स्वराज्य'की व्याख्या पूछेंगे तो वह न मैं दे सकूँगा, न जवाहरलालजी दे सकेंगे। हो सकता है कि और कोई मेरे खयालके अनुसार स्वराज्यकी व्याख्या पूरी-पूरी दे सके। आपमें से कोई भी स्वराज्यकी सच्ची व्याख्या मुझे भेज सकेगा तो मैं उसका शिष्य बन जाऊँगा। सच बात तो यह है कि स्वराज्य वस्तु ही व्याख्यातीत है। आज मेरे मनमें जो-कुछ भरा है उसका अंश-मात्र ही मैं अपनी व्याख्यामें दे सकूँगा। लेकिन इस प्रस्तावमें तो ऐसी खूबी है कि अगर आप लोग उसे पूरी तौरपर ग्रहण कर लें तो सब इच्छाएँ पूरी हो जायेंगी। वाणी-स्वातन्त्र्य और नागरिकताके अधिकार ही स्वराज्यकी जड़ हैं। बिना इसके स्वराज्यकी इमारत कच्ची रहेगी।

अगर आप इतनी बात समझ जायें तो आप देख सकेंगे कि आपकी सब दलीलें निकम्मी हैं। यदि हम समझौते द्वारा या लड़कर वाणी-स्वातन्त्र्य हासिल कर

१. देखिए पृ० १-२।

सकें तो फॉरवर्ड ब्लॉकके सरदार शार्दूलसिंह-जैसे और साम्यवादी पक्षके डॉ० अशरफ-जैसे भी सब लोग अपना-अपना कार्य कर सकेंगे। यदि मैं युद्धके विरोधकी नीतिको धार्मिक स्वरूप दूँ तो इस प्रस्तावका हेतु धर्म-स्वातन्त्र्य भी कहा जा सकता है। आप पूर्ण स्वतन्त्रता माँगते हैं। वह देना उनकी शक्तिके बाहर है। और वैसे ही सिर्फ अपनी स्वतन्त्रताका ऐलान करने से भी हम सचमुच स्वतन्त्र हो नहीं सकते। स्वतन्त्र तो तब ही होंगे जब अंग्रेज लोग यहाँसे अपना डेरा-डंडा उठा ले जायें, और यदि जापान, जर्मनी, एशिया या अफगानिस्तान हमारे ऊपर आक्रमण करें तब भी हम निश्चिन्त रह सकें। आज तो सम्पूर्ण स्वतन्त्रताके लिए सिविल नाफरमानी (सविनय अवज्ञा) की बात छेड़ना भी बेकार है। जिसकी अपनी स्वतन्त्रता भी चली जा रही है उससे स्वतन्त्रताके लिए लड़ना भी क्या? यदि एक प्रजा दूसरी प्रजाको स्वतन्त्रता दे सकती तो भी अंग्रेजोंकी अपनी हालत आज ऐसी नहीं है कि वे वह हमें दे सकें। आज तो वे खुद लड़ रहे हैं। इसके लिए उन्होंने सबके मुँह बन्द कर दिये हैं, क्योंकि वे मानते हैं कि हम उनके मातहत हैं। मैं तो नहीं हूँ, क्योंकि मै तो आज जो चाहता हूँ वह कह सकता हूँ और कर भी सकता हूँ। वह हक हासिल करने की खातिर आपको लड़ाई छेड़ने का भी अधिकार इस प्रस्तावसे मिलता है। यह हक देने की शक्ति उन लोगोंमें है, तब भी वे न दें और परिणामस्वरूप उनकी हालत दयाजनक हो जाये, तो उसके लिए हम जिम्मेदार नहीं ठहराये जायेंगे।

लड़ाई लड़ने का स्पष्ट ध्येय मैंने आपके सामने रख दिया है। वह स्वतन्त्रता का पाया है। और यदि वह हमारे पास न रहे तो स्वतन्त्रता हासिल करने का मुख्य हथियार हमारे हाथसे जाता रहेगा। इसलिए मैं चाहता हूँ कि इस रत्नको हासिल करके आप इसकी रक्षा करें। यह कोई छोटी-मोटी चीज नहीं। यह एक महत्त्वकी चीज है। इसकी उत्पत्ति मेरी बुद्धिमें से नहीं हुई। जब मैं भारी व्यथामें था और ईश्वरसे रास्ता सुझाने की प्रार्थना करता था तब उसने मुझे यह प्रेरणा दी।

राजाजी ने मुझसे कहा कि मेरी माँग तो उनकी माँगसे भी बड़ी है। इसमें आधा सत्य है। लड़ाईके दरम्यान ही वे [अर्थात् अंग्रेज] हमारी आजादीका ऐलान कर सकते हैं। लेकिन इसमें वे मध्यवर्ती [अर्थात् केन्द्रीय] सरकार पर हमारा कब्जा नहीं करने देंगे। कारण स्पष्ट है कि तब तो लड़ाई हमारे ही द्वारा चलानी पड़ेगी। और एक दिन राजाजी प्रधान हों, तो दूसरे दिन जवाहरलालजी और तीसरे दिन कोई और। इसलिए महासभाका पिछला इतिहास और मनोदशा जानते हुए वे हमारे सहयोग-जैसी अनिश्चित वस्तुपर निर्भरताका जोखिम कैसे उठायें? यदि मैं वाइसराय होऊँ तो मुझे भी डर लगे। परन्तु जो चीज मैं माँगता हूँ वह देने में तो कोई जोखिम नहीं। यदि सारा हिन्दुस्तान अपनी इच्छासे सिपाहियों और धनकी मदद न भी दे तो क्या?

यदि यह आप लोग पूरा समझ गये हों तो आप लोगोंने इस प्रस्तावमें जो सुधार करने की दरखास्तें की हैं वे सब वापस ले लें। मुझपर मेहरबानी करके नहीं। मैं आपका कप्तान बनना चाहता हूँ, वह आपकी कृपाकी खातिर नहीं, बल्कि

आप लोगोंको मेरी योग्यता महसूस हो तो ही। नहीं तो आप अपना काम करें और मैं सेवाग्राममें बैठकर अपना काम करूँ। आज मैं जिस जहाजका कप्तान वनता हूँ उसके लिए न मेरे पास नक्शा है न दिशासूचक यन्त्र। कोलम्वसकी तरह या शायद उससे भी वढ़कर आज मेरा वुरा हाल है। वह तो जानता था कि उसे जाना कहाँ है। उसको हिन्दुस्तान जाना था, लेकिन हिन्दुस्तानसे भी वड़ा देश उसके हाथ आया। मेरी उससे वहुत वुरी दशा है। तव भी मुझ-जैसेको आप अपना नायक वना रहे हैं, तो याद रखें कि आपको ही खलासीसे लेकर अफसर तक की सव जगह लेनी पड़ेगी। जैसे मैं आपकी कृपा नहीं चाहता हूँ, वैसे मैं भी आपपर कोई मेहरवानी नहीं करता। यदि आप मेरी इस वातको मंजूर करेंगे तो आपको कप्तानकी हर वात माननी पड़ेगी। जहाजके कप्तानको तो अधिकार होता है कि हुक्म न माननेवाले अफसर या खलासीको समुद्रमें फेंककर जहाजका वोझा हल्का करे।

हम जो स्वातन्त्र्य चाहते हैं उसपर सिर्फ एक अंकुश है। हम हिंसाका प्रचार नहीं कर सकते। यह शर्त इसलिए है कि जो सरकार खुद हिंसाकी ताकत पर खड़ी है वह दूसरोंकी हिंसा सहन नहीं कर सकेगी। यदि हिंसावादी भी आज मेरी वात सुनें तो अन्तमें उनको निराश होने का कोई कारण नहीं मिलेगा। क्योंकि अगर हम अहिंसामय स्वराज्य पा सकें तो पीछे हिंसावादीको सिर्फ हिंसाका प्रचार करने का ही नहीं, वल्कि उसपर आचरण करने का भी अधिकार रहेगा। हमारे पास लश्कर तो कोई होगा नहीं। मगर कोई सिख या खाकसार एक या ज्यादा तलवार रखना चाहे तो जरूर रख सकेगा, क्योंकि यदि और सव अहिंसा मानते होंगे तो उसमें हिंसावादी क्या कर सकेंगे? अगर जनताका अधिकांश आचार और वाणी पर कावू रखेगा तो उसका असर दूसरे पर विना पड़े नहीं रहेगा। यदि मैं स्वराज्यका प्रमुख वनूंगा तो ऐसी छूट जिसको चाहिए उसको दूँगा। इससे उलटा, यदि आपको हिंसा द्वारा स्वराज्य मिलेगा तो याद रखिए कि यह स्वतन्त्रता आपको नहीं मिलेगी।

जो लोग सामुदायिक सविनय भंग, हड़ताल वगैरा करना चाहते हैं, वे लोग भूल जाते हैं कि १९२० के प्रस्तावमें यह सव है। उसके लिए देशको तैयार करने का मैं आज वीस सालसे प्रयत्न करता आया हूँ। यदि आप लोग तैयार होते तो इनमें से हम काफी चीजें कर पाते और नई समाज-रचना भी कर सकते। लेकिन आप लोग तैयार नहीं थे तो उसमें किसका दोष?

तव भी जिसको सामुदायिक सिविल नाफरमानी [सविनय अवज्ञा] करनी हो वह कर सकता है, परन्तु वह अनुशासन-भंगका गुनाह माना जायेगा। हाँ, जैसा कि मैंने श्री सुभाषवावूको कहा था, वैसे उनको भी सफलता मिलने पर मुवारकवाद भेजूंगा। लेकिन वगावतका झण्डा खड़ा करनेवालोंको मेरा आशीर्वाद नहीं मिलेगा। आप लोगोंके लिए तो यही उचित होगा कि आप कांग्रेसमें से निकल जायें और फिर जो करना चाहें वह करें।

लेकिन सच बात तो यही है कि आज हम अहिंसाकी मर्यादामें रहते हुए सिविल नाफरमानी कर ही नहीं सकेंगे और इसीलिए आज मैं विद्यार्थियोंको विद्यालय छोड़ने से रोकता हूँ। सदाके लिए छोड़ना चाहें तो भले छोड़ें। हड़तालके बारेमें तो इतना ही कहना काफी होगा कि मजदूरोंके नेता सुरेश बनर्जी, जो एक दिन मेरे मित्र थे, बादमें उन्होंने दूसरा मार्ग ग्रहण किया, और जो आज फिरसे मेरी तरफ आ रहे हैं, वे मुझसे कहते थे कि सफल हड़ताल करने की चाबी आपके ही पास है। वह बात सत्य है, लेकिन आज उसमें से इस तरहका कोई भी काम करने की मेरी वृत्ति नहीं है। यदि करना भी चाहूँ तब भी आपकी मदद कहाँ मिलने को है? अगर मैं सबको चरखा चलाने की आज्ञा दूँ तो क्या सब निष्ठापूर्वक चरखा चलायेंगे? कुदाली चलाने को कहूँ तो वह भी बिना दलील किये क्या आप चलायेंगे? मुझे शक है।

यदि आज मैं जो कहता हूँ वह आप करें तो वाइसरायके पास मुझे सफलता मिलेगी ही। वह ना कहेंगे तो उससे मेरी जबान थोड़ी बन्द होनेवाली है? आपकी जबान तो आज भी खुली है। वाइसरायके पाससे लौटने के बाद आपकी जबान खुलेगी, ऐसा नहीं है। लेकिन उचित यह होगा कि जबतक मैं न लौटूँ और परिणाम न बताऊँ तबतक आप संयम रखें। इतना मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मैं ऐसा समझौता करके नहीं आऊँगा जिससे हमारी जबान ही बन्द हो जाये।

पण्डित जवाहरलालजी ने और डॉ० अशरफने हिन्दू-मुसलमानका प्रश्न छेड़ा है। यदि हमारे भाग्यमें झगड़ा होगा ही तो उसको कौन टाल सकेगा? अराजकता और अन्धाधुन्धके खतरेके लिए भी हमें तैयार रहना चाहिए। हमें विश्वास तो यह रखना चाहिए कि अहिंसाका परिणाम हिंसा नहीं होगा, और यदि होगा भी तो उसको काबूमें लाने की हममें ताकत होगी। और वही हमारी कसौटी भी होगी। अहिंसा चीज ही ऐसी है कि जैसे-जैसे हिंसाका वातावरण बढ़ता है वैसे-वैसे उसकी ताकत भी बढ़ती जायेगी। मुझे आशा है कि वह शक्ति मेरी मृत्युके पहले आपको मिलेगी। हम अहिंसक स्वराज्य तभी स्थापित कर सकेंगे जब हममें वह अहिंसा-बल आयेगा और उस बलके द्वारा हम दुनियामें अमन और शान्ति कायम कर सकेंगे।

एक पैगाम सब मुसलमान भाइयोंको देना चाहता हूँ। यदि आठ करोड़ मुस्लिम हिन्दकी आजादीके खिलाफ होंगे तो हिन्दको कभी आजादी मिलेगी ही नहीं। लेकिन वे लोग आजादीके खिलाफ हैं, यह मैं तब ही मानूँगा जब कि आठ कोटिमें से सब बालिग प्रतिनिधि उसके सामने अपना विरोध जाहिर करें। मगर मैं इसे नामुमकिन-सा समझता हूँ। हाँ, वे लोग यह ऐलान कर सकते हैं कि हिन्दुओंसे छुटकारा पाकर ही हमें आजादी चाहिए। हिन्दुस्तान-जैसा गरीब मुल्क, जिसके कोने-कोनेमें हिन्दू-मुसलमान साथ-साथ रहते हैं, उसके दो भाग करना अराजकतासे भी बढ़कर बुरी बात है। इसका अर्थ मानों जिन्दा शरीरको चीरकर टुकड़े करना है। यह 'सफेद खून' कोई बरदाश्त नहीं कर सकेगा। यह मैं एक हिन्दूकी हैसियतसे नहीं कहता। मैं तो हिन्दू, मुसलमान, पारसी सबके प्रतिनिधिके तौरपर यह कह

रहा हूँ। मैं तो मुसलमान भाइयोंसे कहूँगा कि सबसे पहले मेरे टुकड़े करो और बादमें हिन्दुस्तानके करना। आप यह करना चाहते हैं जो मुसलमानोंने अपने दो सौ साल तकके राजमें भी करना नहीं चाहा था। हम आपको यह नहीं करने देंगे। जो बात मुसलमानोंके बारेमें कही वही सिखोंको भी लागू होती है। यदि तीस लाख सिख हिन्दकी आजादीके रास्तेमें रोड़े अटकाना चाहें तो जरूर वे भी कर सकते हैं। तब उनके साथ भी हम अहिंसासे ही काम लेंगे। अहिंसक स्वराज्यके बिना अहिंसा नहीं मिल सकेगी। मैं तो कौमी एकताकी कोशिश करूँगा। इस्लामका अर्थ ही शान्ति है। वह शान्ति सिर्फ मुसलमानोंकी ही शान्ति नहीं है, बल्कि सब कौमों और सारे जगतकी शान्ति उसके अन्दर आ सकती है।

हरिजन सेवक, १२-१०-१९४०

७. भेंट : स्टिम्सनको[1]

[१७ सितम्बर, १९४०][2]

प्र० : अहिंसात्मक ढंगसे युद्ध-विरोधी प्रचार करने की माँग करते हुए आप यह कैसे कह सकते हैं कि आप ब्रिटेनको परेशानीमें नहीं डालना चाहते?

उ० : इसलिए कि अहिंसा कांग्रेसका सिद्धान्त है, और इसमें सब तरहके युद्धका विरोध निहित है। इसलिए कांग्रेसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह किसी भी तरहके युद्धसे अपना सम्बन्ध न रखे। अतः ब्रिटेनको परेशानीमें न डालने की मेरी इच्छा अनिवार्य रूपसे कांग्रेसकी हस्तीको बनाये रखने की आवश्यकतासे मर्यादित थी और उसके अधीन थी। यही कारण है कि सविनय अवज्ञा निश्चित रूपसे भाषण और कार्य करने की स्वतन्त्रता तक ही सीमित रखी गई है, बशर्ते कि ऐसा भाषण और कार्य पूर्णतः अहिंसात्मक हो। इसलिए मैंने अपने भाषणमें यह दावा किया है कि कांग्रेस जो-कुछ कर रही है यदि उसका पूरा आशय समझा जाये तो उससे अन्तमें ब्रिटेन और संसारका हित ही होगा।

क्यों?

इसलिए कि चारों तरफ फैली हुई प्रचण्ड ज्वालाके बीच यही एक ऐसी शक्तिशाली संस्था होगी जिसका चूड़ान्त अहिंसापर विश्वास है। यदि इसको सफलता मिलती है तो कराहते हुए संसारको राहतकी साँस मिल सकती है और इस राक्षसी शस्त्र-संहारसे बच निकलने का रास्ता मिल सकता है।

१ और २. प्रस्तुत भेंट-वार्ता महादेव देसाईके "सेवन डेज इन बॉम्बे" (बम्बईमें सात दिन) शीर्षक लेखसे उद्धृत है, जिसमें वे लिखते हैं कि "गांधीजी से एसोशिएटेड प्रेस ऑफ अमेरिका के प्रतिनिधिकी भेंट अ० भा० कां० कमेटीकी बैठक समाप्त होने के बाद २४ घण्टेके भीतर ही हुई।" अ० भा० कां० कमेटीका अधिवेशन १६ सितम्बरको समाप्त हुआ था।

यदि नाजियोंकी विजय हो जाये तो आपके विचारमें भारतका भविष्य क्या होगा?

मैं यही कह सकता हूँ कि यदि मेरा देश अहिंसाके सिद्धान्तपर अडिग रहता है तो मुझे ऐसी सम्भावनासे भी कोई डर नहीं लगता। परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि मुझे नाजियोंकी विजय होने पर कोई प्रसन्नता होगी। मुझे जिस बातसे डर लगता है, वह यह है कि फिलहाल जो-कुछ हो रहा है, उसे देखते हुए तो यही कहना पड़ता है कि नाजीवादकी पराजयके लिए बहुत भयंकर मूल्य चुकाना होगा, अर्थात्, इस नाजीवादकी जगह और भी ज्यादा प्रचण्ड किसी दूसरे नाजीवादका — या आप इसे चाहे जो नाम दीजिए — सहारा लेना पड़ेगा।

मलाबारमें जो-कुछ हुआ है[1], उसे देखते हुए क्या कोई ऐसी आशा है कि सार्वजनिक सविनय अवज्ञा अहिंसात्मक रूपमें चलेगी?

फिलहाल नहीं। और इसलिए आपने देखा ही होगा कि मैंने अपने भाषणमें[2] जोर देकर यह घोषणा की थी कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, इस बातकी कोई सम्भावना नहीं है कि मैं सार्वजनिक सविनय अवज्ञाका अभियान चलाऊँ। परन्तु आप मुझसे यह पूछें कि क्या ऐसी सामुदायिक सविनय अवज्ञा चलाना सम्भव है जिसकी परिणति हिंसामें न हो तो मैं जोर देकर कहूँगा कि 'हाँ है'। परन्तु मेरा देश इस समय सार्वजनिक कार्यवाहीके लिए तैयार नहीं है। और एक तरहसे मैं इसे ईश्वरकी कृपा मानता हूँ कि मलाबारकी इन दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओंसे देशको चेतावनी मिली है और इनसे मुझे भी संकेत मिला है।

क्या आपकी नीतिका यह अर्थ किया जाये कि अमेरिका ब्रिटेनको हवाई जहाजों और युद्धोपकरणोंकी जो सहायता दे रहा है, उसे आप नापसन्द करते हैं?

ऐसा बिलकुल नहीं है। और इसका सीधा-सा कारण यह है कि अमेरिकाको भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी तरह अहिंसात्मक कार्यवाहीमें विश्वास नहीं है। काश, उसका ऐसा विश्वास होता। यदि वैसा होता तो शान्तिकी दिशामें और ब्रिटेनकी सहायतामें अमेरिकाका योगदान, अमेरिका आज ब्रिटेनको जितने जहाज और जितनी युद्ध-सामग्री दे सकता है, उसकी अपेक्षा लाख गुना महान् और ठोस होता। अमेरिकासे मुझे जो साप्ताहिक डाक मिलती है और मुझसे मिलने के लिए जो अमेरिकी आते हैं, उनसे यदि अमेरिकाके जनमतका कोई परिचय मिलता हो तो मैं अमेरिकासे यह आशा रखता हूँ कि अमेरिका कांग्रेससे सबक लेकर शान्ति-स्थापनाकी दौड़में कांग्रेसको सार्वभौम निरस्त्रीकरण द्वारा पीछे छोड़ जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-९-१९४०

१. मलाबारमें कई स्थानोंपर जब लोगोंने मजिस्ट्रेटके आदेशकी अवज्ञा करने के लिए 'विरोध-दिवस' सभाएँ करनी चाहीं तो वहाँ उपद्रव शुरू हो गये। इसके फलस्वरूप कुछ पुलिसवाले और प्रदर्शनकारी मारे गये और कुछ घायल हो गये।

२. देखिए पृ० १४ और २५-२६।

८. भेंट : फ्रान्सिस जी० हिकमैनको[1]

बम्बई
[१७ सितम्बर, १९४०][2]

हिकमैन : विश्वको हिटलरवादसे सुरक्षित बनानेमें भारतका क्या योगदान है?

गांधीजी : यदि कांग्रेस अपने अहिंसात्मक प्रयत्नमें सफल हो जाती है तो हिटलरवाद तथा ऐसे सभी 'वाद' अपने-आप खत्म हो जायेंगे।

क्या आप ऐसा नहीं समझते कि अमेरिकामें भारत-विषयक तथ्योंकी बेहतर जानकारी हो और इस प्रकार दोनों देशोंके बीच चीजों और विचारोंका आदान-प्रदान बढ़ जाये, इस दिशामें भारतको कुछ करना चाहिए? आपके अनुसार इसके लिए क्या किया जाना चाहिए?

पहले हम चीजोंकी बात लें। अमेरिकाने तो अपनी चीजें भारतको भेजनेके मौकेका लाभ उठाया ही है; और वैसा करने में भारतीय परिस्थितियोंका और भारतकी इच्छाका खयाल नहीं रखा है। जहांतक विचारोंका सवाल है, मेरा दुःखद अनुभव यह है कि अमेरिकामें चलाया गया भारत-विरोधी प्रचार पूरी तरह हावी रहा है; यहांतक कि [रवीन्द्रनाथ] ठाकुर-जैसे अति विशिष्ट व्यक्तिके दौरेसे भी अमेरिकी मानस पर कोई असर नहीं हुआ।

लेकिन भारत अमेरिकामें ऐसा प्रयत्न क्यों नहीं करता कि अमेरिकी लोग भारतके विषयमें ज्यादा सही जानकारी पा सकें?

यदि अमेरिका सचमुच जानना चाहता है कि किसी समय भारतका क्या मत है तो उसके लिए काफी साहित्य है, जो दिन-प्रति-दिन बढ़ता जा रहा है और जिसे वे चाहें तो प्राप्त कर सकते हैं। और यदि आप किसी ऐसी भारतीय एजेंसीकी बात सोच रहे हैं जिसे भारतकी तरफसे प्रचारकका कार्य करना चाहिए, तो इस बारेमें फिर हमारा कटु अनुभव यह रहा है कि साम्राज्यवादी प्रचार, जो काफी योग्यतासे और लगनसे और बहुत पैसा लगाकर किया जा रहा है, ऐसा है कि हम कभी उससे पार नहीं पा सकते और ऐसी किसी भी एजेंसीका काम अबतक विफल ही साबित हुआ है।

१. महादेव देसाई लिखित "थॅन अमेरिकन्स क्वेश्चन्स" (एक अमेरिकीके प्रश्न) शीर्षक लेख से उद्धृत ५-१-१९४१ के बॉम्बे क्रॉनिकल में प्रकाशित समाचारके अनुसार यह भेंट "अ० भा० कां० कमेटीके अधिवेशनके समय बम्बईमें हुई, जिसमें हिकमैन भी उपस्थित थे।"

२. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे

क्यों न भारतीय लोगोंको हाथ-कता भारतीय कपड़ा पहनाया जाये और भारतकी मिलोंको निर्यातके लिए कपड़े और धागे तैयार करनेमें व्यस्त रखा जाये? क्या आप ऐसा नहीं समझते कि इससे कपास पैदा करनेवालोंको मदद मिलेगी?

मैं उसपर आपत्ति नहीं करूँगा। लेकिन यदि निर्यात होता है तो वह उस देशकी सच्ची जरूरतोंको पूरा करने के लिए होना चाहिए। भारतके लाभके लिए दूसरे देशोंके शोषणका मेरा कोई विचार नहीं है। हम स्वयं शोषणके विषैले रोगसे पीड़ित हैं और मैं नहीं चाहूँगा कि मेरा देश ऐसे किसी अपराधका दोषी बने। उदाहरणके लिए, यदि जापान एक स्वतन्त्र देशके नाते भारतकी मदद चाहे और कहे कि आप कुछ चीजें सस्ती तैयार कर सकते हैं और आप चाहें तो जापानको उनका निर्यात कर दें तो हम खुशीसे वैसा करेंगे। लेकिन मेरी योजनामें इस चीजके लिए कोई स्थान नहीं है कि एक देश किसी दूसरे देशमें अपनी सेना और नौसेनाकी सहायतासे अपना माल जबरन भर दे।

व्यापारिक मालके सिवा भारतके पास अमेरिकाको देने के लिए और क्या है, और बदलेमें भारत अमेरिकासे क्या आशा करता है?

मैं पहले तो आपका प्रश्न सही कर दूँ। भारत अमेरिकाको किसी तरहका व्यापारिक माल नहीं भेजता, वह तो केवल कच्चा माल भेजता है और यह ऐसी बात है, जिसपर हर राष्ट्रवादीको गम्भीर रूपसे विचार करना चाहिए। कारण, हमारा देश मात्र कच्चे मालका निर्यातकर्त्ता बना रहे, यह हम नहीं सह सकते, क्योंकि इससे तो हस्तकला तथा स्वयं कलाका भी विलोप हो जायेगा (जैसा कि हुआ भी है)। मैं अमेरिकासे आशा करूँगा कि वह भारतके साथ ऐसा बरताव न करे मानो वह अमेरिका द्वारा शोषण किये जाने के लिए ही है, बल्कि ऐसा बरताव करे मानो भारत, निःशस्त्र होते हुए भी, एक स्वतन्त्र देश है और इसलिए ऐसे व्यवहारके योग्य है जैसा कि अमेरिका भारतके हाथों पाना चाहेगा।

महोदय, आप ईसा मसीहका सन्देश दुहरा रहे हैं।

मैं आपकी बातसे सहमत हूँ। हम तकनीकी कौशलमें कमजोर हैं, लेकिन जैसे ही आप ईसा मसीहकी शिक्षाको स्वीकार कर लेंगे और उसपर चलने को तैयार हो जायेंगे, मुझे यह शिकायत करनेका कारण नहीं रह जायेगा कि यह सारी कला अमेरिकाके एकाधिकारमें चली गई है। तब आप यह कहेंगे कि 'यह एक भ्रातृदेश है, जो तकनीकी कौशलमें कमजोर है, अतः तकनीकी कौशलसे सम्बन्धित सारी सहायता हम इसे शोषणके लिए नहीं, भारी कीमत पर नहीं, बल्कि इसके लाभके लिए देंगे — यानी, मुफ्त देंगे।' और यहाँ कुछ शब्द मैं आपके मिशनरियोंके सम्बन्धमें कहना चाहूँगा। आप उन्हें यहाँ मुफ्तमें ही भेजते हैं — हमसे उसका कोई मूल्य नहीं लेते, लेकिन वह भी साम्राज्यवादी शोषणका अंग है। क्योंकि वे हमें आपकी तरह बनाना चाहेंगे — आपके मालके बेहतर खरीदार और आपकी मोटरों तथा विलासिताकी वस्तुओंके बिना रह सकने में असमर्थ। इसलिए जो ईसाइयत आप हमारे पास भेजते हैं, उसमें मिलावट

है। तथाकथित ईसाइयोंकी संख्या बढ़ाने के उद्देश्यके बिना यदि आप स्कूल, कालेज और अस्पताल बनवाते तो सेवा और परोपकारकी आपकी यह भावना निर्दोष कही जा सकती थी।

जहाँतक तकनीकी कौशलका सम्बन्ध है, मैं वह नहीं कर सकता जो टाटा कर रहे हैं। वे अपने विषयके विशेषज्ञ किसी अमेरिकी मैनेजरको अपने यहाँ २०,००० रु० महीनेपर ला सकते हैं। हालाँकि वे व्यावसायिक साहसकी भावनाका प्रतिनिधित्व करते हैं, लेकिन गरीब भारतका प्रतिनिधित्व नहीं करते। भारतमें ७ लाख गाँव हैं, जिनमें उसकी ९० फीसदी आबादी रहती है। अमेरिकाको इनके बारेमें सोचना है। अमेरिकाको यदि सच्ची मदद देनी है तो उसे अपनी सूझ-बूझका उपयोग इस दिशामें करना चाहिए। आज अमेरिका दूसरे देशोंको अपने मालका निर्यात करनेवाला एक प्रमुख देश है। यदि वह हमारी सच्ची मदद करना चाहता है तो उसे यह स्थिति छोड़नी होगी। राष्ट्रीय विकासकी योजनाओंके विषयमें मेरे विचार प्रचलित विचारोंसे भिन्न हैं। मैं औद्योगिक ढंगकी योजना नहीं चाहता। मैं अपने गाँवोंको औद्योगीकरणकी छूतसे बचाना चाहता हूँ। अमेरिकी शोषणने न तो शोषित देशकी नैतिक ऊँचाई बढ़ाई है और न शोषक देशकी। इसके विपरीत, उसने उनकी नैतिक उन्नतिके रास्तेमें बाधा डाली है और अमेरिकाकी लोक-सेवा और परोपकारकी सच्ची भावनाकी हत्या कर दी है। अमेरिकामें जैसी घटना हुई, वैसी भारतमें नहीं हो सकती। मेरा मतलब अभी अमेरिकामें टनों शक्कर और खेतीकी अन्य उपजका जो नाश किया गया है, उससे है। आप यह शक्कर और गेहूँ अन्य देशोंको दे सकते थे या अमेरिकाके ही बेकार लोगोंको खिला सकते थे।

लेकिन आप हमारे सुअर तो नहीं ले सकते थे!

हाँ, मैं जानता हूँ। लेकिन सभी लोग तो मेरी तरह नहीं सोचते हैं। पण्डित नेहरू औद्योगीकरण चाहते हैं, क्योंकि उनका खयाल है कि यदि इन उद्योगोंपर समाजका स्वामित्व हो तो वह पूँजीवादके दोषोंसे मुक्त होगा। मेरा अपना विचार यह है कि औद्योगीकरणमें ये सारी बुराइयाँ सहजात हैं और समाजका स्वामित्व कितना भी क्यों न हो, वह उन दोषोंको मिटा नहीं सकता।

हमने देख लिया है कि जर्मनीने बेल्जियम और अन्य देशोंके साथ क्या किया। क्या आप फिर भी हमें 'अहिंसा' की ही सलाह देंगे? तथापि आप कांग्रेससे संघर्ष करने को कहते हैं, क्योंकि उसके समाप्त हो जाने का खतरा है। इंग्लैण्ड भी ऐसे ही खतरेमें है, और इसीलिए लड़ता है।

इन दोनोंमें जो साफ अन्तर है, क्या आप उसे नहीं देखते? इंग्लैण्डको हिटलरको हराने के लिए हिटलरसे बढ़कर हिटलरी करनी होगी। हम उन शस्त्रोंमें से किसी भी शस्त्रका प्रयोग नहीं करना चाहते जिनका उपयोग वे करते हैं जो हमें कुचल देना चाहते हैं। मैं तो आक्रमणकारीसे कहूँगा कि 'आप हमारे गिरजाघर नष्ट कर सकते हैं, हमारे घर-द्वार और सबकुछ नष्ट कर सकते हैं, किन्तु हमारी आत्माको नहीं कुचल

सकते। मैं आपके देशमें आपके गिरजाघर और आपके घर नष्ट करने नहीं आऊँगा, मैं आपके हथियारोंसे अपने देशकी रक्षा नहीं करूँगा, मैं केवल आपसे सहयोग करने से इनकार करूँगा, आपकी अधीनता स्वीकार करने से इनकार करूँगा; एक शब्दमें, मैं आपसे कहूँगा, "नहीं"।' वह भले ही भारतको अधिकारमें ले ले, लेकिन यदि मेरी चली तो वह एक भी भारतीयसे अपनी सेवा नहीं करा सकेगा।

फिर, आपको एक दूसरा अन्तर भी जरूर देखना चाहिए। यदि हम सरकारसे सरकारके ही शस्त्रोंसे लड़ते होते तो शत्रुको चकित करने और उसकी कठिनाईका लाभ उठाने का यह हमारे लिए सबसे अच्छा मौका होता। लेकिन एक सालसे ज्यादा समयसे हम सरकारको परेशान न करने पर बहुत ज्यादा जोर देते रहे हैं। इसका उपयोग उलटे हमारे खिलाफ किया जाये, ऐसा नहीं होना चाहिए। लेकिन हम ब्रिटेनके हथियारोंका उपयोग नहीं करेंगे और इस प्रकार ब्रिटेनको उसकी इच्छा के विरुद्ध मदद देंगे। जिस समय उन्हें जर्मनीसे युद्ध करना है, उस समय सरकारकी बागडोर हमें सौंपने में वाइसरायकी अनिच्छा मैं समझ सकता हूँ, लेकिन राष्ट्रकी अहिंसात्मक भावनाको कुचलने की सरकारकी इच्छा नहीं समझ सकता।

लेकिन आप फिर उसी तरह बोल रहे हैं जिस तरह अपने जीवन-कालमें ईसा बोलते थे और वे लोग उस भाषाको नहीं समझ सकते।

मुझे अपने जीवनकी जोखिम उठाकर भी यही आग्रह रखना है। मेरी रायमें अहिंसा व्यक्तिगत गुण नहीं है, वरन् व्यक्ति तथा समुदाय दोनोंके लिए नैतिक और राजनीतिक आचरणका रास्ता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-९-१९४०

९. मेरा अन्याय

राजाजी के साथ दीर्घ कालसे मेरा निकटका परिचय है। मैं जानता हूँ कि वे एक ऐसे वीर पुरुष हैं कि उनको किसीके सहारेकी जरूरत नहीं। वे ऐसे अनासक्त हैं कि ज्यादा देर तक मानापमानकी ग्लानि दिलमें नहीं रख सकते। मैं यह भी जानता हूँ कि उनमें सुन्दर विनोद-वृत्ति है, इसलिए अगर उनको लेकर कोई मजाक किया जाये तो उसका वे आनन्द लेते हैं। इसलिए मेरी यह स्वीकारोक्ति निजी सन्तोषके लिए ही मानी जाये।

मैं खुले तौरपर कह चुका हूँ[1] कि अगर मैंने राजाजीको उत्तेजन न दिया होता तो नई दिल्लीमें जो प्रस्ताव उन्होंने पेश किया, वह न करते। उनकी तीव्र बुद्धि और प्रामाणिकताके लिए मेरे मनमें बड़ा आदर है। इसलिए जब उन्होंने आश्चर्य-

१. सम्भवतः संकेत "दिल्ली प्रस्ताव" शीर्षक लेखकी ओर है; देखिए खण्ड ७२, पृ० २८८-९०।

जनक आत्मविश्वासके साथ कहा कि इस विषयमें अहिंसाके अर्थ व प्रयोगके बारेमें मेरा अभिप्राय ही सच्चा है, आपका बिलकुल गलत है, तो मैं अपने अर्थके बारेमें खुद सन्देहमें पड़ गया, और मैंने लगाम ढीली छोड़कर राजाजी को उनके खयालके मुताबिक चलने को प्रोत्साहित किया। मैंने दुर्बलता दिखलाई और उनके प्रति अन्याय किया। दुर्बल आदमी संयोगवश ही न्याय करता है। इसके विपरीत, मजबूत और अहिंसक आदमी संयोगवश ही अन्याय करता है। मैंने राजाजी के प्रति अन्याय किया, क्योंकि मैंने उन्हें ऐसी स्थितिमें डाल दिया कि उनकी हँसी उड़ाई गई और उन्हें कटु आलोचनाका शिकार बनना पड़ा। अब भी मेरा विश्वास है कि वह प्रस्ताव एक भूल थी। उस भूलका सुधार हो जाने के कारण आखिर कांग्रेसको कोई हानि नहीं पहुँची है। किन्तु एक महान् नेताके लिए यह अच्छा नहीं है कि उसके किये-कराये पर इस तरह पानी फिर जाये। क्योंकि मुझे मालूम है, राजाजी अब भी मानते हैं कि वे सही थे। अगर उनकी चलती तो जो प्रस्ताव आज देशके सामने पेश हुआ है उसका यह रूप न होता, और मैं आज भी कांग्रेसके अन्दर नहीं, बाहर ही होता। क्योंकि वर्धा प्रस्तावके सहज परिणामस्वरूप दिल्लीका प्रस्ताव पास होने से पहले ही मैं तो वर्धामें भी कांग्रेससे बाहर था।

मैंने राजाजी के साथ अन्याय किया, उसी प्रकार कार्य-समितिके साथ भी किया। क्योंकि अगर मैं दृढ़ रहा होता तो वर्धाका प्रस्ताव भी पास न हुआ होता। मैं मानता हूँ कि जबतक सत्याग्रह और उसके फलितार्थोंके विषयमें मैं ही अकेला प्रमाणभूत व्यक्ति माना जाता हूँ तबतक इन बातोंका आखिरी फैसला मेरे ही मतके अनुसार होना चाहिए। ऐसे फैसले बहुमतसे नहीं होने चाहिए। मेरे साथी अगर चाहें तो भले ही मेरे आगे पक्ष-विपक्षकी दलीलें रखकर मुझे कायल करने की कोशिश करें कि उनकी व्याख्या सही है। परन्तु अगर मैं उनकी व्याख्या स्वीकार न कर सकूँ तो मेरे फैसलेपर ही उन्हें चलना चाहिए, क्योंकि मैं सत्याग्रहका जन्मदाता और सत्याग्रह आन्दोलनका सेनापति हूँ। मेरे फैसलेको साथी टाल सकें, इसका एक मात्र उपाय यह है कि वे मुझे नेतृत्वकी जिम्मेदारीसे मुक्त कर दें। और वर्धामें उन्होंने स्पष्ट रूपसे वही किया भी। लेकिन यह साफ है कि वह मुक्ति सही अर्थोंमें मुक्ति नहीं थी। वे तो मुझे मुक्त करने के लिए बिलकुल राजी नहीं थे; मैंने ही उन्हें मजबूर किया कि मुझे मुक्त कर दिया जाये। मेरी निर्बलताका आरम्भ वर्धासे ही हुआ। कार्य-समितिके आगे एक बड़ा गम्भीर मामला पेश हुआ था। मुझे उस समय अधिकार-क्षेत्रका सवाल उठाना चाहिए था। इस विषयमें कार्य-समितिका निष्णात व्याख्याता और कार्यकारी अफसर मैं था, और उस हैसियतसे जो विषय मेरे अधिकार-क्षेत्रका था उसके अर्थ और प्रयोगके बारेमें आखिरी निर्णय देना मेरा काम था। वह चीज समितिके अधिकार-क्षेत्रके बाहर थी।

मैं जानता हूँ कि अधिकार-क्षेत्रके बारेमें मेरा मत कार्य-समितिके सभी सदस्योंको मान्य नहीं है। यह प्रश्न फैसलेके लिए समितिके सामने नहीं आया है। लेकिन जो प्रस्ताव अब देशके आगे मौजूद है उसपर जब कार्य-समिति और मैंने अपना रुख

तय किया उसके पहले ही वह स्वीकारोक्ति मैंने समितिके आगे कर दी थी जिसे अब मैं एक सम्मान्य साथीके प्रति न्याय करने के लिए प्रकाशित कर रहा हूँ।

मेरा दृढ़ विश्वास है कि कार्य-समितिकी वर्धाकी पिछली बैठकमें उपस्थित सदस्योंकी कई कारवाइयोंके सुखद संयोगसे मौजूदा प्रस्तावकी अवधारणा हुई, और इसके परिणामस्वरूप हम एक राष्ट्रीय आपत्तिसे बच गये। अब हमने एक ऐसा फैसला किया है जिससे, अगर इसके प्रति कांग्रेसियोंकी प्रतिक्रिया जैसी चाहिए वैसी हो तो, हिन्दुस्तान उभरकर एक ऐसे बुलन्द दर्जेपर पहुँच सकता है कि जहाँ वह अभीतक कभी नहीं पहुँच सका था, और वह अपने लक्ष्यके भी इतना नजदीक पहुँच जायेगा जितना और किसी तरह नहीं पहुँच सकता था।

मेरा यह अनुमान ठीक है या गलत, यह तो समय ही बतायेगा, मगर यह तो मैं प्रसंगवश कह गया। यह स्वीकारोक्ति करने में मेरा यह उद्देश्य भी नहीं है कि पाठक इसे पढ़कर कार्य-समितिके अधिकार-क्षेत्रके सम्बन्धमें मेरा अभिप्राय स्वीकार कर लें। इसके जिक्रकी जरूरत तो मेरी गलती किस प्रकारकी थी यह समझाने के लिए पड़ी। अगर कोई सेनापति खुद निर्णय करने के बजाय अपने किसी साथीका निर्णय स्वीकार कर लेता है, बिना इस निष्कर्षपर पहुँचे कि वह सही है ही बल्कि इस खयालसे कि "वह सही हो सकता है", तो उसका यह व्यवहार अक्षम्य गिना जायेगा।

मेरी आशा है कि मैंने जनताको यह साबित करने के लिए काफी मसाला दे दिया है कि राजाजी ने जो-कुछ किया वह सही था और उसमें वीरता थी। उसमें जो गलती पैदा हुई उसके लिए जिम्मेदार मैं हूँ।

जो अभिप्राय मैंने राजाजी के नई दिल्लीवाले प्रस्तावके बारेमें दिया है, वही मैं उनके 'स्पोर्टिंग ऑफर' (खिलाड़ियोंकी भावना-जैसी उदारतायुक्त पेशकश) के बारेमें भी रखता हूँ। इस स्वीकृतिका प्रयोजन उनकी पेशकशका बचाव करना नहीं है। लेकिन जहाँतक मैं देख सकता हूँ, अगर पूनाका प्रस्ताव ठीक मान लिया जाये तो फिर इसमें शंका नहीं की जा सकती कि उनकी पेशकश सचमुच खिलाड़ीकी भावनासे की गई थी। यह बात याद रखनी चाहिए कि मुस्लिम लीग एक बड़ी संस्था है और हिन्दुस्तानके मुसलमानोंके ऊपर उसका काफी प्रभाव है। कांग्रेसने इससे पहले उससे काफी व्यवहार रखा है, और मुझे जरा भी शक नहीं कि वह आगे भी रखेगी। हमारे हिसाबसे कायदे-आजम[1] चाहे कितनी ही गलतीपर क्यों न हों, हमें चाहिए कि जैसे हम खुद अपने लिए प्रामाणिकताका दावा करते हैं, वैसे ही उन्हें भी प्रामाणिकताका श्रेय दें। जब लड़ाईके बादल छँट जायेंगे और हिन्दुस्तान अपना आजादीका जन्मसिद्ध अधिकार पा लेगा, तब मुझे शक नहीं कि कांग्रेसी लोग किसी मुसलमान, सिख, ईसाई या पारसीको अपने प्रधान मन्त्रीके तौर पर वैसे ही सहर्ष स्वीकार करेंगे जैसे कि एक हिन्दूको; इतना ही नहीं, वह कांग्रेसी

१. मुस्लिम लीगके नेता मुहम्मद अली जिन्ना

न भी हो तो भी वैसे ही और किसी प्रकारके धर्म-वर्णके भेद के विना उसे स्वीकार करेंगे। मुझे पूरा विश्वास है कि राजाजी के *'स्पोर्टिंग ऑफर'* का बिलकुल यही अर्थ था। आजकलकी भड़की हुई रागद्वेषादिकी ज्वाला जब ठंडी पड़ जायेगी तब राजाजी के आलोचक उनकी पेशकशको सही रूपमें देख सकेंगे। एक देश-सेवकके बारेमें गलत राय बना लेना उचित नहीं है, और खास तौरपर जब कि वह राजाजी के दर्जेका देश-सेवक हो। राजाजी के बारेमें जो गलत राय बनाई गई है उससे उन्हें कुछ भी नुकसान नहीं हुआ है, मगर कौम अपने सच्चे सेवकोंके बारेमें इस तरह गलत राय बनाकर और अपने-आपको उनकी सेवासे वंचित करके अपने पाँवपर कुल्हाड़ी मार सकती है। खास तौरपर एक ऐसे समयमें जब कि कांग्रेसको मूलभूत स्वतन्त्रताके लिए अहिंसक युद्ध छेड़ना पड़ सकता है, कांग्रेसी लोगोंको जल्दबाजीमें कठोर और अनुदार राय बनाने से बचना चाहिए।[1]

वर्धा जाते हुए ट्रेनमें, १८ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-९-१९४०

१०. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

१८ सितम्बर, १९४०

इसी महीनेकी १६ तारीखको अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने अपने अधिवेशन में जो प्रस्ताव पास किया है, उसे आपने अवश्य देखा होगा। लेकिन आपकी सुविधाके लिए मैं उसकी एक नकल संलग्न कर रहा हूँ तथा समाचारपत्रकी एक कतरन भी रख रहा हूँ, जिसमें हिन्दुस्तानी और अंग्रेजीमें मेरे भाषणका काफी ठीक सारांश दिया गया है।

मैं अब आपसे जल्दीसे-जल्दी जब भी आपको सुविधा हो, मुलाकातका समय देने के लिए प्रार्थना करता हूँ। मुलाकातकी यह माँग मैं आपसे कांग्रेसके पथ-प्रदर्शककी हैसियतसे कर रहा हूँ और जैसा कि आपने मुझे अपने को कहने की अनुमति दी है, आपके एक मित्रकी हैसियतसे भी कर रहा हूँ।[2]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०१६३)से। सौजन्य : इंडिया ऑफिस

१. चक्रवर्ती राजगोपालाचारीके उत्तरके लिए देखिए "राजाजी की टिप्पणी", पृ० ६०-६२।

२. वाइसरायने २२ सितम्बरको तार द्वारा यह पत्र भारत-मन्त्रीको भेजा और कहा : "मैंने उत्तर दिया है कि शुक्रवार, २७ सितम्बरको उनसे मिलकर मुझे बहुत खुशी होगी।"

११. भेंट: 'न्यूज क्रॉनिकल' को[1]

बम्बई
१८ सितम्बर, १९४०

संवाददाता: अंग्रेजोंके मौजूदा संकटमें उनके प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त करते हुए क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि आपके पहलेके निर्णयों और अभी हालके निर्णयमें असंगति है?

गांधीजी: मुझे भय था कि मेरे विरुद्ध असंगतिका आरोप लगाया जा सकता है और इसलिए मैंने अपने भाषणमें[2] पहले ही अपनी स्थितिको साफ-साफ और काफी अच्छी तरह समझा दिया था। यदि इस मामलेमें कोई असंगति है, तो वह बदली हुई परिस्थितियोंके कारण है। मेरी सहानुभूति न केवल वैसी ही है जैसी युद्धकी घोषणा होने पर शिमलामें व्यक्त की गई थी[3], बल्कि वह और गहरी हो गई है; क्योंकि जो काल्पनिक था वह अत्यन्त वास्तविक हो गया है। शिमलामें लगभग एक साल पहले तो मैंने ब्रिटेनपर जो विपत्ति आ सकती थी, उसपर अपना दुःख व्यक्त किया था। आज जिस चीजका डर था वह घटित हो गई है और अभी हो रही है। मेरा स्वभाव ऐसा है कि हर विपत्ति, वह किसीकी भी हो, मुझे विचलित कर देती है। लेकिन, मेरी सहानुभूति एक साल पहलेकी अपेक्षा अधिक गहरी तो है, तथापि उसका रूप निस्सन्देह बदल गया है। मैं हालकी सरकारी घोषणाओंके लिए तैयार नहीं था, और मैं दावा करता हूँ कि अपनी सहानुभूतिकी सचाईके कारण ही मैंने और सब-कुछ छोड़कर केवल एक ही चीज सामने रखी, जिसे ब्रिटेन आसानीसे स्वीकार कर सकता है और जिसे वह अपने युद्ध-संचालनके कार्यमें किसी बाधाकी आशंकाके बिना हमें दे सकता है। मैं बेहिचक मानता हूँ कि जो लोग ब्रिटिश साम्राज्यवाद तथा उसका जो-कुछ अर्थ होता है, उसके दृढ़ विरोधी हैं उनके साथ युद्ध-संचालनकी जिम्मेदारी न बँटानेका औचित्य हो सकता है और इसलिए मुझे लगा कि यदि कांग्रेस सरकारको परेशान न करनेकी नीतिपर चलती रहती है, जैसा कि उसकी अहिंसाकी नीतिमें निहित ही है, तो उसे फिलहाल स्वराज्यके लिए

१. महादेव देसाई द्वारा लिखित "सेवन डेज इन बॉम्बे" (बम्बईमें सात दिन) से उद्धृत, जिसमें उन्होंने लिखा है कि "संवाददाता . . . गांधीजी से ऐसे समयमें मिला जब कि गांधीजी सारे दिन काफी व्यस्त रह चुके थे और पिछली रात पूरी तरह सो भी नहीं सके थे; तथा उन्हें अभी कई कार्यक्रम पूरे भी करने बाकी थे।"

२. देखिए पृ० १०-१४।

३. देखिए खण्ड ७०, पृ० १७९-८०।

सीधी कार्रवाईवाला कोई आन्दोलन नहीं छेड़ना चाहिए। लेकिन भाषणकी स्वतन्त्रता तथा तदनुरूप कार्य तो लोकतान्त्रिक जीवनका प्राण है। ऐसे समय, जब यूरोपके युद्धरत देश बर्बर पशुताका प्रदर्शन कर रहे हैं, इस सत्यके प्रचारकी स्वतन्त्रता कि अहिंसा युद्धका स्थान ले सकती है, बहुत ही प्रासंगिक है। यूरोपमें जो अमानवीयता बरती जा रही है, वह यदि किसी व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा रोकी नहीं जाती तो सारे विश्वमें फैल सकती है। कांग्रेस यदि झूठी सहानुभूतिके कारण अथवा, जो उससे भी बुरी बात होगी, परिणामोंके भयसे इस अमानवीयताके विरुद्ध संघर्ष करना छोड़ देती है तो उसका एक अहिंसात्मक संस्था माने जाने का हक छिन जायेगा। मैं आशा करता हूँ कि कांग्रेसकी नीतिका यह बयान — जैसा कि उसके एकमात्र दिशा-निर्देशकके रूपमें मैं इसे समझा हूँ — न केवल ब्रिटिश जनमतको सन्तुष्ट करेगा, बल्कि उसे कांग्रेसके पक्षमें खड़े होने को प्रेरित करेगा, ताकि वाइसराय कांग्रेसकी माँगका औचित्य समझ सकें। यह माँग कांग्रेस केवल अपने लिए नहीं कर रही है, यह तो वाणीकी स्वतन्त्रताकी माँग है, जिसका प्रयोग इस शर्तके साथ कोई भी कर सकता है कि वह किसी भी रूपमें किसी ढंगसे हिंसाको बढ़ावा न दे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-९-१९४०

१२. अब्दुल गफ्फार खाँको लिखे पत्रका अंश[1]

[१८ सितम्बर, १९४० के पश्चात्][2]

मैं आशा करता हूँ कि बम्बईमें हम दोनोंकी जो बातचीत हुई, वह सब आपके मनमें अच्छी तरह पैठ गई है। यदि ऐसा है तो जो सिद्धान्त मैंने आपके सामने रखने की कोशिश की, उनको ध्यानमें रखकर हर समस्या हल की जा सकती है। हमारी अहिंसा घरमें बच्चों, बूढ़ों, पड़ोसियों और मित्रोंके साथ शुरू होनी चाहिए। हमें अपने मित्रों और पड़ोसियोंके तथाकथित दोषोंको अनदेखा करना है और अपने दोषोंको कभी क्षमा नहीं करना है। केवल तभी हम अपनेको ठीक बना सकते हैं और जैसे-जैसे हम ऊपर उठें, हमें अपने राजनीतिक साथियोंके साथ इस अहिंसाका आचरण करना है। हमें उन लोगोंके भी दृष्टिकोणोंको जानना और समझना है जो हमसे मतभेद रखते हैं। हमें उनके साथ धैर्यसे काम लेना है और उनकी गलतियाँ उन्हें ठीकसे समझानी हैं और अपनी गलतियाँ समझने को तैयार रहना है। फिर आगे बढ़ते हुए हमें उन राजनीतिक दलोंसे धैर्यपूर्वक और प्रेमपूर्वक बरताव करना है जिनकी

१. महादेव देसाई लिखित "ऑन दि पाथ ऑफ अहिंसा" (अहिंसाके पथपर) से उद्धृत

२. बम्बईमें गांधीजी और अब्दुल गफ्फार खाँके बीच हुई बातचीतके उल्लेखके आधारपर। १३ सितम्बरसे १८ सितम्बर, १९४० तक बम्बईमें हुई कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लेने के लिए अब्दुल गफ्फार खाँको निमन्त्रित किया गया था।

नीतियाँ और सिद्धान्त हमसे भिन्न हैं। हमें उनकी आलोचनाको उनके दृष्टिकोणसे देखना है और हमेशा यह याद रखना है कि हमारे और अन्य लोगोंके बीच जितनी ही ज्यादा दूरी होती है, हमें अपनी अहिंसाके प्रयोगके लिए उतना ही बड़ा क्षेत्र मिलता है, और जब हम इन क्षेत्रोंमें अपनी परीक्षा पास कर चुकेंगे, तभी हम उन लोगोंके साथ निबट सकेंगे जिनके विरुद्ध हम लड़ रहे हैं और जिन्होंने हमारे साथ घोर अन्याय किया है।

हमने एक तो इस बातके बारेमें चर्चा की थी। दूसरी बात मैंने यह कही थी कि अहिंसक व्यक्तिको नींदके सिवा सब समय अपने-आपको उपयोगी काममें लगाये रखना चाहिए और इसलिए रचनात्मक कार्यका उसके लिए वही महत्त्व है जो हिंसावादियोंके लिए शस्त्रोंका।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१-१९४२

१३. पत्र : नारणदास गांधीको

२० सितम्बर, १९४०

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तार भी मिला। सरदारको[1] लिखा है, यह अच्छा किया। ऐसी आलोचनासे विचलित कदापि नहीं होना चाहिए। तुम्हारी कार्य-पद्धति सबसे निराली है, यह तुम्हें समझ लेना चाहिए और यह भी कि ऐसे व्यक्तियोंकी आलोचना तो होती ही रहती है। तुमने अपना वातावरण बना लिया है। उसमें तुमसे जो हो सके, सो करते रहो। मुझसे जो मदद हो सकेगी, मैं दिया करूँगा। तुम्हारा मार्ग कठिन है, यह मैं समझ गया हूँ। बा को तुम्हारे पास भेजूंगा। मैंने लिखा तो है कि मावलंकर[2] अथवा ऐसा ही कोई आ सके तो आये। बा अहमदाबादमें एक महीना रहेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५७९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. वल्लभभाई पटेल
२. जी० वी० मावलंकर, तत्कालीन बम्बई विधान-सभाके अध्यक्ष; उन्हें 'दादा' भी कहा जाता था।

१४. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

२० सितम्बर, १९४०

चि० काका,

कानपुरकी रिपोर्टवाली चीज अवश्य प्रकाशित कर सकते हो।

डॉ० महमूद[1]-सम्बन्धी अंश पढ़ गया। उसमें से लेने-योग्य कुछ बहुत नहीं है। उसे वापस भेज रहा हूँ। बालका[2] पत्र भेजूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बेगम सीतावाला [प्रसंग] पढ़ रहा हूँ।

"अनन्तकी इमारतमें बहुत लोग रहते हैं"[3] (देखिए पद ३४), इसमें इमारत शब्द क्यों उपयुक्त नहीं लगता?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९३७)से

१५. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

वर्धा

२० सितम्बर, १९४०

समाचारपत्रोंमें जो-कुछ कहा जा रहा है, उससे ज्ञात होता है कि वाइसराय महोदयसे मेरी होनेवाली भेंटके मुख्य उद्देश्यके बारेमें भ्रम है। अच्छा हो कि मेरी इस भेंटके उद्देश्यके बारेमें कोई गलतफहमी न हो।

यदि यह मान लें कि भेंटकी इजाजत दे दी जाती है तो यह समझ लिया जाना चाहिए कि मैं वाइसरायके सिरपर कोई पिस्तौल — यानी जिस सविनय अवज्ञाके बारेमें सोचा जा रहा है उसे यदि पिस्तौल माना जाये तो — तानने नहीं जा रहा हूँ बल्कि, जैसा कि मैंने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने अपने भाषणमें स्पष्ट कर दिया था,[4] मैं तो इसलिए जा रहा हूँ कि निश्चयपूर्वक जान सकूं कि वाइसराय महोदयकी घोषणासे शुरू होनेवाले सरकारके कार्योंसे मैंने जो

१. सैयद महमूद, बिहारके भूतपूर्व शिक्षा, विकास तथा रोजगार मन्त्री
२. दत्तात्रेय बा० कालेलकरके पुत्र
३. उद्धरण-चिह्नोंके अन्दर दिये हुए शब्द साधन-सूत्रमें हिन्दीमें हैं।
४. देखिए पृ० १९-२०।

अर्थ निकाले हैं, वे ठीक हैं। यदि वे तर्क, जिनपर कांग्रेसका पक्ष आधारित है, गलत हैं, तो फिर सविनय अवज्ञा करने का कोई समुचित कारण नहीं है। मैं अपने काममें विश्वासके साथ और दृढ़तासे तबतक नहीं लग सकूँगा जबतक मैं अपने तथ्योंके बारेमें और उनसे निकाले जानेवाले निष्कर्षोंके बारेमें पूरी तरह निःशंक नहीं हो लेता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-९-१९४०

१६. पत्र : सिन्धके कार्यकर्त्ताको

[२१ सितम्बर, १९४० के पूर्व][1]

ऐसा मत समझिए कि सिन्धकी मैं कोई परवाह ही नहीं करता। लेकिन मैं लाचार महसूस करता हूँ। लोगोंमें मेरा उपाय अपनाने की क्षमता नहीं है और मेरे पास अन्य उपाय हैं नहीं। इसलिए उन्हें किसी दूसरे चिकित्सकके पास जाना चाहिए।[2]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-९-१९४०

१७. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धागंज
२१ सितम्बर, १९४०

घनश्यामदास बिड़ला
मार्फत लकी
कलकत्ता

हिसारमें आपकी जायदाद मोठ गाँवमें हरिजनोंके लिए कुएँके सम्बन्धमें फूलसिंहजी[3] उपवास कर रहे हैं। मुझे बताया गया है कि केवल आपके ही बीचमें पड़ने से बहुमूल्य कार्यकर्त्ताका जीवन बच

१. यह पत्र दिनांक "सक्खर, २१ सितम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित एक समाचारमें छपा था।

२. देखिए "सिन्धके हिन्दू", २८-९-१९४० भी।

३. भगत फूलसिंह रोहतक जिलेके एक पटवारी थे, जिन्होंने स्वामी श्रद्धानन्दके प्रभावमें आकर घूस न लेनेका प्रण किया, और बादमें पद-त्याग कर दिया। २ सितम्बर, १९४० से वह उपवास कर रहे थे, और जब उनके एक पखवाड़ेसे भी ऊपर उपवास कर चुकने के बाद बाधा डालनेवाले लोग कुआँ बनाने का काम पूरा करने देने के लिए राजी हो गये तभी उन्होंने अपना उपवास खत्म किया।

सकता है। मुसलमान तथा हिन्दू जाट हरिजनोंके लिए कुएँका विरोध कर रहे हैं। यह कुआँ लगभग जनताके चन्देसे ही बनाया जा रहा है और यदि उक्त विरोध न होता तो बन भी चुका होता।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८४९) से। सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१८. तार : नारणदास गांधीको

वर्धागंज
२१ सितम्बर, १९४०

नारणदास गांधी
राजकोट

बा अहमदाबाद में है। तुम्हारे सुझावके अनुसार [उसे] लिख रहा हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से

१९. पत्र : शरतकुमार रायचौधरीको

सेवाग्राम, वर्धा
२१ सितम्बर, १९४०

प्रिय शरतकुमार बाबू,

आपका १७ तारीखका पत्र मिला। आपने जिन मामलोंके बारेमें बताया है, वे निश्चय ही खराब हैं, लेकिन मुझे जबतक तथ्योंकी पूरी जानकारी न हो, तबतक मैं उनके विषयमें 'हरिजन' में कुछ नहीं लिख सकता। यह हिन्दू महासभाका खास काम है। आपके संगठनमें कई योग्य वकील हैं। मैं आपको सलाह दूंगा कि आप कुछ ऐसे मामलोंकी जानकारी इकट्ठी करें जिनके लिए पक्के सबूत हों, उन्हें सरकारके ध्यानमें लायें और यदि सरकार कोई सहायता न करे तो उनपर लोकमत तैयार करने के लिए उन्हें जनतामें प्रचारित करें। मैं देखता हूँ कि समाचारपत्रोंमें मुस्लिम बहुमत-वाली सरकारों और कांग्रेस-सरकारोंके अपराधोंको लेकर बहुत गैर-जिम्मेदाराना और गरमा-गरम बहस की जाती है। परिणामतः निरन्तर कटुता बढ़ती जाती है और जनता के सामने सचाई नहीं आने पाती। आप सही वातावरण तैयार करने की दिशामें बहुत-कुछ कर सकते हैं। मेरे इस पत्रसे यह नहीं समझना चाहिए कि मैं आपकी संस्थापर कोई आक्षेप कर रहा हूँ। मुझे स्वीकार करना होगा कि मुझे आपकी संस्थाकी प्रवृत्तियोंके इतिहासकी कोई जानकारी नहीं है। मैंने ऊपर जो सुझाव

दिया है, कदाचित् आप वही कर रहे हैं। यदि आप लोग ऐसा ही कर रहे हैं तो इस सम्बन्धमें जो-कुछ लिखित सामग्री हो, आप मुझे भेज सकते हैं। मैं आपसे इसकी जाँच कर जाने का वादा तो नहीं कर सकता। हो सकता है कि मुझे समय न मिल पाये। लेकिन मैं चाहूँगा कि मुझे आपके प्रान्तमें होनेवाली ऐसी घटनाओंकी जानकारी मिलती रहे जिनपर सार्वजनिक रूपसे ध्यान दिया जाना जरूरी है और चूँकि मैं इसको लेकर सभाके साथ सार्वजनिक चर्चा छेड़ना नहीं चाहता, मैं चाहूँगा कि आप यह पत्र समाचारपत्रोंको न भेजें। मैंने तो यह सब केवल मित्रके नाते इसलिए कहा है कि मेरी कामना है कि दोनों सम्प्रदायोंके बीच शान्ति स्थापित हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

२०. पत्र: मीराबहनको

२१ सितम्बर, १९४०

चि० मीरा,[1]

मैंने इधर कुछ रोजसे तुम्हें पत्रसे वंचित रखा है। परन्तु बम्बईमें मुझे न समय मिला, न शान्ति। मैं गुरुवारको लौटा था, परन्तु तुम्हें आज (शनिवारको) ही लिख सका हूँ।

कन्हैयालालने[2] मधुर उत्तर भेजा है। वे स्थितिको समझते हैं और उसका उन्हें अहसास है। इसलिए तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होगी।

पूनियोंके बारेमें तुम्हारी बात मैंने समझ ली।[3] मैंने अब लक्ष्मीदासको[4] सूचित कर दिया है कि तुम्हें उत्तम पूनियाँ भेज दे, ताकि तुम बारीक सूत कात सको। जब मिल जायें तो मुझे बताना और तुम्हारी पूनियाँ खत्म होने लगें, तब समय रहते मुझे सचेत कर देना।

तुम्हारे पत्रके वर्णनात्मक अंश सदाकी भाँति ताजगीभरे और मजेदार हैं। इससे मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि तुम्हें आन्तरिक शान्ति है। अगर तुम्हारी

१. इसमें तथा मीराबहनको लिखे अन्य पत्रोंमें सम्बोधन देवनागरीमें है।

२. **बापूज लेटर्स टु मीरा** में मीराबहन लिखती हैं: "लाला कन्हैयालाल बुतैल मेरे मेजबान थे, जिन्होंने अपने चीड़के जंगलमें मेरे लिए एक कुटिया बनवा दी थी।" कन्हैयालालको लिखे गांधीजीके पत्रके लिए देखिए खण्ड ७२, पृ० ४५९।

३. मीराबहन लिखती हैं: "मैंने बापूको लिखा था कि चूँकि मैं जप और कताई साथ-साथ करती हूँ और मालाके दानोंकी जगह चरखेका चक्कर गिनती हूँ, इसलिए मैं चाहती थी कि मेरी कताईके बीच रुईकी धुनाई और पूनियाँ बनाने की वजहसे कार्यमें व्यवधान न आने पाये, क्योंकि बीचमें इन कार्योंको करते हुए जप करना मुश्किल होता था।"

४. लक्ष्मीदास आसर

वहाँकी साधनासे तुम्हारी शान्तिमें सतत वृद्धि नहीं होगी तो साधना व्यर्थ होगी। पशु-पक्षी और पेड़-पत्थरोंसे तुम्हारा प्रेम ही तुम्हारा सबसे बड़ा सहारा है। ये ऐसे मित्र और साथी हैं जो कभी धोखा नहीं देते।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

मुझे उम्मीद है कि तुम यह नहीं चाहती कि मैं तुम्हें राजनीतिक समाचार या आश्रमकी खबरें भी दूं।[1]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४५९) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००५४ से भी

२१. तार : लॉर्ड लिनलिथगोको

[२२ सितम्बर, १९४०][2]

महामान्य वाइसराय
शिमला

तारके लिए अनेक धन्यवाद। आशा है कि शुक्रवारको पहुँच जाऊँगा।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२२. सन्देश : गोरक्षा सभाको

[२२ सितम्बर, १९४०][3]

जिस सभाके अध्यक्ष सरदार हों, उसे क्या सन्देश भेजा जाये? फिर भी, माँग हुई है इसलिए भेज रहा हूँ। मैं अपने को उत्तम गो-सेवक मानता हूँ। इसलिए उनके दानका अच्छा ही उपयोग होगा। परन्तु उन्हें जानना चाहिए कि यदि वे स्वयं गो-माताका दूध न पीते हों और गो-माताके दूधका ही घी न खाते हों, तो दानमें मिली हुई ७१ गो-माताएँ किसे दूध पिलायेंगी?

मो० क० गांधी

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाई पटेलने, पृ० २४२

१. मीराबहन लिखती हैं : "मैंने हरिजन-समेत सभी समाचारपत्रों और बापूके पत्रोंको छोड़कर बाकी सभी लोगोंके पत्रोंको पढ़ना बन्द कर दिया था।"

२. देखिए पृ० ३५, पा० टि० २।

३. देखिए अगला शीर्षक।

२३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेवाग्राम
२२ सितम्बर, १९४०

भाई वल्लभभाई,

तुम अब तो यहाँ क्यों आओगे? कल जरूर मैंने तुम्हारे आने की राह देखी थी। अब तो मैं बुधवारको यहाँसे चला जाऊँगा।

किरानेके व्यापारी ७१ गायोंका दान करेंगे।[1] शामलदासने[2] सन्देश[3] माँगा था, सो भेज दिया है। उसमें जो कहा गया है, वह दानियोंको समझाना। अगर वे लोग दानके साथ कोई शर्त रखें, तो स्वीकार मत करना। मैं उसका उपयोग गो-रक्षाके काममें जहाँ करना होगा, करूँगा। हाँ, गायें खरीदी जायें, यह शर्त वाजिब है। लेकिन गायें दी कहाँ जायें, यह निर्णय करने की आजादी मुझे होनी चाहिए।

ज्वरसे पूरी तरह मुक्त हो गये होगे। दूसरे भी अच्छे हो गये होंगे। तुम राधा[4] की व्यवस्था ठीक कर लोगे, यह मैं जानता हूँ। उसके रोगकी बात सुनकर मगनलालकी[5] तसवीर मेरी आँखोंके आगे उभर आई है।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
६८, मैरीन ड्राइव
बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २४२-४३

१. गांधीजी के ७१ वें जन्मदिवसपर
२. शामलदास गांधी, गांधीजीके भतीजे
३. देखिए पिछला शीर्षक।
४ और ५. राधा गांधी और उनके पिता मगनलाल गांधी

२४. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

सेवाग्राम, वर्धा
२२ सितम्बर, १९४०

चि० बबुड़ी,

आखिर तू नहीं ही आई। मैं तुझे जवाब जवानी देना चाहता था। हिम्मत क्यों हारती है? यहाँ आयेगी, तब मैं तुझे सन्तुष्ट कर दूंगा। जल्दी आना। मैं शिमला जा रहा हूँ। अक्तूबरमें लौटूंगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००३०) से। सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखा-वाला

२५. पत्र : पुरुषोत्तमदास टंडनको

सेगाँव, वर्धा
२२ सितम्बर, १९४०

भाई टंडनजी;

आपका पत्र अभी मिला। स्थायी समितिकी सभा बुलाने में मैं कभी राजी नहीं हो सकता हूं। इससे अच्छा तो यही होगा कि जो प्रचार-समितिमें से निकलना चाहते हैं वे निकल जायें। लेकिन राष्ट्रभाषा प्रचार-समितिकी बैठक बुलानेकी सूचना मुझे कबूल है और यही दिशामें अब तो काम करूँगा।

मैं आपके साथ बिल्कुल सहमत हूँ कि सम्मेलन हिंदी अथवा हिंदुस्तानीकी गोली नहीं खा सकता। यह गोली बहुत कडवी लगेगी। जो कुछ भी हो यह बात अखबारोंमें नहीं चलनी चाहिये।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९९६) से

२६. पत्र : नारणदास गांधीको

[२२ सितम्बर, १९४० के पश्चात्][1]

रोज-रोज सन्देश भेजने से हासिल? अगर मैं खादीके नौ सौ निन्यानवे गुण गिनाऊँ, तो भी जिनमें श्रद्धा नहीं है उनमें नहीं आयेगी। वह तो प्रयत्नसे और ईश्वर-कृपासे ही आयेगी।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८६८१ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

२७. प्रश्नोत्तर[2]

[२३ सितम्बर, १९४० के पूर्व][3]

मैं इससे सहमत हूँ। यह प्रस्ताव कार्य-समितिके सदस्योंमें परस्पर कई दिन तक हुई लम्बी बहसका परिणाम है। मैं स्वीकार करूँगा कि कई सदस्योंका अहिंसा में कोई स्वतन्त्र विश्वास नहीं है, लेकिन वे उसे हृदयंगम करने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन आपको यह मालूम होना चाहिए कि कांग्रेस केवल कार्य-समिति नहीं है, न अ० भा० कां० कमेटी है, न कांग्रेसके रजिस्टरोंमें दर्ज सदस्य हैं, बल्कि करोड़ों मूक लोग हैं। ये सब शान्तिप्रिय हैं और हमें उनका सच्चा प्रतिनिधित्व करना है। इन करोड़ों लोगोंने, जबतक कांग्रेसने १९१९ में उनसे अपना तादात्म्य नहीं कर लिया था, तबतक किसी हिंसात्मक या अहिंसात्मक या यहाँतक कि

१. यह पत्र नारणदास गांधीके २२ सितम्बरके उस पत्रके उत्तरमें लिखा गया था जिसमें उन्होंने गांधीजी से भारतीय पंचांगके अनुसार गांधीजी के जन्मदिवस 'रेंटिया बारस' के अवसरपर सन्देशकी याचना की थी। नारणदास गांधीने रेंटिया बारस — भाद्र वदी १२ से (जो प्रायः सितम्बर मास के अन्त में पड़ती है) २ अक्तूबर तक चलनेवाले अखण्ड कताई यज्ञ — की शुरुआत की थी। देखिए खण्ड ६९, पृ० ४५८-५९।

२. और ३. यह और अगला शीर्षक महादेव देसाई लिखित "मोर एबाउट दि रिजोल्यूशन" से उद्धृत किया गया है, जो दिनांक "सेवाग्राम, २३ सितम्बर, १९४०" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। महादेव देसाई लिखते हैं: "हाल ही में एक मुलाकातीने गांधीजी से पूछा कि क्या उनके पुनः प्रवेशका अर्थ यह है कि कांग्रेस फिर हृदयसे अहिंसात्मक बन गई है। मुलाकातीने कहा कि 'जहाँ तक पंजाबका सवाल है, मेरा खयाल है कि वहाँ आत्मसंयम तो काफी दिखता है, पर अहिंसा नहीं-जैसी ही है।'"

किसी तथाकथित संवैधानिक संघर्षमें भी कोई हिस्सा नहीं लिया था। लेकिन ६ अप्रैल, १९१९ को वे एक होकर उठ खड़े हुए।[1] उन्होंने शान्तिपूर्ण विद्रोहको अपना मन्त्र बनाया और बिना किसी संगठनके, बिना किसी देशव्यापी दौरेके — क्योंकि तब मैंने अन्दरूनी हिस्सोंका दौरा नहीं किया था — उन्होंने सहज रूपसे इस पुकार को सुना और कांग्रेस संस्था एक शान्तिपूर्ण विद्रोही संस्था बन गई। बम्बईका प्रस्ताव इन लोगोंको ध्यानमें रखकर बनाया गया था। . .

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-९-१९४०

२८. बातचीत : आश्रमके एक किशोरसे[2]

[२३ सितम्बर, १९४० के पूर्व][3]

किशोर : यदि कांग्रेसकी यह माँग पूरी है तो इसका अर्थ यह है कि हमें स्वराज्य नहीं चाहिए और हम वाणीकी तथा समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रतासे सन्तुष्ट हो जायेंगे।

गांधीजी : हमारा उद्देश्य पूर्ण स्वराज्य है, जैसा कि तुम जानते हो। लेकिन क्या तुम उसे हासिल करने के तरीके जानते हो?

रचनात्मक कार्यक्रम चलाना।

वह तो वृक्षकी एक प्रमुख शाखा है। लेकिन जड़ क्या है?

सत्य और अहिंसा।

ठीक है, तो हम सत्य और अहिंसाकी शिक्षा देने का हक माँगते हैं।

लेकिन क्या सत्य और अहिंसाके प्रचारके लिए समाचारपत्रोंके लेख और भाषण काफी होंगे?

नहीं, हमें इससे काफी ज्यादा करना है। लेकिन सत्य और अहिंसाकी शिक्षा देने के हकको ही खतरा पैदा हो गया है। कानून ऐसा कहता प्रतीत होता है कि हम लोगोंसे यह नहीं कह सकते कि उन्हें युद्धकी तैयारियोंमें सहयोग न देने का पूरा हक है और अहिंसाके अनुयायियोंके रूपमें उनका कर्त्तव्य है कि वे इसमें सहयोग न दें।

१. रॉलट ऐक्टके विरुद्ध पूर्ण हड़ताल हो गई थी।

२ और ३. देखिए पृ० ४६, पा० टि० २ और ३। महादेव देसाई लिखते हैं: "एक तरफ जहाँ कुछ लोग समझते हैं कि कांग्रेसकी माँग बहुत कठिन है और इसे माना नहीं जा सकेगा, वहीं कुछ दूसरे लोग इसे बहुत मामूली मानते हैं। हमारे आश्रमके बालकके साथ गांधीजी की जो बातचीत हुई, उसका सारांश दोनों पक्षोंके लोगोंके लिए प्रस्तुत किया जा रहा है।"

लेकिन आपने खुद कहा है कि यदि रचनात्मक कार्यक्रम पूरा करते हो तो हम स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। फिर यह नगण्य मामला क्यों उठाया जाये?

यह मामला नगण्य नहीं है; यह एक ठोस और बहुत महत्त्वपूर्ण मामला है। यदि हम इसे छोड़ देते हैं तो एक समय ऐसा आयेगा कि शायद हमें सब-कुछ छोड़ देना होगा, जब कि हमें शायद सत्य और अहिंसाका नाम भी भूल जाना होगा। इनकी शिक्षा देना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और इसे छिन जाने देना अपना अस्तित्व ही छिन जाने देना है।

लेकिन मुझे परेशानी इस बातकी है कि जोर लेखन और भाषणपर ही है।

हम इस स्वतन्त्रताका हक ही माँगते हैं। कैसे और कब इसका उपयोग करें और उपयोग करें या न करें, यह हमारे सोचने का विषय है। यदि हम तेज हवा सहन नहीं कर पाते तो हम खिड़कियाँ और दरवाजे भी बन्द कर लेते हैं, लेकिन यदि कोई हमें बन्द कर दे तो हमें कैसा लगेगा?

यह तो मैं समझ गया। लेकिन क्या ऐसा नहीं हो सकता कि आपकी यह आशंका काल्पनिक हो? यदि किसी छोटे बच्चेको मिट्टी न खाने को कहें तो वह जरूर खायेगा। दूसरेके द्वारा किया गया निषेध कष्ट देनेवाला होता है। क्या आप उस निषेधको हटाना चाहते हैं?

यह उदाहरण गलत है, क्योंकि छोटे बच्चेको मिट्टी खाने का कोई हक नहीं है, जब कि हमें स्वतन्त्र वायुका आनन्द लेने से रोकने का हक किसीको भी नहीं है। लेकिन मैं तुम्हारे लिए दूसरा उदाहरण लेता हूँ — एक बालकका, क्योंकि तुम भी बालक ही हो। प्रह्लादको उसके पिताने आज्ञा दी थी कि वह रामका नाम न ले। वह अपने-आपसे ऐसा तर्क कर सकता था कि 'रामनाम न लेने से मेरी कुछ हानि नहीं होती, क्योंकि राम मेरे हृदयमें है।' लेकिन यदि वह इस तर्कका सहारा लेता तो उसने अपने-आपको धोखा दिया होता। उसने वैसा नहीं किया और उसने अपने पितासे कह दिया कि वे उसके साथ जो चाहें सो करें पर वह राम-नाम जपना नहीं छोड़ सकता। और चूँकि उसने अत्यन्त भयानक मुसीबतें सहीं और उस पवित्र अधिकारके लिए मृत्युका भी खतरा उठाया इसलिए आज रामनाममें हमारा जीवन्त विश्वास है। यदि वह झुक गया होता तो यह विश्वास धरतीसे उठ गया होता। इसी प्रकार यदि हम सत्य और अहिंसाकी शिक्षा देने का अपना अधिकार त्याग देते हैं तो हम उसे हमेशाके लिए त्याग देते हैं।

लेकिन सिद्धान्तके रूपमें सत्य और अहिंसाकी शिक्षा देने से हमें कोई नहीं रोकता।

आचरण-निरपेक्ष सिद्धान्त-जैसी कोई चीज नहीं है। उसके ठोस प्रयोगके बिना उसका कोई अर्थ नहीं है और मैं जब अहिंसाकी शिक्षा देना चाहता हूँ तो मैं उसे युद्धके प्रभावशाली विकल्पके रूपमें सिखाना चाहता हूँ और ऐसा करके ब्रिटेन तथा अन्य युद्धरत देशोंको हिंसा और बर्बरतासे विरत करने में सफल होना चाहता हूँ।

लेकिन आप सबके लिए उस हककी माँग क्यों करते हैं? अपने भाषणमें आपने कहा कि आप स्वयं एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे बोलेंगे जो अन्तःकरणसे मानता है कि सैनिक सेवा अच्छी नहीं, लेकिन अन्य लोग चाहे किसी भी तर्कका प्रयोग कर सकते हैं, जैसे आर्थिक या साम्राज्यवादी तर्कका।[1]

इस हककी माँग मैं केवल अपने लिए और उन लोगोंके लिए करूँ जिन्हें सैनिक सेवाके खिलाफ अन्तःकरणसे आपत्ति है, यह तो ठीक नहीं होगा। क्योंकि कोई दूसरा आधार भी यदि अधिक नहीं तो उतना ही महत्त्वपूर्ण हो सकता है जितना कि अन्तःकरणवाला आधार; और यदि अपनी बात कहने के लिए मेरा दमन नहीं किया जा सकता तो मैं यह कैसे सह सकूँगा कि उन अन्य लोगोंका किया जाये? इसके अलावा, यदि उक्त स्वतन्त्रता इन्हीं आपत्तिकर्त्ताओंतक सीमित रखी गई तो हम अपने काफी लोगोंको मिथ्याचारी बना देंगे, क्योंकि वे अन्तःकरणके तर्कके पीछे पनाह लेंगे। इतना ही जरूरी है कि सभी लोग अहिंसाकी शर्त स्वीकार कर लें। उसमें ढील नहीं दी जा सकती।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-९-१९४०

२९. खादी-सप्ताह

यह खुशीकी बात है कि खादी-सप्ताह और वाइसराय महोदयके साथ मेरी भावी मुलाकात, दोनों एक ही समयपर आते हैं। प्रार्थनाके प्रभावमें जिनका विश्वास है, उन सबकी प्रार्थनाओंकी मुझे जरूरत है, जिससे मेरी मुलाकातका परिणाम भारत तथा अंग्रेजोंके लिए फलदायी हो, और अन्तमें युद्धरत राष्ट्रोंके बीच शान्ति कायम करने में मददगार हो सके। अ० भा० का० कमेटीने जो सवाल उठाया है वह यद्यपि मामूली दिखाई देता है तब भी मेरा खयाल है कि उसमें मानव-जातिकी भलाईकी बहुत बड़ी शक्ति है।

अपने जन्म-दिनके उत्सवको मैंने 'खादी-सप्ताह' का नाम दिया है। जन्म और मृत्युकी जोड़ी है। मेरी मृत्युके साथ यह वार्षिकोत्सव यदि भुला दिया जाये तो मुझे दुःख होगा। इसलिए मैंने इस जन्मोत्सवको 'खादी—सप्ताह' के नामसे चलाया है, जिसकी वजहसे मैं इस प्रश्नपर निर्वैयक्तिक रूपसे विचार कर सकता हूँ।

सविनय अवज्ञाके आन्दोलनको टालने के लिए मैं अपने बस-भर पूरी कोशिश करूँगा। लेकिन जब कि शान्तिके लिए प्रयत्न किया जा रहा है, यदि कांग्रेसवाले सो जायें तो यह उनकी बड़ी भूल होगी। मैं आशा करता हूँ कि चूंकि संघर्ष छिड़ने पर मैंने उसके नेतृत्वकी जिम्मेदारी लेनी स्वीकार कर ली है, इसलिए कोई कांग्रेसी

१. देखिए पृ० २०।
२. महादेव देसाईके अनुसार यह प्रश्न किसी और का था।

ऐसा न समझ ले कि कातनेकी और खादीकी शर्तें छोड़ दी गई हैं। अगर सविनय अवज्ञा आन्दोलन छिड़ गया तो जो लोग उपरोक्त तथा दूसरी शर्तोंपर सख्तीके साथ अमल नहीं करेंगे, वे देखेंगे कि वे इसमें शरीक नहीं हो सकते। फिर यह भी एक सवाल है कि वे करोड़ों लोग जिनको कष्ट-सहनके इस कार्यक्रममें हिस्सा न लेना पड़ेगा, क्या करेंगे? रचनात्मक कार्यक्रम उनके लिए उतना ही आवश्यक है जितना सत्याग्रहियोंके लिए। अगर वास्तवमें वह सिर्फ जेल जानेवालोंतक ही महदूद किया जाये तो चन्द लोगोंके कारावासको 'राष्ट्रीय आन्दोलन' का नाम देना उचित नहीं होगा। लेकिन संस्था या राष्ट्रके नामसे यदि एक भी व्यक्ति स्वेच्छापूर्वक कष्ट-सहन करेगा और उसके पीछे सेनापतिके आदेशानुसार सबकी ओरसे हर प्रकारसे सहकार का बल होगा, तो सफलता निश्चित है। खादी और कताई, ये ऐसे प्रतीक हैं जो सब लोग देख सकते हैं और सब अपना भी सकते हैं। इसलिए मैं अपेक्षा करता हूँ कि इस सप्ताहमें खादीकी बिक्रीमें तथा कताई और ग्रामोद्योगोंमें असाधारण बढ़ोतरी होगी। मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि चूँकि चरखा संघने[1] कर्ज लेनेकी नीति छोड़ दी है, दानकी रकमें प्राप्त करना भी जरूरी हो गया है, जिससे काम घटाना न पड़े। चूँकि कातनेवालोंकी मजदूरीमें अनपेक्षित व अपूर्व वृद्धि की गई है, अतः कातनेवालोंकी संख्या भी बढ़ गई है। अधिक पूँजीके बिना उन सबको काम देना असम्भव है। यह खुशीकी बात है कि चरखा संघके लिए चन्दा इकट्ठा करनेवाले कार्यकर्त्ता आगे आ रहे हैं। मैं आशा करता हूँ कि इस अपीलका खुशीसे स्वागत होगा। कांग्रेसी या गैर-कांग्रेसी, सबको चाहिए कि वे उदारतापूर्वक इस अपील पर अमल करें। चरखा संघ तो एक विशुद्ध सेवाभावी और आर्थिक संस्था है। और यद्यपि कांग्रेस ही उसकी जन्मदाता है, उसमें किसी प्रकारकी राजनीति नहीं है। वह सम्पूर्णतया स्वतन्त्र संस्था है। इसलिए बिना किसी संकोचके सभी उसकी सहायता कर सकते हैं। हाँ, बेशक जैसे खादीका आर्थिक और जन-सेवाकी दृष्टिसे महत्त्व है, उसी प्रकार राजनीतिक दृष्टिसे भी है। और यदि खादीको अहिंसाका प्रतीक माना जाये तो उसका राजनीतिक पहलू होते हुए भी उसके नैतिक महत्त्वमें किसी तरह फर्क नहीं आ सकता। क्योंकि विशुद्ध और सच्ची अहिंसापर दलबन्दीवाली राजनीतिकी छाया पड़ ही नहीं सकती। और फिर कांग्रेस भी किसी एक दलकी प्रतिनिधि नहीं रहेगी, और न उसका किसी दल या कौमके साथ कोई झगड़ा ही होगा। संसार-भरमें एक राष्ट्रीय संस्थाके तौरपर उसकी प्रतिष्ठा होगी।

सेवाग्राम, २३ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-९-१९४०

१. अखिल भारतीय चरखा संघ

३०. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

२३ सितम्बर, १९४०

चि० मु[न्नालाल],

बल . . .[1] तुम्हारी अप्रसन्नता . . .[2] तुम्हारा पत्र मैंने नहीं भेजा था . . .[3] बहुत आघात पहुँचाया है। आघात ठीक भी था। . . .[4] किसी साथीके बारेमें यह कहना कि वह कभी किसीकी सुनेगा ही नहीं, कड़ी भाषा है। फिर यह सिद्ध भी नहीं किया जा सकता। पंचोंका फैसला तो उसने सदा माना है। उसके बारेमें तुम मत डरो। अपना निर्णय दो। इसमें उसका क्या दोष है? अतः, यह जो मैं लिख रहा हूँ वह तुम्हें ठीक लगे, तो बल[वन्तसिंह]के बारेमें अपने अनावश्यक शब्द वापिस ले लो।[5]

कंचन[6] ठीक चल रही है। अच्छी हो जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४८५) से। सी० डब्ल्यू० ७१०२ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

३१. पत्र : बलवन्तसिंहको

२३ सितम्बर, १९४०

चि० बलवंतसिंह,

मेरे पास मु०[7] का खत आया तो सो ठीक ही हुआ, उसके खतमें अतिवचन अवश्य है लेकिन उसमें दुःख क्या? अहिंसा या प्रेमका दुःख लगे तो अहिंसक खुद हिंसा करे उसको लगना चाहिए। मुझे कोई गाली दे उसमें मुझे क्यों दुःख लगे? मैंने तो मु० को उसकी गलती बताई है। आशा करता हूँ वह खींच लेंगे। उसका वह धर्म है लेकिन तुमारा उससे खींचवाना योग्य नहीं है। अगर वह न खींचे तो क्या होगा? किसीसे जबरदस्तीसे धर्म-पालन करवा सकते हैं?

१ से ४. साधन-सूत्रमें यहाँ शब्द अस्पष्ट हैं।
५. देखिए अगला शीर्षक भी।
६. मुन्नालाल गं० शाहकी पत्नी
७. मुन्नालाल गं० शाह

जिस बार मैंने तुमको संदेशा भेजा वह तो यह था। चि०[1] और मु० कहते हैं कि तुमारे डरसे उन्होंने तुमारे पक्षमें फैसला दिया। तब मैंने कहा तुमारी भूल सुधारो और सही फैसला दो। वे लोगने किस तरह फैसला दिया वह तुम कैसे जान सकते थे? तुमने उसे कबूल किये इसलिये तुम दोष मुक्त थे। इसलिये यदि किसीको प्रायश्चित करना था तो पंचोंको अपनी दुर्बलताके कारण करना था।

रही बात ५ रु० वाली। मेरा अभिप्राय है कि हम ट्रस्टी हैं इसलिये हमको होड बकने का अधिकार ही नहीं है। क्योंकि हमको दान इस कारण नहीं मिलता है। तुमारे पास तो पैसे हैं ही नहीं अर्थात् होने चाहीये नहीं। इसलिये तुमारे होडमें दोनों दोष थे। आश्रमके पैसे पर होड बकने का अधिकार नहीं था और होड बकना ही दूषित है, अभिमानका सूचक है। मजदूर लोगोंका कहना 'हम ५ रु० देंगे' की क्या किम्मत हो सकती है, थोड़े हीं उनको पूछकर होड बके थे? और पूछकर किया था तो ऐसा पूछना भी तो अयोग्य है।

इन सब बातोंमें से इतना हम सब सीखें कि किसीका दुःख मानना ही नहीं।

बापुके आ[शीर्वाद]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९३६)से

३२. तार: उड़ीसा प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको[2]

[२५ सितम्बर, १९४० या उसके पूर्व][3]

शिमलासे मेरे वापस लौटने की प्रतीक्षा करें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-९-१९४०

१. चिमनलाल नटवरलाल शाह

२. यह तार उ० प्रा० कां० कमेटीके तारके उत्तरमें दिया गया था, जिसमें "कोरापुट जिलेमें कांग्रेस कार्यालयोंसे पुलिस द्वारा पुस्तिकाएँ जब्त किये जाने" की बात कही गई थी। रिपोर्टमें यह भी कहा गया था कि, "प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी द्वारा जारी की गई उड़िया भाषामें लिखी ये पुस्तिकाएँ कांग्रेस कार्य-समितिके 'युद्ध-कोषके लिए दिये जानेवाले अनिवार्य चन्देसे' सम्बन्धित प्रस्तावको लेकर प्रकाशित की गई थीं।"

३. यह तार दिनांक "कटक, २५ सितम्बर" के अन्तर्गत छपा था।

३३. मेरी उलझन

कुछ समयसे आपने अहिंसाके पक्षमें अपनी दलीलोंके समर्थनमें बारम्बार 'कुरान शरीफ' और इस्लामके उपदेशोंका हवाला देनेका तरीका अख्तियार किया है, और आपके ये हवाले भी अत्यन्त अस्पष्ट और अनिश्चित होते हैं। यह साफ जाहिर है कि इसमें आपका उद्देश्य मुसलमानोंके दिलोंपर असर डालना ही है। . . . इसी तरह हम यह भी समझ सकते हैं कि आप खानसाहब अब्दुल गफ्फार खाँ और मौलाना अबुल कलाम आजाद-जैसे मुसलमानी वेषमें छिपे तौरपर इस्लामके दुश्मनका काम करनेवाले मुसलमानोंकी पीठ ठोंकें। मगर आप यह क्यों नहीं समझ सकते कि मुसलमानोंकी धर्म-भावनाको कोई दूसरी चीज इतना आघात नहीं पहुँचा सकती जितनी कि एक गैर-मुसलमानका अपना उल्लू सीधा करनेके लिए इस्लामकी धर्म-पुस्तकका हवाला देना। . . . यह बात तो साफ देखी भी जा सकती है कि आप मुसलमान नहीं हैं। इसलिए आपके विचारों और आदर्शोंका मूलाधार 'कुरान शरीफ' नहीं हो सकता। . . . मेरी आपको दोस्ताना सलाह है कि आगेसे आप 'कुरान' का हवाला देनेसे बाज आयें . . . ।

यह पत्र[1] अलीगढ़के एक एम० ए० पास नवयुवककी ओरसे मुझे मिला है। वे मुस्लिम विश्वविद्यालयमें रिसर्च स्कॉलर हैं। मुझे यह पत्र मिले कुछ अर्सा हुआ है। मैंने उसे इतनी देर तक अपनी फाइलमें रख छोड़ा था, क्योंकि मैं इस बातका फैसला अपने मनमें अबतक नहीं कर सका था कि इसके छपनेसे हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यके ध्येयकी कुछ सेवा होगी या नहीं। मगर इतनेमें इन्हीं मित्रकी तरफसे इससे भी अधिक असंयत एक और पत्र मुझे मिला, और परिणामस्वरूप मैंने इस पत्रको छापनेका फैसला कर लिया, ताकि अलीगढ़के तथा अन्य मुसलमान भाइयोंको, जो कि इस लेखक-जैसे विचार रखते हैं, अपने दिलकी दो बातें सुना सकूँ।

अलीगढ़की मधुर स्मृतियाँ मेरे मनमें हैं। मैं कई बार इस बड़े विश्वविद्यालयको जाकर देख चुका हूँ। अब भी मेरा इसके साथ सम्बन्ध है। मेरा खयाल है कि अब भी मैं उनके क्लबका सम्माननीय सदस्य हूँ। जब स्वर्गीय डॉ० सर रॉस मसूद विश्वविद्यालयके उप-कुलपति थे, तब उनके हाथों यह सम्मान मुझे प्राप्त[2] हुआ था। रही 'कुरान शरीफ' की बात, सो उसका अध्ययन मैंने दक्षिण आफ्रिकामें अपने मुसलमान मुवक्किलों और मित्रोंके कहनेसे किया था। उन्होंने मुझे इस्लामी साहित्य

१. यहाँ पत्रके केवल कुछ अंश प्रस्तुत किये गये हैं।

२. ३ नवम्बर, १९२९ को; देखिए खण्ड ४२, पृ० १०७ और १६३।

भी पढ़ने को दिया था। हिन्दुस्तान लौटने पर मुस्लिम मित्रोंने कुरान मुकद्दसके कई अनुवाद मुझे भेजे थे। इन भेजनेवालोंमें डॉक्टर मुहम्मद अली साहब भी थे, जिन्होंने अपने किये हुए अनुवादकी एक प्रति मुझे भेंट की थी। और एक प्रति स्वर्गीय पिकथॉल साहबने अपने अनुवादकी भेजी थी। मौलाना शिबलीके अनुवादकी नकल मुझे स्वर्गीय हकीम अजमलखाँ साहबकी तरफसे मिली थी। अगर आज मेरे जैसे गैर-मुसलमानके लिए 'कुरान शरीफ' का अध्ययन करना या इसका भाष्य करना जुर्म करार दिया जाता है तो इसका कारण क्या यह है कि मैं बदल गया हूँ या कि जमाना ही बदल गया है? कई धर्मिष्ठ मुसलमानोंने मुझसे कहा है कि बहुत-से मुसलमानोंकी अपेक्षा मुझमें अधिक इस्लामियत है और मैं 'कुरान शरीफ' की मूल भावनाके अनुसार आचरण करता हूँ, तथा पैगम्बर साहबके जीवनसे ज्यादातर मुसलमानोंकी अपेक्षा मेरा अधिक गाढ़ा परिचय है। मेरी उलझन यह है कि किस मतको मैं स्वीकार करूँ—इन मुसलमान मित्रोंके मतको या अलीगढ़के इन शोध-विद्यार्थी मित्र और उनके-जैसे विचार रखनेवाले उनके साथियोंके मतको?

अलीगढ़के इन मित्रका यह कहना ठीक है कि 'कुरान शरीफ' का मैं अपनी वृत्तिके अनुसार अर्थ करना चाहता हूँ। मगर यदि मैं 'कुरान शरीफ' के मूल वाक्यों को किसी तरह तोड़े-मरोड़े वगैर प्रामाणिकतासे और ईश्वरको साक्षी रखकर खुले मनसे उनके सच्चे अर्थकी खोज करूँ, तो इसमें आपत्ति ही क्या है? और फिर अलीगढ़के इस पत्रलेखक मित्रको बतौर एक आलिमके मालूम होना चाहिए कि किसी व्यक्तिके जीवन या पुस्तकका जो भावार्थ परम्परासे समझा गया है, वह आवश्यक तौरपर सच्चा होना ही चाहिए, ऐसी कोई बात नहीं। इतनी तादादमें इतने लोगों द्वारा इतने वर्षोंतक एक भूलको दोहराने से वह भूल मिट नहीं जाती; वह भूल ही रहती है। 'बाइबिल' के पाठमें अभीतक संशोधन किया ही जा रहा है। और कई अच्छे ईसाई यह मानते हैं कि पाश्चात्य ईसाई जनताका आजतक का व्यवहार ईसा के मूल उपदेशको बट्टा लगाता है। हो सकता है 'कुरान शरीफ' को पढ़ने और इसका भाष्य करने के अधिकारके बारेमें इन रिसर्च स्कॉलरका अभिप्राय और 'कुरान शरीफ' का वे जो अर्थ लगाते हैं, वे गलत हों और सचमुच मेरे जैसे गैर-मुसलमानको 'कुरान' पढ़ने से और इसका अर्थ लगाने से इस्लाममें रोक न हो। इतना ही नहीं, यह भी हो सकता है कि आखिर मेरा लगाया हुआ अर्थ ही ठीक निकले। अगर एक दिन ऐसा आये कि जब धर्म-पुस्तकोंका अध्ययन और उनके अर्थ करने की छूट सिर्फ उन लोगों को ही हो जो उसी धर्मका बिल्ला लगाये हुए हैं, तो वह जगतके लिए एक अशुभ दिन होगा। मैं अलीगढ़के अपने इन मित्रसे और उनके साथियोंसे एक मित्रके नाते कहना चाहता हूँ कि आपके इस रवैयेमें, मेरे खयालसे, भारी असहिष्णुताकी जो बू आती है उसे आप छोड़ें और अन्य लोगोंको भी वैसा ही प्रामाणिक समझें जैसे कि आप खुद होने का दावा करते हैं। किसी एक मनुष्यने ही सचाईका सारा ठेका नहीं लिया है। हम सब अपूर्ण मनुष्य हैं और अपूर्ण मनुष्यों द्वारा प्रतिपादित सब सत्य सापेक्ष ही होते हैं। जो रोशनी ईश्वरने हमें दी है उसीके अनुसार हम चल सकते हैं।

सम्पूर्ण सत्य केवल ईश्वरको ही मालूम है। इन सब बातोंको ध्यानमें रखते हुए शोध विद्यार्थियोंको नम्रता और उदारता सीखनी चाहिए। कट्टरपन और असहिष्णुता सत्यान्वेषणमें बाधक तो होते ही हैं, परन्तु वे जिस पक्षका समर्थन करते हैं उसे भी हानि पहुँचाते हैं।

सेवाग्राम, २५ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-९-१९४०

३४. कुछ आलोचनाओंका उत्तर

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके हालके प्रस्ताव और उसकी बैठकमें दिये गये मेरे भाषणोंकी काफी-कुछ तारीफ हुई है, लेकिन आलोचना बहुत हुई है। आलोचनामें से दो बातें ऐसी हैं जिनका जवाब मैं यहाँ देनेकी कोशिश करूँगा, क्योंकि वे स्थायी महत्त्वकी हैं। १७ तारीखके 'टाइम्स ऑफ इंडिया' ने अपनी सौम्य टीकामें[1] मुझे मेरे इस बयानके[2] लिए आड़े हाथों लिया है कि 'यूरोपके लोग नहीं जानते कि वे किस चीजके लिए युद्ध कर रहे हैं'। मेरे इस वाक्यसे लोगोंमें नाराजगी पैदा होनी ही थी। परन्तु खरी बात सुनाना जब प्रासंगिक ही नहीं वरन् धर्म बन जाता है तो वह सुनानी ही पड़ती है, चाहे वह कड़वी ही क्यों न लगे। मेरी मान्यता है कि मुझे बहुत पहले ही यह बात कहनी चाहिए थी। मैं बता दूँ कि मैं क्यों ऐसा मानता हूँ कि युद्धरत राष्ट्र नहीं जानते कि वे किस चीजके लिए युद्ध कर रहे हैं। मेरे मूल वाक्यमें मैंने 'युद्धरत राष्ट्र' शब्दका प्रयोग किया था, न कि 'यूरोपके लोग'का। दोनोंमें केवल शब्द-भेद ही नहीं, मर्म-भेद है। मैंने कई बार बताया है कि कौमें और उनके नेता दो अलग-अलग चीजें हैं। नेतागण तो यह बात खूब अच्छी तरह समझते हैं कि वे लड़ाई किसलिए लड़ रहे हैं। मेरा मतलब यह नहीं है कि वे जो कहते हैं वह ठीक है। परन्तु न तो अंग्रेज, न जर्मन और न इटालियन जनता यह जानती है कि वह क्यों युद्धमें पड़ी है। सिर्फ उसकी अपने नेताओंपर श्रद्धा है इसीलिए वह उनके पीछे-पीछे चलती है। मेरा कहना यह है कि आधुनिक युद्ध-जैसे भीषण हत्याकाण्डमें शरीक होनेके लिए इस तरहकी अन्धश्रद्धाका होना ही काफी कारण नहीं है। हम दोनों शायद मानते हैं कि अगर आज जर्मन और इटालियन जनतासे पूछा जाये कि अंग्रेज बच्चोंकी निर्दयतापूर्वक हत्या करना या सुन्दर अंग्रेज घरोंको नष्ट कर देना किस तरह जरूरी है, तो वह कुछ समझ न सकेंगे। मगर 'टाइम्स' शायद यह कहना चाहता है कि अंग्रेज जनता जानती है कि वह किसलिए लड़ रही है। बोअर युद्धके दिनोंमें जब मैं दक्षिण आफ्रिकामें अंग्रेज सिपाहियोंसे पूछता था कि

१. देखिए परिशिष्ट १।
२. देखिए पृ० १८।

वे क्यों लड़ रहे हैं, तो वे मुझे कुछ जवाब न दे पाते थे। [टेनिसनके शब्दोंमें] 'उनका काम तर्क करना नहीं था।' वे इतना भी नहीं जानते थे कि उन्हें कहाँ ले जाया जा रहा है। अगर आज मैं लन्दनमें होता और वहाँके लोगोंसे पूछता कि उनके सिपाही आज बर्लिनकी तबाही क्यों कर रहे हैं, तो वे भी मुझे उन सिपाहियोंकी अपेक्षा अधिक सन्तोषजनक जवाब नहीं दे सकते। अखबारोंमें जो खबरें छपती हैं वे अगर भरोसेके काबिल हैं तो अंग्रेजोंकी हिकमत और बहादुरीने बर्लिनमें जैसी बरबादी की है वैसी जर्मन लोग लन्दनमें नहीं कर सके। भला जर्मन जनताने अंग्रेज जनताका क्या बिगाड़ा है? जो-कुछ भी किया है वह तो उनके नेताओंने किया है। बेशक आप उन्हें फाँसीपर लटकायें। मगर, जर्मन जनताके घरों और उनके नागरिक जीवनकी तबाही क्यों की जाती है? विनाशकी यह उन्मत्त लीला चाहे तानाशाहीके नामसे चलाई जाये, चाहे प्रजातन्त्रवाद तथा स्वतन्त्रताके पवित्र नाम लेकर, मारे गये अनाथ और बेघर हुए लोगोंके लिए तो कोई फर्क नहीं पड़ता। मैं नम्रतापूर्वक परन्तु पूरी शक्तिके साथ कहना चाहता हूँ कि स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र-जैसे पवित्र हेतु भी जब निर्दोष रक्तसे रँगे जाते हैं तो वे अपनी पवित्रता खोकर पापमूलक बन जाते हैं। मुझे तो ईसा मसीह यह कहते सुनाई देते हैं: 'ये लोग, जो अपनेको मेरे बच्चे कहते हैं, नहीं जानते कि वे आज क्या कर रहे हैं। वे मेरे पिताका नाम व्यर्थ ही लेते हैं। क्योंकि वे उसके मुख्य आदेशकी अवज्ञा कर रहे हैं।'[1] अगर मेरे कानोंको धोखा नहीं हुआ है तो मैंने वही गलती की है जो उस संत पुरुषने की है।

मैंने यह सत्य-घोषणा क्यों की है? इसलिए कि मेरा विश्वास है कि ईश्वरने मुझे जगतको बेहतर रास्ता बतानेका निमित्त बनाया है। अगर ब्रिटेनको न्याय माँगना है तो ईश्वरके दरबारमें उसे साफ दिलसे जाना चाहिए। आजादी और प्रजातन्त्रकी रक्षा वह सर्वसत्तावादी तरीकोंसे युद्ध चलाकर नहीं करेगा। हिटलरको हिटलरकी पद्धति से मात करके वह बादमें अपनी तर्जको बदल न सकेगा। गत युद्ध पुकार-पुकारकर हमें यही सिखाता है। इस तरहसे प्राप्त की हुई विजय एक खतरनाक जाल और भ्रान्ति साबित होगी। मैं जानता हूँ कि आज मेरी पुकार अरण्यरोदन ही है, परन्तु एक दिन दुनिया इसकी सचाईको पहचानेगी। अगर प्रजातन्त्र या स्वतन्त्रताको विनाश से सचमुच बचाना है, तो वह अहिंसात्मक प्रतिरोधसे होगा, जो सशस्त्र मुकाबलेसे कहीं अधिक प्रभावशाली और शानदार मुकाबला है। यह मुकाबला सशस्त्र मुकाबलेसे अधिक वीरतापूर्ण और शानदार इसलिए होगा, क्योंकि इसमें जान लेनेकी बात नहीं, केवल जानपर खेल जानेकी बात है।

अब मैं 'स्टेट्समैन' के १७ सितम्बर[2] वाले लेख[3] पर आता हूँ। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि यह असंयत भाषामें और गुस्सेके साथ लिखा गया है। (हल्के शब्दोंका प्रयोग किया जाये तो) इसमें स्पष्ट भूलें भी हैं, जो बेशक अनजानमें हुई

१. सेंट ल्यूक, २३, ३४ और सेंट मैथ्यू, ७, २१, २२
२. साधन-सूत्रमें भूलसे यहाँ '१८' दिया है।
३. देखिए परिशिष्ट २।

होंगी। लेकिन असंयत भाषाकी मुझे शिकायत नहीं। मुझे आश्चर्य तो इस बातका है कि आजतक के सबसे घमासान युद्धके वातावरणमें भी असंयतताकी मात्रा इससे अधिक न हो पाई।

'स्टेट्समैन' के भारी आरोपका निचोड़ यह है:

> हमने कई बार असहयोगके सिद्धान्तकी मूल अनैतिकता और अन्तर्विरोधी प्रकृतिके बारेमें अपने विचार प्रकट किये हैं। यह शान्तिका नहीं, युद्धका तरीका है। ... इसके साथ आध्यात्मिकताका आडम्बर रहता है, जिससे कुटिलतापर धार्मिकताका और जहरीली घृणापर सामुदायिक पाखण्डका आवरण चढ़ा रहता है। ... जो कौम इस सिद्धान्तको कबूल करती है वह मानो गुलामीके परवानेपर अपने दस्तखत कर देती है।

हमारे देशका वर्त्तमान इतिहास हमें इससे उलटा ही सिखाता है। मेरा यह दावा है कि अहिंसक असहयोगमें कुछ भी अनीति नहीं। सशस्त्र मुकाबला भी एक प्रकारका असहयोग ही है, परन्तु वह हिंसाके कारण अनीतिमय है। जब वह अहिंसक बनता है तब वह नीतिमय हो जाता है। बुराईके साथ असहयोग करना मनुष्य का परम धर्म है। ऐसा असहयोग अहिंसक प्रकृतिके कारण अनिवार्य रूपसे आध्यात्मिक है। असहयोगके बारेमें जो विशेषण 'स्टेट्समैन' ने इस्तेमाल किये हैं वे तभी ठीक तौरपर लागू होंगे जब हमारी अहिंसा नाममात्रकी होगी। परन्तु इस चर्चाके सिलसिलेमें मुझे सच्ची चीजको ही ध्यानमें रखना है। अब अगर हम असहयोगके बारेमें अपने अनुभवको लें तो देखेंगे कि हमारा असहयोग चाहे कितना ही अपूर्ण था, तो भी कुछ हदतक इसने हमें गुलामीकी जंजीरोंसे जरूर मुक्त किया है और निराशाके सागरसे उबारकर जगतमें हिन्दुस्तानको ऐसी प्रतिष्ठा प्रदान की है जैसी किसी दूसरी तरहसे नहीं मिल सकती थी। मैं यह हिम्मतके साथ कह सकता हूँ कि अगर हमारी अहिंसा पूर्णतः शुद्ध होती, तो इसका परिणाम और भी चमत्कारी होता। मेरा सबसे बड़ा दावा तो यह है कि इसी तिरस्कृत अहिंसात्मक प्रतिरोधके प्रतापसे हिन्दुस्तान निरंकुशता और तबाहीसे बच गया है, पर अभी पूरा-पूरा नहीं बचा है। यदि इसे पूरी तरह बचना है तो वह अहिंसाके रास्तेसे ही मुमकिन है। 'स्टेट्समैन' के लेखकसे मेरा निवेदन है कि मेरे बयानकी सचाईकी वे बारीकीसे जाँच करें। उन्हें उसके समर्थनमें बहुत-से अचूक प्रमाण मिलेंगे। निष्पक्ष भावसे इस प्रश्नका अध्ययन करके वे ब्रिटेन और हिन्दुस्तान दोनोंकी सेवा कर सकेंगे।

शिमला जाते हुए ट्रेनमें, २५ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-९-१९४०

३५. सिख और तलवार

पाठक दूसरे स्तम्भमें मास्टर तारासिंह और मेरे बीच हुए पत्र-व्यवहारकी नकलें पायेंगे। मैंने एक मित्रकी हैसियतसे उन्हें पत्र[1] लिखा था। उसे प्रकाशित करवाने का मेरा कोई इरादा न था, क्योंकि मौलाना साहबको लिखे उनके पत्रकी तरह मेरे इस पत्रको भी छापने से मास्टरजीकी अपनी ही स्थिति अटपटी हो सकती थी। मास्टर तारासिंह ने कई अवसरोंपर मुझसे सलाह ली है, क्योंकि मेरा और सिख जातिका पारस्परिक सम्बन्ध बहुत मैत्रीपूर्ण रहा है। मेरा विश्वास है कि कई मौकोंपर मैंने सिख कौम को गलतियोंसे बचाया है।

लेकिन मास्टर तारासिंहने हमारे बीच हुए पत्र-व्यवहारको छापने की मुझसे इजाजत माँगी और मैंने उन्हें वह तुरन्त दे दी। अगर मेरी सलाहको जनताके सामने तोड़-मरोड़कर न रखा जा रहा होता, और अगर राष्ट्रवादी सिखोंकी तरफसे, जो कि मास्टर तारासिंहसे भिन्न विचार रखते हैं और कांग्रेसकी अहिंसाकी नीति और कांग्रेसके नियमको मानते हैं, मुझे एक आग्रहपूर्ण पत्र इस बारेमें न मिला होता, तो मैं अब भी इस विषयपर सार्वजनिक चर्चामें न उतरता। राष्ट्रवादी सिख अपने पत्रमें लिखते हैं:

> **मास्टर तारासिंहको आपकी ओरसे भेजे गये पत्रका पंजाबके अखबारोंमें और खास तौरपर अकाली जगतमें बहुत ही गलत अर्थ किया जा रहा है। वे कहते हैं कि आपने यह लिखा है कि सारे-का-सारा सिख पंथ हिंसाको माननेवाला है इसलिए वह निकम्मा और कांग्रेसमें रहने लायक नहीं है। हम समझते हैं कि आपका पत्र व्यक्तिगत था और सिर्फ मास्टर तारासिंह और उनकी पार्टीको लक्ष्यमें रखकर ही आपने उसे लिखा था। परन्तु अकाली पार्टीने ख्वामख्वाह उसको लेकर एक आन्दोलनका तूफान खड़ा कर दिया है।**

मेरे पत्रका अर्थ स्पष्ट है। उसका सम्बन्ध केवल मास्टर तारासिंह और उन लोगोंसे है जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं। वह सारी सिख कौमपर तभी लागू हो सकता है जब कि वह मास्टर तारासिंहको निर्विवाद रूपसे अपना नेता स्वीकार कर लें। जब मैंने उनके पत्रका जवाब दिया, तब मैं जानता था कि अधिकसे-अधिक तो वे महान सिख जातिके एक छोटे-से भागके ही प्रतिनिधि हैं। मैं यह भी जानता था कि कितने ही ऐसे राष्ट्रवादी सिख भी हैं जिनकी राष्ट्र-भावना मुझसे किसी तरह कम नहीं। मास्टर तारासिंहको लिखे गये मेरे पत्रमें मैंने एक सर्वसामान्य और व्यापक सिद्धान्तका प्रतिपादन किया था, हालाँकि एक खास सवाल

१. देखिए खण्ड ७२, पृ० ४४२।

पर मुझसे सलाह माँगी गई थी, जिसके जवाबमें मैंने अपना पत्र लिखा था। इस प्रासंगिक बातको अलग करके अगर मेरा पत्र देखा जाये तो उसका सार यह निकलेगा: (१) कांग्रेस अहिंसाकी नीतिको अपना चुकी है; (२) इसलिए जो अहिंसाको स्वीकार नहीं करता वह कांग्रेसमें नहीं रह सकता; (३) कांग्रेस एक शुद्ध राष्ट्रीय और असाम्प्रदायिक संस्था है; (४) इसलिए कोई साम्प्रदायिक वृत्ति-वाला व्यक्ति उसमें नहीं रह सकता; (५) कांग्रेस अहिंसाकी नीतिपर चलनेवाली है और साम्राज्यवादकी पक्की विरोधी है। इसलिए जबतक वह इस नीतिपर कायम है और ब्रिटिश साम्राज्यवादके विरुद्ध उसने 'जंगका ऐलान' कर रखा है, तबतक साम्राज्यवादी ब्रिटेन किसी भी कांग्रेसीकी कुछ सुनेगा, ऐसी आशा रखना व्यर्थ है।

इसलिए जो लोग मेरे पत्रका, जिस तरह बयान किया गया है, वैसा विकृत अर्थ करते हैं, वे मुझे तो कुछ भी नुकसान नहीं पहुँचा सकते, उलटे अपनेको एक ऐसे व्यक्तिकी सेवा और सलाहसे वंचित करते हैं जिसने लगभग बीस सालतक वफादारीसे उनकी खिदमत की है।

मास्टर तारासिंहने मेरे पत्रके जवाबमें एक गुस्सेसे भरा हुआ पत्र भेजा है। मैं उसे यहाँ नहीं छापता, क्योंकि उसमें कोई नई दलील नहीं है। लेकिन एक गलतीको दुरुस्त कर देना यहाँ जरूरी समझता हूँ। उसमें ऐसा दिखाने की कोशिश की गई है कि हिन्दू-मुस्लिम झगड़ेको मिटाने की आतुरतामें मैं साम्प्रदायिक प्रश्नके बारेमें कांग्रेसके लाहौर अधिवेशनके प्रस्तावसे[1] अलग निकल जाना चाहता हूँ। वह प्रस्ताव मेरे लिए एक पवित्र धरोहर है। और अगर मेरी चलेगी तो जब साम्प्र-दायिक प्रश्नको सुलझाने का समय आयेगा, तब लाहौर-प्रस्तावपर पूरी तरह अमल किया जायेगा। सब सम्बन्धित दलोंकी सहायता और सहयोगके बिना इस सवालको सुलझाने का कोई भी अहिंसक रास्ता नहीं निकल सकता। इसलिए सिख भाइयोंसे मैं विनती करूँगा कि वे जल्दबाजीमें कुछ भी नतीजा न निकालें, परन्तु निष्पक्ष-भावसे इस सवालपर विचार करके राय कायम करें। गुस्सा एक प्रकारका क्षणिक पागलपन है और जो लोग जान-बूझकर अथवा बिना जाने इसके वशमें अपनेको होने देते हैं उन्हींको इसका नतीजा भुगतना पड़ता है।

शिमला जाते हुए ट्रेनमें, २५ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-९-१९४०

१. देखिए खण्ड ४२, पृ० ३२९-३१ तथा ३७०।

३६. राजाजी की टिप्पणी

प्रिय गांधीजी,

श्री चंद्रशंकरके[1] सौजन्यसे पूनामें मुझे २२ सितम्बरके अग्रलेखकी[2] पाण्डुलिपि पढ़नेका अवसर प्राप्त हुआ था। मैं पूरी तरहसे समझता हूँ कि आपने वह लेख क्यों लिखा, लेकिन मैं चाहता था कि उसका प्रकाशन रोक सकता अथवा उसपर अपनी टिप्पणी जोड़ सकता। अब प्रकाशित लेख पढ़कर मैं सोचता हूँ कि यह अच्छा होगा कि मैं अपनी स्थिति स्पष्ट कर दूँ।

मुझे ऐसा नहीं लगता कि आपने मेरी स्थिति हास्यास्पद बनाई। पूना के प्रस्तावकी जो आलोचना बम्बईमें हुई उसकी मुझे चिन्ता नहीं थी। मुझे पूना-प्रस्तावके लिए जरा भी खेद नहीं है। उसमें वही बात व्यक्त की गई थी जो मौजूदा परिस्थितियोंमें करना हम ठीक समझते थे। ब्रिटिश सरकार सहमत नहीं हुई और परिणामस्वरूप वह प्रस्ताव विफल हो गया है। तथापि वह प्रस्ताव जिन कारणोंसे पेश किया गया था, उनकी सत्यतामें फर्क नहीं पड़ा है। भारतके लगभग समूचे प्रबुद्ध वर्गने पूना-प्रस्तावका स्वागत किया था। आपने जरूर उसे गलत माना था, क्योंकि उसका अर्थ था युद्धमें शरीक होना, चाहे वह भारतकी प्रतिरक्षाके लिए ही क्यों न हो। कुछ लोगोंको आशंका थी कि ब्रिटिश सरकार शायद प्रस्ताव स्वीकार कर ले और हमें ब्रिटेनके साथ सहयोग करना पड़े, जो कि उन्हें अरुचिकर था। कुछ लोग ऐसे हैं जिनके लिए सफलता ही निर्णायक चीज है। वे उस प्रस्तावको लाना शर्मनाक मानते हैं जो ठुकरा दिया जाये। और फिर कुछ लोग ऐसे हैं जो चाहते हैं कि अव्यवस्था बढ़े, क्योंकि उसीमें से उन्हें देशके भविष्यकी आशा दिखलाई देती है और वे लोग किसी भी ऐसी चीजका विरोध करेंगे जो इस अराजकता के उबालको कम करे। इस तरहके लोगोंको छोड़कर देशके सभी जागरूक लोगोंने बड़ी संख्यामें पूनाके प्रस्तावका, यानी कि इस बातका जोर-शोरसे समर्थन किया था कि यदि ब्रिटेन भारतीयोंका यह हक मान ले कि वे एक स्वतन्त्र कौम हैं और एक सच्ची राष्ट्रीय सरकार बना दे, जिसमें वर्त्तमान केन्द्रीय विधान-सभाके निर्वाचित सदस्योंमें से विभिन्न गुटोंके नेता हों, तो गतिरोध समाप्त हो जाना चाहिए। आपका यह मत है कि कांग्रेसको अबसे युद्धकी

१. चन्द्रशंकर शुक्ल
२. देखिए पृ० ३२-३५।

समाप्तिके लिए काम करना चहिए। आपके मतानुसार हमारे राष्ट्रीय ध्येयकी प्राप्तिका इस कामके साथ अटूट सम्बन्ध है। इसलिए आपका यह मत है कि किसी भी हालतमें इस मौजूदा युद्ध-प्रयत्नमें हिस्सा लेना भयंकर भूल है। मैं भी यह मानता हूँ कि विश्वमें शान्ति होनी चाहिए और जितनी जल्दी हो सके युद्धोंको समाप्त कर देना चाहिए। लेकिन इसका रास्ता, मेरी रायमें, यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय सहयोगकी ऊँची भावनाका विकास किया जाये, न कि एक-दूसरेके उद्देश्यों और महत्वाकांक्षाओंको पराजित करने के लिए नये-नये हथियारोंको खोजा जाये। आपको इस बातकी खुशी है, लेकिन मुझे नहीं है कि चूँकि ब्रिटिश सरकारने हमारी तजवीज अस्वीकार कर दी अतः हमारा शान्तिवाद बच गया है।

मैं बम्बईके प्रस्तावका[1] समर्थन इसलिए नहीं करता कि पूनाका प्रस्ताव गलत था। मेरा समर्थन निम्नलिखित कारणोंपर आधारित है:

अंग्रेजोंका भारतीयोंसे पूछे बगैर यह घोषित करना गलत बात है कि भारतीय जनता किसी देशके साथ युद्धरत है। युद्धका अर्थ केवल इतना ही नहीं है कि कुछ पैसा दे दिया जाये या गोला-बारूद आदि बनाया जाये। इसका परिणाम आसानीसे वह सब हो सकता है जो लन्दनपर गुजर रही है और उसी स्तरपर इससे निपटना चाहिए। चालीस करोड़ लोगोंको उनकी इच्छाके विरुद्ध या उनसे बिना पूछे इस मुसीबतकी हालतमें भी नहीं डाला जा सकता। हम उसमें शामिल हुए बिना और उस दुःखद स्थितिको आवश्यकतासे अधिक बढ़ाये बिना भी जर्मनीके विरुद्ध ब्रिटेनके मामलेका औचित्य समझ सकते हैं। अमेरिका युद्धमें शरीक होने से इनकार करता है, हालाँकि हो सकता है कि वह ब्रिटेनके पक्षमें निर्णय दे। हम चीन-जापान युद्धमें नहीं शरीक हुए, बावजूद इसके कि चीनका पक्ष न्यायपूर्ण था।

पूनाका प्रस्ताव युद्धमें भाग लेने को हमारे आत्मसम्मानके साथ संगत और लाभप्रद बनाना चाहता था। परन्तु प्रस्तावको ब्रिटिश सरकारने अस्वीकार कर दिया। इसलिए भारतको युद्धमें शरीक होने से इनकार कर देने का हक है। लेकिन उसे इस आधारपर चन्दा देने और हिस्सा लेने को बाध्य होना पड़ता है कि भारत साम्राज्यका एक हिस्सा है, जिसका अपना कोई स्वतन्त्र दर्जा नहीं और जिसे युद्ध और तटस्थतामें चुनावका हक नहीं है। ब्रिटेनकी दलील यह है कि भारतसे ली हुई मदद स्वेच्छापूर्वक दी गई है। यह दावा उचित ठहराया जा सकता है या कमसे-कम इसपर आपत्ति यथासम्भव कम की जा सकती है, बशर्ते कि उन लोगोंको, जो युद्धमें शरीक न होने के पक्षमें प्रचार

१. देखिए पृ० १-३।

करते हैं, कैद करके दबाया न जाये। तब यह दावा किया जा सकेगा कि युद्धमें न शरीक होने की उन अपीलोंके बावजूद जो भी भारतीय सहयोग मिलता है वह सचमुच स्वेच्छापूर्वक दिया गया है। भारतीय लोगोंको उनकी सहमतिके बिना आधुनिक युद्धकी विनाश-लीलामें घसीटने के अपराधको हल्का बनाने के लिए इतनी रियायत अवश्य देनी चाहिए।

सी० राजगोपालाचारी

मद्रास, २३ सितम्बर, १९४०

हँसी उड़ने की वे अगर परवाह करते तो राजाजी राजाजी न होते। उनके दृष्टिकोणसे तो उनकी स्थिति अभेद्य है। मगर तो भी इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि उनकी बात पिछले बीस सालकी कांग्रेसकी नीतिके सर्वथा विपरीत है। अगर पूनामें की गई प्रस्तुतिका ब्रिटिश सरकारने जैसा चाहिए था वैसा जवाब दिया होता तो कांग्रेस शान्तिप्रियसे एकाएक युद्ध-प्रिय संस्था बन गई होती, और अपने अन्दर सहसा ऐसा परिवर्तन तो स्वयं राजाजी भी नहीं ला सकते थे। मगर अब तो यह एक पुरानी बात हो चुकी। उसका मेरी स्वीकारोक्ति या राजाजीके प्रत्युत्तरसे भी कोई सम्बन्ध नहीं है।

शिमला जाते हुए ट्रेनमें, २५ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-९-१९४०

३७. पत्र : गजानन कानिटकरको

ट्रेनमें
२५ सितम्बर, १९४०

प्रिय बालू काका,

मुझे आपकी 'गीता' मिली; बहुत धन्यवाद। मैं और कुछ नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि लिखने के लिए कुछ है नहीं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९) से। सौजन्य : गजानन कानिटकर

३८. पत्र : जमनालाल बजाजको

ट्रेनमें
२५ सितम्बर, १९४०

चि० जमनालाल,

जयपुरवाली घटनाका तुम्हारा भेजा विवरण मैंने आज ही पढ़ा। उसके बारेमें 'हरिजन' के लिए लिखने बैठा; पर विचार किया कि अभी न लिखूं। यह सोच-कर छोड़ दिया कि लिखने से तुम अधिक निगाहमें चढ़ जाओगे। लेकिन अगर तुम समझते हो कि मेरे लिखने से लाभ ही होगा, तो मैं लिखने को तैयार हूँ। तुम्हारी और राजेन्द्रबाबूकी तबीयत कैसी है? मैं शिमला जा रहा हूँ। रविवार या सोम-वारको सेवाग्राम लौटूंगा।

वहांका काम तुम्हारे सन्तोषके लायक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०१५) से

३९. पत्र : मदनमोहन मालवीयको

ट्रेनमें
२५ सितम्बर, १९४०

पूज्य भाई साहेब,

आपका पत्र मिला। मैं लड़ाई रोकने की कोशिश तो अवश्य करूंगा। अगर हुई ही तो लाचारीसे ही होगी। अंशनका[1] आपका तो क्या लिखूं। मेरे हाथमें थोड़े ही बात है। आप अच्छे होंगे।

आपका,
मो० क० गांधी

मूल पत्रसे : पद्मकान्त मालवीय पेपर्स। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. गांधीजी के सम्भावित अनशनकी खबर पाकर मालवीयजी ने लिखा था कि किसी भी कीमत पर वह अनशनको टालें; देखिए "सत्याग्रहमें उपवासका स्थान", ८-१०-१९४० भी।

४०. सन्देश : मीरज खादी प्रदर्शनीको

[२८ सितम्बर, १९४० या उसके पूर्व][1]

खादीके कई पहलू हैं, जिनमें से आध्यात्मिक पहलूको मैं सबसे ऊपर और आर्थिकको दूसरे स्थानपर रखता हूँ। उनको पूरी तरह सिद्ध करने के लिए सभी अपनी मदद दे सकते हैं; इतना ही नहीं, सबको मदद देनी ही चाहिए। सच तो यह है कि राजाओंको ही सबसे पहले आगे आना चाहिए। राजा लोग भी मीरज प्रदर्शनीमें हिस्सा ले रहे हैं, यह उनके ही भलेकी बात है।[2] मैं आशा करता हूँ कि प्रदर्शनी सफल होगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-९-१९४०

४१. सिन्धके हिन्दू

सिन्धकी मौजूदा हालतके बारेमें श्री शामलाल गिडवानीने एक पत्र लिखा है; जिससे मैं नीचेका उद्धरण देता हूँ:[3]

जिस रोज यह पत्र मेरे पास आया, उसी रोज मैंने अखबारोंमें पढ़ा कि पाँच हिन्दुओंकी, जो कि उस समय अपने मामूली काम-काजमें लगे हुए थे, खुले-आम गोली मारकर हत्या कर दी गई। जैसा कि आम तौरपर होता ही है, हत्यारोंका अभीतक कुछ पता नहीं चला है। क्या ये घटनाएँ योजनापूर्वक आतंक पैदा करने के लिए कराई जा रही हैं, ताकि हिन्दू सिन्धसे भाग जायें या कोई दूसरा कारण है? सिन्धमें किसीको इसका जवाब देना चाहिए।

श्री गिडवानी अहिंसामें श्रद्धा नहीं रखते। उनकी रायमें मेरी सलाह भगवान कृष्णके उपदेशोंके विरुद्ध है। उनका खयाल है कि हिन्दुओंके लिए अहिंसाका मार्ग स्वीकार करना असम्भव है और इसके लिए वे (अपनी दृष्टिसे) बहुत अच्छे कारण भी पेश करते हैं। और इतने ही सबल कारणोंसे वे यह भी मानते हैं कि हिन्दू सिन्धको छोड़ भी नहीं सकते। लेकिन वे यह चाहते हैं कि मैं हिन्दुओंको सलाह दूँ कि वे अपनी रक्षा हथियारोंके द्वारा करें। यह तो वही बात हुई कि जैसे कोई प्राकृतिक चिकित्सकसे कहे कि वह एलोपैथीकी दवा लिख दे। क्या उसपर

१. यह सन्देश दिनांक "मीरज, २८ सितम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. साधन-सूत्रके अनुसार प्रदर्शनीका उद्घाटन २९ सितम्बर को औंधके राजा साहब करनेवाले थे।
३. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

यह भरोसा किया जा सकता है कि वह ठीक दवा बता सकेगा? फिर, जब मैं खुद हथियार चलाना नहीं जानता तो मेरी सलाह किस कामकी हो सकती है? श्री गिडवानीको एक ऐसे हकीमके पास जाना चाहिए जिसे इस विद्याका ज्ञान हो, जो जरूरतके वक्त बचावके लिए पहुँच सके और जो हमेशा जरूरी तालीम देनेको तत्पर रहे। मैं कह चुका हूँ कि जो लोग अहिंसामें श्रद्धा नहीं रखते, उन्हें अपनी रक्षा हथियारसे ही करनी होगी। लेकिन अगर वे मुझसे पूछें कि यह किस प्रकार करें तो मैं एक ही जवाब देने के योग्य हूँ कि 'मैं नहीं जानता'।

लेकिन जब श्री गिडवानी सोच-विचार किये बिना मुझसे यह अपेक्षा करते हैं कि मैं उनकी असम्भव शर्तोंपर सिन्धके हिन्दुओंकी रहनुमाई करूँ तो यही कहा जा सकता है कि वे इस संकटके साथ खिलवाड़ कर रहे हैं। समस्याका जो हल वे सुझाते हैं, उसमें यदि उनका पूरा विश्वास है तो उन्हें खुद तुरन्त इस कलाकी तालीम लेनी चाहिए, और सिन्धके आतंकग्रस्त हिन्दुओंको भी सशस्त्र रक्षाका मार्ग बताना चाहिए। सिन्धके नेताओंका बाहरी मददके लिए मुँह जोहना एक भारी गलती है। उन्हें मददके लिए चिट्ठियाँ लिखना बन्द कर देना चाहिए और गम्भीर विचारके बाद एक योजना बनानी चाहिए — चाहे वह योजना अहिंसक हो या हिंसक — और उसपर बहादुरी और दृढ़तासे अमल करना चाहिए।

सिन्धके जिम्मेदार मुसलमानोंसे भी मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि उनकी प्रतिष्ठा खतरेमें है। यदि वे बेगुनाह लोगोंकी बेमानी हत्याएँ नहीं रोकेंगे तो इतिहास उन्हें निःसन्देह गुनहगार ठहरायेगा। इस बातको कभी भी कोई नहीं मानेगा कि वे इस बुराईको रोकने की शक्ति नहीं रखते। अगर हत्या करनेवालोंको अपने समाजकी मौन सहानुभूति न मिलती हो तो ऐसी घटनाएँ हो ही नहीं सकतीं।

शिमला, २८ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-१०-१९४०

४२. दिलचस्प तुलना

श्री ए० चौधरीने, जो बहुत मुश्किलोंके बाद अहिंसातक पहुँचे हैं, निम्न-लिखित दिलचस्प पत्र भेजा है:

> ट्राट्स्कीकी अभी हाल ही में हुई हत्याके[1] बाद उसके बारेमें समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित कुछ लेखोंको ध्यानसे देखने पर मुझे एक खास बात मालूम हुई। १९१७ में अक्तूबर-क्रान्तिके बाद जब बोल्शेविकोंके हाथ सत्ता आई, तब सोवियत सरकारने जर्मनीके साथ शान्तिके लिए बातचीत चलाई। जर्मन सरकारने बहुत कड़ी शर्तें रखीं। ट्राट्स्कीने सोचा कि क्रान्तिका नैतिक प्रभाव इतना जबरदस्त है कि जर्मन सरकारके लिए रूसपर हमला करना असम्भव होगा। अतएव उसने उन शर्तोंको मानने के बजाय इस बातकी घोषणा कर दी कि सोवियत सरकार युद्धको समाप्त समझती है, इसलिए वह अपनी सेनाकी लामबन्दी तोड़ने जा रही है तथा वास्तवमें उसने ऐसा करना शुरू भी कर दिया। जर्मन सेनाएँ आगे बढ़ती रहीं और अन्तमें उन्होंने जो सन्धि की, उसकी शर्तें और भी कड़ी थीं।
>
> क्या आप नहीं समझते कि इस क्रान्तिकारी नेताको अनजाने ही आंशिक रूपसे यह प्रतीति हो गई थी कि सेनाके बिना भी विदेशी आक्रमणका प्रतिरोध किया जा सकता है? उनकी असफलताका कारण स्पष्ट है। रूसके लोगोंने कभी भी विचारपूर्वक अहिंसाको स्वीकार नहीं किया था, और न ही उसके लिए कोई तैयारी की थी। ट्राट्स्कीने जो-कुछ किया, वह अप्रतिरोध था, वह सक्रिय अहिंसात्मक अपील नहीं थी।
>
> रूसी क्रान्तिके इतिहासमें ऐसे उदाहरण मौजूद हैं जब निहत्थी जनता अथवा मजदूर लोग सेनाकी गोलियोंकी बौछारके सामने इस आशाके साथ उठ खड़े हुए थे कि वे सैनिकोंके दिलोंको जीतकर अपना पक्ष-समर्थक बना लेंगे और वे निश्चय ही सफल रहे। इन्हें मैं आम जनता द्वारा असंगठित ढंगसे और अनजाने ही अहिंसक पद्धतिका अपनाया जाना मानता हूँ। लेकिन ट्राट्स्कीके

१. लेव डेविडोविच ट्राट्स्की (१८७९-१९४०), रूसके एक राजनीतिक नेता। १९१७ में रूसमें बोल्शेविक क्रान्तिका संगठन करने में उन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। १९३६ में उनके ऊपर स्टालिनकी हत्याके षड्यन्त्रमें शरीक होनेका आरोप लगाया गया। २० अगस्त, १९४० को एक 'मित्र' ने उनके ऊपर घातक हमला किया, जिसके फलस्वरूप अगले दिन उनकी मृत्यु हो गई। कहा जाता है कि हत्या स्टालिनके इशारेपर की गई थी।

उदाहरणसे प्रकट होता है कि एक ऐसा जिम्मेदार क्रान्तिकारी राजनयिक, जिसका अहिंसासे कोई सम्बन्ध न हो, क्रान्तिकारी अनुभवोंके प्रकाशमें उस 'बेतुके' रास्तेको, जिसकी वकालत अब आप कर रहे हैं, सम्भव मान सकता था और वास्तवमें उसका प्रयोग भी कर सकता था।

तो फिर हमें २० सालकी अपनी अहिंसापूर्ण कार्रवाईकी परम्पराके साथ इसपर क्यों नहीं प्रयोग करना चाहिए? यही नहीं, बल्कि यह आशा भी क्यों न करनी चाहिए कि हमारी सफलता निश्चित है? मैं स्वयं भी इस बातपर विश्वास करने लगा हूँ कि हर प्रकारकी अहिंसापूर्ण कार्रवाईमें विदेशी आक्रमणका प्रतिरोध करने की कार्रवाई सबसे आसान है तथा इसके पूर्ण रूपसे सफल होने की सम्भावना सबसे अधिक है।

शिमला, २८ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-१०-१९४०

४३. तार: अनिलकुमार चन्दको[1]

[२८ सितम्बर, १९४०][2]

आपका तार[3] मिला। प्रभुसे प्रार्थना है कि जैसा उसने पहले भी किया है, इस बार भी वह गुरुदेवको [बीमारीसे] उबार ले तथा कुछ काल और मानवता[की सेवा]के लिए रहने दे।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-१०-१९४०। तारकी नकल: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१ और २. रवीन्द्रनाथ ठाकुरके सचिव। यह तार महादेव देसाईने दिनांक "शिमला, २८ सितम्बर, १९४०" के अपने लेख "कम ब्रेक इन ए शॉवर ऑफ कम्पैशन" के अन्तमें उद्धृत किया था। महादेव देसाईने लिखा है कि लेखके "डाकमें भेज दिये जाने के" बाद अनिलकुमार चन्दका तार मिला। ऊपर लिखा तार उसके "तुरन्त बाद" भेजा गया।

३. तारमें लिखा था: "गुरुदेवकी हालत खतरनाक है। कलकत्ताके डाक्टरोंके साथ आज रात उन्हें कलकत्ता ले जाया जा रहा है।"

४४. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

मैनरविले, शिमला वेस्ट
२८ सितम्बर, १९४०

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपका कलकी तारीखका पत्र[1] मुझे अभी-अभी प्राप्त हुआ है।

कल मैंने आपका जो काफी समय लिया, उसके लिए आपने अपनी आदतके मुताबिक मुझे धन्यवाद दिया है। मुझे तो लगता है कि मुझको आपका धन्यवाद स्वीकार नहीं करना चाहिए, क्योंकि उस धन्यवादके पात्र तो आप हैं, जिन्होंने अधीरता या खीज प्रदर्शित किये बगैर मुझे अपनी लम्बी-चौड़ी बात कहने का अवसर दिया। कृपया उसे आप स्वीकार करें।

इतनी तत्परतासे मुझे मंगलवारको भेंटका समय देने के लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। यदि आपको कोई फर्क न पड़ता हो, तो मैं चाहूँगा कि यह समय सोमवार दिनके २.४५ के लिए मुकर्रर किया जाये। मैं अपना मौन कल जल्दी आरम्भ कर सकता हूँ, जिससे कि उसे सोमवारको निर्धारित भेंटके लिए समयपर समाप्त कर सकूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे: लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. जिसमें लिखा था: "आज अपराह्नमें मुझे अपना समय देने के लिए मैं आपका आभारी हूँ। मेरा सुझाव है कि आपको यदि सुविधाजनक हो तो हम मंगलवार दिनके २.४५ पर अपनी अगली बातचीतके लिए मिलें। कल और इतवारको शिमलासे बाहर जाने का मेरा कार्यक्रम पहले ही तय हो चुका था। और जैसा कि मुझे मालूम है, सोमवार आपका मौन-दिवस है, अतः मैं आपके सामने उस दिन कोई सुझाव पेश करना नहीं चाहता।"

४५. पत्र : अमतुस्सलामको

२८ सितम्बर, १९४०

चि० अ० सलाम,

तू भी गुजराती पढ़ना सीख ले। नब ठीक चल रहा होगा और तू खुश होगी। शिमलामें ज्यादा रुकना पड़ेगा। सोमवार तक काम पूरा होने की सम्भावना है। अपनी तबीयत अच्छी तरह सुधार लेना। मैंने जो कहा है, याद रखना। हिन्दीकी वर्तनी ठीक कर लेनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३४) से

४६. अगर सच हो, तो शर्मनाक है

एक पत्र-लेखकने मुझे बहुत दुःखद पत्र लिखा है। पत्रमें से चन्द कटु विशेषणोंको निकालकर मैं उसे नीचे देता हूँ:[1]

इन 'सैनिकों' के अभद्र व्यवहारकी जो आम शिकायत है उसकी पुष्टि करनेवाले अनेक पत्र मुझे मिल चुके हैं। एक पत्रमें लिखा है कि एक परोपकारी महिलाने इन [आस्ट्रेलियाई] और हिन्दुस्तानी सैनिकोंको चाय पर बुलाया। हिन्दुस्तानी तो सब आ पहुँचे मगर २५० से ऊपर निमन्त्रित आस्ट्रेलियाइयोंमें से करीब आठ आये। कहा जाता है कि बेचारी महिला बहुत दुःखी व परेशान हुई। उसने यह जानने के लिए टेलिफोन किया कि उसके आस्ट्रेलियाई मेहमान क्यों नहीं आये, तो उत्तर मिला कि "वे कहीं और बाहर चले गये हैं, वे तैयार नहीं हैं"।

जब मैं बम्बईमें था तो मैंने इस उच्छृंखल बरतावके बारेमें सुना था। मेरा दिल चाहता था कि मैं उनके कथित अशिष्ट व्यवहारके बारेमें सुनी इन कहानियोंको सही न मानूं। जब मैं [बम्बईसे] वर्धाके लिए रवाना हुआ तो उनमें से चन्द सैनिक मुझसे मिलने के लिए स्टेशन आये। मैंने उनसे मेरे ध्यानमें लाई गई इन शिकायतोंके बारेमें जिक्र किया। उन्होंने मुझसे वादा किया कि वे मामलेको दुरुस्त करने का उपाय करेंगे। स्पष्ट है कि इन लोगोंका अपने अन्य साथियोंपर

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें बम्बईमें आस्ट्रेलियाई सिपाहियों द्वारा किये गये अभद्र और उद्दण्ड व्यवहारका वर्णन था।

कोई प्रभाव नहीं था। उन्होंने मुझसे कहा भी था कि सेनामें भर्ती होने से पहले उनकी एक-दूसरेसे कोई वाकफियत नहीं थी।

जो भी हो, इस खतरेसे कड़ाईसे निपटने की जरूरत है। मैंने वाइसराय महोदयसे इसके बारेमें जिक्र किया भी था। उन्होंने जाँच करने का वादा किया। उन्होंने स्वीकार किया कि अगर सच है तो यह एक गम्भीर बात है। मैं समझता हूँ कि रंगद्वेष आस्ट्रेलियामें उतना ही गहरा है जितना कि दक्षिण आफ्रिकामें है। अश्वेत आदमी तो धूल बराबर है। गोरी और अश्वेत जातियोंमें बराबरी हो ही नहीं सकती। दक्षिण आफ्रिकाके संविधानमें ऐसा साफ लिखा है। गोरे आदमी सोचते हैं कि जिस चालीस करोड़की जन-संख्यावाले देशपर एक लाख गोरे राज्य कर रहे हैं वह उसी प्रकारके बरतावके लायक है जैसा व्यवहार हमारे देशकी लड़कियों, विक्टोरिया गाड़ीके चालकों और हिन्दुस्तानी पुलिस तकके साथ आस्ट्रेलियाई सैनिकोंने किया बताते हैं। युद्धसे गोरोंके व्यवहारमें कोई फर्क नहीं पड़ा है।

इन घटनाओंके जो विवरण मिले हैं, यदि वे सच हैं तो इनसे दो सवाल उठते हैं। सारे-के-सारे खत जो मेरे पास आये हैं, वे कपोल-कल्पित नहीं हो सकते। इन सैनिकोंके वरिष्ठ अधिकारियोंने इन आरोपोंके बारेमें क्या किया है? वाइसराय महोदय तो एक व्यक्ति हैं। अगर हर अप्रिय घटनामें राहत पाने के लिए उन्हींके पास जाने की जरूरत हो, तो इसे आवश्यक बना देनेवाली समूची प्रणाली ही दोषपूर्ण है। जहाँतक आम जनताको न्याय मिलने का सवाल है, मैं कहूँगा कि अधीनस्थ कर्मचारियोंमें घोर अनुशासनहीनता व्याप्त है। जब तलवारकी ताकत दिखाने का मौका आता है तब तो सरकारके सामने कोई रुकावट पेश नहीं आती; वाइसराय और तमाम अधीनस्थ सरकारी अधिकारी एक व्यक्तिकी भाँति बरतते हैं। इससे यह भयानक निष्कर्ष निकलता है कि सर्वोच्च सत्ता तो नीचेके अधिकारी वर्गके पास है; वाइसराय तो मात्र एक नामधारी शासक हैं। गांधी-अर्विन समझौतेको[1] जिस प्रकार अधीनस्थ अधिकारियोंने आपसमें मिलकर खण्ड-खण्ड कर दिया वह इस सचाईका सबसे ज्वलन्त और दुःखद उदाहरण है। यदि उस समय अधीनस्थ सरकारी कर्मचारियोंने इस समझौतेकी ऐसी मनमानी उपेक्षा न की होती तो निश्चय ही इतिहास कुछ और ही प्रकारसे लिखा गया होता। लेकिन सरकारी अधिकारियोंके अन्दर लॉर्ड अर्विनकी-सी भावना नहीं थी। सवाल अब यह है कि आस्ट्रेलियाई सेनाके प्रधान सेनापतिने अपने आदमियोंको क्या सजा दी है? क्या उसने उन्हें कोई हिदायत नहीं दी थी कि वे एक नरम-दिल कौमके साथ कैसा सलूक करें? पुलिस कमिश्नरने क्या किया? कलेक्टरने क्या किया? महामान्य गवर्नर महोदयने क्या किया?

दूसरा सवाल भी इतने ही महत्त्वका है। हमारे लोगोंने अपनी लड़कियोंको ऐसे जंगलीपनसे बचाने के लिए क्या बन्दोबस्त किया है? बम्बईके मेयर साहबने[2] अपने शहरकी बहनोंकी इज्जतकी रक्षाके वास्ते क्या इन्तजाम किया है? यह सच है कि

१. ५ मार्च, १९३१ को; देखिए खण्ड ४५, परिशिष्ट ६।

२. मथुरादास त्रिकमजी; देखिए "पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको", ७-१०-१९४०।

उनके पास कोई कार्यकारी अधिकार नहीं है। परन्तु वे नगर-निगमके अध्यक्ष-मात्र ही नहीं हैं। उनका पद इतनी प्रतिष्ठा व शान रखता है कि वे सम्बन्धित अधिकारियोंको सही कदम उठानेके लिए प्रेरित कर सकते हैं। बम्बईकी कांग्रेस कमेटीने क्या किया है? आम व्यक्तियोंने क्या किया है? जो बयान किया गया है वह अगर सच हो तो वह प्रत्येक सम्बन्धित व्यक्तिके लिए भारी कलंककी बात है। यदि हममें लोक-सेवाकी भावना हो, चाहे हिंसक या अहिंसक, तो कोई भी आदमी, चाहे गोरा हो या सांवला, हमारी लड़कियोंको उनकी मर्जीके खिलाफ छूनेकी हिम्मत नहीं करेगा।

इस मामलेकी पूरी तरह जांच होना जरूरी है।

शिमला, २९ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-१०-१९४०

४७. टिप्पणियाँ

गैरकानूनी महसूल?

यह पत्र[1] उनका नमूना है जो अक्सर मुझे मिलते हैं। किसी-न-किसी रूपमें इस प्रकारकी बातें हो रही हैं। मैं तो इनको गैरकानूनी महसूल कहूँगा। कोई भी मुसाफिर अगर जरा तकलीफ गवारा करे तो महसूल देनेसे इनकार कर सकता है और वाजिब किराया देकर बसमें बैठनेके लिए जगह मांग सकता है। अगर जगह न दी जाये तो वह मुकदमा कर सकता है। जहांतक मुझे मालूम है, सरकारकी यह नीति नहीं है कि लोगोंसे जबरन चन्दा लिया जाये। युद्धमें मदद करनेके लिए पहले ही पर्याप्त बाध्यकारी कानूनी व्यवस्थाएँ मौजूद हैं। उन्हें भी एक सीमासे आगे बढ़कर लागू किया जा रहा है, जिससे लोगोंमें नाराजगी पैदा हो रही है। लेकिन जब इस प्रकार कानूनी रूपसे की गई उगाहीके अलावा चन्देके नामपर गैर-कानूनी रूपसे पैसा वसूल किया जाता है तो यह नाराजगी बहुत तीव्र हो जाती है। जबरन् वसूलीको कानूनका रूप देना बुरा है और गैरकानूनी कामोंको अनदेखा करना और भी बुरा है। मैं यही आशा कर सकता हूँ कि इन्हें कतई रोक दिया जायेगा। लड़ाईका चन्दा नाजायज तरीकेसे हासिल करना उचित नहीं है। स्वैच्छिक चन्दा तभी होगा जब यह इन्तजाम हो कि जो देना चाहें वे अपना चन्दा मुकर्रर जगहोंपर भेज दें। स्वेच्छापूर्वक किये गये प्रयासकी सच्ची कसौटी तो यही होगी।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें बताया गया था कि किस प्रकार अलीबाग, कोलाबामें पुलिसवाले बस-मालिकोंको हर बेचे गये टिकटपर आधा आना युद्ध-चन्देके रूपमें देनेको मजबूर करते थे और किस प्रकार बस-मालिक यह पैसा यात्रियोंसे वसूल करते थे।

एक ईसाई विद्यार्थीको शिकायत

बंगालके एक मिशनरी कॉलेजसे एक भारतीय ईसाई विद्यार्थीने लिखा है :[1]

हालमें विद्यार्थियों द्वारा हड़तालके विरोधमें मैंने काफी-कुछ लिखा है। मैं इस कॉलेजका नाम नहीं जानता। अगर जानता होता तो मैं इस मामलेके बारेमें कॉलेजके संचालकोंको जरूर लिखकर पूछता। इसलिए मैं इस पत्र-लेखक विद्यार्थीकी कहानी सच मानकर लिख रहा हूँ। और अगर यह सच हो तो मैं निःसंकोच कहता हूँ कि इस अवसरपर विद्यार्थियोंकी हड़ताल बिलकुल ठीक थी। मैं आशा करता हूँ कि हड़ताल पूर्णतया स्वैच्छिक और सफल रही होगी। 'वन्देमातरम्' राष्ट्रीय गीत है या नहीं, इस बातका फैसला करना मिशनरियोंका काम नहीं है। उनके लिए यह जानना काफी है कि विद्यार्थी इस गीतको राष्ट्रगीत मानते हैं। यदि अध्यापकों और कॉलेजों के प्रोफेसरोंको विद्यार्थियोंके प्रेमकी दरकार है, तो उनका कर्त्तव्य है कि लाभदायक और अच्छे कार्यमें वे विद्यार्थियोंका पूरा-पूरा साथ दें।

शिमला, २९ सितम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-१०-१९४०

४८. अहिंसामें व्यायामका स्थान

व्यायाम-शालाओंमें, अखाड़ोंमें तलवार, भाले, खुखड़ा, आटापाटाके खेल आदिके लिए स्थान होता है। कांग्रेसके स्वयंसेवकोंको अनेक प्रकारकी कवायद सिखाई जाती है, साथ ही ऊपर लिखे अनुसार तालीम भी कई जगह दी जाती है। इस विषयमें मेरे पास कई पत्र आये हैं। पत्रोंके लेखक जानना चाहते हैं कि अहिंसाकी दृष्टिसे इसके सम्बन्धमें मेरे क्या विचार हैं। इस विषयकी चर्चा शुरू करूँ, इससे पहले एक महत्त्वपूर्ण बात कहना जरूरी है। हिंसक फौजकी भरतीमें उम्मीदवारके शरीरकी ही परीक्षा की जाती है। उसमें बूढ़ेको, स्त्रीको तथा किशोरोंको नहीं लिया जाता। इसी प्रकार रोगग्रस्तको भी नहीं भरती किया जाता। और इस प्रकारका विधान हिंसक फौजके लिए आवश्यक भी है।

लेकिन अहिंसक संघका विधान इससे बिलकुल उलटा होता है। इसमें उम्मीदवारके मनकी जाँच करनी होती है, इसलिए उस संघमें कोढ़ी तक हो सकते हैं। बूढ़े, स्त्रियाँ, किशोर, लूले, लँगड़े तथा आँखके अन्धे भी हो सकते हैं और विजय प्राप्त कर सकते हैं। मारने की शक्ति अर्जित करने के लिए अभ्यास करता

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने लिखा था कि कॉलेजके विद्यार्थियोंके एक कार्यक्रममें 'वन्देमातरम्' गाने पर प्रिंसिपलने आपत्ति की थी, जिसके विरोधमें छात्रोंने हड़ताल की थी।

पड़ता है। लेकिन मरने की शक्ति तो, जिसमें इच्छा हो गई, उसमें है ही। दस-बारह वर्षके बालकके पूर्ण सत्याग्रही होने की कल्पना की जा सकती है, इसके उदाहरण भी मिल जाते हैं। लेकिन दस-बारह वर्षका बालक हिंसक फौजमें भरती हो ही नहीं सकता। उसकी चाहे जितनी इच्छा हो, लेकिन उसके पास आवश्यक शारीरिक सम्पत्ति ही नहीं होगी।

लेकिन कोढ़ी अथवा बालक भी अहिंसक फौजमें भरती हो सकते हैं, इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि अहिंसक मनुष्यको शरीरकी ओर ध्यान देने की जरूरत ही नहीं रह जाती। अहिंसामें ऐसे काम भी करने ही पड़ते हैं, जो कसे हुए शरीरका आदमी ही कर सकता है। इसलिए अहिंसक मनुष्यको किस प्रकारकी शारीरिक तालीम लेनी चाहिए, इसका विचार करना अत्यावश्यक है।

जो नियम हिंसक फौजपर लागू होते हैं, उनमें से कुछ ही अहिंसक संघपर लागू होंगे। हिंसक फौजके पास तलवार वगैरह हथियार शोभाके लिए नहीं होते। वे तो उनका उपयोग बाकायदा प्राण लेने के लिए करेंगे। किन्तु अहिंसक संघके लिए ऐसे हथियारोंका कोई उपयोग नहीं है, इसलिए वह तो उन्हें भार-रूप मानेगा, और सम्भव हुआ तो उनसे ऐसे औजार बनायेगा जो खेती वगैरहके काममें आयें। ऐसी चीजोंको हथियारके रूपमें रखते उसे शर्म आयेगी। हिंसक सिपाहीको शिकार करना सिखाकर उसे हिंसाकी तालीम दी जायेगी। अहिंसकको शिकार करने की फुर्सत ही नहीं होगी। अहिंसककी तालीम रोगीकी सार-सँभाल करना सीखने की होगी; जानका खतरा होने से डरे हुए लोगोंको बचाने की होगी; जहाँ चोर-डाकुओंका भय हो, वहाँ पहरा देने की और उन्हें समझाकर रोकने में मर-मिटने की होगी। हिंसककी और अहिंसककी पोशाक भी अलग-अलग होगी। हिंसक अपनी रक्षाके लिए कवच पहनेगा, ऐसी पोशाक पहनेगा जिसका प्रतिपक्षीपर रौब पड़े। अहिंसकको किसीके साथ लड़ना नहीं है, किसीपर रौब नहीं डालना है; इसलिए उसकी पोशाक सादी, गरीबकी पोशाकसे मिलती-जुलती और नम्रताकी सूचक होगी। उसका उपयोग बस शरीरको ढाँकने तथा ठण्ड और धूपसे बचने-भरके लिए होगा। हिंसक सिपाहीके रक्षक उसके हथियार होंगे—भले ही वह मुखसे ईश्वरका नाम ले। अपने हथियारोंके लिए करोड़ों रुपये खर्च करते वह हिचकिचायेगा नहीं। अहिंसकका पहला और आखिरी एक ही हथियार होगा—ईश्वरपर उसका अखण्ड विश्वास। हिंसककी मनोवृत्ति और अहिंसककी मनोवृत्तिमें, हाथी और घोड़ेमें जो अन्तर होता है, उससे भी अधिक अन्तर होता है।

हिंसक चौबीसों घंटे अपने दुश्मनको मारने या मरवाने की युक्तियाँ खोजता रहेगा और ईश्वरकी प्रार्थना करता होगा तो वह भी दुश्मनका नाश करने के लिए। अंग्रेज प्रजाका राष्ट्रगीत यहाँ विचारणीय है। उसमें ईश्वरसे अंग्रेज राजाकी रक्षाकी प्रार्थना की गई है, दुश्मनको दगाबाज माना गया है, और ईश्वरसे उसके संहारकी याचना की गई है। यह गीत लाखों अंग्रेज एक स्वरमें, ऊँची आवाजसे खड़े होकर बड़े अदबसे गाते हैं। ईश्वर यदि दयाकी मूर्ति हो, तो वह ऐसी प्रार्थना भला क्यों

सुनेगा? लेकिन गानेवालेके मनपर तो उसका असर होता ही है, और युद्धके समय तो इस गीतसे गानेवालोंके मनमें दुश्मनके प्रति धिक्कार तथा रोषके भाव सुलग ही उठते हैं। हिंसक युद्धको जीतने की एक शर्त यह होती है कि दुश्मनके प्रति अपना रोष रोज बढ़ाया जाये। अहिंसकके शब्दकोशमें बाह्य दुश्मन कोई होता ही नहीं; लेकिन यदि कोई दुश्मन माना भी गया हो, तो उसके प्रति भी उसके मनमें दया-भाव ही होगा। वह यह मानता होगा कि कोई मनुष्य जान-बूझकर दुष्ट नहीं होता। प्रत्येक मनुष्यमें मनुष्यता यानी सारासारका विचार करने की शक्ति होती ही है। यह शक्ति पूरी खिलेगी तो अहिंसाके परिणामस्वरूप ही। इसलिए अहिंसक मनुष्य ईश्वरसे याचना करेगा कि वह उसके तथाकथित दुश्मनको सद्‌बुद्धि दे और उसका भला करे। उसकी प्रार्थना अनवरत यही होगी कि उसकी दयाकी वृत्ति बढ़े, आत्मबल बढ़े, जिससे वह स्वयं निर्भय होकर मौतको गले लगाये।

इस प्रकार दोनोंकी मनोवृत्तिमें महान अन्तर होनेसे दोनोंकी शारीरिक शिक्षा भी अलग-अलग ही होगी।

फौजी तालीम तो हम सब न्यूनाधिक परिमाणमें जानते हैं। अहिंसाकी तालीम अलग ही प्रकारकी होती है। इसकी ओर अभीतक हमारा ध्यान नहीं गया। इसकी तालीम पहले कहीं थी या नहीं, इसकी हमने खोज नहीं की। मेरा मत यह है कि यह तालीम पहले दी जाती थी; और आज भी, चाहे जैसी-तैसी ही क्यों न हो, कहीं-कहीं दी जाती है। हठयोगके अनेक प्रकारके प्रयोग यही तालीम हैं। इसमें जिस शारीरिक शिक्षाका समावेश है, उसमें शरीरका आरोग्य, शरीरका कसाव, ठण्ड और गर्मी सहने की शक्ति, शरीरकी चपलता आदि बातें आ जाती हैं। इसका प्रयोग और इसमें जो शक्ति भरी पड़ी है, उसकी खोजबीन कुवलयानन्दजी कर रहे हैं। उसकी प्रगति कहाँतक हुई है और कुवलयानन्दजी अपने प्रयोग अहिंसाको ध्येय मानकर कर रहे हैं या नहीं, यह मैं नहीं जानता। यहाँ हठयोगका उल्लेख करनेमें मेरा प्रयोजन केवल एक प्राचीन तथ्यकी ओर ध्यान आकर्षित करना-मात्र है। मैं मानता हूँ कि उसमें सुधार और वृद्धिकी गुंजाइश है। इस शास्त्रके लेखकके मनमें सामाजिक अहिंसाकी कल्पना थी या नहीं, यह मैं नहीं जानता। इन क्रियाओंके मूलमें भावना व्यक्तिगत मोक्षकी थी। आसन आदिका उद्देश्य शरीरको कसकर मनोवृत्तियोंपर अंकुश लगाना था। इस समय हम सामाजिक अहिंसाकी बात सोच रहे हैं। यह सभी धर्मावलम्बियोंपर लागू होती है। इसलिए जो नियम या विधान बनें, वे भी ऐसे होने चाहिए जो अहिंसाको माननेवाले सभी लोगोंको मान्य हों। और यहाँ कल्पना अहिंसाकी लड़ाई लड़नेवाले यानी सत्याग्रही संघकी स्थापना करने की है, इसलिए अतीत कालमें जो हो गया, उसे अपना मार्ग-दर्शक मानकर आजका विधान बनाना चाहिए।

जिन बातोंकी सत्याग्रहीको आवश्यकता होती है, उनपर विचार करें। सत्याग्रही यदि नीरोग नहीं होगा, तो उसमें पूर्ण निर्भयता कभी नहीं आयेगी। उसमें रात-दिन एक जगह खड़े रहने की शक्ति होनी चाहिए। ठण्ड, धूप और वर्षा सहन

करके भी वह बीमार न पड़े। कहीं डर हो, किसी जगह आग लगी हो, तो वहाँ दौड़ जाने की उसमें शक्ति होनी चाहिए। वीरान जंगलोंमें, श्मशानमें बेधड़क अकेले घूमने की शक्ति होनी चाहिए। गहरी मार पड़े, घाव हो जायें, भूखसे तड़पे, तब भी वह चूँ न करे, घबराये नहीं और अपना स्थान न छोड़े। दंगा-फसाद वगैरहमें जहाँ कहींसे घुसने-पैठने की गुंजाइश न दिखाई दे, वहाँ भी कूद पड़ने की युक्ति और शक्ति सत्याग्रहीमें होनी चाहिए। कहीं आग लगी हो, ऊँची मंजिलपर रहनेवाले लोगोंको बचाना हो, तो वहाँ ईश्वरका नाम लेकर पहुँच जाने की इच्छा व शक्ति उसमें होनी चाहिए। कहीं बाढ़ आई हो और उसमें कोई डूबता हो या कोई कुएँमें गिर पड़ा हो, तो वहाँ भी कूद पड़ने की शक्ति उसमें होनी चाहिए।

यह टिप्पणी जितनी बढ़ाना चाहें, बढ़ाई जा सकती है। इसमें से सार यह निकलता है कि जहाँ दुःख हो वहाँ मदद करने के लिए दौड़ जाने की और हमें चाहे जैसा दुःख कोई दे, उसे हँसते-हँसते सहन करने की शक्तिका अभ्यास करना चाहिए। इतना जिसके गले उतर गया होगा, वह तालीमके नियम सहज ही गढ़ सकेगा। मेरा दृढ़ विश्वास है कि इस तालीमकी जड़ ईश्वरमें श्रद्धा है। यदि यह न हो, तो ली हुई सारी तालीमके ठीक मौकेपर निकम्मी सिद्ध होने की सम्भावना है। जो ईश्वरका नाम लेने में शर्माते हैं, ऐसे भी अनेक कांग्रेसमें हैं — ऐसा कहकर कोई मेरी इस बातका अनादर न करे। मैं तो, सत्याग्रहके शास्त्रको जैसा मैंने जाना और विकसित किया है, उसका आश्रय लेकर यह लिख रहा हूँ। सत्याग्रहीका हथियार एक ईश्वर ही है, फिर वह उसे चाहे जिस नामसे पहचानता हो। असंख्य मनुष्य तो तलवारके सामने झुककर ही गुजर कर रहे हैं, लेकिन जिसका रक्षक एकमात्र ईश्वर ही है, उसे बाहरकी कोई भी शक्ति झुका नहीं सकती।

जैसे ईश्वरमें आस्था आवश्यक है, वैसे ही ब्रह्मचर्य भी आवश्यक है। ब्रह्मचर्य के बिना सत्याग्रहीमें तेज नहीं होगा, अन्तर्बल नहीं होगा, निःशस्त्र होते हुए भी सारे संसारके सामने खड़े रहने की शक्ति नहीं होगी। यहाँ भले ही ब्रह्मचर्यकी जो व्यापक व्याख्या मैंने की है वह न मानी जाये; भले ही ब्रह्मचर्यका अर्थ केवल वीर्य-रक्षा माना जाये। स्वल्पाहारपर तथा बिना बाह्य उपचारोंके जिसे जीवन-निर्वाह करना है, उसके लिए वीर्य-संग्रह करने के सिवाय कोई चारा नहीं है। मनुष्यकी यह बड़ीसे-बड़ी पूँजी है। जो इसका संग्रह कर सकता है, वह नित्य नया बल उत्पन्न करता है। जो इसे जाने-अनजाने खर्च कर डालता है, वह अन्तमें निर्वीर्य हो जायेगा। उसमें जो बल होना चाहिए वह नहीं होगा। वीर्य-रक्षा कैसे की जाये, इस विषयपर मैं बहुत बार लिख चुका हूँ। पाठक उसे पढ़ें और उसपर अमल करें। जो आँखसे अथवा स्पर्शसे विलास करता है, वह वीर्य-रक्षा कदापि नहीं कर सकता। जिसे छप्पन भोगोंकी आदत है, वह भी नहीं कर सकता। प्रवाहके विरुद्ध चलकर भी न थकने का संकल्प जैसे व्यर्थ जाता है, वैसे ही वीर्य-रक्षाके आधारभूत नियमोंका अना-दर करके वीर्य-रक्षाकी जो आशा की जाती है, वह भी व्यर्थ जायेगी। अधूरा प्रयत्न करनेवाला अन्तमें उस व्यक्तिकी अपेक्षा भी निर्बल सिद्ध होगा जो ब्रह्मचर्य-पालनका

आडम्बर नहीं रचता, लेकिन सीमित विषयभोग करता है। जो मनसे विषयोंका भोग करता है, उसकी तृप्ति तो कभी होती ही नहीं; इसलिए वह अन्तमें निकम्मा, मन्दबुद्धि तथा पृथ्वीपर भार-रूप हो जाता है। ऐसा आदमी कभी सत्याग्रही नहीं बन सकता।

इसी तरह जिसमें धन-दौलतके प्रति लोलुपता है, वह भी सत्याग्रही नहीं हो सकता।

यह तो मैंने सत्याग्रहीकी शारीरिक तालीमका आधार बताया। अब इस आधार के अनुरूप व्यायामकी रचना की जा सकती है।

इससे इतना तो स्पष्ट हो ही जाना चाहिए कि सत्याग्रहीकी शारीरिक तालीम में तलवार, भाले या तमंचेको स्थान नहीं है। इन्हें देखने, छूने की भी आवश्यकता नहीं है। इसलिए कि इनसे भी अधिक भयंकर हथियार आज मौजूद हैं और रोज नये-नये ईजाद किये जा रहे हैं। जिसे काल्पनिक या वास्तविक किसी भी प्रकारके भयको पी जाने की शक्तिका अभ्यास करना है, उसे भला तलवारका अनुभव प्राप्त करके किस भयसे मुक्त होना है? ऐसा करके कोई भय-मात्रसे मुक्त हुआ हो, यह सुना नहीं गया। महावीर आदि जिन लोगोंने अहिंसा सीखी, वह उनमें जो शस्त्रज्ञान था उससे नहीं, बल्कि वे जो उस शस्त्रज्ञानके बावजूद भयमुक्त हो गये उससे। जरा सोचने से समझमें आ जायेगा कि जिसने हमेशा तलवारका सहारा लिया है, उसके लिए तलवार फेंक देना मुश्किल साबित होगा। लेकिन यह सच है कि जो शस्त्रधारी अपने हथियार फेंक सकेगा, सम्भव है, उसकी अहिंसा सच्ची और स्थायी सिद्ध हो। लेकिन इस बातमें से यह अर्थ नहीं निकल सकता कि सच्चा अहिंसक बनने के लिए पहले शस्त्र धारण करके उनका उपयोग करना आवश्यक है। इस अर्थको एक दूसरे क्षेत्रमें लागू करें, तो निष्कर्ष यह निकलेगा कि चोर ही साहूकार हो सकता है, रोगी ही नीरोग हो सकता है, विषयी ही ब्रह्मचारी हो सकता है। बात यह है कि हमें वर्तमान वातावरणसे ऊपर उठकर तटस्थ ढंगसे विचार करने की आदत नहीं होती; और सतही विचार करने की आदत होने से निष्कर्ष निकालना नहीं आता। इससे हम भ्रमजालमें फँस जाते हैं।

समय मिला, तो आशा करता हूँ, नमूनेके तौरपर एक पाठ्यक्रम प्रस्तुत करूँगा।

शिमला, २९ दिसम्बर, १९४०

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-१०-१९४०

४९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

[३० सितम्बर, १९४० या उसके पूर्व][2]

मैं जानता हूँ कि शिमलामें खद्दरका बहुत प्रचलन नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि लोग गरीबोंके प्रति अपना कर्त्तव्य समझेंगे और फलतः खादीको अपना लेंगे। मुझे यह जानकर दुःख हुआ है कि शिमलामें ऐसी खादीकी बिक्री व खरीदारी चल रही है जो अखिल भारतीय चरखा संघ द्वारा विधिवत् प्रमाणित की हुई नहीं है। मुझे और भी ज्यादा दुःख इसलिए है कि यह काम कांग्रेसके पदाधिकारियों द्वारा भी किया जा रहा है। मैं आशा करता हूँ कि कहीं भी जो कोई अप्रमाणित खादीकी बिक्री या खरीदारी कर रहा है, वह वैसा करना बन्द कर देगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-१०-१९४०

५०. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

३० सितम्बर, १९४०

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपका इसी तारीखका पत्र[3] मिला। उसमें कांग्रेस द्वारा अपनाई गई स्थितिका विवरण बहुत-कुछ वैसा ही है जैसा कि उसे मैंने आपके समक्ष पेश किया था। यह मेरे लिए बहुत खेदका विषय है कि सरकार कांग्रेसकी इस स्थितिको ठीक नहीं मान सकी। कांग्रेसने जो स्थिति अपनाई है, उसका उद्देश्य मात्र इतना ही है कि उन लोगोंकी, वे कांग्रेसी हों या अन्य, न्यूनतम आवश्यकताओंकी पूर्ति हो जाये जिन्हें ऐसे युद्धमें सहायता करनेमें नैतिक आपत्ति है जिसमें हिस्सा लेनेके लिए वे कभी आमन्त्रित नहीं किये गये और जिसे वे, जहाँतक उनका सम्बन्ध है, उस साम्राज्यवादकी रक्षाके लिए लड़ा जा रहा युद्ध मानते हैं जिसका सबसे बड़ा शिकार भारत है। युद्ध-प्रतिरोधीके रूपमें युद्धके खिलाफ जितनी नैतिक आपत्ति मुझे है, उतनी ही उनको भी है। अपनी अन्तरात्माके आदेशका पालन करनेके लिए मैं खुद अपने लिए उससे अधिक स्वतन्त्रताकी माँग नहीं कर सकता जितनी कि उन लोगोंके लिए, जिनका मैंने उल्लेख किया है।

१ और २. गांधीजी ३० सितम्बरको शिमलासे चल पड़े थे। साधन-सूत्रके अनुसार प्रस्तुत वक्तव्य गांधीजीने "अपनी हालकी शिमला-यात्राके दौरान" जारी किया था।

३. वाइसरायके पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

जैसा कि मैंने अपनी बातचीतके दौरान स्पष्ट कर दिया था, कांग्रेस नाजीवादकी विजयके उतनी ही विरुद्ध है जितना कि कोई भी अंग्रेज हो सकता है। लेकिन उनका यह विरोध इस हदतक नहीं ले जाया जा सकता कि वे युद्धमें हिस्सा लें। और चूँकि आपने तथा भारत-मन्त्रीने यह घोषणा की है कि सारा भारत स्वेच्छासे युद्ध-प्रयत्नमें मदद दे रहा है, इसलिए यह स्पष्ट करना जरूरी हो जाता है कि भारतमें बहुत भारी संख्यामें लोग इसमें दिलचस्पी नहीं रखते। वे नाजीवादमें तथा उस दोहरे निरंकुश शासनमें, जो भारतमें चल रहा है, कोई अन्तर नहीं मानते। यदि महामहिमकी सरकारने भारतकी विशेष स्थितिको ध्यानमें रखते हुए अपेक्षित स्वतन्त्रताको स्वीकार कर लिया होता, तो वह इस दावेको न्यायोचित ठहरा सकती थी कि वह भारतकी उतनी ही मदद पा रही है जितनी स्वेच्छासे मिल सकती है। उस हालतमें युद्धके 'पक्षपाती और युद्ध-विरोधी दोनों ही दल, जहाँतक कि दोनों पूरी तरह अहिंसात्मक ढंगसे काम करते, समान भूमिपर होते।

आपके पत्रके अन्तिम अनुच्छेदके सम्बन्धमें मैं आपको याद दिलाना चाहता हूँ कि ऐसा कभी नहीं सोचा गया था कि परेशान न करनेकी नीतिको इस हदतक ले जाया जाये कि हम अपना विनाश कर डालें या दूसरे शब्दोंमें, वे सब राष्ट्रीय गतिविधियाँ बन्द कर दी जायें जिनका हेतु भारतको शान्तिप्रिय बनाना तथा यह स्पष्ट करना है कि भारत द्वारा युद्धमें हिस्सा लेनेसे किसीको लाभ नहीं हो सकता, ब्रिटेनको भी नहीं। वस्तुतः मेरा विचार है कि यदि भारतको अपना चुनाव करनेके लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया जाता — वाणीकी स्वतन्त्रताकी माँगका यही अर्थ था — तो शायद भारतने ब्रिटेनका और सच्ची स्वतन्त्रताका पलड़ा उस नैतिक प्रतिष्ठाके जरिये भारी कर दिया होता जो वैसी दशामें ब्रिटेनको प्राप्त हो गई होती।

इसलिए मैं फिर कहूँगा कि कांग्रेस अभी भी ब्रिटिश सरकारको उसके युद्ध-प्रयत्नोंमें परेशान करनेसे बचना चाहती है। लेकिन मानवताके इतिहासकी इस संकटकी बेलामें अपने मूल सिद्धान्तसे हटकर कांग्रेस अपनी उक्त नीतिकी अन्ध-पूजा नहीं कर सकती। यदि कांग्रेसको मिटना ही है तो अपनी श्रद्धाकी घोषणा करते हुए मिटना चाहिए। दुर्भाग्यकी बात है कि हम वाणीकी स्वतन्त्रताके इस एक ही मामलेपर कोई समझौता नहीं कर सके। लेकिन मैं यह आशा करता रहूँगा कि कांग्रेसकी स्थितिके पीछे जो भावना है, सरकारके लिए उसी भावनाके अनुरूप अपनी नीतिको कार्यान्वित कर सकना सम्भव होगा।

मैं उन अन्य मुद्दोंपर भी लिखना चाहता था जो हमारी बातचीतमें उठाये गये थे। लेकिन इस उत्तरके बहुत लम्बा हो जानेके भयसे नहीं लिख रहा हूँ। मैं उनपर जितनी जल्दी हो सका, एक सार्वजनिक वक्तव्य[1] देनेकी आशा रखता हूँ।

अन्तमें, जिस सौजन्य तथा धैर्यसे आपने मेरा लम्बा निवेदन और तर्क सुना, उसके लिए आपको सार्वजनिक रूपसे धन्यवाद देता हूँ। और यद्यपि हमारे रास्ते

१. देखिए पृ० ८४-८७।

फिलहाल अलग होते दिख रहे हैं, मेरा विश्वास है कि हमारी वैयक्तिक मित्रता —जैसा कि आपने विदाई देते समय कृपापूर्वक कहा — इस अलगावका बोझ बरदाश्त कर सकेगी।

जैसा कि तय हुआ था, मैं इस पत्र-व्यवहारको प्रकाशनार्थ समाचारपत्रोंको दे रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-१०-१९४०

५१. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[1]

दिल्ली
१ अक्तूबर, १९४०

प्रिय गुरुदेव,

आपको अभी [हमारे बीच] कुछ समय और रहना ही चाहिए। मानवताको आपकी जरूरत है। मुझे यह जानकर बेहद खुशी हुई कि आप बेहतर हैं।

सप्रेम,

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६५३) से

५२. सत्याग्रहियोंसे[2]

सत्याग्रही मेरे प्रति अधीर न हों, मुझसे बहस न करें और न ऊहापोहमें पड़ें। वे यह न कहें कि 'आप कब हुक्म देंगे? आपकी वाइसरायके साथ मुलाकात तो हो गई। आपको वहाँ वही मिला जो हममें से बहुतोंने आपको पहले ही बता दिया था'। आपका कुछ कहना बहुत महत्त्व नहीं रखता। वह कोशिश करने योग्य थी। मैंने आपसे कहा था कि वाइसरायसे जो-कुछ मैं चाहता हूँ, यदि वह न भी मिला, तो भी मैं शिमलासे ज्यादा शक्ति अर्जित करके लौटूँगा। कौन जानता है कि कमजोर कामयाबीके मुकाबले ज्यादा शक्ति प्राप्त करना ही ज्यादा अच्छा नहीं है? लेकिन मेरी बुद्धिकी कसौटी तो मैं उस शक्तिका किस तरह उपयोग करता हूँ उससे

१. यह पत्र महादेव देसाई रवीन्द्रनाथ ठाकुरके लिए कलकत्ता ले गये थे। देखिए "तार : अनिलकुमार चन्दको", पृ० ६७ भी।

२. यह "नोट्स" ("टिप्पणियाँ") शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

होगी। मौलाना साहबने कार्य-समितिकी बैठक इसी ११ तारीखको बुलाई है। मुझे उम्मीद है कि तबतक मैं अपनी कार्य-योजना तैयार कर लूँगा। लेकिन योजना जो-कुछ हो, वह कारगर तभी होगी जब सारा राष्ट्र न भी सही, तो कमसे-कम समस्त कांग्रेस-जन एक मनसे उसके पीछे हों। तब केवल एक भी आदमीका प्रत्यक्ष काम अपने मकसदके लिए काफी होगा। तबतक मेहरबानी करके ध्यानमें रखिए कि प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी रूपमें भी सविनय अवज्ञा नहीं की जानी है। इसके खिलाफ यदि कुछ भी हुआ तो उससे हमारा उद्देश्य कमजोर पड़ेगा, क्योंकि इससे आपका सेनापति, जिसे तनिक भी अनुशासनहीनता सहन नहीं है, हतोत्साह हो जायेगा। युद्धमें सेनापतिकी तो केवल उतनी ही ताकत होती है जितनी कि उसे अपने लोगोंसे मिलती है।

वर्धा जाते हुए ट्रेनमें, २ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-१०-१९४०

५३. भाषण : वर्धामें[1]

२ अक्तूबर, १९४०

इस कलियुगमें आपको कम कामके लिए भी अधिक फल मिल जाता है। कातना और बुनना एक आसान धर्म है, जिससे आप अपना उद्देश्य हासिल कर सकते हैं और लक्ष्यतक पहुँच सकते हैं। आप मेरा जन्मदिन मेरे सत्याग्रहके कारण नहीं, बल्कि खादीसे मेरे अटूट सम्बन्धके कारण ही मना रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि आबाल-वृद्ध, सभी ग्रामवासी खादीका उत्पादन करें और उसे पहनें।

वाइसरायसे अपनी हालकी भेंटके बारेमें पूछे जाने पर महात्मा गांधीने कहा :

चूँकि वाइसरायने मेरी वाणीकी स्वतन्त्रताकी माँग ठुकरा दी, इसलिए अब और कोई रास्ता नहीं रह गया है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-१०-१९४०

१. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजी अपनी "७२ वीं सालगिरह मनानेके लिए आयोजित एक सभामें बोल रहे थे। उन्होंने कताई, धुनाई और बुनाईकी प्रतियोगिताओंमें जीतनेवालोंको इनाम बाँटे।"

५४. दरार[1]

मेरा यह दृढ़ विचार है कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ वह नहीं कर सके जो करना उचित था — और वह भी ऐसे समय जब कि उसे कर सकना आसान था। यदि भारत पूरी तरहसे युद्धमें हिस्सा लेने के पक्षमें है, तो किसी भी प्रतिकूल प्रचारको वे आसानीसे नजरअंदाज कर सकते थे। लेकिन विचारोंकी खुली अभिव्यक्तिपर, वह जरा भी हिंसासे दूषित न हो तब भी, पाबन्दी लगा देने का निश्चय ब्रिटेनके इस दावेको खण्डित कर देता है कि भारत स्वेच्छासे हिस्सा ले रहा है। यदि कांग्रेसका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया होता, तो ब्रिटेनको भारतसे जो मदद मिलती वह इतनी उपयोगी होती जिसका मूल्य नहीं आँका जा सकता। अहिंसक दल जब सम्मानपूर्ण समझौतेके लिए उपयुक्त समय दिखाई देता — जो कभी-न-कभी होता ही — प्रभावशाली भूमिका अदा करता। भारत और ब्रिटेनके बीच इस दरारपर 'टाइम्स' में प्रकाशित टिप्पणी मुझे दिखाई गई है। अपनी सूझ-बूझके बारेमें 'टाइम्स' की प्रशस्तिको मैं स्वीकार करता हूँ। लेकिन यद्यपि मेरी यह सूझ-बूझ, जैसा कि मैं स्वयं भी मानता हूँ, काफी अच्छी है, तो भी मैं स्वीकार करता हूँ कि उसकी अपनी सीमाएँ हैं। दूसरे पक्षमें भी तो [सुलहकी] इच्छा होनी चाहिए। मुझे खेदके साथ यह कहना पड़ रहा है कि मुलाकातके समय मुझे उसकी पूरी कमी महसूस हुई। वाइसराय अपनी बातचीतमें सर्वथा सौजन्यपूर्ण थे, लेकिन वे झुकने के लिए तैयार नहीं थे और उनका विश्वास था कि उनकी ही राय सही है, और हमेशाकी तरह राष्ट्रवादी भारतकी विवेक-शक्तिमें उनका कोई विश्वास न था। अंग्रेज युद्ध-क्षेत्रमें आश्चर्यजनक ढंगसे असाधारण वीरता दिखा रहे हैं। लेकिन नैतिक क्षेत्रमें जोखिम उठाने की बहादुरीका उनमें अभाव है। मुझे अकसर सन्देह होता है कि ब्रिटिश राजनीतिमें नीतिका कोई स्थान है भी या नहीं।

सेवाग्राम, ३ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-१०-१९४०

१. यह "नोट्स" ("टिप्पणियाँ") शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

५५. पत्र : कुँवरजी खे० पारेखको

३ अक्तूबर, १९४०

चि० कुँवरजी[1],

वरियावाकी[2] रिपोर्ट मुझे मिली हो, ऐसा याद तो नहीं आता। तुम वहाँ अपना वजन कायम नहीं रख सकते, यह आश्चर्यकी बात है। [इलाजके लिए] मैसूर जरूर जाओ। मुझे उसमें कोई दोष नहीं दिखता। बम्बईसे ३०० रुपये आ गये हैं। और भी आयेंगे क्या?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७४२) से। सी० डब्ल्यू० ७२२ से भी; सौजन्य: नवजीवन ट्रस्ट

५६. तार : कार्ल हीथको[3]

वर्धागंज

४ अक्तूबर, १९४०

कार्ल हीथ
फ्रेंड्स हाउस
यूस्टन रोड
लन्दन

अति उत्कट याचना व्यर्थ गई। जाहिर है कि ईश्वरकी ऐसी ही इच्छा थी। अत्यन्त सावधानीसे कार्य कर रहा हूँ। मात्र अस्तित्वके लिए किसी-न-किसी प्रकारका सविनय प्रतिरोध अनिवार्य है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४४) से। होम, पॉलिटिकल फाइल सं० ३/३३/४०-पॉलि० (१) से भी; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. गांधीजीकी पौत्री रामीके पति

२. एक पारसी डॉक्टर, जो सन् १९३९ में गांधीजीके राजकोट-उपवासके समय उनके पास थे। कुँवरजीको क्षयरोग था और गांधीजीने डॉ० वरियावाको उसके बारेमें अपनी रिपोर्ट भेजनेको कहा था; देखिए खण्ड ७२, पृ० ४७८।

३. कार्ल हीथ इंडिया कॉन्सिलिएशन ग्रुपके अध्यक्ष थे। यह उनके ११ सितम्बर, १९४० के इस तारके जवाबमें था: "आपका तार [देखिए खण्ड ७२, पृ० ४६४] मिला। विश्वास रखता हूँ कि जबतक स्वीकार्य नुस्खा नहीं मिल जाता, बराबर मानवीय सम्पर्क बनाये रखकर संघर्ष टाला जा सकता है।"

५७. तार : जेम्स मैक्सटनको[1]

४ अक्तूबर, १९४०

मैं शान्तिपूर्ण समझौतेकी कोई गुंजाइश नहीं देखता। ब्रिटिश लोग युद्धभूमिमें अपना सानी नहीं रखते। लेकिन ब्रिटिश राजनीतिज्ञ इतने बहादुर नहीं हैं कि सही समयमें सही कार्य करनेकी जोखिम उठायें और फिर वे अपनी कमजोरीको छिपानेके लिए ऐसे झूठे तर्कोंका सहारा लेते हैं जिनकी पुष्टि तथ्योंसे नहीं होती।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०१६५ ए) से। होम, पॉलिटिकल फाइल नं० ३/३३/४०-पॉलि० (१) से भी; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

५८. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

सेगाँव, वर्धा
४ अक्तूबर, १९४०

चि० आनन्द,

विद्याका[2] खत कल ही मिला। इसलिए न तार कामका रहा न खत। मेरे आशीर्वाद तो तुमारे कामोंमें है ही। तुमको प्या[रेलाल]ने दो शब्द लिखे उसमें दुःख क्यों? इतने कामोंमें मैं पड़ा हूं कि पूरा कर पाता नहीं हूं। तो तुमको दो शब्द भी मिले तो अच्छा ही समजना चाहीये। तुम्हारे कानके बारेमें दुःख होता है। भगवान जैसे करे उसे सहन करना। पुस्तकके[3] बारेमें जैसा उचित लगे ऐसा किया जाये। पिताजीके साथ मीठा संबंध है सो अच्छा ही है। जब आना है तब आओ। खुश रहो। शक्तिके अनुसार सेवा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१. मजदूर दलके एक नेता तथा ब्रिटिश संसदके सदस्य

२. आनन्द हिंगोरानीकी पत्नी

३. 'गांधी सीरीज्', जिसका सम्पादन और प्रकाशन आनन्द हिंगोरानीने किया था; देखिए "पत्र: आनन्द तो० हिंगोरानीको", १४-२-१९४१।

५९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

सेवाग्राम
५ अक्तूबर, १९४०

महामान्य वाइसराय और मेरे बीच हुए पत्र-व्यवहारमें वार्ता भंग होने की घोषणा करते हुए मैंने अपने पत्रमें[2] कहा है कि मैं उन मामलोंपर, जिनका जिक्र मेरे पत्रमें नहीं हुआ है, एक जुदा सार्वजनिक वक्तव्य पेश करूँगा।

मगर इससे पहले लॉर्ड लिनलिथगोके बारेमें दो शब्द कहना मुझे आवश्यक लगता है। उनकी बात सीधी होती है, हमेशा नपी-तुली होती है, और थोड़ेमें ही वे सब-कुछ कह देते हैं। उनकी भाषा कभी द्व्यर्थक नहीं होती। वे क्या कहना चाहते हैं, इस बारेमें कभी सन्देह नहीं रहने देते। कड़ुएसे-कड़ुए फैसले भी वे ऐसे शिष्टाचार और शान्तिसे देते हैं कि उस समय आपको यह नहीं लगता कि आपने कोई कर्कश या कठोर बात सुनी है। वे आपकी बहसको जिस धीरज और ध्यानसे सुनते हैं वैसा मैंने किसी अन्य वाइसराय या ऊँचे दर्जेके हाकिममें नहीं पाया। उनका मिजाज कभी नहीं बिगड़ता। अविनय वे कभी नहीं दिखाते। मगर यह सब-कुछ होते हुए भी वे आसानीसे अपने निश्चयको नहीं बदलते। सब-कुछ सुनने के बाद जो फैसला वे पहले कर चुके होते हैं वही आपके आगे रख देते हैं। उनका प्रयत्न तो हमेशा यह होता है कि आपको यह न लगे कि वह उनका पूर्वका निश्चय है। मगर इस बारेमें भी कोई शक नहीं कि उनका निश्चय पहले ही हो चुका होता है और बादमें वह बदला नहीं जा सकता। उनकी वृत्ति ग्रहणशील नहीं है। उनको अपने फैसले सही होने के बारेमें आश्चर्यजनक आत्मविश्वास होता है। वे लिखा-पढ़ी या बातचीतके द्वारा किसी प्रकारका समझौता करने की नीतिको नहीं मानते। मैंने हमेशा महसूस किया है कि गांधी-अर्विन समझौतेके बाद अंग्रेज वाइसरायोंने फैसला कर लिया है कि आइन्दा वे इस किस्मका कोई समझौता नहीं करेंगे। जो-कुछ उन्हें करना होगा उसे वे स्वतन्त्रतासे ही करेंगे। यह बात या तो उनकी उच्च कोटिकी न्यायबुद्धिकी सूचक है या उनके अपार आत्मविश्वासकी। मुझे लगता है कि दूसरी बात ही ठीक है। उनके और मेरे बीच दोस्तीकी गाँठ बँध चुकी है और वह कभी नहीं टूट सकती, चाहे हमारे बीचमें कितना ही मतभेद क्यों न हो।

वाइसरायके प्रति ऐसी ऊँची राय रखते हुए हमारे बीचमें हुई निष्फल बातचीतके बारेमें अपना अभिप्राय देते हुए मुझे और भी ज्यादा ग्लानि होती है।

१. यह "मोर अबाउट शिमला विज़िट" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. देखिए "पत्र: लॉर्ड लिनलिथगोको", पृ० ७७-७९।

क्योंकि यह मेरी दृढ़ मान्यता है कि हमारे बीचमें मतभेद बिलकुल अनिवार्य न था। अगर मेरा प्रस्ताव मंजूर कर लिया जाता तो वह इंग्लैण्डके लिए भी उतना ही कल्याणकारी होता जितना कि हिन्दुस्तानके लिए।

मैं एक प्रतिनिधि और अंग्रेजोंके एक मित्रकी हैसियतसे शिमला गया था। अंग्रेजोंके मित्रकी हैसियतसे मैंने ब्रिटिश सरकारके कुछ कार्योंके बारेमें अपनी शंका प्रकट की। मुझे ब्रिटिश सरकारके प्रति अपनी मनोवृत्तिका निश्चय करने के लिए उन शंकाओंका निवारण करना आवश्यक था, क्योंकि मेरे लिए मेरी मनोवृत्ति मेरे किसी भी बाह्य कर्मके बनिस्बत ज्यादा महत्त्वकी चीज है। मुझे लगा कि वाइसराय साहब और उनके बाद भारत-मन्त्रीकी तरफसे यह तर्क देना कि कांग्रेसका राजाओं, मुस्लिम लीग और अनुसूचित वर्गोंके साथ भी कोई समझौता नहीं हो सका है, और इस तर्कका हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रताके अधिकारको अस्वीकार करने के लिए उपयोग करना कांग्रेस और भारतीय जनताके साथ अन्यायसे भी कहीं अधिक है। मैंने वाइसराय साहबसे कहा कि ये तीनों वर्गगत या साम्प्रदायिक हितोंके प्रतिनिधि हैं, जब कि कांग्रेस किसी खास वर्गका प्रतिनिधित्व नहीं करती। वह एक शुद्ध राष्ट्रीय संस्था है और सारे हिन्दुस्तानका प्रतिनिधि बनने का प्रयत्न करती है। इसलिए कांग्रेसने हमेशा इस बातका ऐलान किया है कि वह व्यापकतम मताधिकारके आधारपर चुनी गई एक राष्ट्रीय संविधान-सभाके फैसलेको मंजूर करेगी। वह यह भी ऐलान कर चुकी है कि मुसलमानोंके विशेष अधिकारोंकी रक्षाके लिए मुसलमानोंके अलग चुने हुए प्रतिनिधियोंके मतसे जो फैसला हो वह उसे मान्य होगा। इसलिए यह कहना घोर अन्याय है कि कांग्रेससे मुसलमानोंके हितोंकी रक्षाके लिए खास संरक्षणकी आवश्यकता है। यही बात सिखोंपर भी लागू होती है।

हमारे मौजूदा राजा लोग ब्रिटिश सरकारकी ही उत्पत्ति हैं, और ब्रिटिश हितकी सेवा करने के लिए ही वे बनाये गये हैं। एक दलील यह पेश की गई थी कि ब्रिटिश सरकार राजाओंके साथ खास सन्धिकी शर्तोंसे बँधी हुई है। इसका मेरे पास यह उत्तर था कि कांग्रेस ब्रिटिश सरकारको उनकी अवहेलना करने को कहती ही नहीं। वह तो सिर्फ इतना ही कहती है कि हिन्दुस्तानकी प्रगतिको रोकने के लिए आप उनका इस्तेमाल नहीं कर सकते, और कांग्रेससे यह आशा रखना कि वह उनके साथ मिलकर समझौता करे, बिलकुल अनुचित है। राजा लोगोंको इस बातकी स्वतन्त्रता ही नहीं कि अगर वे चाहें भी तो दूसरे दलोंकी तरह कांग्रेसके साथ कोई समझौता कर सकें। इसके अतिरिक्त, यदि सन्धिकी शर्तें ब्रिटिश सरकारपर राजाओंकी रक्षाका भार डालती हैं तो उतना ही भार उसपर रियासती जनताके हितोंकी रक्षा करने का भी डालती हैं। मगर यह बात सिद्ध हो चुकी है कि अंग्रेजोंने केवल प्रजाकी रक्षाके लिए बहुत कम मौकोंपर ही रियासतोंके मामलोंमें दखल दिया है। अगर उन्होंने प्रजाके अधिकारोंकी भी उतनी ही परवाह की होती जितनी कि सन्धिकी शर्तोंके मुताबिक उनका फर्ज था, तो प्रजाकी हालत

आजकी-जैसी दर्दनाक न होती। अगर उन्होंने अपनी ही बनाई हुई सन्धिकी शर्तोंका सच्चे तौरपर पालन किया होता तो रियासतोंके लोग ब्रिटिश भारतके लोगोंसे कहीं आगे बढ़ गये होते। मैंने इस तरह कर्त्तव्य-भ्रष्ट होने की कई जोरदार मिसालें भी पेश कीं।

अनुसूचित वर्गोंके सवालको बहसमें लाकर ब्रिटिश सरकारने अपने पक्षको और भी अधिक तथ्यहीन बना दिया है। वह जानती है कि कांग्रेस अनुसूचित वर्गोंका खास ध्यान रखती है और वह उनकी रक्षा करने में ब्रिटिश सरकारसे भी कहीं ज्यादा समर्थ है। फिर, सवर्ण हिन्दू समाजकी तरह अनुसूचित वर्ग भी जुदा-जुदा जातियोंमें बँटे हुए हैं। अनुसूचित वर्गोंका कोई भी एक व्यक्ति सचाईसे उनकी असंख्य जातियोंका प्रतिनिधि नहीं बन सकता।

मैंने वाइसराय साहबके साथ मुलाकात इसलिए माँगी थी कि ब्रिटिश सरकारकी दलीलका अर्थ करने में अगर कहीं दोष हो तो उसे मैं देख सकूँ। परन्तु मुझे वहाँसे इन सब सवालोंपर कुछ भी सन्तोषजनक जवाब नहीं मिला। वाइसराय साहब चर्चामें उतरने के लिए ही राजी न थे। किसी बहसमें पड़ने की उनकी अनिच्छापर मुझे शिकायत नहीं। उनको यह कहने का पूरा अधिकार था कि यह सवाल उच्च नीतिका विषय था, जिसके बारेमें बहसकी गुंजाइश ही नहीं थी। ब्रिटिश अफसर वर्गमें एक प्रकारका अलगाव साधने की आदत होती है। उनका यह स्वभाव उन्हें वस्तुस्थिति और वातावरणसे अलग रखता है और एक प्रकारका बल भी देता है। वे बहुत खुलकर बात नहीं करना चाहते। किसी अटपटी बहसको वे अत्यन्त शिष्ट ढंगसे बचा जाते हैं। आप जो चाहे निष्कर्ष निकालते रहें, उधर वे अपने रवैयेपर मजबूतीसे जमे रहेंगे। मैं समझता हूँ कि "फौलादी ढाँचा" शब्द भी इसी भावार्थका सूचक है। ब्रिटिश नीतिका यह पहलू मुझे हमेशा अखरा है। मित्रोंकी चेतावनीके बावजूद मुझे आशा थी कि मैं इस फौलादी दीवारको भेदकर हकीकत तक पहुँच सकूँगा। मगर साम्राज्यवादी अंग्रेज लोग आज अपने आसनसे जरा भी हिलने को तैयार नहीं।

जो भी हो, मैं हार नहीं मानूँगा। मेरी कोशिश अब भी जारी रहेगी कि यह स्पष्ट सत्य अंग्रेज प्रजाके मुँहसे कबूल करवा सकूँ कि हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रतामें जो रुकावट है वह यह नहीं कि कांग्रेस या कोई और दल ऐसा कोई असम्भव ढंगका समझौता नहीं कर पा रहे हैं; बल्कि दरअसल रुकावट है तो यह है कि ब्रिटिश सरकार न्यायकी बात करने को राजी ही नहीं है।

मेरी सिर्फ इतनी ही शिकायत नहीं थी कि अंग्रेजोंने हिन्दुस्तानको एक स्वतन्त्र देश न मानने के लिए जो कारण बताये हैं वे शुद्ध काल्पनिक हैं। युद्ध-नीतिके कार्यान्वयनमें जो अनेक अनियमित काम किये जा रहे हैं, मैंने उनकी तरफ वाइसरायका ध्यान खींचा। इस बारेमें हम दोनों सहमत थे कि युद्धके लिए चन्दा जमा करने में कोई जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए। उन्होंने उन सब मामलोंकी जाँच करने का वचन दिया है जहाँ लोगोंपर सख्ती हुई है या उन्हें दूसरी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ी

हूँ। मेरा हेतु यह था कि गलतफहमीके लिए कोई गुंजाइश बाकी न रह जाये। और अगर लड़ाई करनी भी पड़े तो वह स्पष्ट उद्देश्यको लेकर हो और उसमें कोई कटुता न रहे। मैं यही आशा लेकर लड़ाईमें उतरना चाहता हूँ कि उसकी शुद्धता ही संसारको यह मानने के लिए मजबूर करेगी कि सिर्फ अंग्रेजोंको ही नहीं, बल्कि संसारके अन्य सभी देशोंको हिन्दुस्तानके साथ ज्यादा अच्छा बरताव करना चाहिए, जिसका कि वह पात्र है।

कहीं कोई ऐसा न कहे कि कांग्रेस इस वास्ते लड़ने को तैयार हुई क्योंकि वह राज्यसत्ता पाने में असफल रही, इसलिए मैंने वाइसराय साहबसे बिलकुल साफ शब्दोंमें यह भी कह दिया था कि कांग्रेस राष्ट्रके किसी हितको हानि पहुँचाकर अपने लिए राज्यसत्ता हासिल नहीं करना चाहती। कांग्रेस पूरी कौमकी खातिर ही सत्ता चाहती है, किसी और सूरतमें नहीं। इसलिए अगर वाइसराय साहब जुदा-जुदा दलोंके प्रतिनिधियोंका मन्त्रिमण्डल बनाना चाहें तो कांग्रेस इसका कोई विरोध नहीं करेगी। जहाँतक युद्ध-प्रयत्नोंका सम्बन्ध है, और जबतक कि हुकूमत साम्राज्यवादका ही पोषण करती है, कांग्रेस यही ज्यादा पसन्द करेगी कि वह विरोधी पक्षके तौरपर ही रहे। आज हमारे सामने तात्कालिक प्रश्न स्वतन्त्रताका नहीं है, वह तो केवल अपनी हस्तीको कायम रखने का है, यानी आत्माभिव्यक्तिका है, जिसका मोटा अर्थ है बोलने की स्वतन्त्रता। यह स्वतन्त्रता कांग्रेस केवल अपने लिए नहीं बल्कि सबके लिए माँगती है। शर्त सिर्फ इतनी है कि अहिंसाकी मर्यादा तनिक भी भंग न हो। मैं मानता हूँ कि इस शर्तके अन्दर ऐसी सब आपत्तियोंका, जो कोई व्यक्ति उठा सकता है, जवाब आ जाता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-१०-१९४०

६०. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
६ अक्तूबर, १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले थे।[1] हमारी मुलाकात होने पर तुम मुझे रजनी पटेलके बारेमें और ज्यादा जानकारी देना। नेपियरके[2] बारेमें तुम्हारा पत्र[3], सह-पत्रके साथ, मैं वाइसरायको भेज रहा हूँ। यह एक दर्दनाक मामला है।

१. इनमें से २१ सितम्बरका पत्र बम्बईके एक बैरिस्टर रजनी पटेलके बारेमें था, जिन्हें कई वर्षोंके विदेश प्रवासके बाद लौटने पर गिरफ्तार कर लिया गया था।

२. लिन्स-बिजेना कहलानेवाले सर चार्ल्स नेपियरका प्रपौत्र और ब्रिटिश सेनामें सैकिंड लैफ्टिनेंट, जिसने युद्धके दिनोंमें सैनिक सेवा छोड़ने और उसके जो भी परिणाम हों उन्हें भुगतने का फैसला कर लिया था।

३. २ अक्तूबर, १९४० का; देखिए परिशिष्ट ४।

मैं काममें आकण्ठ डूबा हूँ। इसलिए अधिक नहीं लिखूँगा।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४०। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

६१. पत्र: मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा
६ अक्तूबर, १९४०

चि० मीरा,

तुम्हारे दो पत्र मिले। मैंने हरिजन बस्तीके साथ इन्तजाम कर दिया है। जब भी तुम्हें जरूरत होगी, वे पूनियाँ भेज देंगे। यदि तुम समय रहते सूचना दोगी तो उन्हें मैं स्वयं भिजवाऊँगा। आशा है तुम्हारे पास जो पूनियाँ हैं वे काफी अच्छी हैं। हाँ, मैं शिमला गया था। वह एक अच्छा अनुभव रहा है। आशा है तुम जैसा एकान्त चाहती हो, वह तुम्हें मिल जायेगा।

सप्रेम,

बापू

श्री मीराबाई
पालमपुर
जिला कांगड़ा
पंजाब

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००५५ से भी

६२. पत्र : शैलेन्द्रनाथ चटर्जीको

सेवाग्राम, वर्धा
६ अक्तूबर, १९४०

प्रिय शैलेन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें निश्चय ही और ज्यादा कमाना चाहिए। क्या तुम अधिकके पात्र हो? क्या तुम कलकत्ता छोड़ सकते हो? मैं भी अच्छी तरह समझता हूँ कि तुम सबको उचित भोजन मिलना चाहिए। मैं [तुम्हारे] पितासे[1] बात करूँगा कि क्या किया जा सकता है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०१६४) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

६३. पत्र : गजानन कानिटकरको

सेवाग्राम, वर्धा
६ अक्तूबर, १९४०

प्रिय बालूकाका,

आपकी सद्भावनाओंके लिए धन्यवाद। आपने जिन अंशोंपर निशान लगाये थे, उन्हें मैंने पढ़ लिया है। आज यह अन्दाज लगा सकना कठिन है कि यदि हमारा यह देश अरक्षित छोड़ दिया जाये तो क्या होगा? मैं केवल इतना कह सकता हूँ कि सत्याग्रहियोंको कोई भय नहीं होगा। यदि वे सच्चे सत्याग्रही हैं तो वे किसी भी विजेताके आगे घुटने टेकते नहीं पाये जायेंगे। लेकिन कई अन्य मामलोंके समान इस मामलेमें हमें मतभेद रखनेके लिए राजी होना होगा।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री बालूकाका कानिटकर
हिन्दमाता सेवा मन्दिर
पूना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९७०) से। सौजन्य : गजानन कानिटकर

१. अमृतलाल चटर्जी

६४. पत्र : दिलखुश दीवानजीको

सेवाग्राम, वर्धा
६ अक्तूबर, १९४०

भाई दिलखुश,

तुम्हारी प्रसादी बाकायदा मिल गई है। तुम तो प्रतिदिन आगे बढ़ते जा रहे हो। अभी तो तुम्हें और बहुत आगे जाना है। मुझे हर्षदाबहनका उपहार भी मिला है। उसने पता अधूरा भेजा है। तो अब तुम्हीं उसे मेरे धन्यवाद भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

श्री दिलखुश दीवानजी
गांधी कुटीर
कराडी, बरास्ता नवसारी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६४७) से

६५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

६ अक्तूबर, १९४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। पुस्तक[1] भी मिली। मैंने पुस्तकमें दिया 'समर्पण-पत्र' पढ़ा। धोती[2] पहनी थी और अभी भी दूसरी धोतीके साथ पहन रहा हूँ। पुस्तक मैंने अपने पास रख ली है। उसे पढ़ जाने की इच्छा तो है।

बापूके आशीर्वाद

श्री प्रेमाबहन कंटक
आश्रम, सासवड़
जिला – पूना

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४११) से। सी० डब्ल्यू० ६८५० से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. सत्याग्रही महाराष्ट्र, जिसे प्रेमाबहन कंटकने गांधीजीको समर्पित किया था
२. जो प्रेमाबहनने अपने हाथकते सूतसे बुनवाई थी और गांधीजीको जन्म-दिवसके उपहारके रूपमें भेजी थी

६६. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेवाग्राम, वर्धा
६ अक्तूबर, १९४०

चि० शर्मा,

तुम्हारा खत मिला। मैं तुमको लड़ाईमें शीघ्र बुलाना चाहता हूं। अब तो तबीयत अच्छी करो।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २९०

६७. दो विचारणीय पत्र

एक विवेकी भाई लिखते हैं:

जब पूर्ण अहिंसावादियोंके नाम मांगे गये तब मुझे अपना नाम भेजनेकी इच्छा हुई थी, लेकिन मैंने अपने-आपको रोक दिया; क्योंकि (१) मेरे आचरणमें अहिंसाका अभाव है, (२) मेरे दिलमें अंग्रेजोंके प्रति द्वेष-भाव है। लन्दन या इंग्लैण्डकी आजकलकी विनाशकारी खबरें पढ़कर मुझे खुशी होती है। मैं दिलसे यही चाहता हूं कि अंग्रेज हारें। मैंने सोचा कि यह हकीकत आपको लिख देना ठीक है। आपको मैं कभी धोखा नहीं दूंगा।

दूसरा पत्र दक्षिण आफ्रिकासे आया है। उसमेंसे निम्नलिखित वाक्य उद्धृत करता हूं:

समझमें नहीं आता कि जिन गोरोंको अश्वेतोंकी कोई परवाह नहीं है और जो ऐसे लड़ाईके वक्तमें भी रंगभेदकी बातें कर रहे हैं, उनके लिए हमें क्या करना चाहिए? हम उनके लिए अपनी जान क्यों दें? हाल ही में एक भारतीय विद्यार्थी यूरोपसे लौटा है। वह कहता है कि ब्रिटिश स्टीमरोंमें जगह होने पर भी स्टीमरवाले हिन्दुस्तानियोंको जगह देते हुए हिचकते हैं। ऐसी घटनाएं देखकर यहां बहुत-से हिन्दुस्तानी और हब्शी यही सोचते हैं कि हमारे लिए तो ब्रिटिश व बोअर गोरे और नाजी गोरे दोनों ही समान हैं। अगर दक्षिण आफ्रिकामें नाजी राज्य होता, तो हिन्दुस्तानियों और हब्शियोंको क्या आजकी अपेक्षा अधिक कष्ट सहना पड़ता? कई लोग तो ऐसा भी

सोचते हैं कि अंग्रेज मुँहसे तो मीठी बातें कहते हैं लेकिन करते तो अपना मनमाना ही हैं। हिटलर तो साफ-साफ सुनाता है। फिर वह बुरा क्यों? हमें पता तो चले कि हम कहाँ हैं। कृपया लिखें।

इन दो पत्रोंमें अन्तर है, लेकिन दोनोंका निष्कर्ष एक है — अंग्रेजोंके प्रति घृणा और उनकी मदद करने की अनिच्छा। ऐसी स्थितिमें रास्ता निकालना मुश्किल काम है। लेकिन अहिंसाको तो ऐसे ही समय अपना तेज दिखाना है।

पहले तो हमें अंग्रेजों और अंग्रेजोंकी चालबाजीके बीच भेद करना चाहिए। उनकी चालबाजीकी हम विवेकपूर्वक आलोचना करें, लेकिन मनमें उनके प्रति घृणा न रखें। सब भूल कर सकते हैं। सब गुण और दोषोंसे भरे हुए हैं। हमारी भूलोंके लिए लोग हमें गाली दें, तो हमें अच्छा नहीं लगेगा। प्रेमपूर्वक कोई हमारी भूल बताये, तो शायद हम सुनने को तैयार हों। ऐसा ही व्यवहार हमें अंग्रेजोंके प्रति करना चाहिए। हम उनकी भूलें बतायें, लेकिन उनके लिए उनका बुरा न चाहें। उनके लिए सद्बुद्धिकी इच्छा करें, लेकिन उनके नाशकी इच्छा न करें।

ऐसी मनोवृत्तिमें से सत्याग्रहकी उत्पत्ति हुई है। अंग्रेजोंका बुरा न चाहें, उनकी भूलें उन्हें बतायें और उनकी भूलोंमें उन्हें सहयोग न दें — यही सत्याग्रह है। इस महान नियमका अनुसरण हम बीस वर्षसे करते चले आ रहे हैं। मुझे लगता है इससे हमें बहुत लाभ हुआ है। कोई कारण नहीं है कि इस लड़ाईमें हम उनकी हारकी इच्छा करें। दक्षिण आफ्रिकाके पत्रमें ठीक लिखा है कि हमें [अंग्रेजों और नाजी जर्मनोंमें] चुनाव करने की बहुत गुंजाइश नहीं है। दक्षिण आफ्रिकामें यह बात दीपक-जैसी स्पष्ट दिखाई देती है। वहाँ गोरे और कालेका भेद साफ देखा जाता है। काले गोरेसे नीचे स्तरके माने जाते हैं। नाजी इससे ज्यादा और क्या कहते या करते हैं? इसलिए, अंग्रेजोंकी हारका अर्थ होगा नाजियोंकी जीत और इसकी इच्छा तो हम नहीं ही करेंगे। अतः हमारी स्थिति निष्पक्ष होनी चाहिए। हिन्दुस्तानमें हम स्वतन्त्रता प्राप्त करने की इच्छा करते हैं। उसके लिए हमें जर्मनीके नाशकी इच्छा नहीं करनी चाहिए। स्वतन्त्रता हम अपने बलसे प्राप्त करेंगे, और अपने बलसे उसकी रक्षा करेंगे। इसके लिए हमें अंग्रेजोंकी अथवा बाहरी किसी मददकी जरूरत नहीं है। जो अहिंसा[की ताकत]को मानते हैं, वे मानेंगे कि हम अहिंसाके सहारे स्वतन्त्रता प्राप्त करेंगे और अहिंसाके सहारे ही उसकी रक्षा करेंगे।

हमारे देशमें एक ऐसा भी वर्ग है, जो मानता है कि शस्त्रोंके सहारे ही हमें स्वतन्त्रता मिलेगी और उनके सहारे ही उसकी रक्षा की जा सकेगी। उनकी स्थिति कुछ विषम है। स्वतन्त्रता तो हमें अभी प्राप्त करनी है। यदि शस्त्रोंके सहारे प्राप्त करनी हो, तो वह अंग्रेजोंकी मदद करके प्राप्त नहीं की जा सकती। यदि हम शस्त्रोंसे उनकी मदद करें तो परिणाम यह होगा कि हम आज उनके जितने अधीन हैं, उससे अधिक अधीन हो जायेंगे। और यदि हमारे मदद करने के बाद भी वे हार गये, तो हमें एक दूसरी सत्ताके अधीन होना पड़ेगा। हिन्दुस्तान और ब्रिटेन हारें, तो स्वाभाविक है कि हिन्दुस्तानको आमसे गिरकर बबूलमें अटकना पड़ेगा। हिन्दुस्तानका आज

किसीके साथ वैर नहीं है। हिटलर वगैरह जानते हैं कि हिन्दुस्तान जो आज लड़ाईमें है, तो स्वेच्छासे नहीं है। वे किसी भूलमें गोता नहीं खा रहे हैं। वे समझते हैं कि हिन्दुस्तान परतन्त्र है, इसलिए उसके सामने इच्छा-अनिच्छाका सवाल ही नहीं है। सच पूछें, तो यही प्रश्न कांग्रेसने उठाया है, क्योंकि कांग्रेसके पास अहिंसाका शस्त्र है। लेकिन जो अहिंसाको नहीं मानते, उनसे हमारा झगड़ा नहीं है। वे अपने रास्ते जायें, हम अपने रास्ते जायेंगे। ऐसा करें, तो हिन्दुस्तान कहाँ है, यह हमें मालूम हो जायेगा। अगर कांग्रेसने मुँहपर ताला लगा लिया होता, तो उसने अहिंसाकी नीति पर चलनेका अपना अधिकार भी खो दिया होता। लेकिन अपनी इस नीतिको जीवित रखना कांग्रेसका कर्त्तव्य था। इसलिए कांग्रेसको कुछ करना था। वह क्या करती है, यह अब हमें मालूम पड़ेगा। इसलिए दक्षिण आफ्रिकाके और यहाँके उपरोक्त पत्र लिखनेवालोंको मेरी सलाह है कि वे विचारपूर्वक अपने मनमें से द्वेष, रोष तथा तिरस्कार आदिको निकाल फेंकें। ये कमजोरीके चिह्न हैं। इसके बदले वे अहिंसाका मार्ग अपनायें, तो वे कुछ सक्रिय कार्य कर सकेंगे और इस महान शक्तिके प्रचारमें उनका भी सहयोग होगा। कांग्रेसकी यह माँग केवल अपने लिए ही नहीं है, प्रत्युत इसमें सारे देशकी, बल्कि सारी दुनियाकी सेवा समाविष्ट है।

अतः हम तो सच्चे अर्थोंमें यही कहें कि "सभी लड़नेवालोंका भला हो।"

सेवाग्राम, ७ अक्तूबर, १९४०

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १२-१०-१९४०

६८. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेवाग्राम, वर्धा
७ अक्तूबर, १९४०

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

इस पत्रके साथ पण्डित नेहरूका पत्र[1] और संलग्न कागजात भिजवा रहा हूँ। यद्यपि यह एक ऐसे ब्रिटिश अफसरके बारेमें है जिसने परम्पराके खिलाफ विद्रोह कर दिया है, लेकिन मेरे खयालसे इस मामलेमें सहानुभूतिके साथ पेश आना उचित है। पण्डित [जवाहरलाल]के पत्रको भेजने का मकसद यही है कि आप एक ऐसे व्यक्तिके दिमागकी विचार-प्रक्रियाको समझ सकें जो समस्त भारतका भावी नेता

१. देखिए परिशिष्ट ४।

होगा। कृपया मुझे लिखें कि इन पत्रोंको भेजकर मैंने मर्यादाका उल्लंघन तो नहीं किया है।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे: लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

६९. पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको

सेवाग्राम
७ अक्तूबर, १९४०

मेरी आलोचना[2] तुम्हें और कांग्रेसको सहारा देने के लिए थी। मुझे यह तो मालूम ही था कि तुम कुछ कर रहे हो। मैंने उसमें तुम्हारी मदद करनेके लिए लिखा और तुम्हारे हाथ मजबूत किये। और ऐसी आलोचना की जा सकती है, यह बात तो तुम्हारी समझके बाहर नहीं होनी चाहिए। जिसने मुझे पत्र लिखा था, निर्दोष भावसे लिखा था। मुझे लगा कि यदि मैं प्रकट रूपसे लिखूं, तो तुम सब लोग समझ जाओगे और उसके आधारपर आगे कदम उठाओगे। अब समझ गये या नहीं? क्या मैं तुम्हारा यह पत्र-व्यवहार प्रकाशित कर दूं?[3]

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १७६

७०. हैदराबाद

हैदराबादके जिन भू-भागोंको — जैसे कि बरार, सन्धिके तहत दिये गये जिलोंको और कर्नाटक आदि — अंग्रेजोंने किसी-न-किसी बहाने अपने कब्जेमें ले लिया है, उनपर हैदराबादका अधिकार हो, इसके बारेमें आप क्या कहते हैं?

प्रश्न उत्तरके योग्य है। अंग्रेजोंने इन्हें हथिया लिया था। पर इसलिए उन्हें उनपर कब्जा रखनेका हक नहीं मिलता। यदि मुझसे पूछा जाये तो इस सवालका

१. वाइसराय लॉर्ड लिनलिथगोने अपने ११ अक्तूबरके पत्रोत्तरमें लिखा था: "ये कठिन मामले हैं, जैसा कि पण्डितने स्पष्ट रूपसे स्वीकार किया है, और मेरा खयाल है कि उन्होंने जो राय दी, वह अत्यन्त समझदारीकी तथा सम्बन्धित अफसरके सर्वाधिक हितमें थी। मैं आपकी भावनाओंकी भी पूरी तरह कद्र करता हूँ।"

२. देखिए पृ० ६९-७१।

३. देखिए "टिप्पणियाँ", उपशीर्षक "आस्ट्रेलियाई सिपाही", पृ० १०२-३ भी।

फैसला वहाँके निवासियोंकी इच्छाके अनुसार होना चाहिए। मेरी न्यायबुद्धि इसके सिवा दूसरा कोई रास्ता मुझे नहीं बताती।

पर मैं समझता हूँ कि यह सब केवल दिमागी कसरत ही है। अगर सारे-के-सारे हिन्दुस्तानको, जो कि एक सम्पूर्ण भौगोलिक इकाई है, किसी दिन स्वतन्त्रता मिल जाती है, और वह एक दिन मिलनी है, तो उसकी स्वतन्त्रताके अन्दर उसके सब घटकोंकी स्वतन्त्रता आ जाती है। यदि वह स्वतन्त्रता अहिंसाके द्वारा मिली तो सब छोटे-मोटे प्रदेश स्वेच्छासे ही आपसमें मिल-जुलकर रहेंगे और शान्ति व सहयोगसे एक केन्द्रीय हुकूमतके अधीन काम करेंगे। यह हुकूमत इन सब हिस्सोंकी प्रतिनिधि बनेगी, और उसकी सत्ता तब तक कायम रहेगी जबतक कि उसमें उन सबका विश्वास है। यदि स्वतन्त्रता हथियारोंके जोरसे आई तो जो सबसे जबरदस्त सत्ता होगी वही सारे हिन्दुस्तानपर राज करेगी, और कोई वजह नहीं कि वह हैदराबाद ही न हो। सब छोटी-बड़ी रियासतें — चाहे वे चाहें या न चाहें — अपने-आप ब्रिटिश हुकूमतके बोझसे मुक्त हो जायेंगी, उनमें से हरएक अपनी हस्तीकी रक्षाके लिए लड़ेगी। उनमें से जो सबसे शक्तिशाली होगी वही सारे हिन्दुस्तानपर शासन करेगी। इसमें यह निहित है कि करोड़ों निहत्थे लोग इन सशस्त्र राज्योंके दलके आगे पस्त पड़े होंगे। मगर वास्तवमें ऊपर बताई हुई दो सूरतोंके अलावा और भी कई सूरतें हो सकती हैं। यह भी सम्भावना है कि अंग्रेजी फौजका हिन्दुस्तानी भाग अपनी शक्ति महसूस करने लगे और स्वतन्त्र बन जाये। मुसलमान, सिख, गोरखे, राजपूत, ये सब भी अपने-अपने लश्कर बना लें और एक-दूसरेसे जंग छेड़ दें। या सब किसी राष्ट्रवादी दलके साथ मिलकर देशी राज्योंका सामना करें। हो सकता है कि सीमा-प्रान्तकी लड़ाकू जातियाँ भी हिन्दुस्तानपर धावा बोलें और लूटमार या राजसत्तामें हिस्सेदार हो जायें।

उस वक्त अगर कांग्रेसमें कुछ भी अहिंसा-शक्ति बाकी होगी तो वह हिन्दुस्तान-भरमें व्यापक शान्ति स्थापित करने की कोशिशमें मर मिटेगी। यह असम्भव नहीं है कि सब लड़ाकू शक्तियाँ एक केन्द्रीय हुकूमतके नैतिक अधिकारके आगे अपने-आप अपना सर झुकाने में ही अपनी भलाई समझें। इसका अर्थ यह है कि सबको मताधिकार हो, और मताधिकारी राजनीतिक समझके साथ संयत तौरपर अपने मताधिकारका उपयोग करे। जब वह वक्त आयेगा, तब सब कौमी अनबन व अन्य झगड़े भी विधिपूर्वक हमेशाके लिए दफन कर दिये जायेंगे।

मगर सम्भव है, ऐसा न भी हो। आजकी हालत देखते हुए आशावादके लिए बहुत गुंजाइश नहीं रहती। लेकिन मैं तो श्रद्धालु हूँ। और श्रद्धाके सामने सब सम्भव है। परन्तु फर्ज कीजिए कि हालत इतनी बिगड़ गई कि सारे देशमें अराजकता-ही-अराजकता फैल गई। उस हालतमें मुझे विश्वास है कि यदि इस पृथ्वीपर कहीं ईश्वर है तो मैं ऐसी स्थिति स्वीकार करनेके लिए जीवित नहीं रहूँगा। मैं अपने निर्बल, छोटे-छोटे काँपते हुए हाथोंसे अराजकताकी ज्वालाको शान्त करनेके निष्फल प्रयत्नमें जल मरूँगा। परन्तु यदि आज आप मुझसे पूछें कि क्या मैं ब्रिटिश या दूसरी किसी बाहरी सत्ताके व्यवस्थित शासनकी अपेक्षा अराजकता पसन्द करूँगा, तो मैं निःसंकोच जवाब

दूँगा कि हाँ, मैं अराजकता पसन्द करूँगा। मसलन् निजाम सरहदी मुस्लिम कबीलोंकी मददसे या दूसरे छोटे-बड़े राजाओंको अपने अधीन करके उनकी मददसे अपना शासन देशपर कायम कर ले, तो मुझे उसकी परवाह नहीं। मेरे हिसाबसे वह हुकूमत सौ फीसदी घरेलू सरकार होगी। स्वराज न सही, पर वह घरेलू राज्य तो जरूर होगा। मैं लिखनेको तो ऐसा लिख सकता हूँ, लेकिन यदि वास्तवमें ऐसा अवसर आया, तो मैं फिर कहना चाहूँगा कि या तो मैं मर मिटूँगा या फिर हिन्दुस्तानमें शुद्ध लोकशासन, अर्थात् ऐसा शासन होगा जिसमें सरकार जनताकी होगी, जनता द्वारा होगी और जनताके लिए होगी। इसका अर्थ है शुद्ध अहिंसाका शासन। अब तो आप समझ गये होंगे कि मेरी अहिंसा मुलायम रुईकी नहीं बनी है। यह ऐसी धातुकी बनी है, जो फौलादसे भी कड़ी, पर साथ ही रुईसे भी ज्यादा मुलायम है। इसका सानी कोई दूसरा नहीं।

फिर आप स्वाभाविक रूपसे पूछेंगे कि मेरी इस योजनामें राजाओंका क्या स्थान है? यदि आपने अहिंसाके निहितार्थको पूरी तरह समझ लिया है तो ऐसा प्रश्न उठना ही नहीं चाहिए। राजागण केन्द्रीय शासनकी नैतिक सत्ताको, जो शस्त्र-बलपर आधारित नहीं होगी, स्वीकार करेंगे और उनको प्रजा-सेवकोंका सम्मान-जनक स्थान प्राप्त होगा। स्वेच्छापूर्वक अपना कर्त्तव्य पूरा करनेके लिए जितना आवश्यक है उससे ज्यादा अधिकार किसीको प्राप्त नहीं होगा। तब निजाम साहब अपनी प्रजा द्वारा चुने गये उसके एक सेवक होंगे। लेकिन तब उनकी प्रजा इच्छा-अनिच्छासे उनकी राज्यकी वर्तमान सीमामें रहनेवालोंतक ही परिमित नहीं होगी, बल्कि सारा देश ही शायद उनकी प्रजा होगा। आप इसे केवल खयाली योजना समझकर ही इसकी अवगणना न करें। मैं तो एक व्यवहारकुशल व्यक्ति होनेका दावा करता हूँ। यदि कांग्रेस अपनी नीतिपर सचाईसे डटी रही तो आज जो बातें हवाई लगती हैं कल वे ही वास्तविक साबित होंगी। मेरी योजनामें मनुष्यकी प्रतिभा या रचनात्मक प्रयत्नकी बरबादी है ही नहीं। एच० जी० वेल्सने मुझे तार भेजकर मनुष्यके अधिकारके प्रश्नपर मेरा अभिप्राय पूछा था। मैंने उनको तार द्वारा जो उत्तर भेजा था उसे यहाँ दे रहा हूँ:

> आपका तार मिला। आपके पाँचों लेख ध्यानपूर्वक पढ़ गया हूँ। धृष्टता न मानें तो कहूँ कि आपके सोचनेका तरीका गलत है। मुझे पूरा विश्वास है कि जैसा अधिकार-पत्र आपने तैयार किया है उससे कहीं बेहतर मैं तैयार कर सकता हूँ। लेकिन उससे लाभ क्या होगा? उसका संरक्षक कौन होगा? अगर आपका मतलब प्रचार या लोक-शिक्षणसे है तो कहना पड़ेगा कि आपने उलटी दिशासे आरम्भ किया है। मैं सही रास्ता सुझाता हूँ। आरम्भ मनुष्यके कर्तव्योंसे कीजिए। फिर विश्वास रखिए कि जिस प्रकार शिशिरके पीछे-पीछे वसन्त आता है उसी प्रकार कर्त्तव्योंके पीछे-पीछे अधिकार भी अपने-आप चले आयेंगे। मैं यह सब अनुभवके आधारपर कह रहा हूँ। जब मैं युवा था मैंने अपने

जीवनका आरम्भ अपने अधिकारोंपर आग्रह करने से किया। लेकिन तुरन्त पता चल गया कि वास्तवमें मुझे कोई अधिकार नहीं है—यहाँ तक कि अपनी पत्नीपर भी नहीं है। फलतः मैंने असली शुरुआत अपनी पत्नी, अपने बच्चों, मित्रों, साथियों और समाजके प्रति अपने कर्त्तव्यका पता लगाने और उसे पूरा करने से की। आज मैं देखता हूँ कि मुझे जितने अधिकार प्राप्त हैं उतने शायद ही किसी जीवित मनुष्यको हों। अगर यह बहुत बड़ा दावा हो तो मैं यह कहूँगा कि मैं किसी ऐसे व्यक्तिको नहीं जानता जिसको मुझसे अधिक अधिकार प्राप्त हों।

सेवाग्राम, ८ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-१०-१९४०

७१. धन्यवाद[1]

मैं भारत तथा संसारके सुदूर स्थानोंसे जन्मदिनकी बधाई भेजनेवाले अनेकानेक सज्जनोंका कृतज्ञ हूँ। इस बार अनेक सज्जनोंने मुझे सूतकी लच्छियाँ भी भेजी हैं। उनमें से कुछ सूत तो बहुत ही बारीक, मजबूत और इकसार है। कहने की जरूरत नहीं कि मैं अपने लिए भेजे गये इन सभी बहुमूल्य उपहारोंका अधिकसे-अधिक विवेकपूर्ण उपयोग करूँगा, क्योंकि (मेरी दृष्टिमें) ये बहुमूल्य उपहार दरिद्रनारायण के लिए किये गये उनके प्रेमपूर्ण श्रमके प्रतीक हैं। कुछ सज्जनोंने हरिजनों या अखिल भारतीय चरखा संघके लिए धनके रूपमें उपहार भेजे हैं। ये सभी उचित स्थानोंको भेज दिये गये हैं।

सेवाग्राम, ८ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-१०-१९४०

१. यह "नोट्स" ("टिप्पणियाँ") शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

७२. सत्याग्रहमें उपवासका स्थान

मैं देखता हूँ कि सत्याग्रहके सिलसिलेमें मेरे अनशनकी बात अखबारोंमें आ चुकी है। मालवीयजी महाराज मुझपर बहुत प्रेम करते हैं। मेरे स्वास्थ्य, मेरी राजनीति और मेरे बाह्याचार और अन्तराचारके बारेमें हमेशा फिक्र करते रहते हैं। हमारे बीच जो मतभेद होता है उसे हम दोनों सहन कर लेते हैं। उससे हमारे घनिष्ठ सम्बन्धमें तनिक भी फर्क नहीं आता। सेवाग्राम छोड़ने के एक दिन पहले ही उनका खत[1] मुझे मिला था। उसमें वर्तमान दशामें मेरा कर्त्तव्य क्या होना चाहिए, उस बारेमें लिखते हुए उनके अन्तिम शब्द ये थे, "अनशन तो किसी हालतमें न किया जाये।"

मुझे कबूल करना चाहिए कि अनशनकी उनकी बातमें एक अंशतक सत्य है। मैंने मित्रोंसे कहा था कि मेरे जीवनमें शायद एक और अनशन है और वह शीघ्र भी आ सकता है। बात यह है कि जहाँतक मुझे स्मरण है मेरा एक भी जाहिर उपवास खास इरादेसे नहीं हुआ है। वह ईश्वरकी दी हुई बख्शिश थी। सब उपवासोंका परिणाम अच्छा ही था। जो हो, मुझे उन उपवासोंके बारेमें पश्चात्ताप नहीं। मुझे आशा है कि पाठक यह पढ़कर चिन्तित नहीं होंगे। अगर अनशनको आना है तो आयेगा। और उससे भला ही होनेवाला है। ईश्वरको मंजूर होगा वही होगा।

अब सत्याग्रहमें उपवासकी मर्यादाके बारेमें दो शब्द कहूँ। आजकल सत्याग्रहके नामसे काफी उपवास होते हैं। जो जाहिरमें आये हैं उनमें से बहुत तो निरर्थक थे, कई दूषित थे। उपवास एक प्रचण्ड शस्त्र है। उसका शास्त्र है। पूर्ण शास्त्र कोई नहीं जानता। अशास्त्रीय ढंगसे उपवास करनेवालोंको तो हानि होती ही है, लेकिन और लोगोंको भी नुकसान पहुँच सकता है। इसलिए बगैर अधिकारके किसी को उपवास नहीं करना चाहिए। उसी व्यक्तिके सामने उपवास हो सकता है जिसका उपवासके निमित्तके साथ सम्बन्ध हो और जो उपवासीके साथ सम्बन्ध रखता हो। ऐसा उपवास भक्त फूलसिंहजी का था। उनका सम्बन्ध मौठवालोंके साथ अच्छा था। वहाँके हरिजनोंकी सेवा उन्होंने काफी की थी। वहाँका अत्याचार प्रसिद्ध ही था। सब उपाय न्याय पाने के लिए हो चुके थे। उपवासके सिवा कोई चारा नहीं था। उपवास सफल हुआ।[2] लेकिन सफलता-निष्फलता तो ईश्वरके अधीन है। वह यहाँ अप्रस्तुत है।

ऐसे ही मेरे सब जाहिर उपवास थे। उनमें से राजकोट का शिक्षाप्रद है।[3] इसकी काफी निन्दा हुई थी। यह उपवास शुरूमें सर्वथा निर्दोष और आवश्यक था। दोष बादमें आया। वह था मेरी यह माँग करना कि वाइसराय दखलअन्दाजी करें।

१. मदनमोहन मालवीयके इस पत्रके गांधीजी द्वारा दिये गये उत्तरके लिए देखिए पृ० ६३।

२. देखिए "तार: घनश्यामदास बिड़लाको", पृ० ४०-४१।

३. देखिए खण्ड ६९।

अगर मैं वह नहीं मांगता तो मुझे विश्वास है कि परिणाम अच्छा ही होता। यों भी परिणाम अच्छा ही हुआ। लेकिन क्योंकि भगवान मेरी आंख खोलना चाहता था, उसने मुंहमें डाली हुई रोटी छीन ली। सत्याग्रहके अभ्यासके लिए राजकोटका उपवास बहुत उपयुक्त है। यदि उपवासके बारेमें मैंने जो सिद्धान्त बताया है वह स्वीकार कर लिया जाये तो राजकोटके उपवासकी आवश्यकताके बारेमें शंकाको स्थान नहीं। लेकिन निर्दोष उपवास असावधानीसे कैसे दूषित हो सकता है यह बताने में राजकोटके उपवासका महत्त्व है। उपवासीमें स्वार्थका, रोषका, अविश्वासका, अधीरताका प्रवेश नहीं होना चाहिए। मेरे इस उपवासमें ये सब दोष आ गये थे, ऐसा मानने में कुछ अतिशयोक्ति नहीं होगी। उपवास फलके लिए था, क्योंकि उसके छूटने की शर्त मरहूम ठाकुर साहबके कुछ करने पर निर्भर थी। इसलिए फल-सिद्धिमें मेरा स्वार्थ था; रोष था। अन्यथा मैं वाइसरायकी ओर नहीं देखता, प्रेम मुझे रोक लेता। मैं जिसको पुत्रवत् मानता हूं उसकी शिकायत उसके अधिराजके पास क्यों करूंगा। अविश्वास तो था ही कि ठाकुर साहब मेरे प्रेमको नहीं पहचानेंगे और उपवास जल्दी खत्म होने की अधीरता मुझमें थी। इन सब दोषोंके कारण उपवास दूषित हुआ। राजकोटके उपवासके परिणामोंका विचार यहां अप्रस्तुत होने के कारण उसकी चर्चा मैं छोड़ देता हूं। राजकोटके उदाहरणसे हमको — उपवासीको — कैसे सावधान रहना है उसका पता चलता है और शुद्धतम उपवास भी थोड़ी-सी असावधानीसे कैसे दूषित हो सकता है यह हमने सीख लिया। इसीमें से हमने पाया कि सत्याग्रही उपवास करनेवालोंमें सत्य और अहिंसाकी मात्रा तो भरपूर होनी चाहिए। इसके उपरान्त सत्याग्रहीमें आत्मविश्वास होना चाहिए कि भगवान उपवास करने की शक्ति दे देगा और उपवास सर्वथा निर्दोष है। जरा भी शंका हो तो उपवास त्याज्य है। उपवासीमें अटूट धैर्य, दृढ़ता, एकाग्रता, शान्ति होनी चाहिए। ये सब गुण एकाएक नहीं आते इसलिए जिसका जीवन यम-नियमादिके पालनसे शुद्ध नहीं है वह सत्याग्रही उपवास नहीं कर सकता है।

याद रखना चाहिए कि यहां शरीर-शुद्धि और आत्म-शुद्धिके उपवासकी चर्चा नहीं की गई है। शरीर-शुद्धिके उपवास नैसर्गिक वैद्योंकी सलाहसे ही हो सकते हैं। आत्म-शुद्धिके उपवास महापापी भी कर सकते हैं। और ऐसे उपवासके लिए तो हमारे यहां साहित्यका सागर भरा है। आत्म-शुद्धिके उपवासको आजकल हम भूल ही गये हैं। जो करते हैं वह देखादेखीसे अथवा रूढ़िवश होकर करते हैं। इसलिए ऐसे उपवाससे हम लाभ नहीं उठा पाते। जो सत्याग्रही उपवास करना चाहते हैं उनके लिए आत्म-शुद्धिके उपवासका जाती अनुभव आवश्यक समझा जाये। शारीरिक भी लाभदायी तो है। अन्तमें सब उपवासकी जड़ तो एक ही है — शुद्धि।

सेवाग्राम, ८ अक्तूबर, १९४०

हरिजनसेवक, १२-१०-१९४०

७३. "कमसे-कम परिश्रममें"[1]

संसारका प्रत्येक व्यक्ति कमसे-कम परिश्रममें अच्छेसे-अच्छा जीवन-यापन कर सके, ऐसे समाजकी स्थापना हमारा आदर्श होना चाहिए।

ऐसा अहमदाबादसे एक मित्र लिखते हैं। उन्होंने यह बात बहुत तर्कपूर्वक कही है, इसलिए मैं यह मानता हूँ कि कुछ भाई-बहन उनके मतको माननेवाले होंगे। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने पत्रमें भविष्यवाणी की है कि वाइसराय मेरी माँगको अस्वीकार कर देंगे। और चूँकि पत्रलेखक व्यक्ति-स्वातन्त्र्यमें विश्वास नहीं रखते, इसलिए उनका कहना है कि वाइसरायका मेरी माँगको रद्द कर देना उचित ही है।

चूँकि उनकी भविष्यवाणी सच साबित हुई है इसलिए वे अपनी दलीलको ठीक मान सकते हैं और कह सकते हैं कि "मैंने तो पहले ही यह कहा था।" अतः मेरा उनके पत्रकी ओर ध्यान देना आवश्यक जान पड़ता है।

वाइसराय महोदयकी अस्वीकृतिके आधारपर लेखकका आश्वस्त होना उचित नहीं माना जायेगा। इस तरहकी माँगोंको स्वीकार कर लिया जाना चाहिए, ऐसा कोई अनुमान भी नहीं था। मेरे लगभग सभी साथियोंका यह विचार था कि माँग स्वीकृत नहीं होगी। मैंने तो पहले ही कहा था कि अगर माँग स्वीकृत नहीं होगी तो उससे मुझे बल ही मिलेगा। इसके अतिरिक्त, माँगके रद्द किये जाने के पीछे व्यक्ति-स्वातन्त्र्यके अस्वीकारकी बात तो बिलकुल नहीं थी। व्यक्ति-स्वातन्त्र्यको नकारना तो आज यूरोपकी नई लहर है। यदि यह गया तो सब गया। यदि व्यक्ति कुछ नहीं है तो समष्टि भी कुछ नहीं है। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य होने पर ही व्यक्ति स्वेच्छासे आत्म-समर्पण करके शून्यवत् हो समाज-सेवा कर सकता है। यदि इस स्वातन्त्र्यका हनन कर दिया जाये तो मनुष्य यन्त्रवत् बन जायेगा और अन्तमें समाजका नाश हो जायेगा। ऐसे समाजकी रचनाकी कतई कोई सम्भावना नहीं है, क्योंकि यह मनुष्यके मूल स्वभावके विरुद्ध है। जैसे मनुष्यके सींग अथवा पूँछ नहीं निकल सकती उसी तरह मनुष्यका बुद्धिहीन पशु बन जाना भी सम्भव नहीं है। वस्तुतः देखा जाये तो व्यक्ति-स्वातन्त्र्यके नाशकी कामना करनेवालोंमें भी एक या दो लोग चंगेजखाँवाले व्यक्ति-स्वातन्त्र्यका समर्थन तो करते ही हैं।

जिस तरह व्यक्ति-स्वातन्त्र्यके नाशका आदर्श असम्भव बात है, उसी तरह लेखकने अपने पत्रमें जिस दूसरी आदर्श स्थितिकी बात कही है वह भी असम्भव है। संसारका प्रत्येक व्यक्ति कमसे-कम मेहनत करके समान रूपसे अच्छेसे-अच्छा जीवन-यापन कर सके, इस आदर्श स्थितिको प्राप्त करना तो आकाश-कुसुम प्राप्त करने-जैसा है। अच्छेसे-अच्छा जीवन अर्थात् उत्तरोत्तर अच्छा जीवन अर्थात् वैभवशाली

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद हरिजन, १-२-१९४२ के अंकमें भी प्रकाशित हुआ था।

जीवन। समष्टिके लिए ऐसे अमर्यादित जीवनकी कल्पना की ही नहीं जा सकती। और फिर अमर्यादाके लिए अर्थात् वैभवशाली जीवनके लिए मर्यादा कहाँ? इसीलिए वेदोंमें ठीक इसके विपरीत 'उच्च विचार और सादा जीवन' की बात कही गई है। यही सच्चा मन्त्र है और जगत्में करोड़ों व्यक्ति इसी आदर्शको मानते हैं, किन्तु उसे प्राप्त नहीं कर सके हैं। लेकिन ऐसे जीवनकी कल्पना अवश्य की जा सकती है। हिन्दुस्तानके करोड़ों लोगोंकी कमसे-कम कितनी आय होनी चाहिए, इसकी कल्पना की जा सकती है। और इस आदर्शको प्राप्त करने के लिए यन्त्रोंकी आवश्यकता नहीं होती।

जो व्यक्ति जीवनकी आवश्यकताओंको दिन-प्रति-दिन बढ़ाता जाता है वह आचार-विचारमें पिछड़ता दिखाई देता है। इतिहास इस बातकी गवाही देता है। मनुष्यका सुख सन्तोषमें निहित है। जो व्यक्ति चाहे कितना भी उसे क्यों न मिले फिर भी सन्तुष्ट नहीं रहता, ऐसा व्यक्ति अपनी वृत्तियोंका गुलाम बन जाता है। और अपनी वृत्तियोंकी गुलामीसे बदतर और कोई गुलामी आजतक देखने में नहीं आई। सभी ज्ञानियों अर्थात् मनोवैज्ञानिकोंने पुकार-पुकारकर कहा है कि मनुष्य स्वयं अपना शत्रु और मित्र बन सकता है। बन्धन और मुक्ति, दोनों उसके हाथमें हैं। यह बात जिस तरह एक व्यक्तिके लिए सच है वैसे ही अनेक लोगोंके लिए भी सच है। और वह मुक्ति केवल सादे और शुद्ध जीवन द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

सेवाग्राम, ९ अक्तूबर, १९४०

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १२-१०-१९४०

७४. टिप्पणियाँ

'पीठमें छुरी'?

मेरे और वाइसरायके बीच हुए पत्र-व्यवहारके बारेमें मैंने सर सिकन्दर हयात का भाषण[1] पढ़ा। उससे मुझे अफसोस हुआ। जब कोई कदम, उसपर खुल्लमखुल्ला

१. **इंडियन एनुअल रजिस्टर**, १९४०, खण्ड २, पृ० ३१-२ और ४० के अनुसार सिकन्दर हयात खाँने "१ अक्तूबरको नूह (जिला गुड़गाँव) के काश्तकारोंकी एक सभामें भाषण करते हुए कहा था कि महात्मा गांधी उन भारतीयोंमें से हैं जिन्होंने सबसे पहले हिटलर द्वारा आक्रमण करने की कार्रवाईकी भर्त्सना करते हुए यह घोषणा की थी कि युद्धमें उनकी पूरी सहानुभूति ब्रिटेनके साथ है। यह घोषणा करने के बाद कांग्रेस समय-समयपर तबतक अपनी स्थिति बदलती रही जबतक कि अन्तमें महात्मा गांधीने युद्धमें हिस्सा लेने के खिलाफ प्रचार करने की स्वतन्त्रताकी अपनी माँग स्पष्ट रूपसे प्रकट नहीं कर दी।" लाहौरमें १ नवम्बरको "मुस्लिम देशोंके दिवस" के उपलक्ष्यमें आयोजित एक अन्य सभामें बोलते हुए सर सिकन्दरने कहा था: "महात्माके इस आन्दोलनसे न सिर्फ ब्रिटेनकी ही पीठपर छुरी चलेगी, बल्कि भारत तथा इस्लामी देशोंके सर्वाधिक हितोंके साथ भी विश्वासघात होगा।"

पूरी चर्चाके बाद, प्रभावित होनेवाले पक्षका पूरा-पूरा खयाल रखते हुए उठाया जाये, तो पीठमें छुरी मारने की बात कहाँ उठती है? अगर कोई वकील अपने पक्षको जरूरतसे ज्यादा सच्चा दिखाने की कोशिश करे तो वह खराब वकील गिना जायेगा। और मैं विश्वास दिलाता हूँ कि सर सिकन्दर ऐसे ही सिद्ध होंगे। सर सिकन्दर कहते हैं कि पंजाबके निन्यानवे फीसदी लोग लड़ाईमें मदद पहुँचाने के पक्षमें हैं। इसमें शक नहीं कि वे पंजाबकी विधान-सभाके लोक-निर्वाचित सदस्य हैं और पंजाब के सर्वमान्य मुख्यमन्त्री हैं। फिर भी मैं यह कहूँगा कि पंजाबके बारेमें उनका दावा बहुत अधिक है। हकीकतपर जमे रहने से सर सिकन्दर हयातके उद्देश्यका कुछ बिगड़ेगा नहीं। हकीकत यह है कि पंजाब अंग्रेज शासकोंके लिए सिपाही भर्ती करने का एक अच्छा क्षेत्र रहा है। लेकिन इससे जरूरी तौर पर यह सिद्ध नहीं होता कि पंजाब सब प्रान्तोंसे अधिक देशभक्त है। हमारे इस विस्तृत देशमें कई व्यवसाय हैं। उनमें से एक सिपाहीगिरी भी है। ये 'पेशेवर लोग' उन्हींकी नौकरी करेंगे जो उनको ज्यादा तनख्वाह और पेशेका काफी प्रशिक्षण देंगे। इसलिए मेरी रायमें सर सिकन्दर सिर्फ इतना ही सिद्ध कर सकते हैं कि अंग्रेजोंके लिए सिपाही भर्ती करने की हदतक पंजाबको सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। लेकिन एक पंजाबी सिपाहीकी इस किस्मके काममें उतनी ही दिलचस्पी हो सकती है जितनी दिलचस्पी कि जनरल फ्रैंको द्वारा भर्ती किये गये काले सिपाहियोंकी उनकी राजनीति या उनकी महत्त्वाकांक्षामें थी। वे उनकी खिदमत इसीलिए करते थे, क्योंकि उनको वे तनख्वाह और हथियार चलाना सीखने का मौका देते थे। लेकिन राजनीतिक दृष्टिसे कहें तो यदि सर सिकन्दर यह दावा कर सकते हैं कि पंजाबके निन्यानबे फीसदी लोग लड़ाईमें हिस्सा लेने के पक्षमें हैं, तो शायद उनसे अधिक सशक्त दावेके साथ कहा जा सकता है कि उन सात सूबोंमें, जिनमें कि कांग्रेसका बहुमत है, निन्यानबे फीसदी लोग लड़ाईमें हिस्सा लेने के विरुद्ध हैं। मगर इस बहसको आगे बढ़ाने की मेरी इच्छा नहीं है। मेरा सुझाव है कि जो लड़ाईके पक्षमें हैं और जो इसके विरोधी हैं, दोनों ही अपनी देशभक्तिकी दुहाई दिये बगैर अपने-अपने रास्तेपर चल सकते हैं। अच्छा होगा कि इसका अन्तिम निर्णय भविष्यके इतिहासकारपर छोड़ दिया जाये।

आस्ट्रेलियाई सिपाही

बम्बईके मेयरने मुझे एक पत्र भेजा है, जिसमें शिकायत की है कि आस्ट्रेलियाई सिपाहियोंके असभ्य व्यवहारके बारेमें लिखते हुए मैंने उनका जिक्र[1] इस तरह किया था मानो उनसे, बम्बईके सर्वप्रथम नागरिक होने के नाते, अपने कर्त्तव्यके पालन में चूक हुई थी। उनका कहना है कि उन्होंने इस विषयमें फौरन ही कार्रवाई की थी और सरकारसे पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया था। परन्तु जिम्मेदार नागरिककी हैसियतसे वे अखबारोंमें यह बात तुरन्त न दे सके और न ही वे जनताको यह सूचित कर सके कि वे क्या कर रहे हैं। इसके लिए मेयर प्रशंसाके पात्र हैं। मैं

१. देखिए पृ० ६९ और "पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको", पृ० ९४ भी।

जानता हूँ कि वे व्यवहार-कुशल हैं और बिना हो-हा मचाये सेवाके लिए तत्पर रहते हैं। लेकिन आश्चर्य इस बातका है कि उन्होंने मेरे पत्रका एक ऐसा अर्थ निकाला है जो उसका सन्दर्भ देखने से स्पष्ट जाहिर होगा कि मेरे मनमें हो ही नहीं सकता था। मैंने जो प्रश्न इस विषयसे सम्बन्ध रखनेवाले अन्य पक्षोंसे पूछा है, वही उनसे भी पूछा है। इसका यह अर्थ तो हरगिज नहीं लगाया जाना चाहिए कि मैंने उनमें से किसीकी भी टीका की है। हो सकता है कि जो प्रभावकारी कदम उन्होंने बादमें उठाये, वे कदम वे मेरी चेतावनीके बिना ही उठाते। जब जगह-जगहसे मेरे पास कई शिकायतें आईं, तब मेरा कर्त्तव्य हो गया कि मैं एक साधारण नागरिकसे लेकर गवर्नरतक समाजके सब वर्गोंको यह बता दूँ कि ऐसे संकटके समय उनका क्या कर्त्तव्य है। यदि यह मामला समयपर और सावधानीसे सँभाल न लिया गया होता तो इसके परिणामस्वरूप भारी संकटकी स्थिति पैदा होती, जिससे अत्यन्त अवांछनीय जातिद्वेषकी ज्वाला भड़क उठती।

इसलिए मुझे यह जानकर खुशी हुई कि लगभग सभी पक्षोंने जैसी चाहिए वैसी कारंवाई की है। एक कॉलिजकी छात्रा, जिसने मेरे पास पहले-पहल शिकायत भेजी थी, अब लिखती है कि यद्यपि इसमें शक नहीं कि शिकायतें तो सामान्यतया सब-की-सब सच्ची थीं, किन्तु कुछ ही दिनोंमें अनुचित व्यवहार बन्द हो गया था, और वह भी मेरा वक्तव्य प्रकाशित होने के पहले ही। फिर भी जो-कुछ मैंने लिखा है उसका मुझे अफसोस नहीं है, क्योंकि जनताके हितकी खातिर वह मुझे लिखना ही चाहिए था। मुझे यह जानकर कि मामला जहाँ-का-तहाँ ही रुक गया, इतनी ही खुशी होती है जितनी इससे पहले खराब खबर छापकर मुझे दुःख हुआ था। मैं मामलेको दबा देने की नीतिमें विश्वास नहीं रखता। यदि हम चाहते हैं कि ऐसी घटनाएँ फिर न हों, तो उन्हें जनताके सामने लाना चाहिए और जल्दी ही रोकने का कुछ उचित उपाय होना चाहिए।[1]

जयपुर

सेठ जमनालालजी जयपुरमें मुसीबतोंके घने जंगलमें से अपना रास्ता निकालने का प्रयत्न कर रहे हैं। एक समझौता पिछले दिनों हो चुका है। उसमें उनका काफी हिस्सा था। उससे रियासतको वाहवाही मिली थी और उसकी मुसीबतें भी कम हो गई थीं। इसीलिए उन्होंने सोचा था कि इस बार उनका काम सुगम व सरल हो जायेगा। मगर ऐसा नहीं होना था। सेठजीके अनुसार वहाँके दीवान राजा ज्ञाननाथ एक बिलकुल गैर-भरोसेमन्द और प्रतिक्रियावादी व्यक्ति हैं। वे जयपुरकी चिरकालसे पीड़ित रैयतको जरा भी राहत नहीं दे सके हैं। उन्होंने अबतक की प्रगतिपर भी पानी फेरना शुरू कर दिया है। वहाँकी प्रजामें उनको हटाने और एक ऐसे दीवान को नियुक्त करने के लिए आन्दोलन चल रहा है जो लोकमतकी कद्र कर सके। अधीश्वरी सत्ताका यह कर्त्तव्य है कि जब वह राजाओंके लिए किसी दीवानकी

१. देखिए "दो दृष्टिकोण", पृ० ११६ भी।

नियुक्ति करे तो यह अवश्य देख ले कि वह रैयतकी जरूरतोंके प्रति सहानुभूति रखनेवाला है या नहीं। किसी राजाके नामसे रियासतका प्रबन्ध करनेवाला दीवान यदि राजासे भी अधिक स्वेच्छाचारी बन जाये, तो उसे हटा देना चाहिए।

सेवाग्राम, ९ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-१०-१९४०

७५. पत्र : अब्दुल्ला हारूँ रशीदको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ अक्तूबर, १९४०

प्रिय हाजी साहब,

हालाँकि यह केवल दफ्तरी पत्र[1] है, आपके हस्ताक्षर देखकर मुझे उन पुराने दिनोंकी याद ताजा हो आई है जब मुझे आपका पूरा विश्वास प्राप्त था। लेकिन जैसी कि कहावत है, "सब दिन होत न एक समान।" ईश्वर मुझे समय-समयपर जो देता रहता है, उसीमें मुझे सन्तुष्ट रहना चाहिए।

आप यह उम्मीद नहीं करेंगे कि आपके प्रस्तावको लेकर मैं आपके साथ बहस में पड़ूँ। मैंने कोई वाद-विवाद खड़ा करने के विचारसे 'हरिजन' में टिप्पणी[2] नहीं लिखी थी। यदि आपको इस बातका सन्तोष है कि जहाँतक मुसलमानोंका सवाल है, उन्होंने ऐसा कोई काम नहीं किया जिसका उन्हें जवाब देना पड़े, तो मुझे कुछ नहीं कहना है। मैंने एक मित्रके रूपमें लिखा था, विरोधीके रूपमें नहीं। इसलिए आप प्रस्ताव प्रकाशित न करने के लिए मुझे क्षमा करेंगे। और यदि मैं प्रकाशित करता हूँ तो मुझे उसका उत्तर भी देना होगा; और मैं इससे बचना चाहता हूँ। लेकिन आप मुझसे निजी पत्र-व्यवहार द्वारा सिन्धमें मैत्रीपूर्ण वातावरण तैयार करने में मददकी उम्मीद कर सकते हैं। इसलिए मुझे आपके प्रथम प्रस्तावका अन्तिम अनुच्छेद पसन्द है, जिसमें आपने हिन्दुओंसे सहयोग देने के लिए कहा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. *हितवाद*, २३-१०-१९४० के अनुसार अब्दुल्ला हारूँने, जो कि सिन्ध मुस्लिम लीगके अध्यक्ष थे, गांधीजीके पास "सिन्ध प्रान्तमें व्याप्त अराजकताके सम्बन्धमें सिन्ध प्रान्तीय मुस्लिम लीगका प्रस्ताव" भेजा था। *इंडियन एनुअल रजिस्टर*, १९४०, खण्ड २, पृ० ३४के अनुसार प्रस्तावमें "आशा व्यक्त की गई थी कि सिन्धमें साम्प्रदायिक स्थितिको सुधारनेके लिए प्रान्तकी हिन्दू संस्थाएँ सिन्ध प्रान्तीय मुस्लिम लीगके अध्यक्षके साथ सहयोग करेंगी।"

२. देखिए "सिन्धके हिन्दू", पृ० ६४-६५।

७६. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ अक्तूबर, १९४०

भाई सतीशबाबू[1],

यह रहा अन्नदा[2]का खत। जब वह लिखते हैं कि जो-कुछ उस रोज हुआ वह गभराहटमें था तो हमारे जहांतक आवश्यक है केस फिर खोलना चाहीये। ऑडिटरके बारेमें मैं क्या करूं? प्रथम तो जो प्रश्न अन्नदा उठाते हैं उसका उत्तर भेजो। किस तरह खादी सस्ती बेची जाती है और खादीमें किस तरह कितनी कैपिटल रोकी जाती है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३२) से

७७. पत्र : सम्पूर्णानन्दको

सेवाग्राम
१२ अक्तूबर, १९४०

भाई संपूर्णानंदजी,

हिंदी या हिंदुस्तानी ही मेरे सामने है। लेकिन इसमें उर्दूका बहिष्कार नहि है। तीनोंकी जड़ तो एक ही है और जब हमारेमें ऐक्य पैदा हो जायगा तो हम अपनी मूर्खतापर हसेंगे कि हमने क्यों इस बारेमें झगडा किया। इस भूमिकासे हरिजन-सेवकका लेख[3] जिस बारेमें आपने लिखा है पढ़ना चाहीये।

प्यारेलालकी उर्दूकी तारीफ मैंने इस वास्ते की कि मेरे पास दूसरे उर्दूके जानकार नहीं है। और हिंदुस्तानी भाषा बनाने के लिये उर्दूका ज्ञान होना चाहीये। प्यारेलालकी हिंदी और उर्दूका भेद मैंने सिर्फ वस्तुस्थिति बताने के कारण किया। उसमें से आपने जो अर्थ घटाया है वह मेरे मनमें कभी नहीं था। हम कांग्रेसवाले तो हिंदुस्तानी नाम छोड़कर दूसरेका प्रयोग नहीं कर सकते हैं। कांग्रेसके नजदीक हिंदुस्तानी राष्ट्रभाषा है। सच तो यह है कि हिंदुस्तानी नामकी हिंदु[4] उर्दूसे अलग

१. बंगाल खादी प्रतिष्ठानके संस्थापक अध्यक्ष
२. अन्नदा चौधरी, बंगालके एक रचनात्मक कार्यकर्ता।
३. देखिए खण्ड ७२, पृ० ५०१-२।
४. अभिप्राय 'हिन्दी' से है। लगता है भूलसे गांधीजी 'हिन्दु' लिख गये।

कोई भाषा नहीं है। उसे बनना है। उर्दू शब्दसे आदमी अर्थ समझ लेगा, ऐसी ही हिंदीके लिये। मगर हिंदुस्तानी किस बोलीका नाम है। वह होनी चाहिये हिंदी उर्दूका संगम ही ना? यह संगम पैदा करने की मेरी कोशीश है, आपकी भी हो।

आपका,
मो० क० गांधी

मूल पत्रसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

७८. प्रमाणपत्र : उमादेवीको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ अक्तूबर, १९४०

मैं पोलैण्डकी श्री उमादेवी (वान्दा दिनोवस्का)को चार वर्षसे अधिक समयसे जानता हूँ। इन्होंने भारतको अपने दूसरे स्वदेशके रूपमें अपना लिया है। इनकी आदतें सहज सरल हैं और ये अत्यन्त आत्म-त्यागी तथा बहादुर महिला हैं। मेरा विश्वास है कि ये पूरी तरहसे ईमानदार भी हैं।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२०३ और ८०५७) से। सी० डब्ल्यू० ५०९८ से भी; सौजन्य: वान्दा दिनोवस्का

७९. पत्र : चन्देलको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ अक्तूबर, १९४०

चि० चन्देल,

तुम्हारा बड़ा सुन्दर पत्र मिला। तुम वहाँ काफी अच्छा काम कर रहे हो।[1] मुझे उम्मीद है कि यदि तुम दिवालीके बाद यहाँ आओ तो तुम दोनोंसे[2] भेंट होगी।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]
बापू — कन्वर्सेशन्स ऐण्ड कॉरेस्पॉण्डेन्स विद महात्मा गांधी, पृ० १८९

१. चन्देल खेड़ीमें कताई-केन्द्रका संचालन कर रहे थे।
२. कमला (मार्गरेट जोन्स) भी चन्देलके साथ खेड़ीमें ग्राम-सुधार कार्य कर रही थीं।

८०. पत्र : बी० एन० बर्वेको[1]

सेवाग्राम, वर्धा
१३ अक्तूबर, १९४०

प्रिय बर्वे,

मैं सार्वजनिक रूपसे आपके प्रश्नका उत्तर नहीं देना चाहता। नैतिकताके विचारसे देखा जाये तो मैं यह अवश्य मानता हूँ कि रेडक्रॉसका कार्य करना अप्रत्यक्ष रूपसे युद्ध-प्रयत्नको बढ़ावा देना है। लेकिन मैं जानता हूँ कि यह अत्यन्त नाजुक प्रश्न है और इसके बारेमें दो विरोधी रायें हो सकती हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

८१. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा
१४ अक्तूबर, १९४०

चि० मीरा,

मुझे खुशी है कि तुम अपने नये आवासमें[2] हो। तुमने जो चन्द पंक्तियाँ भेजी हैं, उनमें विषादकी एक गूँज है। मैं चाहता हूँ कि तुम आन्तरिक प्रसन्नता और बल अनुभव करो। ईश्वर तुम्हारा साथ दे।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

तुम्हारी खादी अब आ गई है। तुमने उसके बारेमें मुझे कोई हिदायतें दी हों, तो मैं उन्हें भूल गया हूँ। क्या मैं तुम्हारे लिए उसे रखे रहूँ?

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००५६ से भी

१. प्रस्तुत पत्र बर्वेके ११ अक्तूबरके पत्रके उत्तरमें लिखा गया था, जिसमें उन्होंने पूछा था कि क्या कांग्रेसजन रेडक्रॉस-कोषमें चन्दा दे सकते हैं और क्या उनके इस तरहसे चन्दा देनेकी बातको अप्रत्यक्ष रूपसे युद्ध-प्रयत्नमें सहायता देना कहा जा सकता है।

२. इसके बारेमें मीराबहन लिखती हैं : "पहाड़ी इलाकेमें देवदारुके जंगलमें निर्जनमें बनी एक कुटिया"; देखिए पृ० ४२-४३ भी।

८२. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेवाग्राम, वर्धा
१४ अक्तूबर, १९४०

चि० शर्मा,

जबतक तुमारे पास रहने दे उसे रखो।[1] दे देने की कोई जरूरत नहीं है। देवीप्रसादको[2] भेजना अच्छा है। विद्यालयसे प्रथम पूछ लेना।

वापुके आशीर्वाद

वापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २९०-१ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

८३. सविनय अवज्ञा

कार्य-समितिके साथ तीन दिन तक[3] मेरी वातचीत चली। इस वीच मैंने सत्याग्रहकी अपनी योजनाका नक्शा, जहाँतक मैं उसकी कल्पना कर सकता था, उनके सामने पेश किया। यद्यपि अकेले मुझपर लड़ाईकी पूरी-पूरी जिम्मेदारी है फिर भी मैं कार्य-समितिके सदस्योंके साथ मशविरा किये वगैर पहला कदम उठाने की वात सोच नहीं सकता था। अहिंसक कार्रवाईमें हमें अपने साथियोंके दिलोदिमागको कायल करके उन्हें अपने साथ रखना होता है। अनुशासन लाने और निर्देशोंपर अमल करवाने के लिए इसके सिवा कोई दूसरा रास्ता नहीं है। मुझे मानना पड़ेगा कि मेरे लिए यह काम आसान नहीं था। समितिके दो सदस्योंका सख्त मतभेद रहा। मैंने उन्हें अपनी वात समझाने का वहुत प्रयत्न किया, मगर मुझे लगता है कि मैं असफल ही रहा। परन्तु अनुशासनकी खातिर उनके लिए, जहाँतक सम्भव होगा, वे आज्ञा-पालन करेंगे। मतभेदका मुख्य मुद्दा सविनय अवज्ञाके पैमानेके वारेमें और उसपर जो पावन्दियाँ लगाई गई उनके मुताल्लिक ही था।

वहसके इस हिस्सेको जाहिर करके मैं यह वताना चाहता हूँ कि मेरी योजना उन लोगोंको आशा पूरी नहीं करेगी जिनका कि मतभेद रखनेवाले सदस्य प्रतिनिधित्व

१. हीरालाल शर्माके शिविर अस्पतालके लिए उधार लिया गया शामियाना

२. हीरालाल शर्माके पुत्र; शर्माने गांधीजी से पूछा था कि वे अपने पुत्रको स्कूल भेजें अथवा नहीं।

३. ११ से १३ अक्तूबर तक

करते हैं। मैं उनसे सिर्फ इतना ही कहूँगा : 'जरा धीरज रखिए और देखिए कि क्या होता है। जो निर्देश दिये जायें उनपर अपनी शक्तिके अनुसार अमल कीजिए। कुछ भी ऐसा न कीजिए जिससे योजनाकी सफलतामें रुकावट आये। अगर आपकी विवेकबुद्धि विद्रोह करती है तो आप अलग होकर लोगोंको अपने तरीकेसे तालीम दीजिए। इस तरहसे ही आप हमारे ध्येयको आगे बढ़ायेंगे। यह रास्ता सीधा, वीरता का और स्फूर्तिदायक होगा, क्योंकि इस तरहसे लोग विभिन्न तरीकोंका मूल्यांकन कर सकेंगे। अगर आप कांग्रेसके मंचसे ही कांग्रेसके कार्यक्रमके विरुद्ध बोलेंगे, खासकर ऐसे समय पर जब कांग्रेसके पूरे संगठनने एक लश्करका रूप धारण कर लिया है, तो जनताके मनमें जरूर उलझन पैदा होगी। चाहे एक व्यक्ति सत्याग्रहमें भाग ले या अनेक, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। जो बाकी रहें उन्हें जैसी कहा जाये वैसी मदद देनी ही चाहिए।'

योजना सिर्फ यह है कि श्री विनोबा भावे प्रत्यक्ष कार्रवाई शुरू करेंगे और यह उनतक ही सीमित रहेगी। और चूँकि हम इसे व्यक्तिगत सविनय अवज्ञासे आगे नहीं ले जाना चाहते और फिलहाल विनोबाजी के सिवा और किसीको इसमें शामिल करना नहीं चाहते, वह उनके द्वारा इस तरह चलाई जायेगी कि दूसरे लोग सीधे या परोक्ष रूपसे उसमें भाग नहीं लेंगे। परन्तु चूँकि सत्याग्रह वाणी-स्वातन्त्र्यके सम्बन्धमें है, इसलिए जनता कुछ हदतक उसमें आ ही जायेगी। यह लोगोंकी इच्छापर होगा कि वे विनोबाजी की बात सुनें या न सुनें।

परन्तु बहुत-कुछ इस बातपर निर्भर करेगा कि सरकार क्या करना चाहती है। सविनय अवज्ञाको व्यक्तियोंतक और फिलहाल तो एक ही व्यक्तितक सीमित रखने के सब प्रयत्न होते हुए भी, सरकार चाहे तो उनके भाषणका सुनना या उनके लेखोंका पढ़ना जुर्म करार देकर एक नाजुक स्थिति पैदा कर सकती है। मगर मेरा यह खयाल और विश्वास है कि वह अपने लिए कोई मुसीबत पैदा करना नहीं चाहती, हालांकि सामने आनेवाली हर मुसीबतका मुकाबला करने की उसकी पूरी-पूरी तैयारी है।

मैंने श्री विनोबाके साथ कई योजनाओंपर चर्चा की है, ताकि हम तमाम अनावश्यक टकराव और जोखिमोंसे बचे रहें। विचार यह है कि तमाम कार्रवाई मनुष्यसे जितनी बन पड़े उतनी अहिंसक बनाई जाये। एक आदमीकी हिंसा — चाहे वह प्रत्यक्ष हो चाहे परोक्ष — एक हदके बाहर नहीं जा सकती, परन्तु उस हदके अन्दर वह जरूर प्रभावशाली हो सकती है। एक व्यक्तिकी अहिंसक कार्रवाईका अहिंसामें विश्वास न रखनेवाला तिरस्कार कर सकता है या उसकी हँसी उड़ा सकता है। सच्ची बात यह है कि हिंसात्मक कार्यका प्रभाव तो गणित द्वारा मापा जा सकता है, परन्तु अहिंसक कार्यके प्रभावका माप ऐसे नहीं हो सकता। अक्सर देखने में आया है कि जब-कभी इसका प्रयत्न किया गया, वह निष्फल ही हुआ। यह अभी देखना है कि मैं विशुद्ध अहिंसाका उदाहरण प्रस्तुत करने में कहाँतक कामयाब होऊँगा।

श्री विनोबा भावे कौन हैं? उन्हें ही इस कामके लिए क्यों चुना गया है? वे एक अंडर-ग्रेजुएट हैं। सन् १९१५[1] में मेरे हिन्दुस्तान लौटने पर उन्होंने कॉलेज छोड़ दिया था। वे संस्कृतके पंडित हैं। उन्होंने आश्रममें उसकी स्थापनाके समय ही प्रवेश[2] किया था। वे उसके सबसे पहले सदस्योंमें से हैं। अपनेको अधिक योग्य बनाने की दृष्टिसे वे अपने संस्कृतके अध्ययनको आगे बढ़ाने के लिए एक वर्षकी छुट्टी लेकर चले गये थे। एक वर्ष बाद ठीक उसी घड़ी जब उन्होंने एक वर्ष पहले आश्रम छोड़ा था, वे चुपचाप आश्रममें फिर आ पहुँचे। मैं तो भूल भी गया था कि उन्हें उस दिन आश्रममें वापस पहुँचना था। वे आश्रममें सब प्रकारकी सेवा — रसोईसे लेकर पाखाना-सफाईतक — में हिस्सा ले चुके हैं। उनकी स्मरणशक्ति आश्चर्यजनक है और वे स्वभावसे ही अध्ययनशील हैं। पर अपने समयका ज्यादासे-ज्यादा हिस्सा वे कातने में ही लगाते हैं, और उसमें ऐसे निष्णात हो गये हैं कि बहुत ही कम लोग उनकी तुलनामें रखे जा सकते हैं। उनका विश्वास है कि व्यापक हाथ-कताईको सारे कार्यक्रमका केन्द्र बनाने से ही गाँवोंकी गरीबी दूर हो सकती है और उनमें नवजीवन संचार हो सकता है। स्वभावसे ही शिक्षक होने के कारण उन्होंने श्रीमती आशादेवीको[3] दस्तकारीके द्वारा बुनियादी तालीमकी योजनाका विकास करने में बहुत मदद पहुँचाई है। श्री विनोबाने कताईको बुनियादी दस्तकारी मानकर एक पुस्तक लिखी है। वह बिलकुल मौलिक चीज है। उन्होंने हँसी उड़ानेवालोंको भी यह सिद्ध कर दिखाया है कि कताई एक ऐसी अच्छी दस्तकारी है जिसका उपयोग बुनियादी तालीममें बखूबी किया जा सकता है। तकली-कताईमें तो उन्होंने क्रान्ति ही ला दी है और उसके अन्दर छिपी हुई अबतक अज्ञात शक्तियोंको खोज निकाला है। पूरे हिन्दुस्तानमें हाथ-कताईमें इतनी सम्पूर्णता किसीने हासिल नहीं की जितनी उन्होंने की है।

उनके हृदयमें छुआछूतकी बू तक नहीं है। कौमी एकतामें उनका उतना ही उत्साह और विश्वास है जितना कि मेरा। इस्लाम धर्मकी खूबियोंको समझने के लिए उन्होंने एक वर्ष तक 'कुरान शरीफ' का — मूल अरबीमें — अध्ययन किया। इसके लिए उन्होंने अरबी सीखी। अपने पड़ोसी मुसलमान भाइयोंसे सजीव सम्पर्क बनाये रखने के लिए उन्होंने इसे आवश्यक समझा।

उनके पास उनके शिष्यों और कार्यकर्त्ताओंका एक ऐसा दल है जो उनके इशारेपर हर तरहका बलिदान करने को तैयार है। एक युवकने[4] अपना जीवन कोढ़ियोंकी सेवामें लगा दिया है। उसको इस कामके लिए तैयार करने का श्रेय श्री विनोबाको ही है। औषधियोंका कुछ भी ज्ञान न होने पर भी अपने कार्यमें अटल श्रद्धा होने के कारण उसने कुष्ठरोगकी चिकित्साको पूरी तरह समझ लिया है। उसने उनकी सेवाके लिए कई चिकित्सालय खुलवा दिये हैं। उसके परिश्रमसे सैकड़ों कुष्ठ-

१. साधन-सूत्र में "१९१६" दिया गया है।

२. ७ जून, १९१६ को

३. आशादेवी आर्यनायकम्

४. मनोहर दीवान

रोगी अच्छे हो गये हैं। हाल ही में उसने कुष्ठरोगियोंके इलाजके सम्बन्धमें एक पुस्तिका मराठीमें लिखी है। विनोबा कई वर्षोंतक वर्धा-स्थित महिला आश्रमके संचालक भी रहे हैं। दरिद्रनारायणकी सेवाका प्रेम उन्हें वर्धाके पास एक गाँवमें खींच ले गया। अब तो वे और दूर वर्धासे पाँच मीलपर पवनार नामक गाँवमें जा बसे हैं और वहाँसे उन्होंने अपने तैयार किये हुए शिष्योंके द्वारा गाँववालोंके साथ सम्पर्क स्थापित कर लिया है।

वे मानते हैं कि हिन्दुस्तानके लिए राजनीतिक स्वतन्त्रता आवश्यक है। इतिहास का उन्होंने बहुत सही अध्ययन किया है। उनका विश्वास है कि गाँववालोंको रचनात्मक कार्यक्रमके बगैर सच्ची आजादी नहीं मिल सकती और यह कि रचनात्मक कार्यक्रमका केन्द्र खादी है। उनका विश्वास है कि चरखा अहिंसाका बहुत ही उपयुक्त बाह्य प्रतीक है। उनके जीवनका तो वह एक अंग ही बन गया है। उन्होंने पिछली सत्याग्रहकी लड़ाइयोंमें सक्रिय भाग लिया था। राजनीतिके मंचपर वे कभी प्रकाशमें आये ही नहीं। कई साथियोंकी तरह उनका यह विश्वास है कि सविनय अवज्ञाकी पृष्ठभूमिमें शान्त रचनात्मक कार्य कहीं ज्यादा कारगर होता है, बनिस्बत राजनीतिक मंचके, जहाँ पहले ही काफी जमघट है। उनका पूर्ण विश्वास है कि रचनात्मक कार्यमें हार्दिक विश्वास और सक्रिय भाग लिये बगैर अहिंसक प्रतिरोध सम्भव नहीं है।

विनोबा युद्धके पूरी तरह विरोधी हैं। परन्तु वे अपनी अन्तरात्माकी तरह उन लोगोंकी अन्तरात्माकी भी उतनी ही इज्जत करते हैं जो युद्धमात्रके विरोधी तो नहीं हैं, परन्तु जिनकी अन्तरात्मा इस मौजूदा युद्धमें शरीक होने की इजाजत नहीं देती। यद्यपि श्री विनोबा दोनों दलोंके प्रतिनिधि हैं, तो भी यह हो सकता है कि केवल मौजूदा युद्धका विरोध करनेवाले दलका एक और प्रतिनिधि चुनने की मुझे आवश्यकता लगे।

जनताके समक्ष अपना चयन उचित सिद्ध करने के लिए विनोबाका यह परिचय सविस्तार देना जरूरी था। शायद मेरे जीवनमें यह मेरा चलाया हुआ अन्तिम सत्याग्रह होगा। इसलिए स्वाभाविक रूपसे मैं चाहूँगा कि यह जितना दोषरहित बनाया जा सकता है, बनाया जाये। इसके अलावा कांग्रेस यह ऐलान कर चुकी है कि जहाँतक उसकी हस्ती जोखिममें नहीं पड़ती, वह यथासम्भव ऐसा कोई काम नहीं करेगी जिससे सरकार अड़चनमें पड़े। इस कारण भी मुझे यह कोशिश करनी पड़ी कि सिर्फ संख्याकी तरफ ध्यान न देकर उच्चसे-उच्च कोटिके लोगोंको ही सामने लाऊँ।

परन्तु अगर हम सारी कौमकी तो बात क्या, सारी कांग्रेसका भी प्रतिनिधित्व न कर पाये तो विनोबा और मैं दोनों असफल होंगे। और हम उनका प्रतिनिधित्व तबतक नहीं कर पायेंगे जबतक कि वे निरन्तर रचनात्मक कार्यक्रमको अमलमें लाकर पूरे दिलसे हमें अपना सहयोग न देंगे। हमें सिर्फ जबानी सहयोग नहीं चाहिए, बल्कि हमें हमारे कार्यमें सहयोग चाहिए। इस सहयोगके लक्षण होंगे कताईमें चमत्कारी

वृद्धि, अस्पृश्यताका सम्पूर्ण लोप, विभिन्न जातियोंमें उत्तरोत्तर बढ़ता पारस्परिक मैत्रीभाव, और जीवनके हर क्षेत्रमें अधिकाधिक न्यायवृत्ति। जबतक समाजमें शुद्धतम न्यायवृत्ति और समभावनाकी हवा न फैलेगी तबतक यहाँ अहिंसात्मक वातावरण पैदा होनेवाला नहीं है। सबसे ज्यादा जरूरी यह है कि मेरी मंजूरीके बगैर कहीं भी कोई सविनय अवज्ञा न हो। यह एक निहायत जरूरी फर्ज है और कांग्रेसके हर सदस्यका धर्म है कि इसपर अमल करे। अगर यह भंग होता है तो उसका मतलब यह है कि सहयोग नहीं मिल रहा है। तब विनोबा तथा मैं जनताके प्रतिनिधि होने का दावा नहीं कर सकेंगे। इसके विपरीत मैं दावेसे कह सकता हूँ कि जैसा हार्दिक सहयोग मुझे चाहिए वैसा सहयोग यदि मुझे मिल गया, तो न सिर्फ वाणीकी स्वतन्त्रताके सवालपर हमारी जीत होगी बल्कि हम आजादीके भी बहुत नजदीक पहुँच जायेंगे। मैं लोगोंसे कहूँगा कि अगर हो सके तो वे मेरे कहे पर विश्वास रखें। वे उससे कुछ खोयेंगे नहीं, बल्कि वे पायेंगे कि उन्होंने सत्य और अहिंसा द्वारा आजादी हासिल करने के आन्दोलनमें काफी सहायता दी है।

मैं यहाँ फिरसे एक बात साफ कर देना चाहता हूँ कि हमारे सामने सवाल क्या है। ऊपर-ऊपरसे देखें तो वह इतना छोटा है कि आदमीको ताज्जुब होता है — यानी युद्धमात्रके विरुद्ध या मौजूदा युद्धमें मदद देने के विरुद्ध प्रचारका अधिकार हमें चाहिए। इन दोनों किस्मके लोगोंको उनकी अन्तरात्मा युद्धका विरोध करने पर मजबूर करती है। दोनों इसे अपना एक अमूल्य अधिकार मानते हैं। अगर ब्रिटिश सरकारके इस दावेमें कुछ भी सचाई है कि अमली तौरपर हिन्दुस्तान स्वतन्त्र है, तो इन दो हकोंको स्वीकार करने से और उनपर अमल होने देने से उसका कुछ बिगड़ने का नहीं है। इसके विपरीत, अगर हिन्दुस्तान वास्तवमें भी वैसा ही पराधीन है जैसा कि कानूनकी दृष्टिसे है, तो फिर जो भी मदद ब्रिटिश सरकारको यहाँसे मिलती है वह ऐच्छिक नहीं बल्कि बेगार-रूप ही मानी जानी चाहिए। यह जीवन-मरणका युद्ध जबरदस्तीसे भर्ती किये हुए सैन्य-दलोंसे नहीं जीता जा सकता, चाहे वे कितने ही बड़े क्यों न हों। अगर उनके पीछे वास्तवमें आजाद हिन्दुस्तानका नैतिक बल होगा तो ही उनकी जीत होगी। अहिंसाकी नीतिपर चलनेवाली कांग्रेस ब्रिटेनका बुरा नहीं चाह सकती। परन्तु वैसे ही वह ब्रिटेनको हथियारों द्वारा मदद भी नहीं दे सकती, क्योंकि उसे खुद अपनी स्वतन्त्रता शस्त्रबलसे नहीं बल्कि शुद्ध अहिंसा द्वारा ही लेनी है। और अगर इस संकटकी घड़ीमें कांग्रेस परिणामसे डरकर या किसी दूसरे कारणसे दबकर अहिंसात्मक उपायोंसे अहिंसाका प्रचार छोड़ देती है, तो उसकी कुछ हस्ती ही बाकी नहीं रहती। इस तरह जब हम मामलेमें गहरा उतरते हैं तो पाते हैं कि यह हमारे लिए जीवन-मरणका सवाल है। हम इस अधिकारको सिद्ध कर सकें तो हमारी भलाई है। परन्तु अगर वह हम न कर सकें तो हम सबकुछ खो देंगे। क्योंकि तब अहिंसक उपायोंसे हमें स्वराज्य मिल ही नहीं सकता।

मैं जानता हूँ कि सारा हिन्दुस्तान इस बारेमें एकमत नहीं है। हिन्दुस्तानमें एक वर्ग ऐसा है जो युद्ध-वृत्ति रखता है और अंग्रेज सरकारको मदद देकर युद्धकी

कला सीखना चाहता है। इसलिए कांग्रेस यह नहीं चाहती कि गोला-बारूदके कारखानों या सिपाहियोंके बैरकोंपर घेरा डाला जाये और लोगोंको उनकी इच्छानुसार काम करने से रोका जाये। हम हिन्दुस्तानके लोगोंसे इतना ही कहना चाहते हैं कि अगर उन्हें अहिंसक उपायोंसे स्वराज्य लेना है तो वे ब्रिटिश सरकारको इस युद्धमें फौजी मदद नहीं दे सकते।

युद्धमें शरीक होने के विरोधमें प्रचार करने का हमारा यह अधिकार सरकार स्वीकार नहीं करती, और हमें इसके विरुद्ध संघर्ष करना है। इसलिए, हालांकि यह अधिकार सिर्फ वे ही लोग इस्तेमाल करेंगे जिनको मैं इस कामके लिए खास तौर पर चुनूंगा, परन्तु कांग्रेसके दूसरे सब कार्य पहलेकी तरह ही चलते रहेंगे, बशर्ते कि सरकार उसमें दखल न दे।

मुझसे सवाल पूछा गया है कि अगर मैं सत्याग्रहकी शुद्धताको इतना महत्त्व देता हूँ तो मैं खुद सविनय अवज्ञा क्यों नहीं करता? जैसा मैं पहले कह चुका हूँ, पहलेकी तरह इस बार मैं यह इसलिए नहीं करना चाहता कि कांग्रेसकी किसी और कार्रवाईके बनिस्बत मेरे कैद होने से सरकारकी परेशानी और भी बढ़ेगी। मैं इसलिए भी बाहर रहना चाहता हूँ कि अगर कोई असाधारण स्थिति खड़ी हो जाये तो उसे मैं काबूमें ला सकूँ। सम्भव है कि मेरा जेल जाना इस बातके लिए एक इशारा समझा जाये कि मेरे बाद सब कांग्रेसी जेलका दरवाजा खटखटाएँ। आम जनता शायद मेरी करनी और कथनीके बारीक अन्तरको न समझ सके। अन्तमें, मैं यह भी नहीं जानता कि आगे जाकर मामला क्या शक्ल अख्तियार करेगा। अगला कदम मैं खुद नहीं जानता। सरकारने क्या योजना कर रखी है, यह भी मैं नहीं जानता। मैं तो श्रद्धापर चलनेवाला हूँ। मेरा आधार मात्र ईश्वर है। मेरे लिए एक कदम ही काफी है। उसके आगेके कदम समय आने पर ईश्वर खुद मुझे दिखा देगा। और किसे मालूम है कि मुझे सिर्फ ब्रिटेन और हिन्दुस्तानके दरम्यान ही नहीं, बल्कि सारे जगतकी युद्धरत कौमोंके बीच सुलह और शान्तिकी स्थापनाका निमित्त नहीं बनना है? मुझे आशा है कि कमसे-कम जो लोग यह मानते हैं कि मेरी श्रद्धा मात्र ढोंग नहीं है, बल्कि मैं ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ इस तथ्यसे भी ज्यादा वास्तविक है, वे मेरी इच्छामें अहंकारकी झलक नहीं देखेंगे।

सेवाग्राम, १५ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-१०-१९४०

८४. एक ब्रिटिश अनुमोदन

सोसायटी ऑफ फ्रेंड्सके मन्त्री श्री स्टीफन जे० थॉर्नने मुझे यह पत्र भेजा है:

एक मित्र मण्डलीके हम लोग हर अंग्रेजके नाम आपकी प्रभावशाली अपीलके[1] लिए आपके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करना चाहते हैं। आपने हर अंग्रेजसे अहिंसाका मार्ग अपनाने और युद्ध समाप्त कराने की अपील की है। आपके वक्तव्यका संक्षिप्त पाठ मिलते ही हम लोग तुरन्त एकत्र हुए थे; बादमें हमने उसका पूरा पाठ भी प्राप्त कर लिया।

सहायता करने के आपके प्रस्तावके बारेमें ब्रिटिश सरकारका उत्तर आपको वाइसरायके जरिये मिल चुका है। आपको पूरी परिस्थितिकी जानकारी है, इसलिए उस उत्तरका अर्थ आप भलीभाँति समझ सकते हैं। भयानक राष्ट्रीय संकट और आसन्न आक्रमणकी इस घड़ीमें अधिकांश ब्रिटेनवासियोंको आपका शस्त्र-त्यागका यह आह्वान कायरता तथा देशद्रोहके सिवा कुछ नहीं लगता। उनको लगता है कि यह आह्वान स्वतन्त्रता और न्यायके उन सिद्धान्तोंको त्यागकर, जो उनको अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यारे हैं, अपनी प्राणरक्षा करने का ही आह्वान है। परन्तु शान्ति-आन्दोलनसे सम्बद्ध हम लोगोंको, जो अहिंसामें आपकी-जैसी ही निष्ठा रखते हैं, आपने एक विकट चुनौती दी है। इस चुनौतीको स्वीकार करने के लिए हम लोगोंमें से शायद ही कोई पूरी तरह तैयार हो; और हम यह भी खूब समझते हैं कि अपने साथी देशवासियोंको इस "ज्यादा शानदार मार्गके" महत्त्व और इसकी व्यावहारिकताका विश्वास दिलाने में हम असमर्थ रहे हैं। अहिंसक प्रतिरोधकी आपकी अपनी कार्य-विधिको, विशेषकर उसके निश्चित तथा शमनकारी प्रभावको, पाश्चात्य देशोंके लोग नहींके बराबर ही समझ पाये हैं। अन्य किसी कारणके अतिरिक्त, यह भी एक प्रमुख कारण है कि आपकी अपीलकी यहाँ किसी बड़े पैमानेपर कोई अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं हुई है।

ब्रिटिश सरकारका उत्तर हालाँ कि निराशाजनक ही रहा होगा, पर हम लोग आपके सहायता-प्रस्तावका पूरा-पूरा लाभ उठाने की फिक्रमें हैं। आपकी अपीलने उस भावनाको अभिव्यक्ति दी है जो, हमें निश्चय है, संसार-भरमें लोगोंके हृदयमें उठ रही है। हमारा विश्वास है कि यदि आप विश्वके कुछ धार्मिक नेताओंके नाम भी एक सन्देश भेजने को तैयार हो जायें और उनसे

१. देखिए खण्ड ७२, पृ० २६१-६४।

अनुरोध करें कि शीत ऋतुके साथ नई विपत्तियाँ आने से पहले ही परिस्थितिपर काबू पाने के लिए वे एक सम्मिलित प्रयास करें, तो यह इस दिशामें एक और कदम होगा।

हमें आशा है कि आप भविष्यमें जो भी वक्तव्य देंगे उसका पूरा पाठ हमको सीधे भेजकर हमारे साथ निकटतम सम्पर्क बनाये रखेंगे।

हृदयसे आपके मित्र,

होरेस जी० एलेक्जेंडर	पर्सी डब्ल्यू० बर्टलेट
अन्ना विडर	डब्ल्यू० मॉड ग्रेशॉ
रॉबर्ट डेविस	ए० रुथ फ्राई
कार्ल हीथ	एलिजाबेथ फॉक्स हॉवर्ड
जेम्स एच० हडसन	फ्रांसिस ई० पोलर्ड
जे० कुथबर्ट विघम	एलेक्जेंडर सी० विल्सन

पुनश्च :

'कौंसिल ऑफ क्रिश्चियन पैसिफिस्ट ग्रुप्स' इस पत्रका समर्थन करती है और इससे सम्बद्ध गहन विषयोंपर शीघ्र ही चर्चा करने की आशा रखती है।

मेरी अपीलके समर्थनके लिए मैं हस्ताक्षरकर्त्ताओंका आभारी हूँ। मैं उनको विश्वास दिलाता हूँ कि अनुकूल मानसिक वातावरण पाते ही मैं हस्ताक्षरकर्त्ताओंकी आशाके अनुरूप विश्वके धार्मिक नेताओंके नाम सन्देश भेजूँगा। यह बिलकुल स्पष्ट है कि नाजियों द्वारा अपनाये गये निपट अतिवादी मतान्ध तरीकेको ही देखकर लोग यह सोचने पर बाध्य हुए हैं कि केवल प्रतिहिंसा ही उनकी हिंसाके आतंकको रोकने में समर्थ हो सकती है। परन्तु मैंने यह विचार प्रस्तुत किया है कि प्रतिहिंसा मानव-स्वभावको और अधिक पाशविक बनाने में ही प्रतिफलित होगी। उग्र रोगोंके लिए उग्र औषध ही दरकार होती है। इस मामलेमें नाजी हिंसाका उपचार अहिंसाके अलावा दूसरा नहीं हो सकता।

सेवाग्राम, १६ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-१०-१९४०

८५. दो दृष्टिकोण

आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्डके सैनिकोंके आचरणको लेकर बम्बईके मेयर तथा गवर्नर महोदयके बीच हुए पत्र-व्यवहारका प्रकाशन इस बातका प्रमाण है कि न तो मेयरने गवर्नर महोदयको पत्र लिखने में तनिक भी विलम्ब किया और न गवर्नर महोदयने ही मेयरकी चेतावनीके बारेमें उनको उत्तर देने में।[1] यह इस तथ्यका भी अत्यन्त स्पष्ट उदाहरण है कि भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणोंसे देखने पर एक ही वस्तु सर्वथा भिन्न दिखाई पड़ती है। अंग्रेज मनोवृत्ति सैनिकोंके ऐसे कसूरोंको माफ कर देने की है जो साधारण नागरिकोंमें अक्षम्य माने जायेंगे। हिन्दुस्तानकी जनता सैनिकोंको ऐसी बला समझती है जिसे लाचारीमें बरदाश्त करना पड़ता है। उनकी हरकतोंको कोई पसन्द नहीं करता। इसलिए यह अफसोसकी बात ही है कि मेयरके अति शिष्ट तथा संयत पत्रपर ध्यान देने की सराहनीय तत्परता दिखाते हुए भी गवर्नर महोदयने अपने उत्तरके एक अनुच्छेदमें उस आचरणका बचाव किया है जिसकी शिकायत की गई थी। इस सम्बन्धमें मेरे पास जो अनेक पत्र आये हैं उनसे यह प्रकट नहीं होता कि पत्र-लेखकोंने सैनिकोंके आचरणको हलके तौरपर लिया है। सैनिकोंकी नजरें जिन लड़कियोंपर पड़ी थीं, वे इतनी निर्मल थीं कि अपने साथ की गई छेड़खानीपर नाराजी प्रकट किये बिना वे रह ही नहीं सकती थीं। मेरी समझमें यह बात कभी नहीं आई कि प्राण लेने की कला जाननेवालोंके प्रति इतनी क्षमाशीलता क्यों दिखाई जाती है, जब कि सैनिकोंसे कहीं कठोर एवं दुष्कर कार्य करनेवाले लोग भी न तो ऐसी क्षमाशीलताकी माँग करते हैं और न पाते ही हैं।

सेवाग्राम, १६ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-१०-१९४०

१. देखिए पृ० ६९-७१, ९४ और १०२-१०३ भी।

८६. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको

१६ अक्तूबर, १९४०

यह पूछने पर कि वर्त्तमान आन्दोलन नमक-सत्याग्रहसे[1] किस बातमें भिन्न होगा और विशेषकर यह कि क्या ब्रिटिश सरकारको किसी कठिन स्थितिमें न पड़ने देने का उनका विचार आगेकी उनकी सभी योजनाओंका एक प्रमुख या निर्णायक तत्त्व भी बनेगा, गांधीजी ने उत्तर दिया:

वह मेरी प्रत्येक योजनाका प्रधान तत्त्व रहेगा।

गांधीजी से आगे पूछा गया कि क्या उनके दिमागमें भारत और उन उपनिवेशोंकी स्थितिमें पाये जानेवाले फर्कको कोई बात है जहाँ जनरल हर्टजॉग और श्री डी वलेरा[3] युद्धसे तटस्थ रहने या उसमें भाग लेने का विरोध करने की बात कहने पर भी जेलसे बाहर बने हुए हैं? इसपर गांधीजी ने कहा:

भारत और उनकी स्थितिमें जो बड़ा भारी फर्क है वह सचमुच पीड़ाजनक है, यहाँतक कि ब्रिटिश घोषणाओंको जब-जब कसौटीपर कसा गया, वे निकम्मी साबित हुई हैं।

इस प्रश्नके उत्तरमें कि क्या यह तथ्य अर्थपूर्ण है कि वे वाइसराय द्वारा पूना-प्रस्तावके ठुकराये जाने तक रुके रहे और उसके बाद ही उन्होंने अपना कदम उठाया, और क्या वे दोनों ही विचारोंके कांग्रेसियोंका नेतृत्व कर रहे हैं — उनका जो गांधीजी के इस मतसे सहमत हैं कि सभी युद्ध अहिंसाके सिद्धान्तके उल्लंघन हैं, और उनका भी जो सोचते हैं कि राष्ट्रीय सरकारकी उनकी माँग ठुकरा दी जाने के कारण वे इस युद्धमें हाथ बँटाने का विरोध करने पर बाध्य हो गये हैं — गांधीजी ने कहा:

जहाँतक मेरी बात है, उस तथ्यका कोई विशेष महत्त्व नहीं है। परन्तु मैं दोनों ही विचारोंके कांग्रेसियोंका नेतृत्व कर रहा हूँ।

गांधीजी ने कहा कि जब उनके द्वारा निर्धारित मार्गपर सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलता रहेगा, आम कांग्रेसी अपनी सारी शक्ति रचनात्मक कार्यक्रममें लगायेंगे, और इसमें किसी भी तरहकी छूट देने का उनका कोई विचार नहीं

१. १२ मार्च, १९३० का; देखिए खण्ड ४३।

२. जेम्स बी० एम० हर्टजॉग, दक्षिण आफ्रिकाके प्रधान मन्त्री, १९२४-३९

३. एमन डी वलेरा, आयरलैण्डके प्रधान मन्त्री, जो बादमें राष्ट्रपति बने

है। एक और उपवासके सम्बन्धमें अपने पूर्वाभासका उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा :

यह मार्ग मैं किन परिस्थितियोंमें और किस अवसरपर अपनाऊँगा, यह मैं नहीं जानता। और ऐसा कहते समय मेरे मनमें कोई दुराव-छिपाव नहीं है। मैं उपवासको टालना चाहता हूँ।[१]

युद्धके आरम्भके समयके उनके रुख और उनके मौजूदा रुखमें असंगति है, इस आरोपके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि इसे वे पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं :[२]

अब मेरे सामने एक दूसरी ही स्थिति है और यह चाहना सर्वथा असंगत होगा कि कांग्रेस आत्महत्या कर ले।

स्वतन्त्रताका उपयोग ब्रिटेनको नैतिक समर्थन देने के लिए किया जायेगा। भारत चाहेगा कि ब्रिटेनको सफलता मिले — ऐसे ब्रिटेनको जिसने भारतके प्रति अपना दायित्व पूरा किया हो।

उन्होंने जोर देकर कहा कि जो भी लोग ब्रिटेनका सक्रिय समर्थन करना चाहेंगे, उनके प्रयासोंमें जरा भी कोई बाधा कभी नहीं डाली जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १७-१०-१९४०

८७. तार : वाइसरायके निजी सचिवको

१७ अक्तूबर, १९४०

वाइसरायके निजी सचिव
वाइसराय शिविर

मैं देखता हूँ कि सेंसरने समाचारपत्रोंको दिये गये मेरे वक्तव्योंमें से वे वाक्य निकालने शुरू कर दिये हैं जिनको वे आपत्तिजनक मानते हैं। मुझे पता नहीं कि यह केन्द्र द्वारा निर्धारित नीतिके तहत किया जा रहा है या यह स्थानीय अधिकारियोंका ही काम है। मैं ऐसा कुछ भी प्रकाशित नहीं कर सकता जिसे मेरी सहमतिके विना काटा-पीटा जाये। उससे जो खतरा है वह स्पष्ट ही है। खास-खास शब्दों या वाक्योंको निकाल देने से सारा अर्थ बदल सकता है। यदि वक्तव्योंकी काट-छाँट जरूरी समझी गई है, तो शायद आगे चलकर इसे 'हरिजन' के लेखोंपर भी लागू किया जायेगा।

१. रिपोर्टके अनुसार गांधीजी ने आगे यह वाक्य "एक क्षण सोचकर" कहा था।
२. देखिए पृ० ३६-३७।

यदि यह निश्चित रूपसे मालूम हो सके कि सरकारकी नीति क्या है तो मैं उसीके मुताबिक अपना मार्ग निर्धारित कर सकता हूँ। मैं अपना लेखन उसी सूरतमें जारी रख सकता हूँ जब उसमें कोई दखल न दिया जाये। कृपा हो, यदि शीघ्र उत्तर दें।[1]

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५१) से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

८८. तार : रुइकर तथा अन्य लोगोंको[2]

१७ अक्तूबर, १९४०

क्या आपमें सभी योग्यताएँ हैं? क्या आप रचनात्मक कार्यक्रममें विश्वास रखते हैं?

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य: नारायण म० देसाई

८९. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१७ अक्तूबर, १९४०

चि० अमला,

बहुत दिनों बाद तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी तबीयत क्यों खराब रहती है? दमेका उपचार होना चाहिए। कोई इलाज कर रही हो क्या?

बापूके आशीर्वाद

मार्गरेट स्पीगल
कोलाबा
बम्बई

मूल गुजरातीसे: स्पीगल पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. अपने १९ अक्तूबरके उत्तरमें वाइसरायके निजी सचिवने लिखा था: "आपके १७ तारीखके तारके लिए धन्यवाद। आपके तारका जवाब आज दिल्ली पहुँचने तक स्थगित रखा था। मैंने यहाँके विभागोंसे इस बातकी पुष्टि कर ली है कि समाचारपत्रोंको दिये गये आपके वक्तव्योंको सेंसर करनेके लिए कोई आदेश जारी नहीं किये गये हैं।"

२. महादेव देसाईके अनुसार, यह तार अखिल भारतीय फॉरवर्ड ब्लाकके अध्यक्ष आर० एस० रुइकर, पटवर्धन तथा खाण्डेकरके एक तारके उत्तरमें भेजा गया था, जिसमें उन्होंने गांधीजी से व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेकी अनुमति माँगी थी।

९०. पत्र : कंचन मु० शाहको

१७ अक्तूबर, १९४०

चि० कंचन,

तेरा पत्र मिला। तू थोड़े दिनमें बिलकुल अच्छी हो जायेगी। मुझे पत्र लिखती रहना। सुशीलाबहन[1] को अपनी सब बात बताना। अपनी मानसिक चिन्ताओंकी बात भी कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२८०) से। सी० डब्ल्यू० ७१०४ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

९१. पत्र : शैलेन्द्रनाथ चटर्जीको

सेवाग्राम, वर्धा
१८ अक्तूबर, १९४०

प्रिय शैलेन्द्र,

यदि अखिल भारतीय चरखा संघके कामका हर्ज किये बिना तुम यहाँ आ सकते हो तो आ जाओ। मैं देखूंगा कि तुम्हारे लिए क्या किया जा सकता है। वर्धामें एक कमर्शियल कॉलिज भी है; जरूरत पड़े तो तुम उसमें योग्यता प्राप्त कर सकते हो। तुम्हें पर्याप्त कमा सकना चाहिए। पर तुम्हें अपनी योग्यताओंके ही बलपर ऊपर उठना चाहिए।

तुम्हारा,
बापू

श्री शैलेन्द्र चटर्जी
ई ७६, कॉलेज स्ट्रीट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०१६६) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१. डॉ० सुशीला नैयर

९२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेवाग्राम
१८ अक्तूबर, १९४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। स्त्रियोंके लिए भी स्थान अवश्य है।[1] लेकिन यह संघर्ष मुझे और देशको कहाँ ले जायेगा, मैं नहीं जानता। सब भगवान्‌के हाथमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४१२) से। सी० डब्ल्यू० ६८५१ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

९३. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

१८ अक्तूबर, १९४०

चि० मुन्नालाल,

अच्छा किया जो तुमने पत्र लिखा। कंचनकी खबर मुझे मिलती रहती है। उसकी देखभाल ठीक हो रही है। उसका आधा भोजन सुशीला घरसे भेजती है और आधा अस्पतालसे मिलता है। चिन्ताकी जरा भी कोई बात नहीं है। उसके भाईको लिखना चाहो तो लिख दो। वह खुद कहीं ठहर जायेगा और जब उसे देखने जाना होगा, चला जायेगा। वैसे, मैं नहीं समझता कि किसीके जानेकी जरूरत है। लेकिन तुम्हारी इच्छा हो, तो जाना। सुशीलाबहन घरकी-जैसी है और जिम्मेदार है। पंजाबके बारेमें चिन्ताकी कोई बात नहीं है। कुँवरजीकी बात मैं भूल ही गया था। तुमने जो कहा था, उसीके आधारपर मैंने वह कहा था। तुम्हें एक समय सन्देह था कि उनकी संगतिका परिणाम बुरा हो सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५२७) से। सी० डब्ल्यू० ७१०३ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१. प्रेमाबहनने पूछा था कि वैयक्तिक सत्याग्रहमें स्त्रियोंके लिए स्थान है या नहीं।

९४. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेवाग्राम, वर्धा
१९ अक्तूबर, १९४०

चि० शर्मा,

आजका सी० डी० [सविनय अवज्ञा] और पुरानेमें बहुत फर्क है। शायद ही और किसीको बुलाना पड़े।[1] तुमारा नाम तो मेरे पास है ही, लेकिन कोई खास तैयारी न की जाय। ऐसा समझो कि किसीको बुलाया नहिं जायगा। सब रचनात्मक कार्य करते रहें।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २९०-९१ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

९५. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेवाग्राम, वर्धा
२० अक्तूबर, १९४०

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपके तारके[2] लिए मैं आपका अत्यधिक आभारी हूँ।

मुझे तो आशा थी कि जारी की गई हिदायतें स्थानीय ही होंगी। आपको तार भेजने के बाद मुझे अब यह खबर भी मिली कि समाचार एजेंसियोंको जतला दिया गया है कि वे मेरे सन्देशोंको सीधे वितरित न करें, जैसा कि वे अबतक करती रही हैं। इन सभी सन्देशोंको अब वितरित करने से पहले सेंसरके लिए दिल्लीके प्रधान कार्यालयको भेजना होगा।

रजिस्टर्ड प्रकाशन-संस्थाओंको मिले नोटिसोंकी एक प्रति भी मैं इसके साथ आपको भेज रहा हूँ। व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा पूरे तौरपर मेरी कड़ी देखरेखमें की जा रही है और मैं इसकी गतिविधियोंके बारेमें आम जनताको जानकारी देते रहना चाहता हूँ। अब इस नोटिसको देखते हुए तो मैं कोई भी चीज छापने के

१. विनोबा भावेके अलावा, जिन्होंने १७ अक्तूबर, १९४० को व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आरम्भ की थी।

२. यह तार वाइसरायके निजी सचिवने भेजा था; देखिए पृ० ११९, पा० टि० १।

लिए स्थानीय छापेखानेको भेजते डरता हूँ, क्योंकि यदि मैंने कुछ भेजा और छापने का आर्डर स्वीकार कर लिया गया तो स्थानीय छापेखानेको, जो विशुद्ध रूपसे व्यावसायिक संस्था है, उसका दण्ड भुगतना पड़ सकता है। और इसी कारण मैं अपना कोई भी सार्वजनिक वक्तव्य भेजने से हिचकता रहा हूँ। ऐसे वक्तव्य भेजने का मेरा खास मनशा यही होगा कि आन्दोलनको विनियमित किया जाये, जिससे कि शुद्ध अहिंसात्मकता सुनिश्चित की जा सके। जनताने अबतक पूरी तरह आशाके अनुकूल ही सहयोग दिया है। ट्रेड यूनियन कांग्रेसके बारेमें मैं पूरे तौरपर निश्चिन्त नहीं था। लेकिन उसके अध्यक्ष मुझसे मिलने आये थे और उन्होंने मुझे आश्वस्त किया है कि मेरी सहमतिके बिना राजनीतिक किस्मकी कोई हड़ताल नहीं की जायेगी।

श्री विनोबा भावेके भाषण बहुत ही ऊँचे धरातलसे उद्भूत हुए हैं।[1] मैं महादेवको उनके पीछे-पीछे भेजता रहा हूँ, ताकि उनके भाषणोंका पूरा-पूरा विवरण मुझे मिलता रहे। वे बहुत ही सख्त अनुशासनवादी हैं और इसलिए कठिनसे-कठिन हिदायतोंका पूरा पालन करते हैं। उन्होंने बिना तैयारीके जो पहला भाषण दिया था वह वैसा नहीं था जैसा कि मैंने दिया होता। बिलकुल अलग-थलग, एकान्तमें रहनेके कारण उन्होंने हमारे बीच हुए पत्र-व्यवहारका अनुशीलन बारीकीसे नहीं किया था। इसलिए उन्होंने उसका बुरेसे-बुरा अर्थ लगाया था। मैंने उन्हें तुरन्त हिदायतें दीं कि हमारा नियम यह है कि विरोधीकी भाषाका अच्छेसे-अच्छा, अनुकूलतम अर्थ लगाया जाये। उन्होंने गलती मान ली और उसे सार्वजनिक रूपसे स्वीकार करके जल्दीसे-जल्दी अपनी भूल सुधार ली। और कल उन्होंने जो भाषण दिया उसमें आपत्तिके लायक कहीं कोई बात नहीं थी। वे जबतक जेलसे बाहर हैं, तबतक उनका मुख्य काम रचनात्मक कार्यक्रमकी आवश्यकतापर जोर देना ही रहेगा और दूसरे लोगों द्वारा की जा रही सविनय अवज्ञासे कोई सरोकार नहीं रहेगा (फिलहाल तो सविनय अवज्ञा स्वयं उनतक ही सीमित रहेगी)। मैं चाहूँगा कि ये सारी बातें कांग्रेसजनों और आम जनताकी जानकारीमें आयें। इनकी जानकारी विनम्र तथा अहिंसात्मक आचरण सिखाने के लिए उपयोगी रहेगी। और हालाँकि हम एक-दूसरेके विरुद्ध 'संग्राम-रत' हैं, फिर भी हम दोनों एक ऐसे सिद्धान्तका पालन कर सकते हैं जो मानव-जातिकी अपनी विशिष्टता है। परन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि इसके निर्णयका दारोमदार आपके ऊपर ही है। मैं तो पैरवी ही कर सकता हूँ।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७५८२) से। सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४०, खण्ड २, पृ० ३६ के अनुसार १७ अक्तूबर, १९४० को पालममें विनोबा भावेने करीब ३०० लोगोंके समक्ष अपने भाषणमें कहा कि "कांग्रेस नैतिक आधार पर ग्रेट ब्रिटेनको उसके युद्ध-प्रयत्नमें मदद नहीं देगी। उन्होंने इस बातपर ताज्जुब प्रकट किया कि ग्रेट ब्रिटेन प्रजातन्त्रके लिए लड़नेका दावा क्यों कर रहा है जब कि भारतको यही व्यवस्था देने से वह इनकार कर चुका है।"

२. वाइसरायके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

९६. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा
२० अक्तूबर, १९४०

चि० मीरा,

तुम्हारा बड़ा और अच्छा पत्र मिल गया। हाँ, मैंने सविनय अवज्ञा शुरू कर दी है। फिलहाल वह विनोबातक ही सीमित है। मैं कारावासको आमन्त्रित नहीं कर रहा हूँ। विनोबा अभी तक आजाद हैं। तुम चाहोगी तो तुम्हें समाचार भिजवाऊँगा। मैं न तो तुम्हें प्रलोभन दूंगा और न तुम्हारी शान्ति ही भंग करूँगा। तुम्हारा सब ठीक चल रहा है।

सप्रेम,

बापू

श्री मीराबहन
पालमपुर
जिला काँगड़ा
पंजाब

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६२) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००५७ से भी

९७. पत्र : अमृतलाल नानावटीको

सेवाग्राम, वर्धा
२० अक्तूबर, १९४०

भाई अमृतलाल,

मुझे अब सोनी रामजीसे क्या पूछना है? तुम्हीं उनसे चर्चा करके जो हो सके सो करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फ़ोटो-नकल (जी० एन० ६३१७) से

९८. पत्र : कंचन मु० शाहको

१९/२१ अक्तूबर, १९४०

चि० कंचन,

तू क्या वहां भी घबराती है? वहां तो तेरा अपना घर है। वहांसे तुझे अच्छी होकर ही आना है। कोई तकलीफ हो तो मुन्नालालको नहीं, मुझे बताना। आखिर मुन्नालाल मेरे जरिये ही तो सब करायेगा। मुन्नालालका पत्र जैसा-का-तैसा भेज रहा हूँ। जगदीशलालके बारेमें जो मैंने तुझसे कहा था वही है। तुझे सारे वहम और सारे डर मनसे निकाल देने चाहिए। मनमें प्रसन्न रहना चाहिए। चिन्ता छोड़ देनी चाहिए। भविष्यकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। और यह निश्चय रखना चाहिए कि अन्तमें सब ठीक होगा। मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

२१ अक्तूबर, १९४०

तेरा पत्र आज मिला। तू अवश्य अच्छी हो जायेगी। ज्यादा रहना पड़े, तब भी वहां तो तेरा घर ही है न? विनोबाको तीन महीनेकी कैदकी सजा हो गई है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२७९) से। सी० डब्ल्यू० ७१०५ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

९९. तार : लॉर्ड लिनलिथगोको

एक्सप्रेस

वर्धा

२१ अक्तूबर, १९४०

'हरिजन'को अट्ठारह तारीखको जारी किया गया नोटिस[1] मिला है कि विनोबाके सत्याग्रहके सिलसिलेमें दिल्लीके मुख्य प्रेस सलाहकारको पहले बताये बिना कुछ भी प्रकाशित न किया जाये। मैं कहना चाहूँगा कि यह समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रतामें गम्भीर हस्तक्षेप है। मुझे आशा है कि यह भारत सरकारकी सुविचारित नीतिका द्योतक नहीं है।

१. नोटिसके पाठके लिए देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० १३३-३५।

मेरी आशाका आधार आपका उन्नीस तारीखका कृपापूर्ण तार है जिसका उत्तर मैं पत्र द्वारा दे चुका हूँ।[1]

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५३) से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१००. तार: जवाहरलाल नेहरूको

वर्धागंज
२१ अक्तूबर, १९४०

जवाहरलाल नेहरू
फैजाबाद

विनोबा सुबह तड़के गिरफ्तार कर लिये गये। आज पेशी है। अगला कदम सोच रहा हूँ।

बापू

[अंग्रेजीसे]
गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४०। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१०१. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको

२१ अक्तूबर, १९४०

श्री विनोबा भावेको आज सुबह तीन बजेके बाद गिरफ्तार कर लिया गया है। इसकी तो उम्मीद थी ही। मैंने हड़ताल करने की सलाह नहीं दी, लेकिन लोग किसीके कहे बिना अपने-आप दुकानें बन्द करें, तो उसके लिए मैंने मना भी नहीं किया। मिसालके तौरपर, मैं वर्धाकी उन अनेकानेक संस्थाओंके प्रबन्धकोंकी इच्छा की उपेक्षा नहीं कर सका, जिनपर श्री विनोबाकी अमिट छाप मौजूद है। मालिकोंकी अपनी सहमतिके बिना कहीं भी काम बन्द नहीं किया जायेगा। अगला कदम क्या उठाया जाये, इसके बारेमें कांग्रेसजनोंको अधीरता नहीं दिखानी चाहिए।

१. देखिए पृ० १२३। प्रस्तुत तारके जवाबमें वाइसरायने लिखा था: "आपका २१ तारीखका तार मिला। मैंने गृह-विभागसे यह ठीक-ठीक पता कर लिया है कि हरिजन तथा अन्य सभी समाचारपत्रोंको जो हिदायतें जारी की गई थीं वे आदेशात्मक न होकर परामर्शके रूपमें थीं, जैसा कि आपके २० अक्तूबरके पत्रके साथ प्राप्त हुए एक पत्रमें संकेत था। आपके उस पत्रका जवाब मैं अलगसे दे रहा हूँ। हिदायतें जारी करनेका उद्देश्य सम्पादकोंका हित ही था, क्योंकि हानिकारक समाचारोंका प्रकाशन करने पर रक्षा कानून ३८ के अन्तर्गत कानूनी कार्रवाई की जा सकती है।"

व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाके दौरान प्रत्येक सत्याग्रहीका जेल जाना अपने-आपमें एक सम्पूर्ण कार्रवाई है। इस बारकी योजनामें सत्याग्रहियोंका अटूट ताँता बनाये रखने की बात नहीं है। मेरे पास जो नाम भेजे जा रहे हैं, मैं उनकी सूची बनाता जा रहा हूँ। परन्तु नाम भेजनेवालोंको अपनी सामान्य गतिविधियाँ बन्द नहीं करनी चाहिए। उनको मैं सत्याग्रहके लिए बुलाऊँ, इसकी गुंजाइश बहुत ही कम है। मैं ऐसे किसी भी व्यक्तिको आमन्त्रित करनेवाला नहीं हूँ, जो अहिंसाके दृश्य प्रतीकोंके रूपमें कताई तथा खद्दरमें और अहिंसाके प्रकट लक्षणोंके रूपमें अस्पृश्यताके पूर्ण निवारण तथा साम्प्रदायिक एकताकी स्थापनामें विश्वास न रखता हो। और यह भी नहीं कि ये शर्तें पूरी करनेवाले सभी व्यक्तियोंको मैं सत्याग्रह करने के लिए निश्चय ही आमन्त्रित करूँगा। मेरे सामने समस्या यह नहीं है कि अगली बार किसे भेजूँ, बल्कि यह देखने की है कि जिस व्यक्तिको भेजा जायेगा, उसके जेल जाने पर हजारों-लाखों लोगोंमें क्या प्रतिक्रिया होगी। वह कितने लोगोंका प्रतिनिधित्व करता है? अस्पृश्यताको गले लगानेवाले और साम्प्रदायिक एकताको असम्भव माननेवाले या चरखेमें तथा अन्य ग्रामोद्योगोंमें और इसीलिए छः लाख ग्रामोंके कायाकल्पमें बिलकुल विश्वास न रखनेवाले लोगोंके लिए श्री विनोबाकी कहीं कोई उपयोगिता नहीं है। उनकी रायमें तो श्री विनोबा भारतकी राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक उन्नतिके मार्गमें बाधास्वरूप ही होंगे। परन्तु फिर भी यदि कांग्रेस इस निर्णायक घड़ीमें अहिंसा-प्रचारके अपने बुनियादी अधिकारकी रक्षा नहीं करती, तो भारत स्वाधीनता हासिल नहीं कर पायेगा। जनतन्त्रकी रक्षाके लिए युद्ध करने का ब्रिटेनका दावा कदम-कदमपर झूठा साबित होता जा रहा है। भारतमें कोई जनतन्त्र नहीं है। भारतीय आज भी उसी स्थितिमें बने हुए हैं जिसमें वे सदासे थे, और जो — एक अंग्रेजके शब्दोंमें — साम्राज्यके दासोंकी स्थिति है। परन्तु कांग्रेसके अहिंसात्मक स्वाधीनता संग्रामकी सफलताका अर्थ निश्चित तौरपर समस्त संसारमें सच्चे जनतन्त्रकी विजय होना चाहिए। निश्चित तौरपर उसका अर्थ यही होना चाहिए कि यूरोपमें यूरोपवासी और संसारकी सभी अश्वेत जातियाँ स्वाधीन हो जायें। ऐसी सफलता कोई धोखेकी टट्टी नहीं होनी चाहिए। वह अहिंसाका यथासम्भव स्पष्टतम प्रदर्शन होना चाहिए। हम जो परिणाम चाहते हैं वह असाधारण है। इसलिए इसकी दवा भी जरूरी तौरपर इतनी ही असाधारण होनी चाहिए। अब यह कांग्रेसजनोंपर है कि अपनी करनीसे सिद्ध कर दिखायें कि वे अहिंसात्मक तरीकेपर उसी रूपमें विश्वास रखते हैं या नहीं जिस रूपमें मैंने उसे उनके सामने प्रस्तुत किया है और यह कि वे अपने विश्वासके अनुरूप ही काम करते हैं या नहीं।

[अंग्रेजीसे]

हितवाद, २३-१०-१९४०

१०२. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
२१ अक्तूबर, १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

विनोबा तो ठिकानेसे लग गये। उनकी चार दिनकी धर्म-सेवा मेरी दृष्टिसे बिलकुल सफल रही।

मैं एक नोट[1] जारी कर रहा हूँ, जिसे तुम देखोगे। प्रोफेसरने[2] टेलीफोन पर कहा कि तुम तैयार हो। मैंने तुम्हारा बयान भी देख लिया है। मैं अभी भी तुमसे पूछना चाहूँगा कि मैं जो-कुछ लिख और कर रहा हूँ, उसमें तुम्हें कोई भी चीज पसन्द आ रही है या नहीं। मैं नहीं चाहता कि तुम केवल अपने अनुशासन-प्रेमके कारण ही उसमें भाग लो। मेरी वर्त्तमान कल्पनामें जरूरत ऐसे लोगोंकी है जो योजनामें — उसकी सारी तफसीलमें नहीं, परन्तु योजनाके तत्त्वमें — विश्वास रखते हों। अक्लमन्दको इशारा काफी है।

सम्भव हो तो मुझे तार[3] कर देना।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४०; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। और **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० ४४३ भी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. जे० बी० कृपालानी, कांग्रेसके तत्कालीन महामन्त्री।

३. अपने २४ अक्तूबरके तारमें जवाहरलाल नेहरूने लिखा था: "आपका पत्र मिला। सामान्य रूपसे सहमत हूँ।"

१०३. पुर्जा : अमृतलाल चटर्जीको

सेवाग्राम
['मौन-दिवस'] २१ अक्तूबर, १९४०

यही कारण है कि मैंने शैलेनको पत्र लिखा है।[1] यदि वह यहाँ आता है तो मैं उसके लिए कुछ कर सकता हूँ और कलकत्तामें उसके परिवारके लिए कुछ व्यवस्था की जा सकती है। अभी तुम २० रुपये भेज सकते हो। बाकी तो शैलेनके निर्णयपर निर्भर करेगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४५१) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१०४. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

सेवाग्राम, वर्धा
२१ अक्तूबर, १९४०

चि० ब्रजकिसन,

तुमारा खत मिला। मैं कोई ऐसा सत्याग्रह नहीं चाहता हूं जैसे तुम मानते हो। मेरा उपवास होगा तब तो तुम आ सकोगे। यद्यपि तुमारा धर्म तो रचनात्मक कार्य करने का ही होगा। उपवास होगा या नहीं, और होगा कब, मैं कुछ नहीं जानता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४७९) से

१०५. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेवाग्राम, वर्धा
२२ अक्तूबर, १९४०

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

इस पत्रके साथ मैं अलवरसे प्राप्त एक तारकी नकल भेज रहा हूँ।

नाजिम थानेदारने मुझसे जबरदस्ती युद्धका चन्दा उगाहने के लिए सब लोगोंके सामने मुझे गम्भीर चोट पहुँचाई। मैंने २५१ रु० अपनी पौत्रीके जेवर गिरवी रखकर चुकाये। जनता आतंकित है। मेरी प्रार्थना है कि हस्तक्षेप करें। जहारिया महाजन पथारा, मूंडवार, अलवर रियासत।

१. देखिए पृ० १२०।

मैं यह मानकर चलता हूँ कि "दबावके आन्तर्गत" के आरोपमें इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि दबाव ब्रिटिश भारतके किसी हिस्सेमें डाला गया है अथवा रियासतोंमें।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे: लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१०६. पत्र: चारुचन्द्र भण्डारीको

सेवाग्राम, वर्धा
२२ अक्तूबर, १९४०

प्रिय चारु बाबू,

मैं तुम्हारी योजना पढ़ गया हूँ। तुम्हें अपना काम धनुष तकलीतक ही रखना चाहिए। इसके लिए पैसा वहींसे इकट्ठा करना चाहिए। जैसे-जैसे तुम्हारा काम आगे बढ़ेगा, पैसा मिलता जायेगा। कार्य तो अनेक हैं, बड़े महत्त्वके हैं, उपयोगी भी हैं, पर यदि मैं सबके लिए रुपया-पैसा जुटाने लगूँ तो कामके बोझसे दबकर रह जाऊँगा। और उनकी संख्या भी मौसमी बाढ़की तरह बेहिसाब बढ़ जायेगी। यदि थोड़ा रुकना पड़े तो कोई चिन्ताकी बात नहीं, लेकिन साख जमाने के लिए अपनी ही क्षमताके सहारे चलो या फिर सीधे चरखा संघके मातहत आ जाओ।

तुम्हारा,
बापू

श्री चारुचन्द्र भण्डारी
निदेशक, खादी-मन्दिर
डायमण्ड हार्बर
२४ परगना, बंगाल

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६९७) से। सी० डब्ल्यू० १४६७ से भी

१. इसी प्रकारका एक और पत्र गांधीजी से मिलने पर वाइसरायके निजी सचिवने उनको उत्तर भेजा था; देखिए "पत्र: लॉर्ड लिनलिथगोको", ४-११-१९४०।

१०७. पुर्जा : अमृतलाल चटर्जीको

सेवाग्राम
२२ अक्तूबर, १९४०

यदि वह चाहे तो उसे तारा लेने दो। उससे पूछना कि सवेरे बड़ी मात्रामें खुराक लेनेके बाद उसे कैसा लगा।

उसे इसके नीचे लिखने दो अथवा बेहतर तो यह होगा कि तुम किसी व्यक्तिको चुन लो, जो शै[लेन्द्र]की बात सुन सके और उसे लिख डाले।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४५२) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१०८. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको

सेवाग्राम, वर्धा
२२ अक्तूबर, १९४०

चि० मगन,

तेरा पत्र मिला। अब यदि तू असफल हो जाये तो किस्मतके आगे हाथ टेककर और परीक्षाका मोह छोड़कर काममें डूब जा। प्राप्त किया ज्ञान व्यर्थ नहीं जायेगा।

मंजुला[1] को बुखार आता रहता है, यह ठीक नहीं। जब वह अच्छी हो जाये, तब आना। १५ नवम्बरके बाद यहाँ मौसम काफी ठंडा हो जायेगा। उर्मिलासे[2] कहना, मुझे लिखे। वह मजेमें होगी। रतिलालके[3] क्या हाल हैं? उसके लिए कुछ करना। उसका पत्र आया था कि वह यहाँ आकर प्रभाशंकरके[4] साथ सब मामला साफ कर लेना चाहता है। मैंने उसे लिखा है कि धीरजसे काम ले। उधर चम्पा[5] लिखती है कि वह पठानोंसे ब्याजपर पैसा उधार लेती है।

बापूके आशीर्वाद

श्री मगनलाल प्राणजीवनदास मेहता
व्रजभवन, एलिस ब्रिज
अहमदाबाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६०८) से। सौजन्य : मंजुलाबहन म० मेहता

१, २ और ३. मगनलाल मेहताकी पत्नी, पुत्री और भाई
४. रतिलालके ससुर
५. रतिलालकी पत्नी

१०९. पत्र : शिवाभाई गो० पटेलको

२२ अक्तूबर, १९४०

चि० शिवाभाई,

तुम्हारा पत्र और सूतका पुलिन्दा मिला। मैं सब आँकड़े पढ़ गया हूँ। वे आशाजनक हैं। सतत परिश्रमका फल मिलता ही है। जिन्होंने काम किया है, उन सबको धन्यवाद देना। गंगाबहनने[1] मुझे सब ब्योरेवार समझाया है। मेरे निमित्त जो सूत और पैसा इकट्ठा हुआ है, उसका उपयोग वहींके खादीके कामके लिए करना। सूर्यचन्द्रको[2] दो दिन तो सब नया-नया लगा; अब मजा कर रहा है।

बापूके आशीर्वाद

श्री शिवाभाई गो० पटेल
वल्लभ विद्यालय
बोचासण, तालुका बोरसद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५१९)से। सी० डब्ल्यू० ४३६ से भी; सौजन्य: शिवाभाई गो० पटेल

११०. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

२२ अक्तूबर, १९४०

चि० मुन्नालाल,

जो रुपया जमा है, वह एक बार यथारीति खर्च हो जाये, फिर तो तुम दोनों चिन्तामुक्त हो जाओगे। अभी तो जाने-अनजाने भी उसका सहारा है। जब अकिंचन हो जाओगे, तब जो सन्तोष और सुख मिलेगा, वह अनुभवसे ही जाना जा सकता है। उस समय भी, आज जो देखभाल कंचनकी होती है, वही होगी और तुम्हारा तो कहना ही क्या? इसलिए निश्चिन्त रहना।

'हरिजन' की फाइल तो मेरे गलेमें बँधी ही है। लेकिन तुम्हें जल्दी क्या है? जो-कुछ आता रहता है, उसे तो पढ़ना ही है।

१. गंगाबहन वैद्य
२. शिवाभाईका पुत्र

तुम्हें यहाँ अपना काम खुद ही खोज लेना है। प्यारेलालको तो तुम्हारी जरूरत है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५२६)से। सी० डब्ल्यू० ७१०६ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१११. तार : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

वर्धा
२३ अक्तूबर, १९४०

गुरुदेव
द्वारकानाथ ठाकुर लेन
कलकत्ता

ईश्वरकी अनुकम्पा है कि आप खतरेसे बाहर हैं।[1] आपके स्वास्थ्य-लाभकी गतिमें यदि यह तेजी ला सके तो मैं आपको समाचार देता हूँ कि एक भी दिन ऐसा नहीं गया जब मैंने एन्ड्रयूज स्मारकके बारेमें न सोचा हो। मैं तबतक चैनकी साँस नहीं लूँगा जबतक कि चन्दा जितना चाहिए उतना जमा नहीं हो जाता। मैं अनुकूल अवसरकी प्रतीक्षामें हूँ। सप्रेम।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२८८) से

११२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[2]

वर्धा
२४ अक्तूबर, १९४०

१८ अक्तूबरको पूनाके जिला मजिस्ट्रेटके दफ्तरसे 'हरिजन' के सम्पादकको नीचे लिखा नोटिस मिला :

> मैं सरकारके निर्देशानुसार आपको सलाह देता हूँ कि पहलेसे चीफ प्रेस एडवाइजर, दिल्लीको बतलाये बिना श्री विनोबा भावेके सत्याग्रहसे सम्बन्धित घटनाएँ, उनके व्याख्यान या उनके सत्याग्रहसे सम्बन्ध रखनेवाली और कोई आगेकी बात न छापी जाये।

१. देखिए पृ० ७९ भी।
२. यह "व्हाइ सस्पेंशन" ("प्रकाशन स्थगित क्यों") शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

मैं आपको आप ही के फायदेके लिए यह सूचित कर देना चाहता हूँ, ताकि आप भारत रक्षा कानूनकी दफा ३८ से बरी रह सकें।

इस नोटिसके मिलने पर मैंने वाइसराय साहबसे पत्र-व्यवहार[1] शुरू किया, जो अभीतक जारी है। लेकिन मुझे यह जरूरी मालूम होता है कि मैं 'हरिजन' छापने-न-छापने का आज ही निर्णय करूँ, ताकि जनताका रुपया बरबाद न हो। क्योंकि आजतक जो जवाब मुझे मिला है वह सन्तोषजनक नहीं है, इसलिए मेरे लिए सिवा इसके कोई चारा नहीं कि मैं 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु' और 'हरिजन सेवक' छापना बन्द कर दूं। यदि मुझे हरएक पंक्ति, जो मैं सत्याग्रहके बारेमें लिखता हूँ, प्रेस एडवाइजरको नई दिल्ली भेजनी पड़े तो मैं स्वतन्त्रतापूर्वक लिख ही नहीं सकता। यह सही है कि ऊपरका नोटिस सिर्फ सलाहके रूपमें है, इसलिए यह जरूरी नहीं कि मैं इसपर अमल करूँ ही। लेकिन नोटिसकी उपेक्षा करने का नतीजा भी उसमें दिया है। मैं नहीं चाहता कि सम्पादकोंको उस मुसीबतमें डालूँ। ये तीनों साप्ताहिक केवल सत्यके प्रचारके लिए, जिसमें सबकी भलाई है, चलाये गये हैं। लेकिन यदि कानूनकी धमकीके नीचे मुझे सम्पादन-कार्य करना पड़े, तो यह सेवा मेरे लिए असम्भव हो जाती है। प्रेस-स्वातन्त्र्य एक अत्यन्त प्रिय अधिकार है, जो सविनय अवज्ञा करने-न-करने की वांछनीयताके सवालसे अलग सवाल है। श्री विनोबा भावेपर मुकदमा चलाकर सरकारने अपना मंशा साफ जाहिर कर दिया है। मुकदमेके खिलाफ मुझे कोई शिकायत नहीं। वह तो भारत रक्षा कानूनके भंगका एक अनिवार्य परिणाम था। परन्तु प्रेस-स्वातन्त्र्यकी बुनियाद ही दूसरी है। इस नोटिसको मेरा मन स्वीकार नहीं करता, क्योंकि वह सलाहके रूपमें होते हुए भी एक हुक्म ही है, जिसे भंग करने का अपना ही नतीजा होगा।

इन तीनों साप्ताहिक पत्रोंके पाठकोंको निराश करने में मुझे दुःख होता है। अगले हफ्ते मैं साफ बता सकूँगा कि ये तीनों पत्र मैंने कुछ समयके लिए ही बन्द किये हैं या अनिश्चित कालके लिए। मुझे अभीतक आशा है कि मेरा भय निर्मूल सिद्ध होगा और पत्र कुछ समयतक ही बन्द रहेंगे। लेकिन यदि ऐसा न हुआ, तो मैं जनताको विश्वास दिलाता हूँ कि सत्याग्रह केवल अखबारी प्रचारपर ही निर्भर नहीं है। यदि सत्याग्रह वास्तविक है — और मेरे खयालसे मौजूदा सत्याग्रह ऐसा ही है — तो स्वयं इसमें इतना वेग है कि वह चलता रहेगा। मैं जल्दीमें कोई काम नहीं करूँगा। अभी मैं नहीं कह सकता कि अगला कदम क्या होगा। लेकिन जैसा कि मैं अपने पिछले वक्तव्यमें[2] कह चुका हूँ, सविनय अवज्ञाका हरएक कदम स्वयंमें एक पूर्ण कदम होता है। प्रेसका नोटिस यह जाहिर करता है कि श्री विनोबा भावेका सत्याग्रह कितना प्रभावशाली रहा है। जितनी भी सख्ती की जाये, सत्याग्रहकी शक्ति ज्यादा बढ़ती है और वह फूलता-फलता है। सख्ती करनेवाला अन्तमें थककर बैठ जाता है और सत्याग्रहका ध्येय प्राप्त हो जाता है। इसलिए मैं अगला

१. देखिए पृ० ११८-१९ और १२२-२३।
२. देखिए पृ० १२६-२७।

कदम कब लूंगा, लूंगा या नहीं लूंगा, इससे जनताको कोई सरोकार नहीं। जिन्हें सत्याग्रहके साथ सहानुभूति है, उन्हें मेरे आदेशोंका पूरा पालन करना चाहिए। मुझे विश्वास है — और उसकी परीक्षा भी कई बार हो चुकी है — कि सुचिन्तित और संयमित विचारमें वाणी और लेखने कहीं ज्यादा शक्ति है — उस भापसे कहीं ज्यादा जिसे नियंत्रित किया गया हो। सुरक्षित और काबूमें की हुई भापमें तो बड़े-बड़े बोझोंको सिर्फ पर्वतोंके पार ही ले जाने की शक्ति है, परन्तु विचार उससे भी अधिक बाधाओंको पार करके आगे बढ़ सकता है। जो संयत और पोषित विचार-शक्तिमें विश्वास नहीं करते उनको मैं एक व्यावहारिक बात बताना चाहता हूँ। हरएक व्यक्तिको चाहिए कि वह स्वयं ही अपना चलता-फिरता समाचारपत्र बन जाये और अच्छे समाचारोंको एकसे दूसरेतक पहुँचाने का काम करे। इसके मानी ये नहीं हैं कि हम उन छोकरोंकी तरह, जो पुराने जमानेमें चिल्ला-चिल्लाकर खबरें सुनाया करते थे, कच्ची-पक्की खबर सुनाते फिरें। मतलब यह है कि हम वही खबर दूसरोंको सुनायें जो हमने प्रामाणिक सूत्रसे सुनी है। इसे कोई भी सरकार दबा नहीं सकती। यह सस्तेसे-सस्ता समाचारपत्र है, और इसके आगे किसी भी हुकूमतकी — चाहे वह कितनी भी होशियार हो — अक्ल काम नहीं कर सकती। लेकिन जिनको समाचारपत्रोंकी तरह खबरें फैलानी हैं, उन्हें निश्चय होना चाहिए कि खबरें प्रामाणिक ही हैं, न कि इधर-उधरकी फालतू बातें। यदि ऐसा हुआ तो जनताको दूसरे अखबारके पृष्ठ खोलने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी, क्योंकि उसे मालूम होगा कि उनमें सिर्फ विकृत और एकतरफा खबरें ही पढ़ने को मिलेंगी। यह भी मुमकिन है कि जो सार्वजनिक बयान आज मैं दे रहा हूँ उन्हें भी बन्द कर दिया जाये। स्वेच्छाचारी शासनके मातहत — चाहे वह देशी हो या विदेशी — जीवन इसी प्रकारका होता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-११-१९४०

११३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
२४ अक्तूबर, १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा तार[1] पाकर खुशी हुई। यदि मेरा वक्तव्य[2] जाने दिया गया है तो तुम उसे इससे पहले देख चुके होगे।

अगर तुम तैयार हो तो तुम अब अपनी सविनय अवज्ञा बाकायदा घोषित कर सकते हो। मेरा सुझाव है कि तुम अपने श्रोताओंके लिए कोई गाँव चुन लो। मैं नहीं समझता कि सरकार तुम्हें अपना भाषण दोहराने देगी। जहांतक विनोबाका सम्बन्ध

१. देखिए पृ० १२८, पा० टि० ३।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

है, उनकी योजनाएँ तैयार नहीं थीं। परन्तु यदि तुम्हें वह आजाद रहने दे तो मेरा सुझाव है कि तुम विनोबाके लिए निश्चित की गई योजनापर[1] चलो। परन्तु तुम्हारा और कुछ खयाल हो तो तुम अपने ही मार्गका अनुसरण करो। मैं तो इतना ही चाहता हूँ कि तुम मुझे अपना कार्यक्रम दे दो। अपनी तारीख आप ही तय कर लो, लेकिन इस तरहसे कि तारीख और जगहका ऐलान करने का मुझे समय मिल जाये। सम्भव है सरकार तुम्हें अपना पहला कार्यक्रम भी पूरा न करने दे। सरकारकी तरफसे ऐसे हरएक कदमके लिए मैं तैयार हूँ। हमारे कार्यक्रमको प्रकाशमें लानेवाले हर उचित उपायका तो मैं उपयोग कर लूंगा, मगर मेरा यह विश्वास रहेगा कि विनियमित विचार अपना असर आप पैदा करता है। यदि यह मानना तुम्हारे लिए कठिन हो तो मैं तुमसे कहूँगा कि निर्णय स्थगित रखो और परिणाम देखते रहो। मैं जानता हूँ कि तुम खुद धीरज रखोगे और अपनी तरफके लोगोंको भी धीरज रखने को कहोगे। मुझे मालूम है, मेरे प्रति वफादारी रखकर तुम कितना बोझ उठा रहे हो। मेरे लिए यह वफादारी अमूल्य है। आशा है, वह उचित साबित होगी, क्योंकि अब तो "करने या मरने" की बात है। पीछे तो लौटना नहीं है। हमारा पक्ष अकाट्य है, झुकने का सवाल नहीं। इतना ही है कि प्रत्यक्ष रूपमें यह दिखा देने के लिए कि विशुद्ध अहिंसामें क्या ताकत होती है, मुझे अपने ढंगसे चलने दिया जाये।

मौलाना साहबने फोनसे कहा कि दूसरी बारके सत्याग्रहके लिए मुझे दूसरा आदमी चुनना चाहिए। मैंने उन्हें बताया कि तुम जाने को राजी हो तो मैं ऐसा नहीं कर सकता।

'हरिजन' के सम्बन्धमें मैंने जो कदम उठाया है, उसपर तुम्हारी प्रतिक्रिया जानना चाहूँगा।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४०; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० ४४३-४ भी

1. देखिए पृ० १०९।

११४. पत्र : किसनसिंह चावड़ाको

२४ अक्तूबर, १९४०

भाई किसनसिंह,

तुम्हारा पत्र मिल गया। तुम कब रिहा हुए? मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

श्री किसनसिंह चावड़ा
परदेशी मुहल्ला
मदन झाँपा रोड
बड़ौदा

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९९३९) से। सौजन्य : किसनसिंह चावड़ा

११५. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२४ अक्तूबर, १९४०

बापा,

जल्दीमें लिखा गया है और दोहराया नहीं गया है तब भी तुम्हारे पत्रमें कोई कसर नहीं है। तुम्हारे जल्दीमें लिखे गये अक्षर भी महादेवके अक्षरोंके समान ही स्पष्ट होते हैं। तुम्हारा वर्णन भी रोचक होता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११८५) से

११६. प्रश्नोत्तर[1]

[२४ अक्तूबर, १९४० के पश्चात्][1]

प्र० : क्या युद्ध-विरोधी सभाओंके समाचारोंपर सरकार द्वारा लगाये गये प्रतिबन्धके फलस्वरूप व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाकी योजनामें कोई फेर-बदल किया जायेगा?

उ० : कुछ फेर-बदल हो सकता है, लेकिन वह सब अहिंसाको और सख्तीसे लागू करने की दिशामें ही होगा।

आपने कहा है[2] कि प्रत्येक भारतीयको "स्वयं ही अपना चलता-फिरता समाचार-पत्र" बन जाना चाहिए। क्या आप यह महसूस नहीं करते कि प्रतिबन्ध लग जाने से अतिरंजित अफवाहें खूब फैलेंगी। आप उसकी रोक-थाम किस तरह करने की सोच रहे हैं?

यदि जनता मेरे परामर्शका मर्म नहीं समझेगी तो निस्सन्देह मनमानी अफवाहें फैलेंगी और मैं स्वीकार करता हूँ कि सब-कुछ निरपवाद रूपसे मेरे नियन्त्रणमें नहीं है, अपवाद भी हैं और अपवाद संख्यामें कितने ही कम हों, पर वे बड़ी आसानीसे सारी योजनामें गड़बड़ी पैदा कर सकते हैं। अतिरंजित अफवाहोंकी रोक-थामका कोई तरीका मेरे पास नहीं है। सरकार द्वारा समाचारपत्रोंका मुँह बन्द करनेवाला अध्यादेश निकालकर जनतातक समाचारोंका पहुँचना बिलकुल रोक देने से जो गलत किस्मकी चीजें सामने आयेंगी उनकी पूरी जिम्मेदारी सरकारके सिर होनी चाहिए। मुझे तो लगता है कि सरकार नाजीवादको भी मात किये दे रही है।

क्या आप निषेधाज्ञाका पालन करेंगे?

उसकी अवज्ञा करने का मेरा कोई मंशा नहीं। क्या मैंने इसी आशंकासे अपने तीनों साप्ताहिकोंका प्रकाशन स्थगित नहीं कर दिया है? सविनय अवज्ञाकी जो संकल्पना इस बार की गई है वह कुछ असाधारण प्रकारकी है, क्योंकि वह एक असाधारण परिस्थितिका सामना करने के लिए है।

इस प्रतिबन्धके बारेमें आपकी क्या राय है? कहा जाता है कि इस प्रतिबन्धकी भाषा ब्रिटेनमें जारी किये गये ऐसे ही प्रतिबन्धात्मक आदेशोंसे ली गई है। क्या इससे कोई औचित्य सिद्ध होता है?

१. डी० जी० तेण्डुलकर लिखते हैं कि ये प्रश्न "न्यूज क्रॉनिकल, लन्दनकी ओरसे फ्रैंक मोरेसने पूछे थे"।

२. गांधीजी द्वारा "तीनों साप्ताहिकों"का प्रकाशन स्थगित करने के उल्लेखपर से; देखिए पृ० १३३-३५।

३. देखिए पृ० १३५।

प्रतिबन्धके बारेमें मेरी राय यह है कि सरकार अपनी सीमाओंसे कहीं आगे बढ़ गई है। हो सकता है कि प्रतिबन्धकी भाषा ब्रिटेनसे ही उधार ली गई हो, लेकिन ब्रिटेनकी परिस्थितियाँ वह कैसे उधार लेगी? ब्रिटेनमें जनताका शासन है, वहाँ संविधान पूरे तौरपर जिन्दा है और उसके अनुसार ही वहाँ काम हो रहा है। भारतमें एक ही आदमीका शासन है और भारतमें वह किसीके भी प्रति उत्तर-दायी नहीं है। दोनों देशोंके बीच जमीन-आसमानका अन्तर है। वह भाषा ब्रिटेनके लिए सर्वथा उचित हो सकती है, लेकिन भारतके लिए सर्वथा अनुचित है और इसलिए उस भाषाकी नकल करना बिलकुल अनुचित है। यह तो ऐसी ही होगा जैसे भरी गर्मियोंके मौसममें भारतको ब्रिटेनकी कड़कती सर्दीके दिनोंका फ़रवाला कोट पहनने को मजबूर किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी, खण्ड ६, पृ० ८ और ९ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

११७. तार: लॉर्ड लिनलिथगोको

वर्धा
२५ अक्तूबर, १९४०

महामान्य वाइसराय
नई दिल्ली

२४ तारीखके तारके[1] लिए धन्यवाद। दुःख और आश्चर्य हुआ। जिस परामर्शको स्वीकार न करने से दण्ड मिल सकता हो वह बिलकुल आदेश-जैसा ही है। मात्र परामर्श के रूपमें तो नोटिस सर्वथा अनावश्यक था। प्रत्येक सम्पादकसे आशा की जाती है कि उसे उस कानूनकी जानकारी होगी ही जिसके तहत वह अपने पत्रका सम्पादन करता है। मुझे इन परिस्थितियोंमें न चाहते हुए भी उन तीनों पत्रोंका प्रकाशन स्थगित कर देना पड़ा है जिनकी जवाबदेही मुझपर है। मैंने समाचारपत्रोंके लिए वक्तव्य[2] जारी किया है जो यदि सेंसर न किया गया हो तो आपने देखा होगा। यदि प्रकाशन पुनः आरम्भ करने की गुंजाइश मेरे लिए छोड़ी गई तो स्थगन वापस ले लिया जायेगा। आपकी सरकार जबतक यह नहीं समझ लेती कि अपनी निर्भीक आलोचना और यहाँतक कि

१. देखिए पृ० १२६, पा० टि० १।
२. देखिए पृ० १३३-३५।

सविनय अवज्ञाकी पैरवीके बावजूद ये साप्ताहिक वास्तवमें मैत्रीपूर्ण हैं, तबतक इन साप्ताहिकोंको प्रकाशित करने की मेरी कोई इच्छा नहीं।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५४ ए)से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

११८. तार: जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
२५ अक्तूबर, १९४०

ज० नेहरू
आनन्द भवन
इलाहाबाद

पत्र[1] आज डाकसे भेजा है।

बापू

[अंग्रेजीसे]
गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४०। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

११९. पत्र: विट्ठलदास जेराजाणीको

२५ अक्तूबर, १९४०

भाई विट्ठलदास,

मेरठ आश्रमके बारेमें तुम्हारा पत्र मिला। मैं आश्रममें स्थिरता लाने का प्रयत्न कर रहा हूँ। आशा करता हूँ कि सफल होऊँगा। वैद्यसे कहना कि अपना धन्धा बिलकुल न छोड़ दे। चरखेकी विद्या ठीकसे सीख ले और व्यर्थमें देह-दमन न करे। उसका शरीर तेजस्वी होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्री विट्ठलदास जेराजाणी
अ० भा० च० संघ खादी भण्डार
३९६, कालबा देवी
बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९७) से

१. २४ अक्तूबर, १९४० का; देखिए पृ० १३५-३६।

१२०. पत्र : सैयद अब्दुल लतीफको

सेवाग्राम, वर्धा
२६ अक्तूबर, १९४०

प्रिय डॉ० लतीफ,

आपने कृपापूर्वक मुझे जो रूपरेखा[1] भेजी है, उसे मैं ध्यानपूर्वक पढ़ गया हूँ। इसके बारेमें मैं कोई उपयोगी आलोचना नहीं कर सकता, क्योंकि आपकी प्रथम योजनाको लेकर मैंने जो आपत्ति उठाई थी वही आपत्ति मुझे इसमें भी है। उसमें जो विचार निहित है वह मेरे लिए बहुत अरुचिकर है। मेरे लिए तो भारत अविभाज्य है। मैं संस्कृतियोंको अलग-अलग रखने में विश्वास नहीं करता, मैं तो संस्कृतियोंको सम्मिलित करने में विश्वास करता हूँ। आपके लिए इतना जानना ही पर्याप्त होना चाहिए कि मैं सहमत होने के लिए तत्पर हूँ और आप चाहें तो मुझे अपनी रायका कायल कर सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१२१. पत्र : कंचन मु० शाहको

२६ अक्तूबर, १९४०

चि० कंचन,

तेरा पत्र मिला। तेरी गाड़ी फिर पटरीपर आ गई, बड़ा अच्छा हुआ। तू जल्दी ही अच्छी हो जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२७८)से। सी० डब्ल्यू० ७१०७ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१. इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४०, खण्ड १, पृ० ११७के अनुसार उस्मानिया विश्व-विद्यालयके अंग्रेजीके भूतपूर्व प्रोफेसर डॉ० अब्दुल लतीफने अपनी कल्चरल फ्यूचर ऑफ इंडिया नामकी पुस्तिकामें लिखा था कि "इस्लाम और हिन्दू-धर्म एक-दूसरेसे सर्वथा पृथक् हैं।" और अपनी इस खोजके आधारपर उन्होंने भारतमें 'मुस्लिम क्षेत्र' और 'हिन्दू क्षेत्र' स्थापित करनेकी अपनी योजना तैयार की थी। २५ मार्च, १९३९को अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी कार्य-समितिके सम्मुख उक्त योजनाका मसौदा रखा गया था।

१२२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सेवाग्राम, वर्धा
२६ अक्तूबर, १९४०

भाई घनश्यामदास,

तुम्हारा लेख मुझे बहुत अच्छा लगा। कृष्णदासको दिया। उसका उत्तर ऐसा ही अच्छा नहिं है। लेकिन उसे पढ़कर समय मिलने से प्रत्युत्तर भेजो। अब 'हरिजन-सेवक' का तो बंध हुआ। लेकिन मुझे उसकी क्या दरकार? मैं तो सत्य जानना चाहता हूं। ह० से० इ०[1] को इतनी शीघ्रतासे बंध करना होगा ऐसा मैंने सोचा नहिं था लेकिन सलतनतोंकी भी गहन गति रहती है ना?

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आपका लेख भी भेजता हूं, बुक पोस्टसे जायगा। उसे वापस कीजीये।

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ८०३९) से। सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१२३. पुर्जा : मुन्नालाल गं० शाहको

[२६ अक्तूबर, १९४०][2]

इसमें से कुछ सच मालूम होता है, लेकिन उसका सुझाया गया इलाज गलत मालूम होता है। और कुछ तो बिलकुल काल्पनिक है। तुम्हारे लिए इलाज ही यह है कि विचारोंको मनमें उठने ही न दो। अपने मनको कार्य-सम्बन्धी विचारोंसे ही भरे रखना चाहिए।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३३५) से

१. हरिजनसेवक इत्यादि

२. प्रस्तुत पुर्जा २४ से २६ अक्तूबर तककी एक दैनन्दिनी के पृष्ठपर लिखा हुआ है।

१२४. पत्र : बलवन्तसिंहको

२७ अक्तूबर, १९४०

चि० बलवंतसिंह,

बलवान होते हुए सिंह भी हो इसलिये सिंहके दांत तो मौका-बे-मौका देखनेमें आ हि जाते हैं।

रा० कु०[1] के मार्फत जो खत मिला सो मैंने देखा था। मुझे अच्छा लगा और उसपर मैं काम भी कर रहा था। आजके खतमें सिंहके दांत है और नाखुनवाले दोनों पंजे भी। अच्छा है वह रूपका दर्शन होता हि रहता है। मैं सावधान रहूंगा।

सम्भाजी कौन हैं मैं नहीं जानता। कोई भी हो मेरी बात वह क्या जाने? मैं तो मनमानी जमीन लूंगा, न मिले ऐसी बात ही नहि है। मुझे जमनालालजीका तनिक भी अविश्वास नहि है। वे अपने प्रणपर कायम रहनेवालोंमें से हैं। ट्रस्ट जैसा है वैसा हि रहेगा। मुझे रा० कु० का भी पूरा विश्वास है। और ट्रस्टकी जमीन ट्रस्टी हडप नहीं कर सकता है।

तुमारी बात कि किसी कमिटीके सदस्य नहीं बन सकते हो मुझे मान्य है। तटस्थभावसे जो हो सके वह करो। मुझे संतोष है।

मैं दोनोंको मौका आने पर बुला लूंगा। बेटरी तुम भूल गये तो क्यों याद रक्खुं? अब हाजर करूंगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९३७) से

१२५. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेवाग्राम, वर्धा
२७ अक्तूबर, १९४०

चि० शर्मा,

तुमारा सुंदर खत मिला। चूंकि इस वक्त संपूर्ण अहिंसाका दर्शन कराना चाहता हूं—जैसी मैं जानता हूं—सिवाय दो तीनके किसीको भेजना नहीं चाहता हूं और किसीको न भेजुं ऐसा भी हो सकता है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २९२-३ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

[1] राजकुमारी अमृतकौर

१२६. तार: कार्ल हीथको[1]

वर्धागंज
२८ अक्तूबर, १९४०

कार्ल हीथ
फ्रेण्ड्स हाउस
यूस्टन रोड
लन्दन

सभी प्रयास असफल रहे। भारतीय परिस्थिति सर्वथा भिन्न और अनोखी है। समाचारपत्रोंकी जबान बन्द कर दी गई।[2] 'हरिजन' साप्ताहिकोंको बन्द कर दिया है। सविनय अवज्ञाको अहिंसाकी न्यूनतम अपेक्षाओंतक सीमित रख रहा हूँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

होम, पॉलिटिकल, फाइल सं० ३/३३/४०–पॉलि० (१); सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। जी० एन० १०४६ से भी

१. यह तार कार्ल हीथके १७ अक्तूबरके तार (जी० एन० १०४५) के उत्तरमें था, जिसमें लिखा था: "बातचीतके परिणामसे अत्यन्त दुःख हुआ। व्यक्तिगत रूपसे आपके शान्ति-सिद्धान्तसे सहमत हूँ, फिर भी मेरा खयाल है कि कोई भी वास्तविक सरकार मौजूदा घोर संघर्षकी स्थितिमें किसी संगठित विरोधकी इजाजत नहीं दे सकती। नये फार्मूलाका मान्य किया जाना जरूरी है। यहाँ हमारा ग्रूप मूलभूत संवैधानिक समस्याका हल निकालनेके बारेमें पुनः कोशिश कर रहा है। हमारा आग्रह है कि आप और कांग्रेस इस मामलेमें सहयोग करें और अपनी अपरिवर्तनीय कार्रवाई स्थगित कर दें।" देखिए पृ० ८२ और ११४-१५ भी।

२. सेंसरने यह वाक्य काट दिया था।

१२७. पत्र : अब्दुल्ला हारूँ रशीदको

सेवाग्राम, वर्धा
२८ अक्तूबर, १९४०

प्रिय हाजी साहब,

मैं देखता हूँ कि आपने मेरे पत्रसे[1] एक उद्धरण-मात्र प्रकाशित किया है। इससे गलतफहमी पैदा होती है। क्या आपके लिए यह बेहतर न होगा कि आप मेरा पूरा पत्र प्रकाशित करें?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

हाजी अब्दुल्ला हारूँ

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१२८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेवाग्राम
२८ अक्तूबर, १९४०

चि० प्रेमा,

तू कैसी है? उपवास तो कपालमें लिखा ही दीखता है। सत्याग्रहीको किसी दिन तो करना ही पड़ता है। लेकिन तू मेरे बिना न जी सके, तो खुशीसे मेरे साथ चलना। परन्तु लंघन करके नहीं। योगाग्नि प्रकट करके जल मरना। तू जो उपवास करती है वह लंघन ही कहा जायेगा। उपवासके लिए अधिकार होना चाहिए। जो यह समझते हैं, वे तो मेरे उपवाससे नाचेंगे। इस उपवासको उत्सव मानेंगे। यह उपवास जिस हेतुसे किया गया है, उसके आसपासका कोई दूसरा काम करेंगे। उपवासमें शर्तें तो होंगी ही। उनका पालन हो जाये तो उपवास बन्द हो जाये। अक्ल न गँवा बैठना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४१३)से। सी० डब्ल्यू० ६८५२ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. हितवाद, २३-१०-१९४० में उक्त पत्रसे केवल अन्तिम दो वाक्य प्रकाशित हुए थे। पूरे पाठके लिए देखिए पृ० १०४।

१२९. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

२९ अक्तूबर, १९४०

चि० मुन्नालाल,

दोनों काम हो सकते हैं। तीन महीने मगनवाड़ीमें रहकर जो सीखते बने सीख आओ और उसका उपयोग यहाँ करो। यह सब एक महीने बाद करना। यहाँ तो सब-कुछ अन्तमें ईश्वर-दर्शनके लिए है। इसलिए तुम्हारे यहाँ शामिल हो जाने में कोई हर्ज नहीं होगा। और अगर गाँवके लोगोंको तुम्हारी जरूरत हो और तुम्हें विश्वास हो कि तुम क्रोधको अपने वशमें रख सकोगे, तो उस काममें ही लग जाना। तुम्हारा मन व्यवस्थित हो जाये, तो तुम बहुत काम करोगे। अभी परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि अच्छेसे-अच्छा काम यहीं हो सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५२५) से। सी० डब्ल्यू० ७१०८ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१३०. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेवाग्राम, वर्धा
३० अक्तूबर, १९४०

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपके २४ तारीखके पत्रके[1] लिए आपको धन्यवाद देता हूँ।

जहाँतक आपके पत्रके पहले अनुच्छेदकी बात है, आपने जिन नोटिसोंका उल्लेख उसमें किया है, उनके बारेमें अपनी राय[2] मैं पहले ही दे चुका हूँ।

दूसरे अनुच्छेदने मुझे हतबुद्धि कर दिया। आपकी भाषाको सरल शब्दोंमें रखनेपर यही निष्कर्ष निकलता है कि आपने मुझे जताया है कि यदि मैं ठीक ढंगसे नहीं चलूँगा तो मुझे अवश्य दण्ड मिलेगा। ऐसी चेतावनी मुझे देनेकी जरूरत तो थी नहीं, तथापि मैं इसका बुरा नहीं मानता। आपने जैसी भाषाका प्रयोग किया है, उससे पता चलता है कि अपने आशयको अंग्रेजी भाषाकी अभिव्यक्ति-क्षमता और

१. देखिए परिशिष्ट ५।

२. देखिए पृ० १३९-४०।

अपने उच्च पदकी मर्यादाके अनुरूप अधिकसे-अधिक शिष्ट शब्दोंसे ढँकने की आपने कितनी कोशिश की है।

पर आप जो बातें मानकर चले हैं, उनके लिए मैं बिलकुल ही तैयार नहीं था। मैंने कहीं भी यह नहीं कहा है कि मैं अपनी मर्जीके माफिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाने की आजादी चाहता हूँ और इसके लिए मैं प्रचारके साधारण साधनोंके जरिये जनतातक बेरोकटोक पहुँचने की छूट चाहता हूँ। मेरे वक्तव्यसे[1] आप देखेंगे — उसकी एक प्रति संलग्न है — कि मैंने दावा किया है कि सविनय अवज्ञा समाचारपत्रों द्वारा किये जानेवाले प्रचारकी मोहताज नहीं, उसके बिना भी चलाई जा सकती है। यह वक्तव्य आपका पत्र मुझे मिलने से पहले प्रकाशित हो चुका था। और सचमुच, यदि सविनय अवज्ञा अपने संचालनके लिए उसी सरकारकी दयापर आश्रित हो जिसके विरुद्ध वह चलाई जा रही है, तो निश्चय ही वह बड़ी बेकार की चीज होगी, निश्चित प्रयोजनके लिए सर्वथा अनुपयोगी होगी। वह तो स्वयं कष्ट-सहनके बलपर विरोधीका हृदय-परिवर्तन चाहती है।

फिर आपने कहा है :

> हालाँकि आप, जाहिर है, मुझको यही यकीन दिलाना चाहते हैं कि अगर आपको ये सुविधाएँ न मिलीं तो आपका शुरू किया हुआ यह आन्दोलन ज्यादा खतरनाक शक्ल अख्तियार कर लेगा, फिर भी मुझे यह तो मानना पड़ेगा कि जाती तौरपर आपकी यह ख्वाहिश जरूर है कि यह आन्दोलन अपने एलानिया मकसदको हासिल करने में कामयाब हो, जो यह है कि युद्धके लिए किये जानेवाले भारतके प्रयत्नोंके सारे समर्थनसे हाथ खींच लेने को जनताको राजी किया जाये।

आपने जो यह विचार बना लिया है, उसके लिए मेरे अपने पत्रमें कोई आधार नहीं है। मेरे पत्रका[2] प्रयोजन ही नजरअन्दाज कर दिया गया है। उसका प्रयोजन आपकी कृपादृष्टिमें इस तथ्यको लाना था कि मैं अहिंसाको सुनिश्चित करने के लिए असाधारण रूपसे सावधानी बरत रहा हूँ और इस तथ्यको भी कि मैं इस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर इस आन्दोलनको यथासम्भव कमसे-कम व्यक्तियों, विशिष्ट व्यक्तियों तक सीमित रख रहा हूँ। मैंने तो मनमें यह विश्वास सँजो रखा था कि एक मित्रके नाते आपको यह जानकारी हासिल करके खुशी होगी, और इस तथ्यको समझ लेने के बाद आप इस तरहका सर्वथा अनावश्यक, सबकी जबानपर ताला डाल देने-वाला ऐसा सख्त अध्यादेश निकालने का गलत कदम नहीं उठायेंगे जैसा कि आपने निकाला है। आपने अध्यादेशके जरिये दुनियाको दिखा दिया है कि आप भारतीय लोकमत का गला घोंटे बिना भारतकी ओरसे युद्ध नहीं चला सकते। मैंने तो समझा था कि राजे-रजवाड़े, धनी-मानी लोग और पेशेवर युद्ध-प्रिय वर्गोंके लोग आपको जितनी-कुछ सहायता दे सकते हैं, उससे आप सन्तुष्ट हो जायेंगे। ऐसे लोग मेरे या कांग्रेसके प्रभावमें नहीं आ सके हैं।

१. देखिए पृ० १३३-३५।
२. देखिए पृ० १२२-२३।

मुझे पूरा भरोसा है कि आप भारतकी तुलना ब्रिटेनके साथ नहीं करेंगे। ब्रिटेनमें संसदके सदन हैं, जिनके माध्यमसे समूचा राष्ट्र काम करता है। यहाँ भारतमें आपको ऐसी शक्तियाँ प्राप्त हैं जैसी इतनी विशाल जनसंख्यापर किसी एक ही व्यक्तिको दुनियामें और कहीं भी प्राप्त नहीं हैं और ये शक्तियाँ आपको भारतसे नहीं, ब्रिटेनसे मिली हैं। मैं सोचता था कि आप इन शक्तियोंका प्रयोग संयमित ढंगसे करेंगे। और इसी प्रयोजनसे मैंने आपसे पिछली मुलाकात की थी और अपने निश्चित समयसे अधिक समयतक वहाँ रुका रहा था, जिससे कि यह न कहा जा सके कि मैंने आपसे जल्दबाजीमें कुछ करा लिया है। फिलहाल वह उम्मीद चूर-चूर हो गई है। आप मेरी इस बातपर विश्वास कीजिए कि मैंने आप और आपके लोगोंके प्रति एक सच्चे मित्रकी भावना रखते हुए ही अपना प्रत्येक कदम उठाया है। यदि आज नहीं, तो आगे किसी-न-किसी दिन आप मेरे इस कथनकी सचाईका अवश्य अनुभव करेंगे।

लेकिन फिलहाल मैं आपके निर्णयको स्वीकार किये लेता हूँ। मैं आन्दोलनको गुप्त रूपसे नहीं चलाना चाहता। और न मैं अहिंसाको, उसे अपनी शक्तिको प्रकट करने का मौका दिये बिना ही, नष्ट होने दे सकता हूँ। इसलिए अब देने को बस एक ही चीज मेरे अन्दर रह गई है, वही मैं दे सकता हूँ — वह है मेरे प्राण। एक लम्बे उपवास या आमरण उपवासकी सम्भावनाके बारेमें मैंने आपको बतलाया था। क्या करना है, इसके बारेमें मैं ईश्वरकी ओरसे संकेत मिलने की राह देख रहा था। मैं उससे बचने की बड़ी कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन शायद इसमें सफल नहीं हो पाऊँगा। अन्तिम रूपसे फैसला कर लेने पर मैं आपको एक पत्र और लिखूँगा।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू मेरे पास आये थे। मैंने उनको अगला सत्याग्रही बनने के लिए आमन्त्रित किया था। उन्होंने सहमति दे दी थी। आपका अध्यादेश बादमें निकला। और उपवासका विचार मेरे ऊपर हावी हो गया। वे उपवासके बारेमें विचार करने को तैयार हैं। परन्तु उनका कहना है, और मैं उनकी बातसे सहमत हो गया हूँ, कि उपवास करने का विचार बनाने से पहले उनके द्वारा किया जानेवाला प्रस्तावित प्रतिरोध सम्पन्न हो चुकना चाहिए। इसलिए बस अगला कदम उनका सविनय प्रतिरोध ही होगा। उसकी तिथि और स्थानके बारेमें अन्तिम रूपसे निर्णय होते ही मैं आपकी जानकारीके लिए आपको लिख दूँगा।

आशा है, आप इस पत्रका बुरा नहीं मानेंगे। मैंने यह पत्र एक मित्रके नाते मित्रको लिखा है, एक नागरिकके नाते वाइसरायको नहीं। यह पत्र मैंने प्रचार पाने के लिए या आपको तर्कमें पराजित करने की भावनासे नहीं लिखा है। मैं इस पत्रका और हमारे बीच हालके पत्र-व्यवहारका कोई भी अंश आपकी सहमतिके बिना प्रकाशित नहीं करूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५५)से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१३१. पाठकोंसे

समाचारपत्रोंको प्रकाशनार्थ दिये गये मेरे वक्तव्यमें[1] आपने देखा होगा कि 'हरिजन' और अन्य दो साप्ताहिकोंका प्रकाशन स्थगित कर दिया गया है। मैंने उसमें आशा व्यक्त की थी कि स्थगन शायद एक ही सप्ताहतक के लिए हो। लेकिन मैं देखता हूँ कि उस आशाका कोई वास्तविक आधार नहीं था। हर सप्ताह आपसे बात न कर सकने की कमी मुझे खलेगी और मैं समझता हूँ आपको भी खलेगी। हर सप्ताह अपनी बात कहने का वास्तविक महत्त्व इस बातमें था कि उसमें मेरे सबसे आन्तरिक विचारोंका बिलकुल सच्चा रिकार्ड रहता था। संकीर्ण और संकुचित वातावरणमें उस प्रकारकी अभिव्यक्ति सम्भव नहीं है। चूँकि सविनय अवज्ञा करने की मेरी कोई इच्छा नहीं है, इसलिए मैं खुलकर निःसंकोच होकर नहीं लिख सकता। सत्याग्रहका प्रणेता होने के नाते, अपनी कथनीके अनुरूप, मैं रचनात्मक कार्यक्रम-जैसे अनुमति-प्राप्त विषयोंके बारेमें कुछ लिख सकने की खातिर ही अपने विचारोंके अत्यधिक महत्त्वपूर्ण अंशका दमन नहीं कर सकता। वह तो बिना सिरके धड़के बारेमें लिखने-जैसा ही होगा। मैं तो समूचे रचनात्मक कार्यक्रमको अहिंसाकी ही अभिव्यक्ति मानता हूँ। यदि अहिंसाका प्रचार न कर सकूँ, तो मैं अपने-आपको ही नकारूँगा। सबसे हालके अध्यादेशके आगे सिर झुका देने का यही अर्थ होगा। इसलिए जबतक यह जबानबन्दी लागू रहती है, तबतक स्थगन जारी रहना ही चाहिए। यह स्थगन जबानबन्दीके खिलाफ एक सत्याग्रहीका सादर विरोध ही है। क्या सत्याग्रह यही नहीं है कि अन्याय करनेवाला यदि अँगुली पकड़ने को लपके तो उसे पहुँचा पकड़ा दिया जाये, पूरा हाथ पकड़ा दिया जाये? क्या सत्याग्रह यही नहीं है कि यदि कोटकी माँग की जाये तो लबादा भी दे दिया जाये? पूछा जा सकता है कि सामान्य प्रक्रियाको विपरीत दिशामें क्यों मोड़ा जाये? सामान्य प्रक्रिया हिंसापर आधारित है। यदि मेरा जीवन अन्ततोगत्वा हिंसा द्वारा विनियमित होता, तो मैं बादमें पहुँचा न पकड़ा जा सके, इसलिए अँगुली भी न पकड़ने देता। यदि मैं कुछ और करता तो मूर्खता ही होती। पर यदि मेरा जीवन अहिंसा द्वारा विनियमित होता है, तो मुझे अँगुली पकड़नेवालेको पहुँचा पकड़ाने के लिए तैयार ही नहीं रहना चाहिए बल्कि उसे पकड़वा देना चाहिए। ऐसा करके मैं अन्यायीके मनमें एक विचित्र, यहाँतक कि एक खुशीका अहसास पैदा कर देता हूँ। वह उलझनमें पड़ जायेगा और उसकी समझमें नहीं आयेगा कि मेरे साथ कैसा बरताव करे। इतनी बात 'शत्रु' के बारेमें। और मेरी अपनी बात यह है कि सभी असार चीजोंको

१. देखिए पृ० १३३-३५।

त्याग देने का निश्चय करने के बाद, मेरे अन्दर उस चीजकी रक्षा करने और सहेजने के लिए अपने प्राणतक न्योछावर कर देने की पहलेसे कहीं अधिक शक्ति पैदा हो जाती है जिसे मैं सचमुच सारवान मानता हूँ। इसलिए मेरे आलोचक गलतीपर थे, जब उन्होंने मुझपर यह आरोप लगाया कि अंग्रेज जातिको बाह्य प्रकारके शस्त्र डाल देने का सुझाव[1] देकर मैंने नाजियोंके समक्ष कायरतापूर्ण आत्मसमर्पण करने का परामर्श दिया था। मैंने कहा था कि नाजी सेना यदि हिम्मत करे तो उसे ब्रिटेनको रौंद डालने दो, लेकिन अंग्रेज जाति अपने अन्दर इतनी आन्तरिक शक्ति पैदा करे कि नाजियोंके हाथ बिकने से इनकार कर दे। अपने प्राण देकर भी सारवान मूल्योंकी रक्षा करने की आन्तरिक शक्ति अपने अन्दर पैदा करने की शर्त यही है कि पहले सारहीन चीजोंका पूर्ण समर्पण कर दिया जाये।

परन्तु ये पंक्तियाँ मैं अंग्रेजोंको अपने विचारोंसे सहमत कराने के लिए नहीं लिख रहा हूँ। यह तो मैं आपको यह समझाने के लिए लिख रहा हूँ कि गला-घोंटू अध्यादेश जारी करनेवालोंके समक्ष मेरा आत्मसमर्पण आप पाठकोंके लिए सत्याग्रहका एक पदार्थपाठ है। यदि आप इस पाठको और इसके निहितार्थोंको बिना किसी दिखावे या कोलाहलके अपने जीवनमें अमलमें लाने लगेंगे, तो आपको 'हरिजन' के लिखित शब्दके रूपमें साप्ताहिक सहायताकी आवश्यकता ही नहीं रह जायेगी। साप्ताहिक 'हरिजन' देखे बिना ही आपको मालूम रहेगा कि अँगुली चाहनेवालेको पहुँचा पकड़ा'देने के सिद्धान्तके समूचे अर्थको मैं अपने जीवनमें कैसे उतारूँगा। एक पत्र-लेखकने लिखा है कि मुझे 'हरिजन' का प्रकाशन किसी भी हालतमें स्थगित नहीं करना चाहिए, क्योंकि उनका कहना है कि उससे मिलनेवाले साप्ताहिक पोषणसे उनकी अहिंसाको जीवनशक्ति मिलती है। यदि उन्होंने सचमुच ऐसा [पोषण प्राप्त] किया है, तो इस आत्म-संयमसे उन्हें साप्ताहिक 'हरिजन' की नीरस निरन्तरता बनाये रखने की इच्छाकी तुलनामें कुछ अधिक ही सीख सकना चाहिए।

अब कुछ शब्द व्यावहारिक समस्याके बारेमें। आप इन साप्ताहिकोंमें से एकके ग्राहक हैं। मैं नहीं कह सकता कि यदि कभी हुआ तो कब इनका प्रकाशन फिर शुरू किया जा सकेगा। आपका जो चन्दा आगेके लिए बचा था, उसे वापस पाने के आप हकदार हैं। वापसके लिए आपका पोस्टकार्ड आने पर प्रबन्धक, 'हरिजन', पूना, की ओरसे उतनी राशिका मनीआर्डर आपको भेज दिया जायेगा। चन्दा वापस न माँगनेवाले ग्राहकोंको, प्रकाशन पुनः आरम्भ होने पर, उनका पत्र भेजा जायेगा। यदि प्रकाशन शुरू न हुआ तो चन्देकी अप्रयुक्त शेष राशि पत्रिकाको बन्द करने से होनेवाली हानि की पूर्ति करने में लगा दी जायेगी। और यदि उसके बाद भी कोई राशि बच रही, तो वह हरिजनोंकी सेवामें खर्च करने के लिए हरिजन सेवक संघको भेज दी जायेगी। यदि 'हरिजन' का प्रकाशन छः मासके अन्दर फिर शुरू

१. देखिए खण्ड ७२, पृ० २६१-६४।

न हो सका, तो उसे अन्तिम रूपसे बन्द हुआ मान लिया जायेगा। तबतक के लिए विदा।

सेवाग्राम, ३१ अक्तूबर, १९४०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-११-१९४०

१३२. पत्र : प्रभावतीको

३१ अक्तूबर, १९४०

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तू बीमार पड़ती रहती है, यह ठीक नहीं। बीमार रहकर तू क्या काम कर सकती है? जल्दी बिलकुल अच्छी होकर चली जा।

जवाहरलाल कल गये। अब जेल जायेंगे।

जयप्रकाशके पत्रमें कुछ विशेष नहीं था। मैंने जवाब दे दिया है।

यहाँ बीमारी बनी ही रहती है। एक खटिया तो पड़ी ही रहती है। इस समय लीलावतीके भाई लक्ष्मीदास खटियासे लगे हैं। लगता है, टाइफाइड है। अच्छे हो जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५४९)से

१३३. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

३१ अक्तूबर, १९४०

चि० मुन्नालाल,

अच्छा किया, तुमने पत्र लिखा। मैं जवाब लम्बा नहीं लिखूंगा।

मेरा प्रयोग नया तो है ही। यदि मैं यह उपवास करूँगा, तो इसमें फलासक्ति-दोष तो होगा ही। लेकिन सभी आरम्भ सदोष ही होते हैं। हमें लाभालाभको तोलना चाहिए। यदि लाभका पक्ष बढ़ता दिखे, तो काम करने योग्य माना जाता है। इस मामलेमें मुझे ऐसा लगता है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५२३) से। सी० डब्ल्यू० ७१०९ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१३४. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

१ नवम्बर, १९४०

चि० मनुड़ी,

तेरा कार्ड पढ़ा। नये वर्षमें[1] तुम सब सुखी रहो। तू कब आनेवाली है? वैसे, तुझे बुलानेका मुझे बहुत उत्साह नहीं है। यहाँ अभी बीमारी चल रही है, टाइफाइड है। फिर, भीड़ भी बहुत है। लेकिन तेरी इच्छा हो, तो आ जा। मुझे अच्छा ही लगेगा। बा की इच्छा तो रहती ही है। बीमारी तो आती है और चली जाती है। तो उससे कोई अपने घर न जाये, ऐसा थोड़े ही होता है। लेकिन जैसा तुम दोनों[2] ठीक समझो, वैसा करना।

बापूके आशीर्वाद

चि० मनुबहन
बालकिरण
साउथ एवेन्यू
सान्ताक्रुज
बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६७८) से। सौजन्य: कनुभाई मशरूवाला

१३५. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

१ नवम्बर, १९४०

चि० नरहरि,

वसुमतीबहन[3] कहती है कि मेरे उपवासकी बात चल रही है, इसलिए उसकी वहाँ जानेकी इच्छा नहीं होती। मैं कहता हूँ, उसे अपना कर्त्तव्य छोड़कर यहाँ नहीं रहना चाहिए। वह कहती है, उसके जिम्मे ऐसा कोई जिम्मेदारीका काम नहीं है। मैंने कहा, इसका निर्णय तुम करोगे। वसुमतीने यह स्वीकार कर लिया है। तुम्हें

१. गुजरातमें विक्रम सम्वत्के अनुसार नया वर्ष दीपावलीके दूसरे दिनसे आरम्भ होता है। १९४० में यह दिन १ नवम्बरको पड़ा था।

२. मनुबहन और उनके पति सुरेन्द्र मशरूवाला

३. वसुमती पण्डित

केवल धर्मका विचार करके निर्णय करना है। यदि वह यहाँ रही, तो मेरी सेवाके लिए नहीं रहेगी। सेवा करनेवाले तो यहाँ अन्य बहुत लोग होंगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री नरहरि परीख/वसुमतीबहन
हरिजन आश्रम, साबरमती

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१२०)से

१३६. पत्र : मीठूबहन पेटिटको

१ नवम्बर, १९४०

चि० मीठूबहन,

चि० विजया[1] आज मनुभाई[2] के साथ रवाना हो रही है। वह बहुत कमजोर हो गई है। उसका वजन नहीं बढ़ता, यद्यपि खास बीमारी कोई नहीं है। पहले आँव था, अब आँवके कोई आसार नहीं हैं। मैंने उससे वहाँ आने के लिए कहा है। अगर आये, और कुछ हो सके तो करना। बा से मैंने सब सुन लिया है। तुम अपनी तबीयत ठीकसे नहीं सँभालती, यह उचित नहीं है। अभी तुम्हें बहुत काम करना है।

बापूके आशीर्वाद

श्री मीठूबहन पेटिट
खादी कार्यालय
मरोली, नवसारी होते हुए

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७१९) से

१ और २. विजयाबहन और मनुभाई पंचोली

१३७. पत्र : उमा अग्रवालको

सेवाग्राम, वर्धा
१ नवम्बर, १९४०

चि० ओम्[1] उर्फ सोनीसुंदरी,

खत लिखकर बड़ी महेरबानी की? मेरे नामसे भी नन्दादेवी इ० को प्रणाम करना। अब तो पहाड़ोंमें रहनेवाली बनी। हम लोगोंको याद करती है यह कुछ छोटी बात नहीं है। तुम सब खुश रहो।

बापुके आशीर्वाद

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३४४ पर प्रकाशित प्रतिकृतिसे

१३८. पाठकोंसे

मैंने जब 'हरिजनबन्धु' को बन्द करने की घोषणा[2] की थी, तब आशा की थी कि उसे एक ही हफ्तेके लिए बन्द करना पड़ेगा और वाइसरायके साथ जो पत्र-व्यवहार जारी है, उसके फलस्वरूप 'हरिजनबन्धु' का प्रकाशन फिर शुरू किया जा सकेगा। किन्तु परिणाम उसके विपरीत हुआ है। मेरी आशा निराधार सिद्ध हुई। इस परिणामको अशुभ मानने का कोई कारण नहीं है। सत्याग्रह सत्याग्रहीको कसौटी-पर कसता है, विरोधीको भी कसता है। हाँ, दोनोंकी कसौटीमें भेद अवश्य होता है। सत्याग्रही ज्यों-ज्यों प्रगति करता है, उसके दोष नष्ट होते जाते हैं। इसके विपरीत; विरोधीके दोष अधिकाधिक प्रकट होते जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप उसमें परिवर्तन होता है।

लेकिन इस समय मैं विरोधीके दोष नहीं दिखाना चाहता। बल्कि पाठकोंको संक्षेपमें यह समझाना चाहता हूँ कि 'हरिजनबन्धु' को क्यों अभी भी बन्द रखना पड़ रहा है। मेरे सामने दो विकल्प थे : या तो सरकारके नियन्त्रणोंको स्वीकार करके उनके अधीन पत्रको प्रकाशित करते रहना, या फिर नियन्त्रणोंको अस्वीकार करके 'हरिजनबन्धु' का प्रकाशन बन्द कर देना। सत्याग्रहीको दूसरा विकल्प ही शोभा देता है। अँगुली पकड़नेवालेको उसे अपना पहुँचा पकड़ा देना चाहिए। वैसे

१. जमनालाल बजाजकी पुत्री
२. देखिए पृ० १३३-३५।

सामान्य न्याय अँगुली पकड़नेवालेको निकाल बाहर करने का माना जाता है, जिससे वह पहुँचा पकड़ने की हिम्मत ही न करे। लेकिन यह नीति हिंसाके आधारपर चलनेवालेके लिए है। अहिंसक व्यक्ति इससे उलटी नीतिका आश्रय लेता है। हिंसक व्यक्ति बाह्य और क्षणभंगुर वस्तुओंकी रक्षा करने में लगा रहता है और आन्तरिक तथा शाश्वत मूल्योंको भूल जाता है, अथवा गौण मानता है। अहिंसक व्यक्ति बाह्य वस्तुओंका त्याग करने के लिए तैयार रहकर आन्तरिकका पोषण और उसकी रक्षा करता है। इसलिए अँगुली पकड़नेवालेको पहुँचा पकड़ा देने का धर्म अहिंसक व्यक्तिको प्राप्त होता है, और वह धर्म उसके लिए सब प्रकारसे सुखकर सिद्ध होता है।

अब इसका परिणाम देखें। अँगुली पकड़नेवाला विरोधी पहुँचा मिलते ही आश्चर्यचकित हो जाता है, सम्भव है क्षुब्ध भी हो जाये। बार-बार उसे ऐसे चकित कर देनेवाले अनुभव होते रहें, तो सम्भव है, वह अहिंसकका विरोध करना छोड़ दे। दूसरी ओर अहिंसक अपने धर्मका पालन करते हुए अपना बल बढ़ाता है। उसकी त्यागकी शक्ति बढ़ती है। वह अपने आन्तरिक बलका मूल्य अधिक अच्छी तरह समझता है, और चाहे जैसी आपत्तिका सामना करने की अपनी शक्तिको बढ़ाता है।

अहिंसक यानी सत्याग्रहीके नाते मुझे दूसरी नीति अपनानी पड़ी — 'हरिजन-बन्धु' बन्द करने की। इस विकल्पको स्वीकार करके मैं एक प्रकारके सन्तोषका अनुभव करता हूँ, और नरसिंह मेहताके अमर पदकी रट लगाता हूँ:

भलुं थयुं भांगी जंजाळ, सहज मळशे श्रीगोपाळ।

महादेवका कहना है कि ठीक पाठ 'सुखे भजशुं' है। क्यों, यह तो मालूम नहीं, लेकिन मुझे सदा गलत पाठ ही याद रहा है और मैंने उससे आश्वासन प्राप्त किया है, इसलिए उसीको रहने देता हूँ। मुझे श्रीगोपाल मिलेंगे तो ऐसे त्यागसे ही मिलेंगे, ऐसी मेरी श्रद्धा बराबर बढ़ती जा रही है। मेरे श्रीगोपाल, यानी प्रस्तुत सन्दर्भमें हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रता।

किन्तु पाठको, आपका क्या होगा? आपके साथ मैं हर हफ्ते वार्तालाप करता था, जो मुझे अच्छा लगता था, और मैं मानता हूँ कि आपको भी अच्छा लगता था। मैं आपको अनेक प्रकारसे सत्याग्रहका मर्म समझाने का प्रयत्न करता था। लेकिन अब? मेरा तो विश्वास है कि अगर आपने 'हरिजनबन्धु'के लेख ठीक समझे होंगे, तो मेरे इस त्यागसे और इसके बादके मेरे आचरणसे सत्याग्रहको बहुत अधिक अच्छी तरह समझ सकेंगे। मैं कबतक आपको लिखकर और बोलकर समझाता रहूँगा? मेरे आचरणसे जो आपको नहीं मिलेगा, वह मेरे वचनोंसे कभी नहीं मिलेगा। छटाँक-भर आचरण-अभ्यासकी कीमत मन-भर विचार-दर्शनसे बहुत अधिक होती है।

मेरा कहना तो आखिर इतना ही है न: खादी पहनो, रोज स्वेच्छासे कातो, हरिजनोंको अपनाओ, भिन्न धर्मावलम्बियोंके प्रति समताका भाव रखकर उनसे ऐक्य

साधो, देह और घरबारको जाने दो, लेकिन आत्मा जिसका निषेध करे वह कभी मत करो। तेरह-सूत्री कार्यक्रमका निरीक्षण करके, ऊपर जो नहीं कहा गया, वह इसमें जोड़ लीजिए और उसका अनुसरण कीजिए। फिर आपको 'हरिजनबन्धु' की आवश्यकता नहीं रहेगी। बल्कि स्वराज-रूपी गंगा सहज ही घर बैठे आ मिलेगी, यह विश्वास रखिए।

अब व्यवहारकी एक बात। आपके चन्देका साल अभी पूरा नहीं हुआ, इसलिए आपका कुछ लेना 'हरिजनबन्धु' के खातेमें निकलेगा। उसे वापस माँगने का आपको अधिकार है। आशा तो है कि 'हरिजनबन्धु' फिर कभी शुरू होगा। अगर हुआ, तो जितने हफ्तोंका आपका चन्दा बाकी होगा, उतने हफ्तोंतक वह आपको मिलेगा। लेकिन तबतक राह देखने की आपकी इच्छा न हो तो अगर आप 'हरिजन-बन्धु' के व्यवस्थापकको पूना – ४ के पतेपर एक कार्ड डाल दें तो वे बाकी पैसा आपको वापस भेज देंगे। अगर छः महीनेके भीतर 'हरिजनबन्धु' पर से नियन्त्रण उठा नहीं लिया गया, तो वह सदाके लिए बन्द हो गया माना जायेगा, और तब बाकी पैसा, समापनमें यदि कुछ नुकसान हुआ तो उसकी भरपाई करने में लगाया जायेगा। चन्देका बचा हुआ पैसा उन ग्राहकोंको भेजा जायेगा जो उसकी माँग करेंगे, और जो माँग नहीं करेंगे, उनका पैसा हरिजनोंकी सेवाके निमित्त हरिजन सेवक संघको भेजा जायेगा।

तो तबतक के लिए वन्देमातरम्।[1]

सेवाग्राम, २ नवम्बर, १९४०

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ९-११-१९४०

१. गांधीजीने एक ऐसा ही लेख हिन्दीमें भी लिखा था, जो *हरिजनसेवक*, ९-११-१९४० में प्रकाशित हुआ था। देखिए "पाठकोंसे", पृ० १४९-५१ भी।

१३९. पत्र: मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा
२ नवम्बर, १९४०

चि० मीरा,

तुम्हारा सुन्दर पत्र मिला। मैं उसे कुछ समय के लिए तो सहेजकर रख रहा हूँ। तुम्हें अपना शरीर स्वस्थ रखना चाहिए। तुमने जो चीजें चाही हैं, वे तैयार की जा रही हैं और जल्दी ही भेज दी जायेंगी; तुम्हारी खादी भी।

सप्रेम,

बापू

श्री मीराबहन
पालमपुर
जिला कांगड़ा, पंजाब

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००५८ से भी

१४०. पत्र: अमीना गुलाम रसूल कुरैशीको

२ नवम्बर, १९४०

बेटी अमीना,

सुल्ताना[1] तेरी जो शिकायत करती है क्या वह सही है? बवासीरको तूने पाल क्यों रखा है? उसे तो कटवा देना चाहिए। मस्से कटवा देने के बाद कोई कष्ट नहीं होता। यह भी हो सकता है कि कटवाने की जरूरत ही न हो। तुझे डाक्टरको दिखलाना चाहिए। इसमें हठ करने से क्या लाभ? मुझे तुरन्त लिखकर बतलाना कि तू डाक्टरका इलाज करवानेवाली है।

सबको ईद मुबारक।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७७७) से। सौजन्य: गुलाम रसूल कुरैशी

१. अमीना कुरैशीकी पुत्री

१४१. पत्र : सुल्ताना कुरैशीको

२ नवम्बर, १९४०

बेटी सुल्ताना,

तेरा पत्र मिला। तूने लिखा, यह बहुत अच्छा किया। लिखती रहना। अब तो तू बहुत बड़ी हो गई होगी। आजकल क्या पढ़ रही है? और सब लोग क्या काम करते हैं? अमीनाको लिख रहा हूँ। यह पत्र उसे देना।

बापूकी दुआ

[पुनश्च :]

आज ईद है। तुम सबको ईद मुबारक।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७६१)से। सौजन्य : गुलाम रसूल कुरैशी

१४२. पत्र : सहस्रबुद्धेको

२ नवम्बर, १९४०

भाई सहस्रबुद्धे,

तुम्हारा खत मिला। मैंने नकल भाई पटवर्धनको भेज दी है। जो प्रस्ताव हुए वह क्यों लागू नहीं होते हैं, मैं नहीं समझा हूँ।

मूल पत्रसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१४३. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेवाग्राम
३ नवम्बर, १९४०

चि० कान्ति,[1]

मैं समझा था कि तू शर्मके मारे नहीं लिखता। अब समझा कि गुस्सेके मारे नहीं लिखता था। अगर यह सच हो तो यह तुझे शोभा नहीं देता। तू कैसे समझदारीके पत्र लिखता था, भूल गया क्या? इस पत्रके साथ हरिलालका पत्र है। उसे पत्र लिखना। वह गिर पड़ा था, अब ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३६१) से। सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१४४. पत्र : कुँवरजी खे० पारेखको

सेवाग्राम, वर्धा
३ नवम्बर, १९४०

चि० कुँवरजी,

तुम्हारा पत्र मिला। मैसूरके साथ इस समय मेरा मनमुटाव है, इसलिए वहांके डाक्टरको पत्र नहीं लिख सकता। दरबारके बाहरका कोई मिल सकता है, लेकिन ऐसे किसीसे मेरी पहचान नहीं है। लेकिन डाक्टरकी जरूरत क्या है? तुम्हारा शरीर ही तुमसे सब कह देगा। नियमोंका पालन करते रहोगे तो काफी होगा।

कान्ति खुद भी वहांके किसी डाक्टरको जानता होगा। जरूरत हो तो उसके पास जाया जा सकता है। वजन वगैरह लेने का सुभीता तो वहाँ होगा ही।

तुम दोनोंको,
बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७४३) से। सी० डब्ल्यू० ७२३से भी; सौजन्य : नवजीवन ट्रस्ट

१. हरिलाल गांधीके पुत्र

१४५. पत्र : डाह्याभाई म० पटेलको

सेवाग्राम, वर्धा
३ नवम्बर, १९४०

भाई डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। नया वर्ष तुम्हें फलदायी हो। खूब सेवा करना। यह जगह इस समय आने के लायक नहीं है। नया समाचार कोई नहीं है। आश्रम ठसा-ठस भरा हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई मनोरदास पटेल
कांग्रेस दफ्तर
धोलका

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २७१२)से। सौजन्य: डाह्याभाई म० पटेल

१४६. पत्र : भोलानाथको

सेवाग्राम, वर्धा
३ नवम्बर, १९४०

भाई भोलानाथ,

आपका पत्र मिला। वहां की उपाधी[1] मैं जानता हूँ। मैं नहिं जानता क्या हो सकता है। तजवीज तो कर रहा हूं। लेकिन फलकी आशा कम है। लोगोंमें विरोध करने की शक्ति है तो विरोध अवश्य करें। ऐसा न समजा जाय कि ऐसी ज्यादतीयां को बरदास्त करने की मैं सलाह दे सकता हूं। लोग भले टूट जाय लेकिन बलात्कारके वश कभी न होवे।

बापुके आशोर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १३११)से। गांधी शताब्दी स्मारक ग्रंथ – युग पुरुष, पृ० १८४ भी

१. यहाँ सन्दर्भ युद्धके लिए जबरदस्ती उगाहे जानेवाले चन्देका है; देखिए "पत्र: लॉर्ड लिनलिथगोको", पृ० १२९-३० और १६२।

१४७. पत्र : सरस्वती गांधीको

सेवाग्राम
३ नवम्बर, १९४०

चि० सुरु[1],

तू कैसी लड़की, कांतिके पास पहोंची तो न मुझको न वा को लिखती है। यह ठीक नहिं है, सब अच्छे होंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१८०) से। सी० डब्ल्यू० ३४५४ से भी; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

१४८. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
३ नवम्बर, १९४०

प्रिय भगिनि,

तुमारा खत बहूत दिनोंके बाद मिला। तुमारी सिंध यात्राका बयान ठक्कर बापाने मुझे दिया था। वे सेवाग्राम आ भी गये।

सिंधका मामला बहूत कठिन है। मौलाना वहां जायंगे। मुझे आशा नहिं है कि वे कुछ कर सकेंगे। सिंधके मुस्लीम पीरोंके हाथोंमें है। काफी पीर बहूत झनुनी हैं, चंद जमींदार भी लुटेरु हैं। ऐसी हालतमें नेशनलिस्ट मुस्लिम कुछ नहिं कर पायेंगे। बात यह है कि हिंदु बिलकुल डरपोक है। त्यागशक्ति भी उनमें कम है। देखें क्या हो सकता है।

मैं अनशन करने का विचार कर रहा हूं। करूंगा या नहिं कुछ कह नहिं सकता। सब ईश्वरपर निर्भर है। लेकिन उस विचारने मेरेपर सवारी की है। तुम्हारे घभराहटमें पड़ने की बात नहिं है। ईश्वरेच्छा होगी तब ही हो सकेगा। अगर हुआ तो खुश होने की बात समजना। हमारे धर्ममें अनशन आखरी तपश्चर्या है। भीड़के[2] समय यही एक उपाय माना गया हैं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९९१) से। सी० डब्ल्यू० ३०८८ से भी; सौजन्य: रामेश्वरी नेहरू

१. कान्तिलाल गांधीकी पत्नी
२. गांधीजी का अभिप्राय 'भीर' से है

१४९. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेवाग्राम, वर्धा
४ नवम्बर, १९४०

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

मैं नहीं जानता कि आपतक अपनी शिकायतोंको मेरा अभी भी ले जाना उचित है अथवा नहीं। लेकिन जबतक आप मुझे रोक नहीं देंगे, तबतक मेरा विचार उन्हें यथापूर्व भेजते रहने का है।

अलवरमें युद्धके लिए जोर-जबरदस्तीसे की जानेवाली वसूलीके बारेमें मैंने २२ अक्तूबर, १९४० को आपको पत्र[1] लिखा था। यह पत्र भी उसी विषयमें है। २८ अक्तूबर, १९४० का एक अन्य तार इस प्रकार है :

> **सिपाहियोंने मुझे पीटते-पीटते बेहोश कर दिया। नाजिमके आदेशपर युद्ध-कोषके लिए मुझसे २२ रुपये जबरदस्ती वसूल करने के लिए मुझे धूपमें रखा। कृपया आप हस्तक्षेप करें। छज्जूराम, बलदेवगढ़, निजामत थानागाजी, अलवर रियासत।**

मेरी जानकारीके अनुसार वहाँके दीवान तथा उनके सचिव दोनों अंग्रेज हैं, जिनकी सेवाएँ पॉलिटिकल डिपार्टमेंटने रियासतको प्रदान की हैं। कहा जाता है कि सारा प्रशासन पॉलिटिकल डिपार्टमेंटके अधीन है। यदि ऐसा ही है तो २२ अक्तूबर के पत्रमें पेश की गई मेरी दलील दूने जोरसे लागू होती है। मुझे एक पत्र मिला है जिसमें लिखा है कि जबरदस्ती चन्दा उगाहने के कई मामलोंमें बलका भी प्रयोग किया गया है।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. देखिए पृ० १२९-३०।

२. वाइसरायके निजी सचिव जे० जी० लेथवेटने ८ नवम्बरको इस पत्रके उत्तरमें लिखा था: "महामान्यने . . . २३ अक्तूबरका आपका पत्र पाते ही . . . एकदम जाँच करनेका आदेश दे दिया था, लेकिन अभी नतीजा प्राप्त नहीं हुआ है। वे पॉलिटिकल डिपार्टमेंटके अधिकारियोंको आपके हालके पत्रकी एक नकल भी भिजवा रहे हैं।"

१५०. पत्र : चारुचन्द्र भण्डारीको

सेवाग्राम, वर्धा
४ नवम्बर, १९४०

प्रिय चारु बाबू,

तुम्हारी आस्था फलवती होगी। कभी डगमगाना नहीं।[1]

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६९८) से। सी० डब्ल्यू० १४६८ से भी; सौजन्य : ए० के० सेन

१५१. पत्र : सी० ए० ऐयामुतूको

सेवाग्राम
४ नवम्बर, १९४०

प्रिय ऐयामुतू,

आपका पत्र[2] मिला। यह तो पहेली-जैसा है। आप पहेलीको स्पष्ट करें तो मैं आपकी बातको ज्यादा अच्छी तरह समझ सकूँगा। बहरहाल, मैं आशा करता हूँ कि आप सच्चे साबित होंगे; फिर तो सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

आपका
बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. देखिए "पत्र : चारुचन्द्र भण्डारीको", पृ० १३० भी।

२. २९ अक्तूबरका; इसमें अखिल भारतीय चरखा संघकी तमिलनाडु शाखाके मन्त्री सी० ए० ऐयामुतूने गांधीजी से खादी-कार्यकर्ताओंमें खादीमें विश्वासकी कमी होने की शिकायत की थी।

१५२. पुर्जा : कृष्णचन्द्रको

४ नवम्बर, १९४०

कागदकी रजाई देखा जाय। कागदकी पुरा काम देती है। लेकिन तो भी चाहिये तो कम्बल। समयकी तो हरज होनी नहीं चाहिये। जब मिले तब लेवे। कहां जाना है। बरबडीसे[1] आरामसे मिले तो।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३६१)से

१५३. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेवाग्राम, वर्धा
४ नवम्बर, १९४०

चि० शर्मा,

तुमारी बात समझा हूं। सब ईश्वरके हाथोंमें है। उसीके हाथमें हम सब हैं। वह चाहेगा मेरेसे करवायगा। तुमारे अपने काममें व्यानावस्थित हो जाना है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २९०-९१ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

१५४. पत्र : प्रभुदयाल विद्यार्थीको

४ नवम्बर, १९४०

चि० प्रभुदयाल,

तुमारा खत सुंदर है। तुमारा नाम [व्यक्तिगत सत्याग्रहके लिए] तो मेरे पास है ही। लेकिन इस वक्तकी बात कुछ और है। कर्त्तव्यमें परायण रहो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६९१)से

१. सेवाग्रामके निकट एक गाँव

१५५. पत्र : चोइथराम गिडवानीको[1]

[६ नवम्बर, १९४० के पूर्व][2]

सिन्धमें कांग्रेसजनोंका बस एक यही ध्येय होना चाहिए कि वहाँ बुरी तरह हावी आतंकसे प्रान्तको छुटकारा दिलाया जाये। यदि सिन्धके कांग्रेसजन यह नहीं कर सकते, तो सार्वजनिक जीवनसे छुट्टी ले लेना ही उनके लिए बेहतर है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ९-११-१९४०

१५६. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

६ नवम्बर, १९४०

प्रिय आनन्द,

अमतुस्सलामबहन सिन्धमें आजकल होनेवाले हत्याकाण्डोंको रोकनेके लिए अपनी जानकी बाजी लगाने सिन्ध जा रही है। वह किसी मुसलमान दोस्तके पास जायेगी और हाजी सर अब्दुल्ला हारूँसे अपनी इस कोशिशमें मदद देने की अपील करेगी।[3] तुम उसकी हर तरहसे मदद करना। उसे कीकीबहनके[4] पास भी ले जाना और उसके लिए जो भी कर सको, जरूर करना।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८१) से

१. सिन्ध प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष
२. यह पत्र दिनांक "सक्खर, ६ नवम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित एक समाचारमें छपा था।
३. देखिए अगला शीर्षक; पृ० १०४ भी।
४. कीकीबहन लालवानी, जे० बी० कृपलानीकी बहन

१५७. पत्र : अब्दुल्ला हारूँ रशीदको

सेवाग्राम
६ नवम्बर, १९४०

सेठ श्री हाजी अब्दुल्ला हारूँ,

दस बरस हुए तबसे बहन अमतुस्सलाम मेरे पास रहती है। वह अपनी इच्छासे मेरे पास आई थी। उसकी उम्र छत्तीस बरसकी है। वह पटियालाके मीर मुंशी मरहूम कर्नल अब्दुल मजीदखाँ साहेबकी पुत्री है। उसे बचपनसे हिन्दू-मुस्लिम एकता की लगन रही है। सिन्धमें जो खून हो रहे हैं, उनसे मैं तो चिन्तित हूँ ही, लेकिन बहन अमतुस्सलाम भी चिन्तित है। इसलिए उसे आपके पास भेज रहा हूँ — खिलाफतके युगमें हमारे जो आपसी सम्बन्ध बने थे उनके बलपर। मेरी मान्यता है कि आप चाहें तो ये खून बन्द करने में बड़ी भूमिका अदा कर सकते हैं। मेरे सामने इस समय राजनीतिक सवाल नहीं है। इसमें इन्सानियतका सवाल है। बहन अमतुस्सलाम राजनीति नहीं जानती, उसमें उसे रुचि भी नहीं है। वह कट्टर मुसलमान है। 'कुरान शरीफ' पढ़ने में वह कभी आलस नहीं करती। बीमार न हो, तो बराबर रमजान के रोजे रखती है। अनेक मुसलमानोंकी चुपचाप सेवा करती है। बहादुर है। उसका इरादा है कि अगर ये खून बन्द न हों, तो वह अपना शरीर अर्पण कर दे। मैंने उसे इसमें प्रोत्साहन दिया है। मेरी उम्मीद है कि इसमें कोई मुझे या उसे गलत नहीं समझेगा। मेरे पास उससे ज्यादा चुस्त और ईमानदार आदमी या औरत नहीं है। और जब वह इस्लामकी इज्जत बचाने और हिन्दुओंकी सेवा करने में अपनी जान दे देना चाहती है, तो उसे आशीर्वाद देना मेरा धर्म हो जाता है।

आपका,
मो० क० गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२१९) से। महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे भी; सौजन्य : नारायण देसाई

१५८. तार: आनन्द तो० हिंगोरानीको

वर्धा
७ नवम्बर, १९४०

आनन्द हिंगोरानी
अपर सिन्ध कालोनी
कराची सदर

अमतुस्सलाम नौ तारीखको तीसरे पहर पहुँच रही है। लेने पहुँच जाना।[1]

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

१५९. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको

वर्धा
७ नवम्बर, १९४०

मुझे ऐसे अनेक तार मिलते रहे हैं जिनमें मुझसे संकल्पित उपवास न करने को कहा गया है। लगभग सभी तार उन मित्रोंके हैं जो मेरे स्वास्थ्यके बारेमें चिन्तित हैं, और जो सोचते हैं कि जिन्दा रहकर मैं अब भी देशकी उपयोगी सेवा कर सकता हूँ। एक या दो तारोंमें मेरी कटु आलोचना भी की गई है और मुझे बतलाया गया है कि देशकी राजनीतिमें उपवासका बिलकुल कोई स्थान नहीं, उपवाससे देशके राजनीतिक वातावरणमें गड़बड़ी पैदा होती है और स्वतन्त्रता-संग्रामके दौरान सरकारका विरोध करनेवाले पक्षकी कार्यक्षमतापर बुरा प्रभाव पड़ता है। मैं अपने मित्रों तथा आलोचकों दोनों का आभारी हूँ। कार्य-समितिके सदस्योंने और मैंने भी संकल्पित उपवासके बारेमें काफी विचार-विमर्श कर लिया है।

व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाका विस्तार हो रहा है, अतः उपवासका विचार फिलहाल अपने-आप ही स्थगित हो गया है। लेकिन इतना मैं बतला दूँ कि जितना-कुछ कहा गया है, उस सबमें एक बात भी मुझे ऐसी नहीं लगी जिसने राजनीति-

१. देखिए "पत्र: आनन्द तो० हिंगोरानीको", पृ० १६५, और पिछला शीर्षक भी।

समेत जीवनके सभी क्षेत्रोंमें उपवासकी उपयुक्तता और औचित्यके बारेमें मुझे अपनी हमेशाकी राय बदलने पर विवश कर दिया हो। मैं मानता हूँ कि यह एक बिलकुल नया अस्त्र है। मैं यह भी मानता हूँ कि जैसे सविनय अवज्ञाके अस्त्रका उपयोग हर कोई नहीं कर सकता, उसी तरह इस अस्त्रका उपयोग इसके विशेषज्ञ ही कर सकते हैं, अन्य कोई नहीं। परन्तु सविनय अवज्ञाका उपयोग जहाँ उन लोगोंके लिए ही है जिनके पास अपेक्षित योग्यताएँ हों, वहाँ उपवासके अस्त्रके उपयोगके लिए तो कहीं ज्यादा बड़ी योग्यताओंकी आवश्यकता है। मैं मानता हूँ कि मेरे पास वे योग्यताएँ मौजूद हैं। ईश्वरने १९०६[1] से ही अर्थात् पिछले ३४ वर्षोंसे, मुझे इस दिशामें अपने-आपको सोच-समझकर प्रशिक्षित करने के अवसर दिये हैं। परन्तु उपवास यान्त्रिक ढंगसे नहीं किया जा सकता। इसे तो अदृश्य शक्तिकी प्रेरणापर, उसके आदेशके पालनके रूपमें ही अपनाया जा सकता है — उस अदृश्य शक्तिको आप चाहे अन्तरात्माकी आवाज कहें या ईश्वर या अन्य जो भी नाम दें। मैंने उपवास करने की सम्भावना इसलिए बताई है कि मेरे अन्दर कुछ है जो मुझे ऐसा करने की प्रेरणा दे रहा है। मैं स्वयं भी उससे संघर्ष कर रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि आत्मा कितनी ही तत्पर क्यों न हो, शरीर तो दुर्बल है। मैं जानता हूँ कि उपवासके दौरान पर्याप्त मात्रामें जल ग्रहण न कर पाने से उपवास, विशेषकर शुरूकी अवस्थाओंमें, एक तरहसे असहनीय ही बन जाता है। परन्तु मैं समझता हूँ कि शरीर कितना ही दुर्बल क्यों न हो, एक बार जब अदृश्य शक्ति, अन्य सभी ताकतोंको पीछे ढकेलकर, मुझपर अपना अनन्य आधिपत्य जमा लेगी, तब शारीरिक दुर्बलतापर विजय पाई जा सकती है। मैंने अभी ऐसा महसूस नहीं किया है और जबतक ऐसा महसूस नहीं करूँगा, स्वाभाविक है कि मैं उपवास शुरू नहीं करूँगा। और यदि मैंने ऐसा महसूस किया, तो फिर मैं उसके आगे अपनेको विवश महसूस करने लगूँगा; तब मित्रोंके कृपापूर्ण आग्रह या कटु आलोचकोंके क्रोधपर कान देने की शक्ति ही मेरे अन्दर नहीं रह जायेगी। इसीलिए सब लोगोंसे मेरा यही अनुरोध है कि धैर्य रखें और देखें कि आगे क्या-कुछ बनता है। बेशक, देश आज जिस संकटसे गुजर रहा है, उसमें हर व्यक्ति चाहे तो मेरी सहायता कर सकता है। मैंने वे अनेक तरीके बता दिये हैं जिनसे प्रत्येक व्यक्ति — वह मित्र हो या आलोचक — मुझे सहायता पहुँचा सकता है। लोग किन-किन तरीकोंसे सहायता कर सकते हैं, इसके बारेमें लम्बा-चौड़ा विवरण प्रस्तुत करते हुए एक वक्तव्य देने की मेरी कोई इच्छा नहीं है। 'हरिजन' साप्ताहिकोंका प्रकाशन बन्द कर देने के बाद अब सार्वजनिक वक्तव्य जारी करने की मेरी इच्छा मर चुकी है। यह वक्तव्य तो मुझे अनेक जिज्ञासुओंके प्रति आभार प्रकट करने तथा जनताकी चिन्ता दूर करने के लिए देना पड़ गया है।[2]

१. हितवाद में यहाँ "१९०६ या १९०७" दिया गया है; देखिए खण्ड ३९, पृ० १६१।

२. आगेका अंश हितवादसे उद्धृत किया गया है, जिसके अनुसार गांधीजी की भेंटवार्ता एसोशिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिके साथ हुई थी।

'हरिजन' साप्ताहिकोंके भविष्यके बारेमें पूछे जाने पर गांधीजी ने कहा:

आपको जल्दी ही 'हरिजन' का विदाई अंक[1] देखने को मिलेगा, जिसमें प्रकाशन पूरी तरह बन्द होने की घोषणा की जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन, सं० ६, १९४२, फाइल सं० ३/४२/४१-पॉल० (१); सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। हितवाद, १०-११-१९४० भी

१६०. सत्याग्रहियोंके लिए निर्देश

(१) सरकारने एक असाधारण परिस्थिति पैदा कर दी है। इसे देखते हुए मैंने कार्य-समितिसे परामर्श करने के बाद सविनय अवज्ञाका क्षेत्र और विस्तृत कर दिया है और फिलहाल मैं प्रतिरोधियोंका चुनाव कार्य-समितिके सदस्यों, केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान-मण्डलोंके कांग्रेसी सदस्यों और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्योंमें से करना चाहता हूँ।

(२) केवल वही लोग चुने जायेंगे जो मेरी निर्धारित की हुई शर्तोंको पूरा करते हों, जो प्रतिरोध करने के लिए खुद राजी हों और जो ऐसा करने के लिए अन्य प्रकारसे भी स्वतन्त्र हों।

(३) चुनावका तरीका इस प्रकार है: पहले-पहल कार्य-समितिके सदस्य मुझे ऐसे सदस्योंकी सूचियाँ भेजेंगे और कोई भी ऐसा व्यक्ति सविनय अवज्ञा नहीं करेगा जिसके नामकी मैंने स्वीकृति न दी हो। किसी भी सूचीमें ऐसे किसी व्यक्तिका नाम शामिल नहीं किया जाना चाहिए जो जेल-जीवनके लिए शारीरिक रूपसे अयोग्य हो। मेरे पास जो नाम आ चुके हैं या जो बादमें आ सकते हैं, उनमें से भी नाम चुनकर मैं सूचियोंमें परिवर्तन कर सकता हूँ।

(४) नाम मेरे पास पहुँच ही जायें, इसे सुनिश्चित करने के लिए सभी नाम किसी व्यक्तिके जरिये भेजे जायें।

(५) कोई भी व्यक्ति अपने जिलेके जिला मजिस्ट्रेटको पहलेसे यह सूचना दिये बिना सविनय अवज्ञा नहीं करेगा कि वह उसे किस समय, किस स्थानपर और किस रीतिसे करने जा रहा है।

(६) उचित यही रहेगा कि शहरोंमें इस प्रयोजनके लिए सार्वजनिक सभाएँ न की जायें। गाँवोंमें सभाएँ की जा सकती हैं। सबसे अच्छा और आसान तरीका यह है कि प्रतिरोधी किसी एक दिशामें पैदल चल पड़े और चलते हुए रास्तेमें मिलने-वाले व्यक्तियोंको नीचे दिया हुआ नारा सुनाता रहे और इस क्रमको तबतक जारी रखे जबतक कि उसे गिरफ्तार नहीं कर लिया जाये। मैं इसी तरीकेको ज्यादा अच्छा

१. १० नवम्बरका, जिसमें दो लेख दिये गये थे; देखिए पृ० १३३-३५ और १४९-५१।

मानता हूँ। इसमें किसी नुकसानकी गुंजाइश नहीं और खर्च भी विशेष नहीं है तथा यह प्रभावकारी भी है। बहसकी जरूरत नहीं है। यह सारा ध्यान युद्धके ही एक अकेले मसलेपर केन्द्रित कर देता है। इसके पीछे विचार यह है कि इस आन्दोलनको सार्वजनिक सविनय अवज्ञाका रूप न लेने दिया जाये। नारा यह है: "धन और जनसे ब्रिटेनके युद्ध-प्रयत्नोंको सहायता पहुँचाना गलत है। करणीय केवल एक कार्य है — अहिंसात्मक प्रतिरोधके जरिये सभी प्रकारके युद्धका प्रतिरोध करना।" इस नारेको उस प्रान्तकी भाषामें अनूदित किया जाना चाहिए जहाँ सविनय अवज्ञा की जानी हो।

(७) सविनय अवज्ञा एक ही व्यक्तिको करनी है। एक ही समयपर कई व्यक्तियोंको अलग-अलग करने की जरूरत नहीं। अगर सम्भव हो, तो यह सारा कार्यक्रम एक महीनेमें पूरा कर लिया जाये।

(८) सविनय अवज्ञा करते समय सभी प्रदर्शनोंसे बचना चाहिए।

(९) चूँकि प्रचारके सामान्य साधन बन्द कर दिये गये हैं, हमें इस बातपर निर्भर करना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति स्वयं ही अपना समाचारपत्र बन जाये। सत्याग्रह प्रचारके सामान्य साधनोंपर आश्रित नहीं है और न उसे रहना चाहिए। इनके बन्द कर दिये जाने पर हमें अपनेको असहाय महसूस नहीं करना चाहिए, और देखा जाये तो इस समय भी अधिकांश हमारे लिए बन्द कर ही दिये गये हैं। यह भी खूब समझ लेना चाहिए कि एक दिशाकी ओर पैदल चलते-चलते नारा दोहराने से यह आन्दोलन अत्यन्त ही सहज-सरल बन जाता है।

(१०) गोपनीयतासे बचना चाहिए। इसीलिए साइक्लोस्टाइल आदि मशीनोंका उपयोग तभी किया जाना चाहिए जब उनके मालिक उनसे हाथ धो लेने के लिए तैयार हों। नकलें तैयार करने का सबसे सस्ता तरीका कम्पोजिंग ट्रेका इस्तेमाल है। उनको तैयार करने का नुस्खा स्थानीय तौरपर हासिल किया जा सकता है। (बादमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका कार्यालय उनको भिजवाने की कोशिश करेगा।) लेकिन गलतियाँ न रह पायें, इसका अचूक तरीका यही है कि पाण्डुलिपिकी अनेक नकलें हाथसे ही कराई जायें। पिछले सत्याग्रहके दौरान इस तरीकेका व्यापक पैमानेपर प्रयोग किया गया था।

(११) कांग्रेस-कोषको गुप्त रखने की जरूरत नहीं। यदि सरकार उसे जब्त करना चाहे तो कर सकती है। हमें जीवन-मृत्युके इस संघर्षमें अपनी सारी धन-राशि और अन्य सम्पत्तिकी बलि चढ़ाने को तैयार रहना चाहिए। हमें आन्दोलनके दैनिक खर्चका पैसा जुटाने के लिए देशकी जनतापर निर्भर रहना सीख लेना चाहिए। इसीलिए हमें अपनी आवश्यकताएँ भी न्यूनतम कर देनी चाहिए। किसीको भी कांग्रेसकी ओरसे आर्थिक सहायता पाने की आशा नहीं करनी चाहिए।

(१२) हमारी नीति यह होनी चाहिए कि हम बन्दियोंके श्रेणीकरणसे बचें। किसीको किसी भी हालतमें ऊँची या निचली श्रेणी माँगने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। किसी भी 'ए' श्रेणीके बन्दीके लिए अनिवार्य नहीं कि वह स्वयंको मिली

विशेष सुविधाओंका लाभ उठाये ही। और यदि उनका लाभ उठाने से उसे अपना स्वास्थ्य बनाये रखने में मदद मिलती हो तो उसमें लज्जा महसूस करने की भी कोई बात नहीं।

(१३) जेलके नियमों और अनुशासनका तबतक सख्तीके साथ पालन करना चाहिए जबतक वे मानवीय गरिमाके आड़े न आयें। किसी भी मेहनतके कामसे सिर्फ इसलिए बचने की इच्छा नहीं करनी चाहिए कि वह शारीरिक श्रम है। हमें श्रमकी गरिमा समझनी चाहिए।

(१४) हड़तालें सामान्यतया नहीं होनी चाहिए। बार-बार करनेसे हड़तालोंकी शक्ति नष्ट हो जाती है। सम्भावना है कि हड़तालोंपर प्रतिबन्ध लगा दिया जायेगा। प्रतिबन्धकी उम्मीद रखना ही ज्यादा अच्छा है। हमारा सविनय प्रतिरोध बिलकुल सीमित है। यह सार्वजनिक नहीं है।

(१५) यदि कांग्रेसको अवैध संगठन घोषित कर दिया जाये, तो भी कोई अन्तर नहीं पड़ना चाहिए। मुझे जबतक स्वतन्त्र रहने दिया जायेगा, मैं आन्दोलनका संचालन करता रहूँगा। यदि लोगोंने अहिंसाको अपने दिमागमें बैठा लिया है, तो मेरे गिरफ्तार हो जाने पर वह स्वयं अपना प्रभाव करती रहेगी। कांग्रेसजनोंको शान्त और विवेकशील बने रहना चाहिए। प्रत्येकको अपनी ही बुद्धिसे आगे कदम उठाना है। यदि किसी व्यक्तिको लगे कि उसे सविनय अवज्ञा करनी चाहिए, तो उसका मार्ग स्पष्ट ही है। यदि वह व्यक्ति—पुरुष या महिला—इसमें असमर्थ हो तो उसे रचनात्मक कार्यक्रमकी तेरह मदोंमें से किसी एकपर अपनी समूची शक्ति केन्द्रित करनी चाहिए। जेलसे बाहर रहूँ या जेलके अन्दर, मैं अपना उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं करूँगा। कांग्रेसके रचनात्मक कार्योंसे सम्बन्धित संगठनोंमें काम करनेवाले लोग सविनय अवज्ञामें अलग रह सकते हैं।

(१६) कांग्रेस जबतक एक वैध संगठनकी तरह काम कर रही है, तबतक मौजूदा अध्यक्षकी गिरफ्तारीकी सूरतमें प्रान्तीय समिति अपने अध्यक्षका चुनाव करेगी। चुने हुए व्यक्तिके चुनावकी पुष्टि मुझसे कराई जानी चाहिए। यदि वह मेरी शर्तें पूरी नहीं करता होगा, तो मैं उसके जरिये काम नहीं चला सकूँगा।

(१७) जिन प्रान्तोंमें कार्य-समितिका कोई सदस्य नहीं है, उनकी प्रान्तीय समितिके अध्यक्ष मेरे साथ सम्पर्क स्थापित करेंगे और मुझे अपनी सिफारिशें भेजेंगे।

(१८) यदि मैं उपवास करने को बाध्य हुआ, तो मुझे आशा है कि कांग्रेसजन यह महसूस नहीं करेंगे कि उनके किये कुछ नहीं होगा, बल्कि वे रचनात्मक कार्यकी दिशामें और अधिक प्रयत्न करने के लिए प्रेरित होंगे। यदि उपवास होता है तो उसकी परिणति यही होनी चाहिए कि खादी तथा ग्रामोद्योगकी वस्तुओंका प्रचलन सामान्यतः सार्वत्रिक बन जाये, अस्पृश्यता पहले जमानेकी प्रथा बनकर रह जाये और साम्प्रदायिक एकता स्थायी सचाई बन जाये।

(१९) कांग्रेसजनोंको अपने भाषणों और अपने कार्योंके द्वारा यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि वे न तो फासिस्टोंके समर्थक हैं और न नाजियोंके ही, लेकिन वे

या तो सभी प्रकारके युद्धोंके या कमसे-कम ब्रिटिश साम्राज्यवादकी ओरसे चलाये जा रहे युद्धके विरोधी हैं। ब्रिटिश राष्ट्र अपने जीवनकी रक्षाके लिए जो प्रयत्न कर रहा है, उसके साथ कांग्रेसजनोंकी सहानुभूति तो है, लेकिन वे स्वयं भी एक पूर्णतः स्वतन्त्र राष्ट्रके नागरिकोंकी तरह रहना चाहते हैं। इसलिए उनसे यह आशा नहीं की जानी चाहिए कि वे अपनी स्वतन्त्रताकी कीमतपर ब्रिटेनकी सहायता करेंगे। कांग्रेसजन किसी भी राष्ट्रके प्रति दुर्भावना नहीं रखते। वे संसारमें स्थायी शान्ति स्थापित करने में अपनी भूमिका अदा करना चाहते हैं।

मो० क० गांधी

सेवाग्राम, वर्धा, ८ नवम्बर, १९४०

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन, संख्या ६, १९४२, फाइल सं० ३/४२/४१-पॉल० (१)। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१६१. तार : मदनमोहन मालवीयको[1]

सेवाग्राम
[९ नवम्बर, १९४० या उसके पूर्व][2]

पण्डित मालवीयजी
हिन्दू विश्वविद्यालय
बनारस

आपका प्रेम जानता हूँ। आपकी चिन्ताको समझता हूँ। मैं प्रभुके हाथोंमें हूँ। यदि हो सका तो टालूँगा।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल। हिन्दू, १०-११-१९४० से भी

१ और २. प्रस्तुत तार दिनांक "बनारस, ९ नवम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित एक समाचार में छपा था। यह तार मालवीयजीके उस तारके जवाबमें था जो हिन्दू, ८-११-१९४० के मुताबिक इस प्रकार था: "सरकारने जो नीति अपनाई है वह शोचनीय है। उत्तेजना बहुत बढ़ी है। देश बुरी स्थितिमें है, और आगे समय बहुत खराब लगता है। लोगोंके बीच आपकी उपस्थिति जरूरी है, क्योंकि जो सेवा आप कर सकते हैं वह और कोई नहीं कर सकता। संकटकी ऐसी घड़ीमें और इस उम्रमें उपवास करना, कर्त्तव्यसे भागना होगा। कृपया उसे टालिए।"

१६२. तार : आनन्द तो० हिंगोरानीको

वर्धागंज
९ नवम्बर, १९४०

आनन्द हिंगोरानी
अपर सिन्ध कालोनी
कराची सदर

अमतुस्सलाम शनिवारको अहमदाबाद मेल से पहुँच रही है। स्टेशन पर मिलो [और] ठहराने को व्यवस्था करो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

१६३. पत्र : महादेव देसाईको

सेवाग्राम, वर्धा
९ नवम्बर, १९४०

चि० महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। पत्र-व्यवहारकी नकल भेजी है। मेरे आशीर्वाद तो साथ ले ही गये हो। देवदासने मुझसे मीटिंगके लिए सन्देश माँगा था, लेकिन मैं कुछ भेज नहीं सका। आजकल मुझे किसीको कोई सन्देश भेजना अच्छा नहीं लगता। इसीलिए मैंने वहाँ भी नहीं भेजा।

मेरी मान्यता है कि मुझे पकड़ेंगे, और वह भी जल्दी। मैं तो तैयार ही हूँ।

ब्रह्मदत्तके[1] बारेमें समझा। वह ठीक जगह पहुँच गया है। देखता हूँ, यह प्रयोग दोहराया नहीं जा सकता।

चरखा संघका काम आज पूरा किया।

१. जवाहरलाल नेहरूके बाद तीसरे व्यक्तिगत सत्याग्रही। इन्हें ७ नवम्बरको दिल्लीमें गिरफ्तार किया गया था।

निर्देश[1] ब्रजकृष्ण दिखायेगा। उन्हें पढ़ जाना। कोई सुधार सुझाना हो तो सुझाना। वाइसरायवाला पत्र लिख ही नहीं सका। अब कल लिखूंगा।[2] रात्रि-जागरण नहीं करूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य: नारायण देसाई

१६४. पत्र: अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
९ नवम्बर, १९४०

बेटी अमतुल सलाम,

तेरा खत मिला है। मौलाना साहेबसे बात हूई है। बात यह है मेरा खत नहिं देना है। लेकिन मेरे नामसे गई है।[3] मेरा कामके लिये और मेरी बेटीकी हसीयतसे और क्या चाहिये। उनके [य]हां ठहर सकती है तो अवश्य ठहरेगी। मैं खुश हूं। और प्या०[4] से।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३५) से

१६५. पत्र: अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
१० नवम्बर, १९४०

बेटी अ० स०,

मैं मीटींग कर रहा हूं। तुझे फोन दिया था। आशा है, सब ठीक चल रहा होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३६) से

१. देखिए पृ० १६९-७२।
२. यह पत्र वाइसरायके निजी सचिवको लिखा गया था; देखिए पृ० १७५-७६।
३. अमतुस्सलाम कराची गई थीं; देखिए "तार: आनन्द तो० हिंगोरानीको", पृ० १६७।
४. प्यारेलाल

१६६. पत्र: सर जे० जी० लेथवेटको

सेवाग्राम, वर्धा
११ नवम्बर, १९४०

प्रिय श्री लेथवेट,

आपके इसी महीनेकी २ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद।

मैं इस पत्रके लिए कोई क्षमा-याचना नहीं करूँगा। कारण, समाचारपत्रोंके सम्बन्धमें सरकारकी कार्रवाइयोंके जवाबमें मैंने सरकार और कांग्रेसके संघर्षपर सार्वजनिक वक्तव्य देना बन्द कर दिया है और मैं अपनी योजनाओंके सम्बन्धमें कोई गोपनीयता रखना नहीं चाहता। इसलिए जबतक वाइसराय महोदय अन्यथा नहीं चाहेंगे, आपको समय-समयपर पत्र भेजता रहूँगा।

मुझे आशा थी कि मैं सविनय अवज्ञाको दो या तीन प्रातिनिधिक हैसियतवाले व्यक्तियोंतक सीमित रख सकूँगा और यदि आवश्यकता हुई और भीतरसे आवाज आई तो एक सीमित या असीमित उपवाससे उसमें स्वयं योग दूँगा। लेकिन कार्य-समितिके सदस्य इस संकल्पित उपवासके विषयमें बहुत चिन्तित थे। सभी तरहके लोगों और संस्थाओंकी ओरसे भी मेरे पास ऐसे तार आये जिनमें मुझपर उपवास न करनेके लिए दबाव डाला गया था। मुझे लगा कि यदि मुझे उपवास नहीं करना है, तो पण्डित जवाहरलालके सम्बन्धमें सरकारके कदमका किसी तरह जवाब तो जरूर देना चाहिए।[1] मेरा संयम इस बातपर निर्भर था कि सरकार भी अपने व्यवहारमें अनुरूप संयम दिखाती। मैंने अपने ३० सितम्बरके पत्रमें[2] अपनी यह आशा इन शब्दोंमें व्यक्त की थी:

> मैं यह आशा करता रहूँगा कि कांग्रेसकी स्थितिके पीछे जो भावना है, सरकारके लिए उसी भावनाके अनुरूप अपनी नीतिको कार्यान्वित कर सकना सम्भव होगा।

लेकिन मैं शिकायत नहीं करता, मुझे करनी भी नहीं चाहिए। हाँ, यह मैं जरूर चाहता हूँ कि अपनी योजनामें किये गये परिवर्तन समझा दूँ। परिवर्तित योजनामें सविनय अवज्ञा कुछ विशेष वर्गोंसे चुने गये योग्य व्यक्तियोंतक बढ़ा दी जायेगी। अभी जिन वर्गोंको लिया गया है, वे हैं — कार्य-समितिके सदस्य, विधान-सभाओंके सदस्य, अ० भा० कां० कमेटीके सदस्य और कुछ अन्य। पण्डितजीके साथ जिस ढंगसे बरताव किया गया, उससे और लगभग उसीके साथ-साथ श्री अच्युत पटवर्धनकी

१. जवाहरलाल नेहरू ३१ अक्तूबरको भारत-रक्षा कानूनके अधीन गिरफ्तार किये गये थे और ५ नवम्बरको उन्हें कुल मिलाकर ४ वर्षकी सख्त कैदकी सजा दी गई थी।

२. लॉर्ड लिनलिथगोको; देखिए पृ० ७७-७९।

गिरफ्तारीसे, जब कि वे अहिंसामें अपने विश्वासकी घोषणा कर चुके हैं, मुझे लगा कि मुझे इन वर्गों तथा ऐसे ही अन्य वर्गोंके सदस्योंको, यदि वे अहिंसा और रचनात्मक कार्यक्रमकी मेरी कसौटीपर खरे उतरते हैं तो, अब रोकना नहीं चाहिए।

मैंने कांग्रेसजनोंको जो निर्देश[1] जारी किये हैं, उनकी एक नकल मैं इसके साथ आपको भेज रहा हूँ, जो आप कृपया वाइसराय महोदयको दिखा दें।

एक मामला और है, जिसपर मैं उनका ध्यान दिलाना चाहता हूँ। मेरे पुत्र देवदासने माननीय 'गृह-सदस्य' की कुछ सम्पादकोंसे हालमें ही हुई भेंटका विवरण मुझे भेजा है। इस विवरणके अनुसार माननीय 'गृह-सदस्य' ने इस भेंटके दौरान ऐसा कहा था कि "श्री गांधीका उद्देश्य भारतके युद्ध-प्रयत्नोंको ठप कर देना और इस तरह हिटलरकी मदद करना है।" यदि सर रेजिनाल्डने[2] ये शब्द कहे हैं, तो मैं यही कह सकता हूँ कि वे बिलकुल गलत कहते हैं। मेरा दावा है कि मैंने ऐसा कुछ नहीं कहा है जिससे सर रेजिनाल्डका यह अजीब कथन उचित ठहराया जा सके। वस्तुतः मैंने बार-बार कहा है और इसी तरह जवाहरलालने और लगभग उन सभी कांग्रेसियोंने, जिन्हें जेलमें डाला गया है, कहा है कि हम हिटलरको मदद देना नहीं चाहते। मैंने यह कभी नहीं कहा कि मैं सरकारके युद्ध-प्रयत्नोंको ठप कर देना चाहता हूँ। बल्कि मैंने यह कहा है कि हममें से जो लोग युद्ध-मात्रमें विश्वास नहीं रखते या ब्रिटिश साम्राज्यवादकी ओरसे चलाये जा रहे युद्धमें विश्वास नहीं रखते — मौजूदा ब्रिटिश प्रयत्नको वे यही मानते हैं — उन्हें अपने विचारोंका अहिंसात्मक ढंगसे प्रचार करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। पर जो चीज हिटलरकी तथा अंग्रेजोंके दुश्मनोंकी मदद करेगी, वह तो सरकारकी आजकी बिलकुल गैर-जिम्मेदाराना और दमनकारी नीति है, जिसमें सर्वथा अनुचित रूपसे लोगोंको गिरफ्तार किया जा रहा है और जेलोंमें डाला जा रहा है। मैंने आशा की थी कि जो लोग ऊँचे ओहदोंपर हैं, वे ईमानदारी बरतेंगे और मेरे जैसे विनम्र कार्यकर्त्ताओंपर ऐसे शब्द कहने का आरोप नहीं लगायेंगे जो उन्होंने कभी नहीं कहे हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५६)से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. देखिए पृ० १६९-७२।
२. सर रेजिनाल्ड मैक्सवेल

१६७. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा
११ नवम्बर, १९४०

चि० मीरा,

तुम्हारा भला-सा पत्र अभी पहुँचा है। तुम्हारी तपस्या सच्ची है और इसलिए उल्लास अवश्य आयेगा।[1] और उल्लासके साथ शरीर-बल भी जरूर आयेगा। पूनियाँ जब तुम मँगाओगी, भेज दी जायेंगी। तुम्हारा खयाल सही है। मुझे किसी भी समय पकड़ा जा सकता है। पर इसमें क्या? आश्रम ठसाठस भरा हुआ है।

सप्रेम,

बापू

श्री मीराबहन
पालमपुर
कांगड़ा जिला
पंजाब

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६४) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००५९ से भी

१६८. पत्र : वारी खाँको

११ नवम्बर, १९४०

प्रिय वारी[2],

ऐसे समय आते हैं कि अन्तिम कदम उठाना अनिवार्य हो जाता है। अमतुल सलाम प्रभुके हाथोंमें है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३९) से

१. देखिए पृ० ४२-४३ भी।
२. अमतुस्सलामके भाई

१६९. पत्र: वासूकाका जोशीको

११ नवम्बर, १९४०

प्रिय वासूकाका,

निश्चय ही आपका नाम अपनी सूचीमें रखकर मैं अपनेको सम्मानित महसूस करता हूँ। मैं जानता हूँ कि आपमें कार्य-शक्ति मुझसे ज्यादा है और देशप्रेम भी उतना ही है। क्या आप मुझे अपनी खुराकका पूरा ब्योरा देंगे? आप नीबूका रस कैसे लेते हैं — बिना पानी मिलाये तो नहीं लेते?[1]

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९१५) से

१७०. पत्र: लीलावती आसरको

११ नवम्बर, १९४०

चि० लीला,

तेरे दो पुर्जे मिले। लक्ष्मीदासका तापमान आज ९७° है। मैं उससे अक्सर मिलता रहता हूँ। उसे सिविल सर्जनको दिखाया था। वह कहता है कि ठीक चल रहा है। बुखार आ जाता है, लेकिन उसकी कोई चिन्ता नहीं। दाँत खराब हैं, इसलिए देर लग रही है। ताकत आते ही तुरन्त निकलवा दूंगा। तू बिलकुल चिन्ता मत करना।

तू धीरजके साथ पढ़ती रह। जितना ज्ञान प्राप्त करेगी, वह काम आयेगा। इस बीच मैं मर जाऊँ तो जो तेरी आत्मा कहे, सो करना। तू आश्रमके लिए तैयार हो रही है, इसलिए तुझे पूर्ण सन्तोष होना चाहिए।

महादेव परसोंसे पहले नहीं आयेगा। यह पत्र तेरी कलमसे लिखा जा रहा है। यदि वहाँ रहकर पूरी तरह संयमका पालन करे और सब लड़कियोंमें खादी आदिका प्रचार करे, तो इसे थोड़ी सेवा मत समझना।

मैं तुझे लिखता रहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५९४) से। सी० डब्ल्यू० ६५६६ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

१. देखिए "पत्र: वासूकाका जोशीको", पृ० १९६ भी।

१७१. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

११ नवम्बर, १९४०

चि० प्रेमा,

जैसा शंकरराव कहे वैसा करना।[1] लेकिन शंकरराव मुझसे पूछे बिना कुछ न करे।

बापूके आशीर्वाद

श्री प्रेमाबहन कंटक
आश्रम
सासवड़
जिला पूना

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४१४) से। सी० डब्ल्यू० ६८५३ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१७२. पत्र : क० मा० मुन्शीको

११ नवम्बर, १९४०

भाई मुन्शी,

तुम दोनोंका[2] मुझपर जो प्रेम है, वह मैं जानता हूँ। अगर उपवास सिरपर पड़े, तो वह अन्तरात्माकी प्रेरणासे ही होगा। इतना मान लोगे, तो तुम्हें दुःख नहीं बल्कि उल्लास ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७६५५) से। सौजन्य : क० मा० मुन्शी

१. शंकरराव देवने प्रेमाबहनसे व्यक्तिगत सत्याग्रहीके रूपमें जेल जानेके लिए तैयार रहनेको कहा था।

२. क० मा० मुन्शी और उनकी पत्नी लीलावती

१७३. पत्र : मनुभाई पंचोलीको

सेवाग्राम
११ नवम्बर, १९४०

चि० मनुभाई,

तुम्हारा सुन्दर पत्र मिला। विजयाका भी मिला था। तुम्हारी चिन्ता मेरी समझमें आती है। तुम दोनोंको सन्तोष दिलाने के लिए इतना [कहना] काफी होगा कि मैं उपवास करूँगा तो अपनी ओरसे नहीं, बल्कि अन्तरात्मासे प्रेरित होकर करूँगा। मीराबाईको जैसी प्रेमकी कटारी लगी थी, वैसी मुझे भी लगी है।

यह पत्र नानाभाईको[1] पढ़ने को देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१३३) से। सी० डब्ल्यू० ४६२५ से भी; सौजन्य: विजयाबहन म० पंचोली

१७४. पत्र : अनसूयाबहन साराभाईको

११ नवम्बर, १९४०

चि० अनसूयाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। भगवान करे कि नया वर्ष इसी तरह आता रहे और तुम्हारी सेवा-भावनामें वृद्धि होती रहे। शंकरलालको[2] शत-प्रति-शत ठीक हो जाना चाहिए। मैं तो अपनेको इससे भी कड़ी परीक्षाके लिए तैयार कर रहा हूँ। भगवान जाने, इसका क्या परिणाम होगा।

उम्मीद है, सरलादेवीकी[3] तबीयतमें उत्तरोत्तर सुधार हो रहा होगा।

सबको,

बापूके आशीर्वाद

श्री अनसूयाबहन साराभाई
मार्फत वेदान्त कालेज
११ मेन रोड
मल्लेश्वरम्, बंगलौर

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५६३) से

१. नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट
२. शंकरलाल बैंकर
३. सरलादेवी साराभाई

१७५. पत्र : सेवाग्रामके कार्यकर्त्ताओंको

सेवाग्राम, वर्धा
सोमवार, ११ नवम्बर, १९४०

अमतुल सलामबहनके बारेमें मैंने राधाबहनका खत गुम होने पर शंका की थी। इसलिए इतना कहना आवश्यक है कि अगर शंका कायम रहती तो अनशन जैसे अत्यंत पवित्र कार्यके लिए मैं उनको पसंद नहीं करता। शंकामें कोई बड़ी शक्ति नहीं थी। लेकिन जिसको मैं अपनी संतान मानूं उसके लिए तनिक भी शंका आवे तो मैं उससे क्यों छिपाऊं? इससे तो अधिक मेरी शंकामें अर्थ था ही नहीं। अब तो वह भी गया। किसने वह पत्र लिया यह तो छुपा ही रहेगा। मुझे पता चला ही नहीं है।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३९ और ६३६६) से

१७६. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
११ नवम्बर, १९४०

बेटी,

तुझे रोज खत मिलते होंगे? तेरी बात तो अखबारोंमें आ गई है। खुदा तेरे साथ रहे। अकबर अच्छा है। न्यामतकी लड़कीका कुछ कर नहीं सका हुं। करूंगा। बाकी प्या०[1] से। तेरी याद तो कई बार आती है। बारीका खत आया है।[2]

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७) से

१. प्यारेलाल
२. देखिए पृ० १७७।

१७७. पत्र : बलवन्तसिंहको

सेवाग्राम
११ नवम्बर, १९४०

चि० बलवन्तसिंह,

तुमारा खत अच्छा है। जमीन इ० के बारेमें मैंने ठीक किया है। और भी अगर आझाद रहा तो करूंगा। तुमारे, पारनेरकरने[1], चिमनलाल, सुखाभाई[2] इ० ने बाहर रहना ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९३८) से

१७८. पत्र : कृष्णचन्द्रको

मौन दिवस, ११ नवम्बर, १९४०

चि० कृष्णचन्द्र,

प्रतापचन्द्रजीका हिसाब कर लो। वे आज जाते हैं। चालीसके हिसाबसे।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३६२) से

१. यशवन्त महादेव पारनेरकर
२. सुखाभाऊ चौधरी

१७९. पत्र : अमतुस्सलामको

[१२ नवम्बर, १९४० के पूर्व][1]

बेटी,

तेरे लंबा खतकी इन्तजारीमें हूँ। जमशेदजीका[2] खत आया है, वे चिन्तित है। प्या० के खत आते हैं। सब ठीक चल रहा है।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४०) से

१८०. पत्र : निर्मलानन्दको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ नवम्बर, १९४०

प्रिय निर्मलानन्द[3],

अभी जल्दी कोई उपवास नहीं होने जा रहा है। यदि हुआ तो किसीको मेरे साथ उपवास करने की इजाजत नहीं दी जायेगी। लेकिन तुम जो सुझाव दे रहे हो वह मेरे चले जाने के बाद अपनाया जा सकता है। यदि मैं जीवित रहा तो भविष्यके लिए निर्देश दूँगा। इसलिए तुम्हें नियमोंका पालन करके अपनेको उस योग्य बनाना चाहिए और धैर्य रखना चाहिए।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी -नकल (जी० एन० १३९३) से

१. गांधीजी द्वारा अमतुस्सलामके खतकी "इन्तजारी" के उल्लेखके आधारपर; देखिए "पत्र: अमतुस्सलामको", पृ० १८४।

२. कराची नगर निगमके मेयर

३. पहले इनका नाम गोविन्द गुर्जले था।

१८१. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ नवम्बर, १९४०

बेटी,

तेरी बात तो अब...[1] अखबारोंसे जानता हूं। ईश्वर तेरा दोस्त हो।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३८) से

१८२. पत्र : मदालसाको

१३ नवम्बर, १९४०

चि० मदालसा,[2]

तेरा पत्र मुझे मिल गया है।

सरदारको जवाब दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२०

१८३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ नवम्बर, १९४०

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा कार्ड मिला। महादेवको लिखा तुम्हारा पत्र भी मिला। महादेवसे तुम्हें खबर तो मिली ही होगी। वह जब सबसे मिल रहा है, ठीक उसी समय सब जेल जाना शुरू करें, यह ठीक नहीं मालूम होता। महादेव वहाँ तुमसे मिल ले उसके बाद जाना। मेरी सलाहकी भी जरूरत मालूम पड़े तो तुम आ जाना या

१. मूलमें यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

२. जमनालाल बजाजकी द्वितीय पुत्री और श्रीमन्नारायणकी पत्नी

फिर मैं महादेवको तो भेजूंगा ही। अगर वह सीधे वहाँ[1] जायेगा, तो मेरा अन्तिम निर्णय नहीं ले जा सकेगा। इसलिए अगर तारीखें बदलनी पड़ें, तो बदलना। बरारमें भी ठीक तैयारी हो रही है। बम्बईके पाटिलका[2] पत्र आया है, उसका जवाब उसे भेज रहा हूँ। वह तुम्हें देखने को मिलेगा ही, यह माने लेता हूँ।

महादेव शुक्रवारको रातको पहुँचेगा। मंगलदास[3] और दादा (मावलंकर) गवर्नरको लिखें,[4] यही ठीक लगता है। उनके त्यागपत्र देने की तो जरूरत नहीं है, लेकिन सौजन्यकी माँग है कि वे अपनी कुछ दलीलें पेश करते हुए पत्र लिखें। देखता हूँ, तुम मुझसे [पत्रके] मसौदेकी आशा करते हो। मैं उसे आज नहीं भेजूंगा। मुझे और दूसरे काम हैं। महादेवके साथ भेजूं, तो चलेगा न? बना तो आज भेजूंगा। प्राथमिकताकी सूचीके बाहरके लोग भी जेल जा तो सकते हैं, लेकिन मेरा सुझाव उन्हें तुम सबके जाने के बाद भेजने का है। किन्तु वहांके हालात देखते हुए अगर तुम उन्हें भेजने की जरूरत समझो, तो भेजना। मेरा आग्रह है कि नरहरिको अभी उसमें न घसीटा जाये। यदि उसके न जाने से कोई क्षुब्ध हो तो मैं उसे दुःखकी बात मानूंगा।

रफीने[5] मेरा सिर्फ आधा घंटा लिया। उसे मेरे विचार ही मालूम करने थे। जवाहरलालने सबसे कह दिया है कि मैं जो कहूँ, वह चुपचाप करते जायें।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
डॉ० कानूगाका बंगला
एलिस ब्रिज
अहमदाबाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २४४-६

१. दिल्लीसे

२. स० का० पाटिल; वे १७ वर्ष बम्बई प्रदेश कांग्रेस कमेटीके मन्त्री रहे; १९४६में उसके अध्यक्ष बने; १९५७-६३ और १९६४-६७में केन्द्रीय सरकारमें मन्त्री रहे।

३. मंगलदास पकवासा, अध्यक्ष, बम्बई विधान परिषद, १९३७-४७; तीस वर्ष वकालत की।

४. व्यक्तिगत सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेने के अपने इरादेके बारेमें

५. रफी अहमद किदवाई, जो १९३६-३९ में उत्तर प्रदेशमें मन्त्री थे और बादमें केन्द्रीय सरकारमें संचार मन्त्री और खाद्यमन्त्री रहे।

१८४. सलाह : उर्मिला मेहताको

सेवाग्राम
१३ नवम्बर, १९४०

खूब अच्छी बन। अच्छी तो तू है ही; लेकिन जितनी अच्छी है, उससे भी अधिक अच्छी बन और रोज उन्नति कर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६०९) से। सौजन्य : मंजुलाबहन म० मेहता

१८५. पत्र : मंजुलाबहन म० मेहताको

[१३ नवम्बर, १९४०][1]

उर्मिला यहाँ मजे कर रही है। आज वह आटोग्राफ बुक लेकर आई, और सबसे भीतर कुछ लिखा ले गई। मैंने पूछा, "क्या सबसे लिखा रही है?" तो मुझसे बोली, "जिन्हें मैं अच्छा समझती हूँ, उन्हींसे लिखा रही हूँ।"

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६१२) से। सौजन्य : मंजुलाबहन म० मेहता

१८६. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ नवम्बर, १९४०

बेटी,

तेरा तार मिला। खत मिला। हां, तेरे भाई तो अच्छे हैं हि तेरी तबीयत अच्छी रहती होगी। तुने तार मांगा है। अब तो कुछ जरूरत नहिं है। काफीको[2] लिखा था और बारीको भी। वहां तू अच्छा काम हि करेगी। सबको सुनना, बात कम करना। मेरी तबीयत अच्छी है। लक्ष्मीदास अच्छे हैं। इस्लाम बी का सब हो गया है। लक्ष्मीदासको बुखार नहिं है। तेरी गैरहाजरी मैं महसुस करता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३९) से

१. पत्रमें उर्मिलाका जिक्र होनेके आधारपर; देखिए पिछला शीर्षक।
२. अमतुस्सलामके भाई

१८७. बातचीत : किशोरलाल मशरूवालासे[1]

[१३ नवम्बर, १९४०][2]

जैसा कि मैं लिख चुका हूं, मेरे दिलमें यह बात रही है कि मेरे नसीबमें एक बड़ा अनशन लिखा ही है। वर्तमान युद्ध देशकी पराधीन स्थिति और अहिंसा द्वारा हिंदुस्तानकी आजादी हो जाय तो सारे जगतके लिये उसका महत्व इत्यादि बातें मेरे बलिदानकी अनिवार्यता मेरे मनमें सिद्ध कर रही है। पर साथ ही मेरा जी उसकी संभावनासे कुछ घबड़ा भी रहा है। मैं चाहता हूं वह देख सके। उसके प्रति बढ़ने की मैं कोशिश नहीं कर रहा हूं। लेकिन उसकी ओर मैं खींचा जा रहा हूं।

यह एक तरहसे ठीक ही है। क्योंकि जो समय मेरे दिलकी तैयारी होने में जा रहा है वह जनता और तुम सबको अनशनकी परिस्थितिके लिये तैयार भी कर रहा है। न मालूम लोग इतने तैयार हो जाय कि मुझे पूछने लग जाय कि अभी अनशन क्यों शुरू नहीं करते?

अनशन किस रूपमें आ सकेगा, यह मैं नहीं कह सकता। अगर यह मेरे बाहर रहते हुए हुआ तब तो उस वक्त तुम्हें क्या करना चाहिये, वह मैं बता सकूंगा। जबतक मुझमें ताकत होगी तबतक मैं सूचनाएं देता रहूंगा। संभवत: अनशनके पहले ही अपना निवेदन भी प्रगट करूं। पर मुमकिन है कि सरकार मुझे गिरफ्तार कर ले और जेलमें अनशन करना पड़े। तब न मैं निवेदन निकाल सकूंगा, न सूचनायें दे सकूंगा! और मैं कह चुका हूं कि मैं अपने पीछे किसीको मेरा उत्तराधिकारी करनेवाला नहीं हूं। तब तुम्हें अपनी विवेकबुद्धिसे ही चलना होगा। उस अवस्थामें अगर कोई मार्गदर्शक हो गया तो वह अपने ही प्रभावसे होगा।

जेलमें अनशन करना पड़े, इसका मतलब यह नहीं कि उस अवस्थामें मेरा अनशन करने का निर्णय ही एक संभावना ही मान लिजिये। मुझे जेल मिली है और बाहर की स्थिति समाधानकारक हो तो मैं जेल ही काट लूं।

जहांतक मैं सोच सकता हूं, यह अनशन शर्तिया ही हो सकता है। वह मुक्तिके लिए नहीं होगा। बाह्य सिद्धिके लिये होगा। आध्यात्मिक दृष्टिसे वह उत्तम पंक्तिका नहीं माना जा सकता। फिर भी वह सिद्धि इतनी शुद्ध तो है ही कि उसमें एक जन्म न्योछावर किया जा सकता है। पर सिद्धि मिले तो अनशन छूट भी सकता है। यानी एक विशिष्ट सिद्धिके लिये अनशनके रूपसे यह तपश्चर्या होगी।

१ और २. किशोरलाल मशरूवालाने गांधी सेवा संघकी विभिन्न प्रान्तीय समितियोंको सम्बोधित करके लिखे गये अपने १४ नवम्बर, १९४० के परिपत्रमें गांधीजी के "कहने का भावार्थ" दिया था। परिपत्रके अनुसार, बातचीत "कल" यानी पत्र लिखने से एक दिन पहले हुई थी।

लेकिन शर्तिया अनशन होते हुए भी अंग्रेज सरकारकी जो आज परिस्थिति और विचारधारा है उसकी ओर देखते हुए यह संभव नहीं कि यह मेरी मृत्यु टालने के लिये अपनी आजकी नीतिमें परिवर्तन करे। उनके लिये अपने ही जीवन-मरणका सवाल इतने महत्वका है कि पचास गांधीके प्राणोंको कुर्बान करने में उन्हें हिचकिचाहट न होगी। और दूसरी नीति यानी अहिंसा और आत्मशुद्धिसे अपना सवाल हल करने की उन्हें बुद्धि उत्पन्न होना भी मुश्किल है। इसलिये वे मेरे प्रति क्रोधसे नहीं पर अपनी लाचारी समझ करके भी मुझे अपना बलिदान करने देंगे।

मैं अनशन करूं, उसके पहले या उसके साथ दूसरे साथीदारोंको भी उस बलिदानमें हिस्सा दिया जाय, ऐसी भी सूचना मेरे पास आयी है। जबतक मैं जिन्दा हूं तबतक यह विवेकयुक्त बात न होगी। इस अनशनका उद्देश्य एक स्थानिक समस्या नहीं है। अखिल भारतीयसे भी बढ़कर दुनिया-भरकी है। उसमें छोटे पचास व्यक्तिओंका बलिदान एक जगतप्रसिद्ध व्यक्तिके बलिदानकी बराबरीका नहीं हो सकता। और अगर उससे समस्याको मिटना है तो मेरा ही बलिदान संपूर्ण हो सकता है। लेकिन मेरे अनशनके दरमियान और मेरी मृत्यु हो तो उसके बाद तुम क्या कर सकते हो, यह समझने की बात है।

रचनात्मक कार्यक्रमकी वैसे तो तेरह बातें बतायी गयी हैं। उसमें और बढ़ायी जा सकती हैं। लेकिन उसमें तीन महत्वकी हैं। हमारे जीवनकी वे क्रांति करनेवाली हैं। खादी, अस्पृश्यता-निवारण और हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य। हरिजन और मुसलमानका स्थान यत्किंचित भी हमारेसे अलग रखने का मानसिक भाव ही 'मेकडोनल्ड निर्णय' और पाकिस्तान है। याद रखें कि भिन्नता उन्होंने पहले मांगी नहीं है। हमने ही उन्हें दी है, और मांगने को मजबूर किया है। तब सवर्ण-अवर्ण ऐक्य और हिन्दू-मुसलमान ऐक्य तथा खादी हमारे जीवनकी ही क्रांति है, जिन्हें सिद्ध करने के लिये अपनी सब शक्ति और जब जरूरत हो जाय तब फूलसिंह भक्त और अमतुलसलामकी तरह प्राण खर्च करने के लिये तुम तैयार रहो।

इस वक्त, जब कानून भंगका कार्यक्रम चलता है तब जिन्हें रचनात्मक कार्यक्रममें लगे रहने के कारण जेलमें नहीं जाना है, वे अपने-अपने काम दिलचस्पीके साथ करते रहेंगे ही। लेकिन दूसरे कार्यकर्ता जेल जाने के आंदोलनपर जोर दे रहे हैं उसी समय तुम्हारा रचनात्मक कार्यक्रमके लिये एक जोशीला आंदोलन मचाना ठीक न होगा। जनताकी मनोवृत्ति इस समय जेलकी ओर झुकी हुई है। इसलिये उसे वहीं एकाग्र होने दिया जाय।

पर अब ऐसी परिस्थिति पैदा हो जाय कि जितने लोगोंको जेलमें जाना या भेजना है [वे जेल चले जायें], अथवा मैं अनशन कर रहा हूं, अथवा कोई स्थानिक परिस्थिति, जैसी आज सिंधमें है, पैदा हुई हो तब तुम्हें अपना कर्तव्य और स्थान पूरी तरह संभालना होगा। उस वक्त जैसा तुम्हारा अंतःकरण प्रेरणा करे, उसी तरह तुम आंदोलन करो और अपने प्राण तक दो। मेरे मरने पर वैसे ही तुम्हारे अंतःकरणकी प्रेरणा हो, तो अनशनकी परंपरा भी चलायें। लेकिन मैं यह नहीं कहता कि यही चलाना जरूरी होगा।

एक दूसरी परिस्थितिमें भी तुम्हें अपने प्राणोंका बलिदान देनेकी नौबत आ सकती है। यह संभव है, जनताको मजबूर करने के लिए अंग्रेज सरकार अथवा वह हार जाय तो दूसरे विजेता हिन्दुस्तानमें भीषण दमन-नीति चलावें। यंत्रभागका [शासन-तंत्रका ?] निकंदन भी किया जा सकता है। निकंदनसे तो कुछ अंशमें काम सरल हो जाता है। लेकिन बहुत जनताका निकंदन नहीं किया जायगा। उन्हें वशमें लाने के लिये उनका दमन किया जायेगा। उदाहरणार्थ जबतक लोग विजेताकी शर्तें मंजूर न कर लें, कभी देहातोंको चारों [ओर] से घेर लिया जाय, कुवोंपर पहरा बिठाया जाय, उनके आसपासकी खेतीको उध्वस्त किया जाय, और इस तरह लोगोंको भूख-प्याससे तंग किया जाय। उसके सामने जनताको झुक नहीं जाना है। लोगोंको हिम्मत देना होगा, खुद भूखें-प्यासे मरकर लोगोंको भूख-प्यास सहन करके मर जाने की, और विजेतासे असहयोग करने की सलाह देना होगा।

यदि ऐसा कोई अवसर मिल जाय कि इस प्रकारके मिशनकी मनोवृत्ति रखनेवाले कार्यकर्ताओंके साथ बैठकर मैं अपना दिल खोलकर मशविरा करूं, तो मुझे खुशी होगी। लेकिन आज मैं उसकी योजना करना नहीं चाहता।[1]

सी० डब्ल्यू० १०७४५ से। सौजन्य : नवजीवन ट्रस्ट

१८८. सन्देश : विद्यार्थियोंको

वर्धा
१४ नवम्बर, १९४०

मुझे मद्रास तथा संयुक्त प्रान्तके विद्यार्थियोंके कई पत्र मिले हैं, जिनमें उन्होंने पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी गिरफ्तारी और कैदके विरोधमें विद्यार्थियोंके प्रदर्शनों तथा सम्बद्ध सरकारोंकी उनसे उसका बदला लेने की धमकियोंके बारेमें लिखा है। विद्यार्थी अब विरोध-स्वरूप हड़ताल करना चाहते हैं और उन्होंने मेरी सलाह माँगी है। भारतके एक महान और वीर सपूतकी गिरफ्तारीपर जब सारा विश्व शर्मसे सिर झुका रहा है, तब भारतके विद्यार्थी-जगतका उद्वेलित हो उठना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। अतः जहाँ मेरी सहानुभूति पूरी तरह उनके साथ है, वहाँ मैं इसी मत पर दृढ़ हूँ कि पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी कैदके विरुद्ध अपना रोष व्यक्त करने के लिए विद्यार्थियोंका अपनी कक्षाओंसे बाहर आ जाना गलत था। प्रान्तीय सरकारोंका बदलेकी धमकी देना तो और भी ज्यादा गलत है। जो भी हो, विद्यार्थी यदि विरोध-स्वरूप सोची गई हड़ताल न करें तो अच्छा होगा। यदि वे मेरी सलाह चाहते हैं तो उन्हें एक ऐसा अधिकृत प्रतिनिधि भेजना चाहिए जो सभी तथ्योंकी पूरी जानकारी रखता

१. परिपत्रके अन्तमें किशोरलाल मशरूवालाने सुझाव दिया था कि जो कार्यकर्ता इसी तरहके विचार रखते हों, उनकी एक सूची बनाई जाये और गांधी सेवा संघकी प्रान्तीय समितियोंके पास भेजी जाये।

हो, क्योंकि उनके बारेमें मुझे बहुत ही कम मालूम है। मेरे मार्ग-दर्शनका जो भी मूल्य हो, मैं खुशीसे मार्ग-दर्शन दूंगा। वे जानते हैं कि मैं जिस संघर्षका नेतृत्व करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, उसमें उनके पूर्ण हार्दिक सहयोगको मैं कितना मूल्यवान मानता हूँ। बहरहाल, बिना विचारे और जल्दबाजीमें उठाये गये किसी कदमसे उनके अपने ध्येयको और राष्ट्रीय उद्देश्यको भी नुकसान ही पहुँचेगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १५-११-१९४०

१८९. तार: बलरामसिंह श्रीवास्तवको[2]

सेवाग्राम
१४ नवम्बर, १९४०

बलरामसिंह श्रीवास्तव
स्टुडेन्ट्स फेडरेशन
लखनऊ

अभी-अभी तुम्हारा पत्र पढ़ा। मैंने विद्यार्थियोंकी हड़तालके विरुद्ध सलाह दी है।[3] मामला नाजुक है। प्रदर्शनके लिए भी जल्दबाजीसे काम नहीं लेना चाहिए। यदि तुम्हें विद्यार्थियोंकी ओरसे विशेष अधिकार प्राप्त है, तो तुम्हें मेरे पास आना चाहिए। मैं सलाह देने और मार्ग-दर्शन करने के लिए तैयार हूँ।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. देखिए अगला शीर्षक भी।

२. उक्त तार बलरामसिंहके पत्रके उत्तरमें दिया गया था, जिसमें उन्होंने संयुक्त प्रान्तके गवर्नर द्वारा दी गई धमकीके बारेमें गांधीजी से सलाह माँगी थी। गवर्नरने उन विद्यार्थियोंको विश्वविद्यालयसे निष्कासित करने की धमकी दी थी, जिन्होंने संयुक्त प्रान्त छात्र-संघके साथ अपनेको सम्बन्धित किया था। संयुक्त प्रान्त छात्र-संघने पण्डित नेहरूकी गिरफ्तारीके विरोधमें हड़ताल की थी।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

१९०. पत्र : कंचन मु० शाहको

सेवाग्राम
१४ नवम्बर, १९४०

चि० कंचन,

तेरा पत्र मिला था। प्रगति आशाके अनुसार हो रही होगी। खुजली होनी बन्द हुई क्या? ब्योरेवार पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२७७)से। सी० डब्ल्यू० ७११० से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

१९१. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
१४ नवम्बर, १९४०

बेटी,

तेरे बारेमें तो अब अखबारोंसे पता चलता है। तेरे खत बादमें आते हैं। तू ठीक वक्तपर पहोंची है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१)से

१९२. पत्र : पटवर्धनको

१४ नवम्बर, १९४०

भाई पटवर्धन,

इसके पहले मैं उत्तर नहीं दे सका। वह पैसे विद्यालयके ही है, ऐसा निश्चय-पूर्वक अभिप्राय मैं आज नहीं दे सकता हूं। इस अभिप्रायके लिए और स्पष्टीकरणकी आवश्यकता है। इसलिए तो मैं पत्र-व्यवहार चला रहा हूं। मेरी मुख्य चिंता यह है कि वह रकम सुरक्षित रहे और उसका सदुपयोग ही होवे। मेरी दूसरी चिंता यह है कि आप सब जैसे पहले थे, ऐसे एक हो जायें। दोनों कार्यमें आप सबकी मददकी आवश्यकता है।

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१९३. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

सेवाग्राम, वर्धा
१५ नवम्बर, १९४०

प्रिय अमृतलाल,

शैलेन्द्रसे मेरी बातचीत हुई थी। उसका कहना है कि वीणापाणिको[1] यहाँ लाने की जरूरत नहीं है। उपयुक्त वर वहाँ आसानीसे मिल सकता है। इसपर विचार कर लेना ठीक रहेगा। वह खुद क्या कहती है? क्या तुम ऐसा नहीं सोचते कि मैंने यहाँ कोई ठीक कर रखा है? आशा है, तुम्हारी पत्नी अच्छी तरह होगी। यदि वीणाको लाने का ही फैसला करो, तो तुम सतीशबाबूसे १५ रुपये उधार ले लेना। मैं उन्हें लौटा दूँगा।

बापू

अमृतलाल चटर्जी
१७, झामा पूकुर लेन
कलकत्ता (बंगाल)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४५३)से। सौजन्य: अमृतलाल चटर्जी

१. अमृतलाल चटर्जीकी पुत्री, अब वीणाबहन पटेल

१९४. पत्र : अमतुस्सलामको

१५ नवम्बर, १९४०

बेटी,

'सिन्ध ऑब्जर्वर' में लिखा तेरा लेख मेरे पास पड़ा है। फुरसतके समय पढ़ूँगा। ईश्वर तेरे साथ है।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४२) से

१९५. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१५ नवम्बर, १९४०

चि० अमला,

तेरा पत्र मिला। मैं तेरा गुस्सा समझ सकता हूँ। तू अपनेको मेरी शत्रु कह सकती है, लेकिन शत्रु बन नहीं सकती। अगर हिटलरशाहीका नाश होना है, तो वह केवल अहिंसासे होगा, किसी और रीतिसे नहीं। हाँ, तुझे लिखा एक पत्र[1] एक भूलकी वजहसे वापस आ गया था।

बापूके आशीर्वाद

डॉ० मार्गरेट स्पीगल
३, बोडहाउस रोड
फोर्ट, बम्बई

मूल गुजरातीसे : स्पीगल पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. सम्भवतः अभिप्राय १७ अक्तूबरके पत्रसे है; देखिए पृ० ११९।

१९६. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
१६ नवम्बर, १९४०

अमतुस्सलाम
मार्फत आनन्द हिंगोरानी
अपर सिन्ध कालोनी
कराची सदर

सिन्धमें सविनय अवज्ञा बन्द कर रहा हूँ। तेरा खत बहुत अच्छा है। जवाब लिख रहा हूँ। प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४३)से

१९७. पत्र: अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ नवम्बर, १९४०

बेटी,

तेरा खत मिला। तार भी। मैंने तारका जवाब दिया है। तेरे सब खत पूरे पढ़ता हूं। अब तो बात दूसरी है न? तेरा खत सुन्दर है। तेरी अपील भी सुन्दर है। तू ठीक काम चला रही है। फाका कब और कितना, देखेंगे। कोई जल्दी नहीं। जबतक काम हो सके करती रह। जब कुछ बाकी नहीं होगा तब जरूरत पड़ने पर फाका शुरू करेगी। हिन्दूकी बात ठीक करती है। देखा जायेगा। तू सवाल बराबर समझ गई है और बहादुरीसे काम ले रही है।

पीर साहबको[1] उत्तर तू ही देगी। बादमें जवाब देना पड़े तो मैं दूंगा। गुलजार खां[2] या कुरैशीकी[3] मदद चाहिये तो बुला सकती है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४४)से

१. भरचुण्डीके पीर
२. अहमदाबादके कांग्रेसी कार्यकर्ता
३. गुलाम रसूल कुरैशी

१९८. पत्र: आनन्द तो० हिंगोरानीको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ नवम्बर, १९४०

चि० आनन्द,

शरीर सँभालके काम करो। अ० स०[1] को तो तुम दोनोंकी मदद पूरी मिलती हि है। उसका रक्षक और हम सबका सचमुच तो ईश्वर ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१९९. पुर्जा: वल्लभभाई पटेलको

सेवाग्राम, वर्धा
[१७ नवम्बर, १९४० के पूर्व][2]

राजकुमारीको यहाँ रखने का उद्देश्य यह है कि वह सब लोगोंके [जेल] जाने के बाद, मेरे जेल जाने के बाद भी, बाहर रहकर छोटे-मोटे काम करती रहेगी। इतना करने की उसमें शक्ति है। यहीं पड़ी रहेगी। यदि सरकार गोली चलायेगी तो वह उसका सामना करेगी और इस तरह अपने प्राणोंकी आहुति दे देगी। मेरी धारणा है कि उसमें इतनी हिम्मत है। और न हो तो भी उसका कोई नुकसान नहीं होने-वाला है।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० २४३

१. अमतुस्सलाम
२. सरदार वल्लभभाई पटेल १७ नवम्बर, १९४० को गिरफ्तार कर लिये गये थे।

२००. सूचना: वल्लभभाई पटेलके लिए

[१७ नवम्बर, १९४० के पश्चात्][1]

वल्लभभाईसे कहना कि सरकारके प्रति मेरा रवैया दिन-प्रति-दिन कड़ा होता जाता है। फिलहाल तो मैंने जिन लोगोंको चुना है वही लोग जेल जायें। यदि सरकार मुझे गिरफ्तार नहीं करती, तो वह जितने लोग चाहेगी उतने लोगोंको गिरफ्तार होने के लिए भेजूंगा। और यदि मुझे गिरफ्तार करती है तो सब-कुछ ईश्वरके हाथोंमें है।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० २४३

२०१. पत्र: वासूकाका जोशीको

१८ नवम्बर, १९४०

प्रिय वासूकाका,

आपका पत्र रोचक है। यह खुराक आप कितने दिनोंसे ले रहे हैं? नीबूका रस कितना लेते हैं? और सब्जियाँ कौन-कौनसी और कितने परिमाणमें लेते हैं? भुनी हुई शकरकन्दी वजनमें कितनी होती है? क्योंकि आकारमें तो वे छोटी-बड़ी होती हैं।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९१६) से

१. देखिए पिछले पृष्ठकी पाद-टिप्पणी २।
२. देखिए पृ० १७८ भी।

२०२. पत्र : डॉ० एस० के० वैद्यको

सेवाग्राम, वर्धा
१८ नवम्बर, १९४०

भाई वैद्य,

तुम्हें पत्र लिखने का विचार करता रहा, लेकिन लिख नहीं पाया। काकुभाईने[1] तुम्हारे बारेमें एक लम्बा पत्र लिखा है। तुम अगर खादीके काममें लग सको और उसमें लीन हो सको, तो मुझे अभी तो तुम्हें सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें नहीं लगाना है। कुछ दिन यहाँ आकर रहना हो तो आ सकते हो। भोजन, जलवायु आदि माफिक आयेंगे या नहीं, यह देखना पड़ेगा। जैसी इच्छा हो, करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७४१) से

२०३. पत्र : पुरुषोत्तम का० जेराजाणीको

सेवाग्राम
१८ नवम्बर, १९४०

भाई काकुभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। उसपर से भाई वैद्यको पत्र[2] लिखा है। यह यदि तुम्हें ठीक लगे तो उन्हें देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८४९) से। सौजन्य : पुरुषोत्तम का० जेराजाणी

१. पुरुषोत्तम का० जेराजाणी
२. देखिए पिछला शीर्षक।

२०४. पत्र : गुलाम रसूल कुरैशीको

१८ नवम्बर, १९४०

चि० कुरैशी,

तुम्हारा सुन्दर पत्र मिला। इस्लाम क्या कहता है, यह कौन जानता है? आत्मघात करने की बात कहीं नहीं कही गई है। जो ईश्वर करायेगा, वही अमतुस्सलाम करेगी। मुस्लिम लीगकी बात समझो। उनका भी हृदय जीतना हमारा काम है। अहिंसक विजय प्राप्त करने में कई लोगोंको मरना भी पड़ेगा। अन्तरमें प्रेम बढ़ाओगे, तो काम सिर्फ यहीं [जेल जाये बिना] होगा। अमीनाका ऑपरेशन करा लेना। यदि अमतुस्सलामको तुम्हारी या गुलजार खाँकी मदद की जरूरत हुई तो वह करनी पड़ेगी।[1] मैंने [उसे] वह सहायता कराचीसे ही प्राप्त करने के लिए लिखा है।

भाई गुलाम रसूल कुरैशी
हरिजन आश्रम
साबरमती

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७६६) से। सौजन्य: गुलाम रसूल कुरैशी

२०५. पत्र: कंचन मु० शाहको

सेवाग्राम
१८ नवम्बर, १९४०

चि० कंचन,

बहुत दिन बाद तेरा पत्र मिला। अपनी तबीयतके बारेमें तूने कुछ नहीं लिखा। कैसी है? तू बिलकुल अच्छी हो जा, तभी सत्याग्रहका विचार किया जा सकता है। कोई जल्दी नहीं है। लड़ाई लम्बी चलेगी। मुझे लिखती रहना। भीड़ अभी तो कम नहीं हुई। तीनेक दिन बाद कम होगी, ऐसा समझता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२७६) से। सी० डब्ल्यू० ७१११ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

१. देखिए पृ० १९४।

२०६. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
१८ नवम्बर, १९४०

बेटी,

तेरा खत मिला है। सब बादमें आनंदको भेजा जायेगा। अखबारकी गालियां कुछ सुनीं। हम तो जो करेंगे ईश्वरके हि नामसे करेंगे। किसीके सामने तो करना हि नहीं है। हिंदु पागल बनेंगे तो देखा जायगा। जो कुछ करेगी, मौलाना सा० से मश्विराके बाद करेगी। वे वहांसे जाय तब दूसरी बात। हातीमके[1] [य]हां गई सो अच्छा ही हुआ। खामोशीमें तो रहेगी ही। गालियांसे गभरायगी नहीं। टेलीफोन पर आउंगा तो सही। मैं सुन सकुंगा या नहि यह तो नहीं जानता हूं। साथमें कुरैशीका खत है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४७)से

२०७. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
१८ नवम्बर, १९४०

प्रिय भगिनी,

तुमारा खत मिला। उपवासके बारेमें चिंता न की जाय। करुंगा तो ईश्वर ही करायगा। इसलिये उसका परिणाम अच्छा ही हो सकता है। हाल तो कुछ नहीं है।

तुमारे जेल जाने के बारेमें देखा जायगा। कानफरन्सका[2] काम तो करना ही चाहिये। लड़ाई तो लंबी होने का संभव है। उस हालतमें तुमारा देरसे जाना ठीक ही होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९९२)से। सी० डब्ल्यू० ३०८९ से भी; सौजन्य : रामेश्वरी नेहरू

१. हातिम अल्वी, एक राष्ट्रवादी मुसलमान

२. सम्भवतः अभिप्राय २७ दिसम्बरको बंगलौरमें रामेश्वरी नेहरूकी अध्यक्षतामें होनेवाले अखिल भारतीय महिला सम्मेलनसे है।

२०८. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा
२० नवम्बर, १९४०

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। हाँ, सभी पुराण पढ़ने-योग्य हैं। वे चिरन्तन कालका सच्चा इतिहास हैं। मुझे खुशी है कि तुम्हें अधिकाधिक शान्ति मिलती जा रही है।

सप्रेम,

बापू

श्री मीराबहन
पालमपुर
जिला काँगड़ा
पंजाब

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६५) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००६० से भी

२०९. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेवाग्राम, वर्धा
२० नवम्बर, १९४०

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। तेरे पत्रमें गुस्सा है ही और उसके साथ दुःख है। तू एक अतिसे दूसरी अतितक पहुँच जानेवालोंमें से है। एक समय था, जब मैं तेरा सर्वस्व था। क्या यह सम्भव है कि मैं इस बीच इतना बदल गया हूँ, जैसा कि तू समझता है? तू जब देवदाससे चिढ़ गया था और उसे पत्र नहीं लिखता था, तब मैं ही तेरी मिन्नतें करता था कि तुझे इस प्रकार चिढ़ नहीं जाना चाहिए। तू जब एक राय बना लेता है, तो दूसरे पक्षकी ओर देखने की शक्ति खो बैठता है। लेकिन ऐसे मामलेमें तेरे साथ बहस क्या की जाये? इतना कहना काफी होना चाहिए कि मैं तेरे लिए जो पहले था वही आज भी हूँ। किसी दिन यह बात तू स्वयं ही स्वीकार करेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३६२) से। सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

२१०. पत्र : अमतुस्सलामको

[२१ नवम्बर, १९४० के पूर्व][1]

बेटी,

तेरा खत मिला। तेरा रोजा मुझे पसन्द नहीं है। लेकिन यहां बैठा मैं दखल नहीं दूंगा। अनशन बगैर मेरी इजाजतके नहीं करेगी। मौलाना साहब वहां हैं तबतक उनकी बात मानना होगा। जबतक तू लोगोंको मिलने का काम कर रही है, अनशनकी दरकार नहीं है। दमा होता है यह बताता है कि तू रोजा रखती है उसमें खुदाका हाथ नहीं है।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४५) से

२११. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२१ नवम्बर, १९४०

बापा,

तुम्हारे दो पत्र मिल गये हैं।

डॉ० सुब्बारायनकी पत्नीको[2] लिखना। वे [व्यक्तिगत सविनय अवज्ञामें] शामिल होंगी। मैंने नियमोंमें परिवर्तन सुझाये हैं, उन्हें देख जाना, और उनमें जो लेने लायक हों, उन्हें ले लेना। हिन्दू हरिजनोंके विशेष उल्लेखकी जरूरत नहीं है। हरिजन हिन्दू ही होते हैं। हमारे दृष्टिकोणसे तो पिछड़ी जातियोंके लिए एक संस्था होनी चाहिए। यदि संस्थाके संचालक अच्छे हों, तभी काम बन सकता है।

'हरिजन' जल्दी शुरू किया जा सकेगा, ऐसा नहीं लगता।

कोढ़ियोंके लिए विनोबाने एक आदमीको तैयार किया है। वह ऋषि-तुल्य है। हमारे पास रजवअलीके पैसे थे ही, उनमें से हमने २५,००० रु० निकाल लिये हैं। हिन्दुस्तानियों द्वारा पहली बार इस किस्मका काम किया जा रहा है।

१. देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", पृ० २०२।
२. राधा सुब्बारायन

फुके[न]ने शुरू किया था, लेकिन उसमें दिखावा ज्यादा था। इसमें तो बड़ी तपश्चर्या भरी हुई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११८६) से

२१२. पत्र: अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
२१ नवम्बर, १९४०

बेटी,

तेरा खत मिला। तार भी। रोजाके बारेमें सोच रहा हूं। जबतक कुछ भी काम है तबतक संभल जाना अच्छा है। लेकिन यहांसे मैं हुक्म नहीं निकालुंगा। तेरी जबान खुली है, मुसलमान तेरी बात सुनते हैं। हिन्दु तो सुनेंगे हि। इसलिये हाल तो प्रचार काम हि कर। जब सब काम खतम होगा, तब देखेंगे क्या करना चाहीये। तेरी तबीयत नहीं बिगाडेगी।

बाकीने[1] खत लिखा है तेरे बारेमें जरूरी चीज अखबारमें थी। शायद तुझे भी भेजा होगा। मैंने बाकीको लंबा जवाब भेजा है।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५०) से

२१३. पत्र: सैयद महमूदको

सेवाग्राम, वर्धा
२२ नवम्बर, १९४०

प्रिय महमूद,

तुम्हारा पत्र मिला। सविनय अवज्ञाकी मत सोचो। पहला काम तो है कि स्वस्थ हो जाओ। तुम्हें तो जड़से इलाज कराना चाहिए। शौकतने मुझे एक योजना दिखाई थी, जिसपर तुम्हारा नाम था। किन्तु तुम्हारा प्रतिवाद मेरे लिए काफी है। मैंने तुम्हें जो मसौदा दिया था उसकी भी एक नकल उन्होंने मुझे दिखाई थी। ब्रेलवीने[2] उपवासका जिक्र किया था और चूंकि तुम उस समय उसके पास

१. अमतुस्सलामके भाई
२. बॉम्बे क्रॉनिकल के सम्पादक एस० ए० ब्रेलवी

थे, इसी कारण तुम्हारा नाम भी उसके साथ जोड़ दिया गया। किन्तु ऐसी बातोंपर क्यों चिन्ता करते हो?

सप्रेम,

बापू

डॉ० सैयद महमूद, एम० एल० ए०
छपरा
बिहार

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०८१) से

२१४. बातचीत : ताई चि-ताओसे[1]

[२२/२३ नवम्बर, १९४०][2]

ताई चि-ताओ : हम आज एक नाजुक दौरसे गुजर रहे हैं। मैं जानना चाहता हूँ कि हम इस संकटसे सफलतापूर्वक कैसे पार पा सकते हैं। विजय पाना ही पर्याप्त नहीं है; देशोंके बीच भविष्यमें शान्तिपूर्ण सम्बन्धोंकी स्थापना भी होनी चाहिए।

अध्यक्ष महोदय, जो गम्भीर धार्मिक मनोवृत्तिवाले व्यक्ति हैं और जिन्होंने यहाँकी रचनात्मक गतिविधियोंमें तथा सेठजीके मन्दिरमें खूब दिलचस्पी दिखाई है, अपने हाथमें जपमाला लिये हुए थे।

गांधीजी ने उनके स्वास्थ्यकी कुशल-क्षेम पूछने के बाद उनका चरखेसे परिचय कराते हुए कहा कि मेरा यह चरखा नवीनतम आविष्कारोंमें से है, और अध्यक्ष महोदयके प्रश्नका उत्तर देते समय वे चरखा चलाते रहे।

गांधीजी : जिस प्रकार आप जीवन-मरणके भीषण संघर्षमें जुटे हुए हैं उसी प्रकार हम भी जुटे हुए हैं। हमारा देश भी आपके समान एक प्राचीन देश है और यद्यपि आपका देश हमारे देशसे बहुत बड़ा है तथापि हमारे देशको किसी भी तरह एक छोटा देश नहीं कहा जा सकता तथा आपके और हमारे बीच बहुत

१. यह बातचीत महादेव देसाईके एक वक्तव्यसे उद्धृत की गई है, जिसमें बताया गया है कि चीन सरकारके युआन परीक्षा-विभागके अध्यक्ष ताई चि-ताओका सद्भावना-दल, जवाहरलाल नेहरूने १९३९ में चीनकी जो सद्भावना-यात्रा की थी, उसके जवाबमें भारत आया था। वक्तव्यमें कहा गया था कि दलके अध्यक्ष ताई चि-ताओ गांधीजी के लिए च्यांग काई-शेक और कुमिनतांगकी ओरसे विशेष सन्देश लाये थे। देखिए "पत्र : च्यांग काई-शेकको ", पृ० २१२ भी।

२. महादेव देसाईके अनुसार ताई चि-ताओ, उनके निजी सचिव तथा अन्य साथी वर्धामें २२ और २३ नवम्बरको जमनालाल बजाजके, जो विशेष रूपसे इस मौकेके लिए बम्बईसे आये थे, मेहमान रहे।

साम्य है। अपनी बात कहूँ तो मैं आपको बताना चाहूँगा कि जोहानिसबर्गकी चीनी बस्तीसे मेरा सम्पर्क था और उन्हें मैं कानूनी सलाह भी दिया करता था। वहाँ १,२०० चीनियोंकी बस्ती थी और मैं प्रत्येक व्यक्तिके घनिष्ठ सम्पर्कमें आया और इसलिए चीनी लोग मेरे लिए किसी भी तरह अजनबी नहीं हैं। आप जीवन-मरणके संघर्षमें रत हैं और हम भी रत हैं, किन्तु अपनी स्वतन्त्रता फिरसे प्राप्त करने के लिए जो साधन हमने अपनाये हैं वे आपके अपनी स्वतन्त्रता बनाये रखने के साधनोंसे भिन्न हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं कि मैं आपके साधनोंकी आलोचना करना चाहता हूँ। आत्म-रक्षाका जो उपाय आपने अपनाया है, वह तो एक प्राचीन उपाय है। मैं जो उपाय प्रयोगमें ला रहा हूँ, वह विश्वके राजनीतिक क्षेत्रमें अनजाना है। लेकिन पण्डित जवाहरलालकी चीनकी सद्भावना-यात्राके उत्तरमें आप सुदूर चीनसे चलकर यहाँ आये हैं, इसलिए मैं आपकी और आपके माध्यमसे जनरलिसिमोकी यही तुच्छ सेवा कर सकता हूँ कि आपके सामने अपने उस नवीन उपायको पेश करूँ जिसपर मैं आजकल अमल कर रहा हूँ। इसका मुझे १९०६ में दक्षिण आफ्रिकामें पता चला। यह वह समय था जब कठिनाइयोंका सामना करने के लिए मैं हर सम्भव प्रयत्न करके देख चुका था और अगर यह उपाय उस समय हमारे हाथ न लगा होता तो ट्रान्सवालके भारतीय समाजका सर्वनाश हो गया होता। और १९२० से हमने लगातार इस उपायका सफलतापूर्वक प्रयोग किया है; इसमें हमें असफलतासे अधिक सफलता ही मिली है और अन्ततः कांग्रेस एक शक्तिशाली संस्था बन गई है। संक्षेपमें, वह उपाय यह है कि हमें आत्मरक्षार्थ भी अपने विरोधीको कोई नुकसान पहुँचाये बिना अथवा उसे मारने की चेष्टा किये बिना किसी वीरसे-वीर चीनी सैनिकके समान मरने को तत्पर रहना चाहिए। यदि हम यहाँ जनसाधारणके दिलोंमें मारे बिना मरने का साहस लाने में सफल हो जाते हैं, तो हम हिंसाके बिना ही अपनी खोई हुई स्वतन्त्रताको फिरसे प्राप्त कर लेंगे और संसारके सम्मुख सारे युद्धोंके निवारणका एक उपाय भी रख सकेंगे। यदि मैं आपको इस आन्दोलनका बीज-मन्त्र दे सका होऊँ तो यही कहूँगा कि आप इस आन्दोलनको रुचिके साथ देखें और चीनकी ओरसे इसे आशीर्वाद दें। इससे अधिक और कुछ तो मैं तभी कह सकूँगा जब भारत इन नितान्त शान्तिपूर्ण साधनोंसे फिरसे स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा।

आप देखेंगे कि इस समय मैंने निष्प्रयोजन ही चरखा नहीं चलाया है, क्योंकि सामान्यतया मेहमानके आने पर चरखा चलाते रहना अविनयका परिचायक होता है। लेकिन मेरे ऐसा करने का कारण एक, तो आपको इसकी प्रक्रिया दिखलाना था और दूसरे, यह बतलाना था कि बाह्य दृष्टिसे कहूँ तो चरखेसे मैं किस तरह शान्ति की सारी शक्ति प्राप्त करता हूँ। आपने लक्ष्य किया होगा कि चरखेको हमारे राष्ट्रीय ध्वजमें प्रमुख स्थान मिला है और यही एक वस्तु है जो भारतके जन-सामान्यके साथ एक जीवन्त सम्बन्ध और तादात्म्य स्थापित करती है।

अध्यक्ष ताई चि-ताओने कहा कि इस सन्देशसे उन्हें महती प्रेरणा मिली है। उन्हें गांधीजी की शान्तिमय पद्धति, और इसने जो-कुछ कर दिखाया है, इन

सबके विषयमें अखबारोंसे बहुत-कुछ पता चला था, किन्तु आज गांधीजी के मुखसे यह सब सुनकर वे अनुगृहीत हुए हैं। . . .

ताई चि-ताओ : हमारे लिए दूसरा कोई रास्ता ही नहीं था। हमें बहुत प्रतीक्षा करने के बाद हिंसक आक्रमणका प्रतिरोध करना ही पड़ा। किन्तु अब हमारे यहाँ देशको आत्मनिर्भर बनाने का एक आन्दोलन चल रहा है; हमारे गाँवोंमें चरखे की पुनस्स्थापना हो गई है। लगभग नब्बे प्रतिशत घरोंमें चरखा है, किन्तु वह आपके चरखे-जितना आधुनिक नहीं बल्कि पुराने ढंगका है। इस प्रकार आवश्यकताने हमें राष्ट्रीय ग्रामोद्योगोंको पुनर्जीवित करने के लिए मजबूर कर दिया है। देशके सब बड़े-बड़े कारखाने बमबारीसे ध्वस्त हो गये हैं और कुछ कारखाने देशके भीतरी भागोंमें हटाये जा चुके हैं और इस प्रकार हमें लगभग चरखेपर ही निर्भर रहना पड़ता है, जिसपर बमबारी नहीं की जा सकती। आपका चरखा मुझे नई प्रेरणा दे रहा है।

गांधीजी ने नवीनतम नमूने धनुष-तकली को चलाकर दिखाया और चरखा तथा धनुष-तकली अध्यक्ष ताई चि-ताओको भेंटके रूपमें दिये। लेकिन वे पहले ही सबेरे चरखे खरीद चुके थे। विदा होने के लिए उठते समय अध्यक्ष महोदय बोले :

भारत तथा चीनके और समग्र मानव-जातिके कल्याणके लिए मेरी प्रार्थना है कि आप दीर्घजीवी हों और मैं कुमिनतांग दलके सभी सदस्योंकी ओरसे आपके तथा आपके परिवारके कल्याणके लिए प्रार्थना करता हूँ।

गां० (हँसते हुए) : मेरा परिवार तो ३५ करोड़ लोगोंका परिवार है।

ता० : सारी मानव-जाति।

गां० : हाँ, यदि मैं ३५ करोड़का अपना दावा पूरा कर सकूँ, तो अगला दावा भी करूँगा। जनरलिसिमो, उनकी धर्मपत्नी, उनके अधिकारीगण और आत्म-रक्षाके लिए वीरतापूर्वक लड़नेवाले सभी लोगोंके लिए मेरी शुभकामनाएँ लेते जाइए और मैं आपके देशमें शीघ्र शान्ति-स्थापनाकी कामना करता हूँ।

अध्यक्ष महोदयको विदा देने जब गांधीजी कुटियाके बाहर आये, तो उन्हें दिनके भरे प्रकाशमें खड़ा देखकर वे बोले :

ता० : आपका स्वास्थ्य तो असाधारण रूपसे अच्छा है।

गां० (मुस्कराते हुए) : हाँ, चरखा मुझे स्वस्थ रखता है और तब मैं निश्चिन्त रहता हूँ। चिन्ताओंका बोझ तो मैंने भगवानके सशक्त कन्धोंपर डाल रखा है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-११-१९४०

२१५. मणिबहन पटेलको लिखे पत्रका अंश

[२३ नवम्बर, १९४० के पूर्व][1]

जो लोग अस्वस्थ हैं, और जिन्हें शीघ्र ही समझौता हो जाने की आशा है, वे लोग जेल न जायें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २४-११-१९४०

२१६. पत्र: ताराबहन ना० मशरूवालाको

सेवाग्राम
[२३ नवम्बर, १९४० के पूर्व][2]

चि० तारा[3],

तेरा पत्र मिला। तू अपना स्वास्थ्य बिगाड़ रही है। अगर तू भोजनमें जो रद्दोबदल करना चाहिए, वह नहीं करेगी तो पृथ्वीसिंहके साथ भी न्याय नहीं होगा। यहाँ आकर डॉ० दासकी देख-रेखमें रह, या फिर पूनाके डॉक्टरकी देख-रेखमें। चाहे जो कर, लेकिन निश्चयपूर्वक स्वस्थ हो जा। स्वास्थ्य बिलकुल चौपट हो जाने के बाद कुछ भी करने से तुझे लाभ नहीं होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५३१) से। सी० डब्ल्यू० ५००७ से भी; सौजन्य: कनुभाई ना० मशरूवाला

१. यह पत्रांश दिनांक "अहमदाबाद, २३ नवम्बर" के अन्तर्गत छपा था।

२. इस पत्रमें तथा दिनांक २३ नवम्बरके पत्रमें तारावहनके स्वास्थ्य-सम्बन्धी उल्लेखपर से; देखिए पृ० २०७।

३. सुशीला गांधीकी बहन, जो 'तारी' भी कहलाती थीं

२१७. तार: अमतुस्सलामको

वर्धागंज
२३ नवम्बर, १९४०

वीबी अमतुस्सलाम
मार्फत हातिम अलवी साहब
गार्डन रोड
कराची

तार तथा दो पत्र मिले। सावधानीसे ही कोई कदम उठाना। उपवासकी कोई जल्दी नहीं है।[1] तेरी उपस्थितिका असर पड़ रहा है। जबतक मौलाना वहाँ हैं उनसे मार्ग-दर्शन लेना। कुरैशी और जोहराको वहाँ क्यों बुलाना चाहती है? आशा है कि तबीयत ठीक होगी। प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५१) से

२१८. पत्र: ताराबहन ना० मशरूवालाको

सेवाग्राम
२३ नवम्बर, १९४०

चि० तारा,

मेरी पसन्द तो सेवाग्राम है। मैं अभी पराजित नहीं हुआ हूँ। सेवाग्रामसे मुझे मोह है, यह तो तू जानती ही है। मेरे पास तुझे अच्छा करने की अच्छी व्यवस्था है। जब तू कहेगी तब तुझे बुलवा भेजूँगा। मेरे पास सारी तैयारी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५३०) से। सी० डब्ल्यू० ५००६ से भी; सौजन्य: कनुभाई ना० मशरूवाला

१. देखिए "पत्र: अमतुस्सलामको", पृ० १९४, २०१, २०२ और २०९ भी।

२१९. भेंट : एम० एल० शाहको[1]

[२४ नवम्बर, १९४० के पूर्व][2]

गांधीजी इस बातपर मुझसे सहमत थे कि विद्यार्थियोंको दमनके विरुद्ध अपना विरोध प्रगट करने के लिए शान्तिपूर्ण और व्यवस्थित ढंगसे सभाओंका आयोजन करने और जुलूस निकालने की स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।

राजनीतिक हड़तालोंके सम्बन्धमें, उदाहरणके तौरपर राष्ट्रीय नेताओंकी गिरफ्तारीपर हड़ताल आदि करने के सम्बन्धमें, गांधीजी ने सलाह दी कि छात्रोंको ऐसा वातावरण तैयार करना चाहिए जिससे शिक्षा-अधिकारियोंके दिलमें विद्यार्थियों के प्रति सहानुभूति पैदा हो और वे अपने-आप संस्थाओंको बन्द कर दें।

जब गांधीजी ने यह सुना कि युद्धके लिए विद्यार्थियोंसे जबरदस्ती वसूली की गई है, तब उन्हें बहुत दुःख हुआ और उन्होंने विद्यार्थियोंको सलाह दी कि वे ऐसी सभी कार्रवाइयोंका प्रतिरोध करें। गांधीजी ने विद्यार्थियोंकी क्षमताओंकी प्रशंसा की और कहा कि यदि मुझे अपने रचनात्मक कार्यक्रममें उनका समर्थन मिल जाता है तो मुझे विश्वास है कि वे हमारी लड़ाईकी अग्रिम पंक्ति बनेंगे।[3]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २५-११-१९४०

१. साधन-सूत्रके अनुसार अखिल भारतीय छात्रसंघके महामन्त्री श्री एम० एल० शाहने यह रिपोर्ट दी थी। श्री शाहने कुछ समय पहले ही वर्धामें गांधीजीसे मिलकर उनको विद्यार्थियोंके आन्दोलनके प्रति सरकारके दृष्टिकोणसे अवगत कराया था।

२. भेंटकी रिपोर्ट दिनांक "लखनऊ, २४ नवम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

३. रिपोर्टके अन्तमें विद्यार्थियोंके नाम एम० एल० शाहकी यह अपील थी : "मैंने 'विद्यार्थियोंके सबसे बड़े और सबसे नेक मित्र' को जो आश्वासन दिया है, उसे पूरा कर दिखाने में विद्यार्थी मुझे अपना सहयोग प्रदान करेंगे। वे जो भी कहेंगे अथवा करेंगे, शान्तिपूर्ण ढंगसे कहेंगे और करेंगे।"

२२०. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
२४ नवम्बर, १९४०

बेटी,

मैं कल इतने कामोंमें फंसा था कि तुझे नहीं लिख सका।

तेरा तीस सफाका खत पूरा पढ़ लिया। सब खत रखे जाते हैं। आजके टेलीफोनकी बातमें मैं जैसे समझा ऐसा मैंने जवाब दिया। मेरा कहना था कि अब कुरेशीको और झोहराको न भेजा जाये। जल्दी फाका नहिं करना है। सब मौलाना से पूछकर करना है। जब जरूरत होगी तब कु० और झो० को भेजुंगा। तूने पैसेका कुछ करा? मैं जब दरकार होगी पैसे भेजुंगा। मुझे लिखो क्यों और कितने चाहिये। तुमारे और कामोंमें दखल देना हि नहीं है। तुमारा काम फिझा साफ करनेका है और जब खून बंध न हो सके तब फाका करना है। केदी छुटे न छुटें वह दूसरी चीज है। लेकिन सीधी बात हि यह है कि सब देखकर [और जो] मैं कहूं वह करना है। वहां सबमें शांतिको लाना तुमारा काम है। सीयासी कामोंमें कान बंध करो।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५२) से

२२१. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२५ नवम्बर, १९४०

प्रिय आनन्द,

तुम्हारे पत्र उपयोगी हैं। लिखते रहो। जयरामदास कैसे हैं? तुम्हारे कानोंका क्या हाल है? विद्या कैसी है?

बापू

श्री आनन्द तो० हिंगोरानी
अपर सिन्ध कालोनी
कराची सदर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

२२२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेवाग्राम
२५ नवम्बर, १९४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आया, तेरा नाम भी सूचीमें[1] देखा। ईश्वर तेरी रक्षा करेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४१५) से। सी० डब्ल्यू० ६८५४ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

२२३. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

२५ नवम्बर, १९४०

चि० विजया,

बहुत प्रतीक्षा कराई। आखिर आज तेरा पत्र मिला। तू अपनी तबीयत सँभाल, बस इतना ही मुझे चाहिए। फिर तू चाहे जहाँ रह। ज्वार-भाटा तो यहाँ आते ही रहते हैं। अमतुस्सलाम सिन्धमें है। अच्छा काम कर रही है। प्यारेलाल अपनी माँसे मिलने दिल्ली गया है। उसके बाद वह दौरा करेगा। अन्नपूर्णा यहीं है। बचुके[2] कौओंका आपरेशन दिल्लीमें होनेवाला है, इसलिए मनोज्ञा[3] आज दिल्ली चली गई।

बापूके आशीर्वाद

श्री विजयाबहन
दक्षिणमूर्ति ग्रामशाला
आंबला, बरास्ता सोनगढ़
काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१३४) से। सी० डब्ल्यू० ४६२६ से भी; सौजन्य : विजयाबहन म० पंचोली

१. व्यक्तिगत सविनय अवज्ञामें भाग लेनेवाले व्यक्तियोंकी सूचीमें
२. निर्मला देसाई, महादेव देसाईकी सौतेली बहन
३. छगनलाल गांधीकी पुत्र-वधू और कृष्णदास गांधीकी पत्नी

२२४. पत्र : गुलाम रसूल कुरैशीको

२५ नवम्बर, १९४०

चि० कुरैशी,

तुम्हारा पत्र साफ-सुथरा और अच्छा है। तुम्हें अथवा गुलजार खाँको अभी नहीं भेजूंगा। वहाँके काममें व्यवधान डालकर तुम्हें नहीं भेजा जा सकता। मैं अमतुस्सलामको समझानेकी कोशिश करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७६७) से। सौजन्य: गुलाम रसूल कुरैशी

२२५. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा
२५ नवम्बर, १९४०

वेटी,

तेरा खत मिला। तू वहूत जल्दी कर रही हो। अक़बर और हनीफ[1] दोनोंको भेजुंगा। अगर वे तेरा काम कर सके तो। तू खादी कामके लिये नहिं गई है। अगर खादी गरीव मुसलमानोंमें चले तो ठीक है। तेरी आंखोंसे देख तो सही कि कौन हैं और कैसा गरीव है। तेरा काम तो एक ही है खूनरेजी रोकना। हिन्दु मुस्लीमोंके सीयासी झगड़ोंमें पडेगी तो तेरा काम विगड़ा समजना। आनंदके खत तूने देखे हैं। जमशेदजीके भी। वे लोगके वीचमें और तेरे वीचमें मतभेद हो गया है क्या? अगर ऐसे लोगोंसे तेरा मतभेद हो गया तो मैं गभरा जाऊंगा। हातिम क्या कहते हैं? कैसे भी हो मौलाना साहेवकी वात तो समझ ले। वे यहां आवेंगे। उनका सामना करके तो हम कुछ नहिं करेंगे?

प्या[रेलाल] अव तो गुरुवारको आवेगा।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५३) से

१. पंजावके एक खादी कार्यकर्ता

२२६. सन्देश : बंगालके कांग्रेसियोंको[1]

[२६ नवम्बर, १९४० के पूर्व][2]

बंगालसे मैं महान कार्योंकी अपेक्षा रखता हूँ।[3] किन्तु मेरी आशाएँ तभी पूरी हो सकती हैं जब सभी दल अपना मतभेद मिटाकर समान ध्येयके लिए काम करें।

[अंग्रेजीसे]

हितवाद, २९-११-१९४०

२२७. पत्र : च्यांग काई-शेकको

२६ नवम्बर, १९४०

प्रिय जनरलिसिमो,

आपने सद्भावना-दलके[4] हाथों इतनी सहृदयतासे जो स्नेह-भरा पत्र भेजा है उसके लिए मैं अत्यन्त आभारी हूँ। श्री ताई चि-ताओने मुझे आपका मौखिक सन्देश भी दिया है। मुझे केवल इसी बातका दुःख है कि दलके सदस्योंके इलाहाबाद पहुँचने पर पण्डित जवाहरलाल नेहरू उनका स्वागत नहीं कर सकेंगे।

मुझे पूरा विश्वास है कि इस सद्भावना-यात्रासे हमारे दोनों देश परस्पर एक-दूसरेके और निकट आ गये हैं।

मेरी कामना है कि आपके देशको आशासे पहले ही मुक्ति प्राप्त हो।

पुनः आपके, आपकी धर्मपत्नीके तथा आपके देशके प्रति अपनी सादर शुभ-कामनाएँ प्रगट करता हूँ।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०४१०) से। सौजन्य : प्यारेलाल

१ और २. यह सन्देश "बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष सुरेन्द्र मोहन घोष लाये थे, जो हाल ही में गांधीजी से मिलने वर्धा गये थे।" यह दिनांक "कलकत्ता, २६ नवम्बर" के अन्तर्गत छपा था।

३. तात्पर्य बंगालमें सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ करनेसे है।

४. देखिए पृ० २०३, पाद-टिप्पणी १।

२२८. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
२७ नवम्बर, १९४०

अमतुस्सलाम
मार्फत जयरामदास दौलतराम
हैदराबाद (सिन्ध)

तार अभीतक नहीं मिला है। मौलाना जिसका निषेध करें वह कार्य मत कर। उनसे परामर्श कर रहा हूँ। हिदायतोंकी प्रतीक्षा कर। चिन्तामुक्त होकर मौन और शान्त रह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५४)से

२२९. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
२७ नवम्बर, १९४०

अमतुस्सलाम
मार्फत जयरामदास दौलतराम
हैदराबाद (सिन्ध)

मौलानाका सन्देश मिला है। उन्होंने मुझे आदेशात्मक स्वरमें सलाह दी है कि तुझे वापस बुला लूँ। इन हालातमें फौरन चली आओ। प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५५)से

२३०. पत्र : सर जे० जी० लेथवेटको

सेवाग्राम, वर्धा
२७ नवम्बर, १९४०

प्रिय श्री लेथवेट,

मैं चाहता हूँ कि इस पत्रको आप वाइसराय महोदयके सम्मुख रख दें, और यदि सम्भव हो तो इसका पाठ भारत मन्त्रीको तार द्वारा भेज दिया जाये अथवा जिस रूपमें वाइसराय महोदय उचित समझें, इसे उनके ध्यानमें लाया जाये।

अखबारोंमें भारत मन्त्रीका ऐसा वक्तव्य छपा है :[1]

> श्री गांधीके नेतृत्वमें कांग्रेसने निश्चय किया है कि वह कानूनका उल्लंघन करके अपना असन्तोष व्यक्त करेगी। उन्होंने (मेरे[2] सहयोगियोंने) इस अधिकारकी माँग की है कि वे भारतीयोंसे युद्धमें भरती न होने का, गोला-बारूदके कारखानोंमें काम न करने का और युद्ध-समितिको स्वेच्छापूर्वक चन्दा न देने का आग्रह कर सकें।

सिद्धान्त-रूपसे तो इस कथनकी सत्यतासे इन्कार नहीं किया जा सकता है, लेकिन श्रीयुत एमरीको मालूम होना चाहिए था कि वे अपने अनभिज्ञ श्रोताओंके सामने एक ऐसा मत पेश कर रहे हैं जो अखबारोंमें प्रकाशित मेरे १५[3] अक्तूबर, १९४० के निम्नलिखित वक्तव्यको देखते हुए उचित नहीं लगता है :

> मैं जानता हूँ कि सारा हिन्दुस्तान इस बारेमें एकमत नहीं है। हिन्दुस्तानमें एक वर्ग ऐसा है जो युद्ध-वृत्ति रखता है और अंग्रेज सरकारको मदद देकर युद्धकी कला सीखना चाहता है। इसलिए कांग्रेस यह नहीं चाहती कि गोला-बारूदके कारखानों या सिपाहियोंके बैरकोंपर घेरा डाला जाये और लोगोंको उनकी इच्छानुसार काम करने से रोका जाये।

इसके साथ ही मैंने भारतकी जनताको जो नारा दिया है और जिसके आधार पर सविनय अवज्ञा आन्दोलनकारी गिरफ्तार किये जा रहे हैं उसपर भी विचार कर लिया जाये: "अंग्रेजोंके युद्ध-सम्बन्धी कार्योंमें जन या धनकी सहायता देना गलत है। एकमात्र सच्चा और योग्य कार्य तो अहिंसक प्रतिरोध द्वारा सभी प्रकारके युद्धोंका विरोध करना है।"

यह कहना सरासर गलत है कि स्वेच्छासे युद्धमें योगदान देनेवालोंसे हमने ऐसा न करने का आग्रह करने के अधिकारकी माँग की है। सचाई तो यह है कि

१. वे २० नवम्बरको कॉमन्स सभामें भाषण कर रहे थे।

२. गांधीजी के

३. साधन-सूत्रमें यहाँ '१४' दिया गया है; देखिए पृ० ११२-१३।

अंग्रेज सरकारकी ओरसे अनिच्छुक लोगोंसे, जिनमें से कुछ तो वास्तवमें निर्धन हैं, अनुचित दबाव डालकर, यहाँतक कि बलपूर्वक पैसे वसूल किये जा रहे हैं।

भारत मन्त्रीने अपने भाषणमें पण्डित नेहरूके सम्बन्धमें जो कहा है, अब मैं उसे लेता हूँ :

> विनोबा भावेके बाद पण्डित नेहरूकी बारी थी, किन्तु वे तो समयके मामलेमें और मेरा विश्वास है कि भाषणोंके मूल स्वरमें, दोनों बातोंमें श्री गांधीसे भी आगे निकल गये। उनके भाषण हिंसाकी भावनासे भरपूर थे और जान-बूझकर उत्तेजना फैलानेके विचारसे दिये गये थे तथा युद्ध-विषयक कार्योंमें अवरोध डालना उनका निश्चित उद्देश्य था, और ऐसा असर पड़ा भी। जो-कुछ भी हो, पण्डित नेहरूको जो सजा दी गई है, वह प्रशासनका नहीं बल्कि कानूनका मामला था। लेकिन यदि वे यह समझते हैं कि उन्हें जरूरतसे ज्यादा सजा दी गई है, तो उन्हें अपील करनेका अधिकार प्राप्त है।

जेलखानेके सीखचोंमें बन्द किसी व्यक्तिके बारेमें ऐसा कहना मेरी दृष्टिमें एक क्रूर दोषारोपण है। उनके भाषणोंमें ऐसी कोई बात नहीं है जिससे हिंसाकी गन्ध आती हो। मैं इस बातसे भी इन्कार करता हूँ कि पण्डित नेहरू मुझसे आगे बढ़ गये। सत्य तो यह है कि प्रान्तीय सरकार मुझसे आगे बढ़ गई। प्रान्तीय सरकार को मालूम था कि वे मुझसे यह तय करने आये थे कि वे कब, कहाँ और कैसे सविनय अवज्ञा करेंगे। अपने ३० अक्तूबर, १९४० के पत्रमें मैंने वाइसराय महोदयको सूचना दे दी थी कि अब पण्डित नेहरू सविनय अवज्ञा करेंगे और तिथि व स्थानका निश्चय होनेके तुरन्त बाद मैं उन्हें सूचना भेज दूंगा।[1] तथापि अपने काम-काजका प्रबन्ध करनेसे पहले ही पण्डित नेहरूको बीच यात्रामें रोक लिया गया और उनपर मुकदमा चलानेके लिए उन्हें गोरखपुर ले जाया गया। हमने सरकारपर यह जो आरोप लगाया है कि उसने प्रतिशोधकी भावनासे प्रेरित होकर पण्डित नेहरूको सजा सुनाई है, उसके उत्तरमें उनका यह कहना कि यदि पण्डित नेहरू चाहें तो अपील कर सकते हैं, केवल एक क्रूर मजाक ही है। भारत मन्त्री अवश्य ही जानते होंगे कि पण्डित नेहरू सजाके खिलाफ अपील नहीं करेंगे।

मैं यह सब इसलिए लिख रहा हूँ कि मुझे दुःख हुआ है कि एक ऐसे व्यक्तिने, जिसके कन्धोंपर एक उपमहाद्वीपका कार्य-भार है, अपने मित्रता रखनेवाले विरोधियोंके प्रति जो व्यवहार किया है, वह उनके पदके अनुरूप नहीं है। ऐसा जान पड़ता है कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ उन शक्तियोंकी संदिग्ध मैत्री जीतनेके लिए तो बढ़-चढ़कर प्रयास करते हैं जिनके हृदयमें ब्रिटेनके प्रति कोई सद्भावना नहीं है, और उसके विपरीत, जो लोग प्रसन्नतापूर्वक उनसे मैत्री करनेको तैयार हैं, उन्हें विमुख करनेका वे कोई अवसर नहीं चूकते।

१. देखिए पृ० १४८।

यह सब मैंने क्रोधमें नहीं, बल्कि दुखी मनसे लिखा है और यह प्रकाशनके लिए तो कदापि नहीं है।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५७) से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

२३१. पत्र: लीलावती आसरको

सेवाग्राम
२७ नवम्बर, १९४०

चि० लीली,

मच्छरदानी चाहिए ही, इसके लिए डीनतक पहुँचनेकी तो कोई जरूरत नहीं थी। जो नियम हो, चुपचाप उसका पालन करना चाहिए। हाँ, उसमें अनीति हो, तो अलग बात है।

डीनके साथ हुई बातें लिखीं, यह अच्छा किया। इससे मालूम होता है कि तुझे मेहनत करके सब परीक्षाओंमें पास होना ही चाहिए; यह तेरा कर्त्तव्य है।

सेवाग्रामको भूल जा और बस अपने अध्ययनमें डूब जा। [मेरे] उपवासकी बात तब सोचना, जब उपवास शुरू हो। तुझे सीधा मार्ग दिखा दिया गया है। वही तेरा आधार है। अन्य किसी ओर तुझे देखना ही नहीं चाहिए।

तू 'आज्ञाधीन' लिखकर हस्ताक्षर करती है। मेरी आज्ञा तुझे मिल चुकी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५९८) से। सी० डब्ल्यू० ६५७० से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

१. सर गिल्बर्ट लेथवेटने इस पत्रका उत्तर देते हुए ३० नवम्बरके अपने पत्रमें लिखा था: "वाइसराय महोदयने मुझसे कहा है कि मैं आपको यह बता दूँ कि आपका २७ नवम्बरका पत्र उन्हें मिल गया है और पत्रके लिए आपका बहुत-बहुत शुक्रिया। उन्होंने यह भी लिखने को कहा है कि वे भारत मन्त्रीको इसके बारेमें तत्काल सूचित कर रहे हैं।"

२३२. तार : राजेन्द्रप्रसादको[1]

[२७ नवम्बर, १९४० के पश्चात्][2]

बिहारकी खबरें चिन्ताजनक हैं। जो प्रान्त सर्वोत्तम था उसे भला चिन्ताका कारण क्यों होना चाहिए? कोई भी प्रदर्शन नहीं होने चाहिए। आसन्न प्रतिरोधकी सूचना जनताको नहीं बल्कि अधिकारियोंको दी जाये।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१२-१९४०

२३३. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
२८ नवम्बर, १९४०

अमतुस्सलाम
मार्फत जयरामदास दौलतराम
हैदराबाद (सिन्ध)

अभी-अभी लम्बा तार मिला। मेरा जाना असम्भव है। फौरन लौट आ ताकि मौलानाके यहाँ आने के समय तू भी यहीं रहे। मैं अब अच्छा हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५६) से

१ और २. इस तारको राजेन्द्रप्रसादने इसके उत्तरके साथ अपने एक वक्तव्यमें उद्धृत किया था। उत्तरमें उन्होंने बताया था कि श्रीकृष्ण सिंहके सत्याग्रहके दौरान कुछ अशोभन घटना हो गई थी। इस अशोभन घटनाका सूत्र राजेन्द्रप्रसादकी आत्मकथा के पृ० ७३२ में मिलता है, जिसमें उन्होंने लिखा है: "श्रीबाबू सत्याग्रह करने के लिए बाँकीपुरके मैदानमें पहुँचे, तो...वहाँ पर कुछ शोर-गुल हुआ, जो जेलके फाटकतक, जहाँ श्रीबाबूको गिरफ्तार करके ले गये, जारी रहा।...यह आरम्भ गांधीजी की हिदायतोंके खिलाफ हुआ...।"

२३४. पत्र : अब्दुल वदूद सरहदीको[1]

सेवाग्राम, वर्धा
२८ नवम्बर, १९४०

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। स्वयं आपके प्रान्तमें लोगोंकी रायें भिन्न-भिन्न हैं। प्रत्येक व्यक्ति यह निर्णय करने को स्वतन्त्र है कि वह सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग ले अथवा न ले। लेकिन यदि वह भाग लेता है तो उसे आन्दोलनकी शर्तोंका पालन करना होगा, जिनमें से एक शर्त है हिन्दू-मुस्लिम एकतामें विश्वास करना। ऐसी हालत में सविनय अवज्ञा आन्दोलनके विरुद्ध कुछ कहने का किसीके पास कारण नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे; प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२३५. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

वर्धा
२९ नवम्बर, १९४०

छात्रोंको जो प्रश्न उद्वेलित कर रहे हैं उनपर मेरे तथाकथित विचार कुछ अनुच्छेदोंके रूपमें अखबारोंमें छपे हैं, जिनकी ओर मेरा ध्यान खींचा गया है। अखबारोंमें जो-कुछ छपा है, वह सब मैंने देखा नहीं है। इसका एकमात्र कारण यही है कि मुझे अपनी शक्तिका संचय करना है, क्योंकि इधर हालमें मुझे बहुत श्रम करना पड़ा है।

मेरा मत बिलकुल दृढ़ है।[2] जबतक विद्यार्थी हमेशाके लिए कॉलेजों अथवा स्कूलोंको छोड़ने का निश्चय नहीं कर लेते, तबतक राजनीतिक हड़तालोंमें उनके भाग लेने की बातको उचित नहीं समझा जाना चाहिए। स्वतन्त्र देशोंके ठीक विपरीत हमारे शिक्षा-संस्थानोंका नियन्त्रण उन शासकोंके हाथोंमें है जिनसे मुक्त होने के लिए

१. जमीयत-उल-उलेमा-ए-सरहदके अध्यक्ष, अब्दुल वदूद सरहदीने गांधीजीको लिखे २३ नवम्बरके अपने पत्रमें सविनय अवज्ञा आन्दोलनसे अपनी असहमति प्रकट करते हुए कांग्रेस और मुस्लिम लीगके बीच एकता स्थापित करने का प्रयत्न करने की सलाह दी थी।

२. देखिए पृ० १८९-९० भी।

हमारा देश जूझ रहा है। इसलिए शासकों द्वारा नियोजित और नियन्त्रित शिक्षा पाने की कीमत छात्रोंको आत्मदमन द्वारा चुकानी होगी। वे हड़ताल भी करें और पढ़ाई भी जारी रखें, ये दोनों बातें साथ-साथ नहीं हो सकतीं। यदि वे लोग स्कूल और कॉलेजोंकी शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं, और जाहिर है कि वे ऐसा चाहते हैं, तो उन्हें इन संस्थाओं द्वारा निर्धारित नियमोंका पालन भी करना होगा। इसलिए जबतक स्कूलों व कॉलेजोंके मुख्याध्यापक राजनीतिक हड़ताल करने की अनुमति नहीं देते, तबतक विद्यार्थियोंको राजनीतिक हड़तालें नहीं करनी चाहिए।

साथ ही मैंने एक उपाय सुझाया है। स्कूल या कॉलेजके बाद विद्यार्थियोंके पास काफ़ी समय होता है, जिसमें वे जो चाहें सो कर सकते हैं। उस समय वे सभाएँ कर सकते हैं, राष्ट्रीय हेतुके प्रति व्यवस्थित ढंगसे अपनी सहानुभूति व्यक्त कर सकते हैं और चाहें तो जुलूस भी निकाल सकते हैं। जो सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेना चाहते हैं और जिन्हें मेरा नेतृत्व स्वीकार है, वे कुछ समयके लिए पढ़ाई छोड़कर और व्यक्ति-विशेष द्वारा की जानेवाली सविनय अवज्ञाके निर्धारित नियमोंको मानकर मेरी अनुमति लेने के बाद ऐसा कर सकते हैं।

छात्रोंने निजी तौरपर मुझे जो पत्र भेजे हैं, उनसे प्रकट होता है कि मेरे नेतृत्वमें उन्हें अधिक आस्था नहीं है, क्योंकि उन्हें मेरे उस रचनात्मक कार्यक्रमपर कोई श्रद्धा नहीं है जिसका केन्द्र-विन्दु और सबसे अधिक दृष्टिगोचर तत्त्व खादी है। उन्हें सूत कातने पर विश्वास नहीं है और यदि मेरे इन पत्रलेखकोंको विश्वसनीय माना जाये तो उनका अहिंसामें विश्वास भी सन्दिग्ध है। यदि विद्यार्थी आन्दोलनके नियमोंका पूर्ण अनुशासन मान लें तो वे राष्ट्रीय आन्दोलनमें बड़ी सशक्त भूमिका निभा सकते हैं। किन्तु यदि वे स्वतन्त्र रूपसे काम करेंगे और व्यर्थ प्रदर्शनोंमें ही अपनी शक्तिका हनन करते रहेंगे तो वे राष्ट्रीय हेतुको बाधा पहुँचायेंगे।

मुझे यह कह सकते हुए खुशी होती है कि कांग्रेसजन अपने क्रिया-कलापमें काफी अनुशासन दिखा रहे हैं। इसपर मुझे स्वयं सुखद आश्चर्य हुआ है, क्योंकि मैं इसके लिए तैयार नहीं था। किसीको यह कहने का मौका न मिले कि छात्र-वर्ग ऐन मौकेपर चूक गया। छात्र याद रखें कि विचारशून्य और अनुशासन-रहित प्रदर्शनोंसे जितनी दृढ़ता, साहस और त्याग-भावना परिलक्षित होती है, उससे अधिक दृढ़ता, साहस और त्याग-भावनाकी मैं माँग कर रहा हूँ।

छात्रोंको यह भी समझना चाहिए कि देशके जो पैंतीस करोड़ लोग हैं, उनकी तुलनामें सत्याग्रहियोंकी संख्या हमेशा बड़ी सीमित रहेगी, लेकिन देशके रचनात्मक कार्यक्रममें भाग लेनेवालोंकी संख्या असीमित है। इसको मैं स्वातन्त्र्य-आन्दोलनका सबसे उपयोगी और पुरअसर अंग मानता हूँ, जिसके बिना सविनय अवज्ञा आन्दोलन सविनय नहीं रह पायेगा और इसी कारण बिलकुल निरर्थक हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-११-१९४०

२३६. पत्र : विश्वम्भरनाथ भार्गवको

सेवाग्राम
२९ नवम्बर, १९४०

भाई विश्वम्भरनाथजी[1],

आपका पत्र[2] मिला था। व्यक्तिगत सलाह कांग्रेस कमिटियोंके अधीन हि हो सकती है। उसके विरोधमें अगर मैं कुछ सलाह अनजानपनमें दूं तो उसका अमल नहीं होना चाहिये।

दुर्गाप्रसादजीके बारेमें मुझको रामनारायणजीने पूछा था और मैंने कहा था कि वे अपील कर सकते हैं, और अगर वकीलोंकी सम्मति मिले तो अपील करना चाहिये। दु० का केस लड़ाई शुरू होनेके पहले का था। लेकिन बादका भी हो लेकिन लडाईसे संबंध न रखे तो अपील इ० हो सकता है और बाज दफा ऐसा करना कर्त्तव्य हो सकता है।

रामनारायणजीने खादी इ० के बारेमें मुझको कहा उसमें मैंने कुछ अनुचित नहीं पाया। मेरे साथ कम बात करते हैं। अजमेरके बारेमें कुछ नहीं। दुर्गाप्रसादके बारेमें पूछा था, उसे छोड़कर। मुझे वक्त ही बातें करनेका कम मिलता है।

लेकिन तुमने मुझको अपने भाव बताये सो तो अच्छा ही किया।

जो तारीख मुझे बताई है सब ठीक है। मेरा ख्याल है अब कोई चीजका उत्तर बाकी नहीं है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. अजमेर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्री

२. विश्वम्भरनाथ भार्गवने अपने पत्रमें लिखा था कि "अजमेरमें इस बातकी चर्चा हो रही है कि गांधीजीने दुर्गाप्रसादको अपील करनेकी इजाजत दे दी है। लेकिन यह उस आदेशके विरुद्ध है जो आपने मुझे दिया है।" उन्होंने यह भी पूछा था कि "आपसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध रखनेवालोंके लिए . . . कांग्रेसमें रहते हुए अनुशासनके सम्बन्धमें आपकी राय प्रधान है या कांग्रेस संगठन की [और] . . . सत्याग्रहके सिवाय साधारण कांग्रेस-कार्यमें आपसे आदेश लेते रहना [क्यों] आवश्यक है?"

२३७. पत्र : व्रजकृष्ण चाँदीवालाको

सेवाग्राम, वर्धा
३० नवम्बर, १९४०

चि० व्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला। अगर जिनका नाम दिया है वे शर्तपालन करें तो सविनय भंग कर सकते हैं।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

रघुनंदनजी[1] से कहो थोड़े दिनों तक भले बाहर रहे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४७७)से

२३८. पत्र : सत्यवतीको

सेवाग्राम, वर्धा
३० नवम्बर, १९४०

चि० सत्यवती,

जब आना चाहती है आ सकती है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४७८)से

१. रघुनन्दन शरण, दिल्ली प्रान्तीय सत्याग्रह समितिके अध्यक्ष

२३९. पत्र : पटवर्धनको

३० नवम्बर, १९४०

भाई पटवर्धन,

तुम्हारा खत मिला। अगला भी मिला था। कामोंमें फंसे हुए होने से तुरंत उत्तर नहीं दे सका। शक्ति अभी भी क्षीण तो है ही। दादा धर्माधिकारीको मैं पूछ नहीं पाया। अब पूछूंगा। स्पष्टीकरण चूंकि सहस्रबुद्धेने जो शंकाए उठाई हैं उनका उत्तर होना चाहिये। सदुपयोग तो तभी हो सकेगा जब विद्यालय सुव्यवस्थित-रूपमें चले और बिना रोकटोकके पैसे हाथमें आ सकें। मेरी उपयोगिता पंचकी हैसियतमें नहीं होगी लेकिन आप लोग [और] सहस्रबुद्धेको साथ लेकर मैं चल सकूं तब पहली दिसंबरको जो हो उससे मुझे वाकेफगार करेंगे। जब मैं पूरा करने लायक बन जाऊं तब आप सबको बुलाने की आवश्यकता देखूंगा तो बुलाऊंगा।

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२४०. मुकुन्दलाल सरकारको लिखे पत्रका अंश[1]

[२ दिसम्बर, १९४० के पूर्व][2]

जिस बातको लेकर व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाका आरम्भ किया गया है, वह निस्सन्देह वाणी और कलमकी स्वतन्त्रता है, किन्तु सभी विवादोंकी चरम परिणति स्वतन्त्र भारत [की माँग] में होती है। आरम्भमें इस आन्दोलनको दो-तीन व्यक्तियों-तक ही सीमित रखने की कल्पना की गई थी, लेकिन फिर मैंने उसका विस्तार कार्य-समितिमें से मेरे चुने हुए व्यक्तियोंतक किया। फिर वह अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान-सभाओंतक विस्तृत हो गया। और प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किये गये सत्याग्रहको मुझपर जो प्रतिक्रिया होगी अथवा जैसा अवसर होगा, उसके अनुसार मैं इसका विस्तार करता चला जाऊँगा। मैंने प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंकी कार्यकारिणियोंके सदस्योंकी वर्गीकृत सूचियाँ मँगवाई हैं और इसी प्रकार जिला, फिरका अथवा ताल्लुका और अन्ततः गाँवोंकी भी कांग्रेस कमेटियोंकी

१ और २. मुकुन्दलाल सरकारने, जो अखिल भारतीय फॉरवर्ड ब्लॉकके कार्यवाहक महामन्त्री थे, एक पत्रमें गांधीजी से "व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा" के विषयमें पूछा था। उन्होंने यह भी जानना चाहा था कि "क्या यह सर्व-साधारणकी सविनय अवज्ञा आन्दोलनका रूप धारण कर सकती है?" यह पत्र दिनांक "कलकत्ता, २ दिसम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

सूचियाँ मँगवाई हैं। लेकिन आन्दोलनका क्षेत्र चाहे जितना विस्तीर्ण हो जाये, वह जन-आन्दोलनका रूप कदापि नहीं लेगा। जहाँतक मेरी दृष्टि जाती है, सविनय अवज्ञाका यह आन्दोलन व्यक्ति-विशेषतक ही सीमित रहेगा और केवल वे ही लोग इसमें भाग ले सकेंगे जिन्हें मेरी शर्तोंमें विश्वास है और जो उन्हें पूरा करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ५-१२-१९४०

२४१. पत्र : सर रेजिनाल्ड मैक्सवेलको

सेवाग्राम, वर्धा

२ दिसम्बर, १९४०

प्रिय सर रेजिनाल्ड,

महादेव देसाईने आपका कृपापूर्ण सन्देश मुझे दे दिया है। वह उनके दिल्लीके कार्योंके उस पूर्ण विवरणमें शामिल है जो उन्होंने मुझे भेजा है। विवरणका सन्देशवाला अंश इस प्रकार था :

> देखिए, मेरी समझमें तो गांधीजी-जैसे व्यक्तिके लिए उचित यह होता कि उन्होंने जैसे प्रत्येक ब्रिटेनवासीके नाम अपील[1] जारी करके अपनी स्थितिका स्पष्टीकरण किया था, उसी प्रकार भारतवासियोंके नाम भी एक घोषणा-पत्र प्रकाशित करवा देते और शान्त होकर बैठ जाते। मेरा यह सन्देश श्री गांधीको दे दीजिएगा।

इधर कुछ दिनोंसे मैं बहुत ज्यादा थकावट महसूस कर रहा हूँ और मैं दैनिक कार्य भी बहुत कम करता हूँ, इसी कारण उत्तर देनेमें विलम्ब हुआ। फिर भी, मैं सत्यका स्पष्टीकरण करनेके विचारसे आपके सन्देशको लेकर चर्चा छेड़ रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि आप कितने व्यस्त और चिन्ताग्रस्त हैं। लेकिन सत्यकी सतत शोध और प्रकट सत्यके आधारपर कार्य करना ही तो सत्याग्रह है। अपने लक्ष्यकी ओर अग्रसर होते हुए सत्याग्रहीको यह भी बताना होता है कि वह विपक्षीके पक्षको जानने और भली प्रकार समझनेको हमेशा तत्पर ही नहीं, वरन् उत्सुक भी रहता है। मैं इसी भावसे आपके सन्देशको ग्रहण कर रहा हूँ।

यदि मैं धर्मोपदेशक होता तो आपकी भेजी हुई सलाह बिलकुल सटीक होती, किन्तु मैंने वह भूमिका कभी भी नहीं अपनाई। मैं तो मूलतः एक कर्मशील और सुधारक व्यक्ति हूँ तथा राजनीतिक क्षेत्रमें एक अभूतपूर्व प्रयोग कर रहा हूँ। इसलिए छोटी ही नहीं, बड़ी भूलें करनेकी जोखिम उठाकर भी मुझे अपने निर्णीत पथपर तबतक चलते रहना है जबतक मुझे भूलकी प्रतीति नहीं हो जाती अथवा अपनी कार्य-पद्धतिपर से विश्वास नहीं उठ जाता। मेरी इच्छा तो अपने

१. देखिए खण्ड ७२, पृ० २६१-६४।

लक्ष्यकी ओर अग्रसर होते हुए सरकारको कमसे-कम परेशान करनेकी है। यदि मेरा प्रयास सफल हो जाता है, तो इससे भारतके साथ-साथ ब्रिटेनको और अन्ततः विश्वको भी अवश्य लाभ होगा। और यदि वह असफल रहता है तो उससे सरकारको कोई हानि भी नहीं पहुँचेगी। इसके बारेमें मैं इससे ज्यादा और कुछ नहीं कह सकता। मैंने जो-कुछ कहा है वह शायद तर्क भी नहीं है, वह तो मेरे कार्यके प्रेरक हेतुका वृत्तान्त और हेतुकी पृष्ठभूमिमें कार्यकी व्याख्या मात्र है। बाकी तो समयपर छोड़ देना होगा।

महादेव देसाईने मुझे बताया कि आपके प्रियजन घमासान युद्धके बीच हैं। और मैं यह भी जानता हूँ कि आपपर जो बात लागू होती है, वह लगभग सभी प्रख्यात ब्रिटिश परिवारोंपर भी लागू होती है। काश, मैं भी उनके साथ होता, लेकिन कर्त्तव्यने मुझे एक ऐसे मार्गपर डाल दिया है जो इसके ठीक विपरीत जान पड़ता है। मैं इस बातसे सन्तोष ग्रहण करता हूँ कि दिखनेमें विपक्षी होता हुआ भी म सरकारके घोषित उद्देश्यके लिए ही लड़ रहा हूँ, केवल इस विश्वासके साथ कि उसकी पद्धति हिटलरकी पद्धतिको कभी हरा नहीं सकती। उसे पराजित करने में केवल मेरा तरीका ही कारगर हो सकता है।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५८) से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

२४२. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा
२ दिसम्बर, १९४०

चि० मीरा,

तुम्हारा भला-सा और लम्बा पत्र[2] अभी-अभी आया है। तुमने जो लिखा वह सब मैं समझता हूँ। एकमात्र भगवानको ही अपना मार्गदर्शक मानो। मेरी

१. सर रेजिनाल्डने अपने ७ दिसम्बरके उत्तरमें लिखा था: "मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि आप केवल ऊपरसे दिखनेमें विरोधी पक्षमें हैं तथा आपका उद्देश्य वही है जो हमारा है। यद्यपि मुझे अफसोस है कि हमारे ध्येय-प्राप्तिके तरीके जुदा-जुदा हैं, लेकिन मैं समझता हूँ मुझे आपको अपने ढंगसे कार्य करने देना चाहिए।"

२. मीराबहनने लिखा है: "मैंने बापूको समझाकर लिखा था कि खास तौरसे रातके समय जंगलसे बहुत सारे छोटे-छोटे चूहे कुटियामें आने लगे थे। वे मेरे बिस्तरमें घुस जाते थे और कभी मेरे पैर कुतरने लगते थे, कभी मेरे ऊपर इधर-उधर दौड़ लगाते थे और कभी-कभी तो मेरे बालोंसे भी उलझ जाते थे। मेरी मुख्य चिन्ता यही थी कि कहीं कोई चूहा दबकर मर न जाये। इस चिन्ता और चूहोंकी खुदड़-बुदड़के मारे मेरे लिए सो सकना एक समस्या बन गया। अन्तमें मुझे मसहरी लगानेका विचार सूझा। यह पूरी तरह कामयाब रहा।"

तबीयत खराब नहीं है। मुझे विश्रामकी आवश्यकता है और वह मैं ले रहा हूँ। हाँ, मुझे चूहोंने सताया है। उनके तंग करने पर मैं सो नहीं सकता। उनके काटने से जहर भी चढ़ सकता है। तुम्हारे पास खाट है? तुम्हारी मच्छरदानीकी छत मजबूत और तनी हुई होनी चाहिए। रातको तुम्हारी नींदमें कोई गड़बड़ नहीं होनी चाहिए। मैं जान-बूझकर तुम्हें और कोई समाचार या सन्देश नहीं दे रहा हूँ। तुम्हारे ध्यानमें मैं कोई खलल नहीं डालना चाहता। लालजीसे[1] बात हो तो उनसे कहना कि मुझे उनका ध्यान है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६६) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००६१ से भी

२४३. सन्देश : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंको[2]

[४ दिसम्बर, १९४० के पूर्व][3]

जबसे मैं आप लोगोंके सम्पर्कमें आया हूँ, मैंने आपको यह बताने की कोशिश की है कि आपका उद्धार आपके अपने हाथोंमें ही है। श्रमका मूल्य पैसोंमें आंके हुए मूल्यसे कहीं अधिक होता है। आप अपनी इच्छानुसार अपना मूल्य घटा या बढ़ा सकते हैं। लेकिन यदि आप अपने श्रमकी पैसोंमें कूती गई कीमतसे ही सन्तुष्ट हैं तो आप स्वयं अपना मूल्य सीमित कर लेते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ५-१२-१९४०

१. कन्हैयालाल मुंशी

२ और ३. साधन-सूत्रके अनुसार यह सन्देश "१९१७ में कपड़ा उद्योग मजदूर संघकी स्थापनाकी स्मृतिमें ४ दिसम्बरको आयोजित अहमदाबाद मजदूर दिवस समारोह" के लिए भेजा गया था। उस दिन सभी स्थानीय मिलें बन्द रहीं और मजदूरोंकी बस्तियोंमें सभाएँ की गईं, जिनमें इस दिवसका महत्त्व बताया गया।

२४४. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा
४ दिसम्बर, १९४०

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र पढ़ने के तुरन्त बाद मैं यह पत्र लिख रहा हूँ। यहाँ तीन डाक्टर मौजूद हैं, मैं उनके सामने तुम्हारी पानीकी समस्या रख रहा हूँ। सुशीला उनमें से एक है। मेरा-तुम्हारा समझौता तो यह है कि तुम पहाड़ोंमें रहोगी, बशर्ते कि तुम अपना स्वास्थ्य ठीक रखो। सांसारिक, नैतिक या आध्यात्मिक सभी प्रकारके प्रयासोंमें स्वस्थ शरीरका होना नितान्त आवश्यक है। तुमने पावरोटी खाना छोड़ दिया है, सो ठीक किया। पार्सलके साथ पूनियाँ भी भेजी गई थीं। तुम्हें उसके बारेमें पूछ-ताछ करनी चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि पार्सलकी रसीद जिस लिफाफेमें थी, वह तुमने वापस नहीं भेजा होगा।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च:]

एक गैलन पानीमें छः ग्रेन फिटकरी डालकर उसे रात-भर छोड़ दो। सवेरे पानी निथार लो और इस एक गैलन पानीमें आधा छोटा चम्मच चूना डालने के बाद उसे उबालकर इस्तेमाल करो। किन्तु पालमपुरमें तुम्हें आसवित जल मिल जाना चाहिए। यदि हो सके तो केवल वही इस्तेमाल करो।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६७) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००६२ से भी

२४५. पत्र : गुलाम रसूल कुरैशीको

४ दिसम्बर, १९४०

चि० कुरैशी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें अमतुल सलामकी नाराजगीका खयाल नहीं करना चाहिए, उसको लेकर दुःखी नहीं होना चाहिए और न उसकी खुशीसे खुश होना चाहिए। वह कल दोपहरको यहां पहुँच जायेगी। अमीनाकी ववासीरका क्या हाल है?

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७६८) से। सौजन्य : गुलाम रसूल कुरैशी

२४६. पत्र : एस० सी० चटर्जीको[1]

सेवाग्राम
५ दिसम्बर, १९४०

प्रिय महोदय,

संलग्न पत्रमें लिखी बातें स्वयं स्पष्ट हैं। मैं आपको यह नकल इसलिए भेज रहा हूँ कि पत्रमें उल्लिखित आपके परिपत्रके सम्बन्धमें तथ्योंका जो कोरा विवरण दिया गया है उसे आप जरूरी हो तो सुधार सकें। अब आप समझ जायेंगे कि आपका पत्र आने तक मैंने अपने पत्रको क्यों नहीं प्रकाशित होने दिया। मेरी प्रबल इच्छा यही है कि मेरे हाथों अनजानमें आपके प्रति कोई अन्याय न होने पाये।[2]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०५०४) से। सौजन्य : इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी

१. एस० सी० चटर्जी कानपुरके क्राइस्ट चर्च कॉलेजके प्रिंसिपल थे।

२. देखिए पृ० २३४-३५ भी।

२४७. तार : वरदाप्रसन्न पाइनको[1]

[६ दिसम्बर, १९४० या उसके पूर्व][2]

खेद है कि इस मामलेमें हस्तक्षेप करने में असमर्थ हूँ, करना भी नहीं चाहता। दोनों बन्धुओंके प्रति आदर और मैत्रीके बावजूद मेरे मतमें जबतक वे अनुशासन-भंगके लिए क्षमा-याचना नहीं करते, तब तक उनपर से प्रतिबन्ध नहीं हटाया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-१२-१९४०

२४८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

वर्धागंज

६ दिसम्बर, १९४०

सरदार सम्पूरणसिंहने अदालतमें जो आश्चर्यजनक बयान दिया है, उसे मैंने अभी-अभी पढ़ा है।[3] मैं नहीं जानता कि उनके नामकी स्वीकृति किसने दी। मैंने जो निर्देश दिये थे उनमें मैंने अत्यन्त स्पष्ट शब्दोंमें उनके जैसे व्यक्तियोंके नामोंको शामिल करने से मना किया था। लेकिन मैं सरदार सम्पूरणसिंहको इस बातके लिए बधाई देता हूँ कि वे अपनी राजनीतिक प्रतिष्ठाको दाँवपर लगाकर भी सच बोले। उनके दृष्टान्तसे दूसरे भी चेत जायें कि जिस थोथे और अर्थहीन अनुशासनके

१ व २. साधन-सूत्र के अनुसार "बंगाल कांग्रेस संसदीय दलके एक प्रमुख सदस्य" वरदाप्रसन्न पाइनने एक तार द्वारा गांधीजी से अनुरोध किया था कि वे "बंगाल कांग्रेसमें आन्तरिक झगड़ों और विवादोंको मिटाने के लिए कांग्रेस हाइ कमानको आज्ञा दें कि वह शरत्चन्द्र बोस और सुभाषचन्द्र बोसपर लगाये गये प्रतिबन्धको तुरन्त हटा ले।" यह तार दिनांक "कलकत्ता, ६ दिसम्बर" के अन्तर्गत छपा था।

३. पंजाब विधान-सभामें कांग्रेस दलके नेता सम्पूरणसिंहको उनकी गिरफ्तारीके बाद अदालतमें उनके आचरणके कारण दलसे निष्कासित कर दिया गया था। **इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४०**, खण्ड २, पृ० ५३ के मुताबिक अबुल कलाम आजादने सम्पूरणसिंहके नाम पत्रमें लिखा था: "अपनी सफाईमें आपने मुझे जो पत्र भेजा है, वह सारहीन है। अदालतमें आपके दिये हुए बयानसे स्पष्ट हो जाता है कि आप कांग्रेसके युद्ध-सम्बन्धी निर्णयसे सहमत नहीं हैं। इसके बावजूद सत्याग्रही बनकर आपने अपनेको और अपने दलको, जिसका नेता बनने का गौरव आपको प्राप्त हुआ था, हास्यास्पद बना डाला है।" देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", २०-१२-१९४० भी।

नामपर सरदार सम्पूरणसिंहने सविनय अवज्ञा की, उसका मेरी दृष्टिमें कोई मूल्य नहीं है।

सरदार सम्पूरणसिंहकी गिरफ्तारीपर उन्हें वीर जन-नायक समझकर विद्यार्थियोंने जो अत्यन्त उत्साहपूर्ण प्रदर्शन किया, उसका वृत्तान्त भी मैंने अखबारोंमें पढ़ा है। छात्रोंको जानना चाहिए कि उन लोगोंके इस कार्यसे राष्ट्रीय उद्देश्यको भारी क्षति पहुँची है। यदि रिपोर्ट बिलकुल सच्ची है, तो इस उच्छृंखल प्रदर्शनसे कांग्रेसजन सचेत हो जायें कि उन्हें ऐसे प्रदर्शनोंके अवसर नहीं आने देने हैं।

सरदार सम्पूरणसिंहके इस खेदजनक मामलेमें कांग्रेसी संस्थाओंके प्रभारियोंकी ओरसे भी गड़बड़ हुई है। उन्होंने इस कड़े आदेशका पालन नहीं किया है कि सविनय अवज्ञा गांवोंमें जाकर ही की जानी चाहिए। कहने को कुछ भी कहा जाये, लेकिन आन्दोलनका उद्देश्य सरकारको डराना अथवा उसे जान-बूझकर परेशानीमें डालना नहीं है। कांग्रेस इस आन्दोलन द्वारा राष्ट्रीय प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिए आत्म-बलिदान और कष्ट-सहन द्वारा ऊँची कीमत चुकाने का अपना दृढ़ निश्चय प्रकट कर देना चाहती है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-१२-१९४०

२४९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

वर्धागंज
७ दिसम्बर, १९४०

मुझे अभी-अभी बताया गया है कि सत्याग्रहियोंकी गिरफ्तारी और कारावास और विशेषतः नेताओंकी हालकी गिरफ्तारीपर खेद व्यक्त करने के लिए खिलाड़ियों द्वारा मैचमें[1] भाग न लेने का एक आन्दोलन चल रहा है। मुझे स्वीकार करना होगा कि ऐसे मैचों और उनमें बरते जानेवाले शिष्टाचारसे मैं अनभिज्ञ हूँ। इस कारण मेरा मत तो एक ऐसे सामान्य व्यक्तिका मत माना जाना चाहिए जो ऐसे खेलों और उनके विशिष्ट कायदे-कानूनोंसे बिलकुल अपरिचित है। किन्तु मुझे यह स्वीकार करना होगा कि मेरी पूरी सहानुभूति उन लोगोंके साथ है जो इन मैचोंको बन्द करवाना चाहते हैं। मैं ऐसा मत केवल इस कारण ही नहीं प्रकट कर रहा हूँ कि सत्याग्रही होने के नाते मैं किसी-न-किसी तरह आन्दोलनके लिए जनताका समर्थन प्राप्त करना चाहता हूँ। साथ ही यह भी कहे देता हूँ कि प्रस्तुत आन्दोलन ऐसे प्रदर्शनों या बाह्य समर्थनपर तनिक भी निर्भर नहीं है। लेकिन मैं ऐसे समयमें इस प्रकारके मनोरंजनोंको प्रोत्साहित नहीं करना चाहूँगा जब कि संसारके विचारवान

१. तात्पर्य बम्बईमें १२ दिसम्बरसे खेले जानेवाले पेंटेंग्युलर क्रिकेट मैचसे है; देखिए "तार : मालेरावको", पृ० २५० भी।

लोगोंको उस महायुद्धपर शोक मनाना चाहिए जिससे आज यूरोपके व्यवस्थित जीवन और उसकी सभ्यताको खतरा पैदा हो गया है और जिसके एशियापर भी छा जाने की आशंका है।

मैं बम्बईकी जनतासे यह कहना चाहूँगा कि वह खेलकूद-सम्बन्धी नियमावलीमें सुधार कर ले और जातिके आधारपर खेले जानेवाले मैचोंको समाप्त कर दे। कॉलेजों और संस्थाओंके बीच होनेवाले मैचोंकी बातको तो मैं समझ सकता हूँ, लेकिन क्रिकेटके खेलमें हिन्दू, पारसी, मुस्लिम या अन्य साम्प्रदायिक दल बनाने की सार्थकता मुझे आजतक समझमें नहीं आई। क्या हमारे जीवनका कोई अंग साम्प्रदायिक भेद-भावनासे अछूता नहीं रखा जा सकता? इसलिए जिन लोगोंका इस मैचको बन्द कराने के आन्दोलनसे कोई सरोकार हो, उनसे मैं यह अपेक्षा करूँगा कि वे इस प्रश्नको एक व्यापक आधार देंगे और इस अवसरका लाभ उठाकर इसपर उदात्ततम दृष्टिकोणसे विचार करके खेल-कूदकी दुनियासे साम्प्रदायिक कलंकको सदाके लिए मिटा देने का निश्चय करेंगे। यही नहीं, बल्कि जबतक ऐसा रक्तपात चल रहा है तबतक वे इन मैचोंको भी हमारे जीवनसे दूर ही रखने का फैसला करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, ८-१२-१९४०

२५०. पत्र : सर्वपल्ली राधाकृष्णन्‌को

सेवाग्राम, वर्धा
८ दिसम्बर, १९४०

प्रिय सर राधाकृष्णन्[1],

जो लोग सार्वजनिक कार्यमें लगे हुए हैं, वे निस्सन्देह सविनय अवज्ञा करने से मुक्त हैं। उन्हें अपना नाम देने की कोई जरूरत नहीं और नाम देने के बाद भी वे अपना नाम वापस ले सकते हैं और इसके लिए उनपर कोई दोष नहीं लगेगा। इसलिए कहने-भरसे रमाकान्तको[2] भी छूट मिल जायगी।

दीक्षान्त-भाषण[3] के लिए अनेक धन्यवाद। मैं मौका मिलते ही उसे अवश्य पढ़ जाऊँगा।[4]

मेरा खयाल है कि जबतक श्री जिन्नाको पाकिस्तान नहीं मिल जाता, तबतक वे और कुछ स्वीकार नहीं करेंगे। उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें ऐसा कह दिया है।

१. उन दिनों बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके उप-कुलपति

२. रमाकान्त मालवीय, पंडित मदनमोहन मालवीयके पुत्र

३. २९ नवम्बरको पटना विश्वविद्यालयमें दिया गया भाषण

४. गांधीजी ने भाषणके सम्बन्धमें अपने विचार स० राधाकृष्णन्‌को लिखे अपने २८ दिसम्बरके पत्रमें प्रकट किये थे।

आपको 'जनताके प्रतिनिधियों द्वारा सत्याग्रहकी कल्पना-मात्रसे घृणा' क्यों है?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी, खण्ड ६, पृ० ८ और ९ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

२५१. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

सेवाग्राम, वर्धा
८ दिसम्बर, १९४०

प्रिय जयरामदास,

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला। तुम जरूरतसे ज्यादा काम मत करना। अपनी शक्तिको सहेज कर रखना।

अमतुस्सलामने[1] अपने प्रति तुम्हारा स्नेह-भाव मुझे बताया और यह भी बताया कि किस तरह तुम सबने उसपर स्नेह-वर्षा की।

स्थितिके विषयमें तुमने जो पत्र भेजा है, वह मैं समझ गया हूँ। अब उसका इलाज हो रहा है और जबतक वह बिलकुल ठीक नहीं हो जाती, तबतक मैं उसे वापस नहीं भेजूंगा। लेकिन मैं और वह भी तबतक सन्तुष्ट नहीं होंगे जबतक सिन्ध इन पागलपन-भरे हत्याकाण्डोंसे मुक्त नहीं हो जाता। उसका हृदय तो सिन्धमें ही है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२६६) से। सौजन्य: जयरामदास दौलतराम

१. अमतुस्सलामको सिन्धसे वापस बुला लिया गया था; देखिए "तार: अमतुस्सलामको", पृ० २१३ और २१७।

२५२. पत्र : एस० सी० मुखर्जीको

८ दिसम्बर, १९४०

जलियाँवाला बाग न्यास-कोषकी[1] ओरसे बैंक ऑफ नागपुरमें जो पैसा जमा है, उसके नवीकरणके सम्बन्धमें मेरी राय यह है कि उक्त राशिका, प्रतिवर्ष ४ प्रतिशत सूदके हिसाबसे नवीकरणकी तिथिसे तीन वर्षतकके लिए, नवीकरण किया जाना चाहिए। लेकिन यदि न्यासको तीन वर्षकी अवधि पूरी होने से पहले ही सारी अथवा थोड़ी राशिकी जरूरत हुई तो वे उसे निकाल सकेगा। शर्त यही होगी कि कम अवधिके लिए ब्याजकी दर कम होगी। साथ ही यदि बैंककी दर बढ़ जाती है तो न्यासको उस वृद्धिका लाभ मिलेगा।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२५३. पत्र : वर्धाके उपायुक्तको[2]

[९ दिसम्बर, १९४०][3]

प्रिय महोदय,

श्री प्यारेलाल नैयर, जो २० वर्षोंसे मेरे साथी कार्यकर्त्ता और श्री महादेव देसाईके साथ-साथ मेरे सेक्रेटरी भी हैं, कल सुबह ९ बजे सेवाग्रामसे वर्धा जानेवाले रेलवे फाटकसे सविनय अवज्ञा करेंगे। वे आहजीकी ओर पैदल जायेंगे और जब-तक उन्हें गिरफ्तार नहीं किया जाता, तबतक चलते रहेंगे या राहमें केवल विश्राम

१. गांधीजी इस न्यास-कोषके अध्यक्ष थे और एस० सी० मुखर्जी इसके मन्त्री थे।

२. *हिन्दू*, १४-१२-१९४० के अनुसार इस पत्रकी महादेव देसाई द्वारा समाचारपत्रोंको दिये गये वक्तव्यमें चर्चा थी। वक्तव्यका आरम्भ इस प्रकार किया गया था : "श्री प्यारेलालका सत्याग्रह वर्धा जिलेके गाँवोंमें बहुत दिलचस्पीका विषय बन गया है। महात्मा गांधीने आन्दोलनको पूर्णतया अहिंसक बनाये रखने के लिए विशेष सावधानी बरती है, जैसा कि उपायुक्तके नाम लिखे उनके पत्रसे प्रकट होता है।"

३. प्यारेलालके सत्याग्रहके उल्लेखपर से, जो १० दिसम्बरको किया गया था; देखिए "पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको", पृ० २३७ तथा "पत्र : सर जे० जी० लेथवेटको", पृ० २४५-४७।

या भोजनके लिए रुकेंगे। वे अवसरके अनुसार हिन्दुस्तानी या मराठीमें निम्नलिखित नारा[1] लगायेंगे।

यह दिखाने के लिए कि यह आन्दोलन पूर्णतः अहिंसक है और उत्साहपूर्ण प्रदर्शनोंसे उसका कोई वास्ता नहीं है, और साथ ही पटना तथा लाहौरमें अभी हाल में जिस अनुशासनहीनताका प्रदर्शन किया गया था, उसके विरुद्ध लोगोंको आगाह करने के लिए मैं कल होनेवाली सविनय अवज्ञाकी सूचना जनताको नहीं दे रहा हूँ। मैंने केवल सेठ जमनालाल और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री गोपाल-रावको इसकी सूचना दी है और उन्हें कड़े निर्देश दिये हैं कि इस समारोहका किसी भी तरहसे प्रचार न किया जाये।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२५४. पत्र : सैयद अब्दुल्ला ब्रेलवीको

सेवाग्राम, वर्धा
८ दिसम्बर, १९४०

प्रिय ब्रेलवी,

तुम्हारे विस्तृत पत्रसे स्थितिको समझने में मुझे काफी मदद मिली है।

तुम्हारा,
बापू

सैयद अब्दुल्ला ब्रेलवी साहब
जामिया मंजिल
चर्चगेट रिक्लेमेशन
बम्बई

मूल अंग्रेजीसे : एस० ए० ब्रेलवी पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. गांधीजी ने सत्याग्रहियोंको यह नारा (देखिए पृ० २१४) दिया था : "अंग्रेजोंके युद्ध-सम्बन्धी कार्योंमें जन या धनकी सहायता देना गलत है। एकमात्र सच्चा और योग्य कार्य तो अहिंसक प्रतिरोध द्वारा सभी प्रकारके युद्धोंका विरोध करना है।"

२५५. पत्र : उमादेवीको

सेवाग्राम, वर्धा
९ दिसम्बर, १९४०

प्रिय उमा,

मुझे तुम्हारा पत्र अच्छा लगा। सच मानो, तुम बिलकुल गलतीपर हो। भला बुराईको उससे भी बड़ी बुराईसे कभी दूर किया जा सकता है? शान्त होने पर तुम स्वयं मान लोगी कि तुम्हारी दृष्टिपर भावावेशके कारण पर्दा पड़ गया था। लेकिन तुम जो कर रही हो, वह करती रहो। तुम इतनी भली हो कि अपनी इस गम्भीर भूलको जरूर देख लोगी।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८०५८ तथा १२०४)से। सी० डब्ल्यू० ५०९९ से भी; सौजन्य: वान्दा दिनोव्स्का

२५६. पत्र : एस० सी० चटर्जीको

सेवाग्राम, वर्धा
९ दिसम्बर, १९४०

प्रिय प्रिंसिपल चटर्जी,

आपके अविलम्ब उत्तरके लिए धन्यवाद। आपने २४६ छात्रोंमें से २४३ से वचन ले लिया, उसके लिए आपको बधाई।[1] किन्तु मेरे लिए तो यह इस बातका दुःखःजनक प्रमाण है कि छात्रगण न तो आत्मनियन्त्रणका मूल्य समझते हैं, न उनमें आत्म-सम्मानकी कोई भावना ही है।

छात्रोंका व्यवहार कितना ही हिंसक क्यों न रहा हो, किन्तु उसके जवाबमें आपने जैसी संकीर्ण साम्प्रदायिकताका परिचय दिया है, उसे उचित नहीं कहा जा

१. अपने ७ दिसम्बरके पत्रमें श्री चटर्जीने गांधीजीको बताया था कि उन्होंने अगस्तमें छात्रोंको चेतावनी दे दी थी कि यदि वे जोर-दबावके तरीकोंसे कोई हड़ताल आयोजित करेंगे तो "उन्हें या तो कॉलेज छोड़ देना पड़ेगा या फिर किसी ऐसी हड़तालमें भाग न लेनेका वचन देना पड़ेगा।"

सकता।[1] मुझे खेद है कि आप अपनेको अल्पसंख्यक जातिका सदस्य समझते हैं। आप विश्वास करें कि यदि रुद्र और एन्ड्रयूज जीवित होते तो आपके संकीर्ण दृष्टिकोणको बिलकुल अस्वीकार कर देते।[2] काश कि आप समझ पाते कि जिस राष्ट्रके आप सदस्य हैं उस राष्ट्रकी और जिस पेशेमें आप एक ऐसे ऊँचे पदको प्राप्त कर चुके हैं उस पेशेको, यहाँ तक कि जो धर्म अभिषिक्त और शहीद ईसा-मसीहके पवित्र नामपर ईसाई धर्म कहलाता है, उस धर्मतक को आपने कितनी क्षति पहुँचाई है। काश, आप देख सकते कि आपने अपने कार्य द्वारा ईसामसीहको फिरसे सूली दे दी है।

यह पत्र इतना पावन है कि इसे प्रकाशित नहीं किया जा सकता। यह केवल आपके लिए है और मानव-जातिके उन दो सपूतोंके नामपर है जिनका आपने उल्लेख किया है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

होम, पॉलिटिकल फाइल सं० ३/३३/४०–पॉलि० (१)। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. श्री चटर्जीने लिखा था: "जहाँतक मुस्लिम स्टुडेन्ट्स फेडरेशनको लिखे मेरे पत्रका सम्बन्ध है, वह उनके एक पत्रके उत्तरमें लिखा गया था। . . . अगर मैं आपके साथ तर्क-वितर्क करूँ तो मैं आपका अनादर करने का दोषी होऊँगा। मैं इतना ही कहूँगा कि अगर मैंने आपके आदर्शों, आपके चरित्र और आपके दृष्टिकोणको समझने में गलती नहीं की है तो मुझे विश्वास है कि यदि आप इस कॉलेजके प्रिंसिपल होते तो आप वही करते जो मैंने किया है।" देखिए "पत्र: एस० सी० चटर्जीको", पृ० २४८ भी।

२. अपने पत्रमें चटर्जीने अपना परिचय "प्रिंसिपल सुशीलकुमार रुद्र और सी० एफ० एन्ड्रयूजके एक पुराने छात्रके रूपमें" दिया था। दिल्लीके सेन्ट स्टीफेन्स कॉलेजके सुशीलकुमार रुद्रकी मृत्यु ३० जून, १९२५को दिल्लीमें हुई थी। सी० एफ० एन्ड्रयूजकी मृत्यु कलकत्तामें ४ अप्रैल, १९४० को हुई थी।

२५७. पत्र : अबुल कलाम आजादको

सेवाग्राम, वर्धा
९ दिसम्बर, १९४०

प्रिय मौलाना साहब,

हाँ, धर्म यशदेव[1] तीन दिनतक मेरे साथ थे। वे अपनी पत्नीसे मिलने के लिए आज सवेरे ही यहाँसे गये हैं। उन्होंने वापस यहाँ आने का वादा किया है। मुझे उम्मीद है कि मैं यथासमय उन्हें किसी काममें लगा दूँगा।

आशा है, आप ठीक होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

२५८. पत्र : सैयद महमूदको

सेवाग्राम, वर्धा
९ दिसम्बर, १९४०

प्रिय डॉ० महमूद,

आपके लम्बे पत्रके लिए धन्यवाद। मैंने इसे बापूको भी पढ़ाया। इसकी वजहसे हम कुछ मिनटोंके लिए कामसे राहत भी पा सके। जब किसीको अत्यधिक कार्यके कारण समय नहीं मिल पाता, जैसा कि आजकल हमारा हाल है, उस समय इस तरह चन्द मिनटोंके लिए राहत मिलना एक अच्छी चीज है।

बापूने कहा कि उन्हें यह जानकर खुशी हुई कि आप अपने हाथसे इतना लम्बा पत्र लिख सके। इसका अर्थ हुआ कि आपका स्वास्थ्य पहलेसे निश्चय ही बेहतर होगा। मैंने कहा कि लिखावट आपकी नहीं है और पत्र बोलकर लिखवाया गया है। इसपर हममें विवाद हो गया। आप चाहें तो मुझे बता सकते हैं कि हम दोनोंमें से कौन सही था।

१. अ० भा० कां० कमेटीके कार्यालयमें प्रवासी भारतीयोंके मामलोंसे सम्बन्धित शाखाके मन्त्री। मौलाना साहबने अपने ६ दिसम्बरके पत्रमें व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलनके लिए गांधीजीसे ज़ोरदार शब्दोंमें उनकी सिफारिश की थी।

मैं आशा करती हूँ कि आपका स्वास्थ्य धीरे-धीरे सुधर जायेगा और अपना नमस्कार भेजती हूँ।

हृदयसे आपकी,
अमृत कौर

मूल अंग्रेजीसे: डॉ० सैयद महमूद पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। जी० एन० ५११३ भी

२५९. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

९ दिसम्बर, १९४०

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। मैं जब कुछ न लिखूँ तब समझना कि मेरी तबीयत ठीक है। अखबारोंकी खबरोंपर विश्वास नहीं करना चाहिए। हाँ, थकावट जरूर है, इसलिए थोड़ा आराम करता हूँ। अमतुस्सलाम यहीं है। वह वापस सिन्ध जायेगी। मनु[1] आई है। और भी बहुत-से लोग हैं। आश्रम भरा हुआ है। प्यारेलाल कल जेल जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१३५)से। सी० डब्ल्यू० ४६२७ से भी; सौजन्य: विजयाबहन म० पंचोली

१. मनुबहन सु० मशरूवाला

२६०. पत्र : सुल्ताना कुरैशीको

९ दिसम्बर, १९४०

चि० सुल्ताना,

तुझे अपनी लिखावट सुधारनी चाहिए। तेरी तबीयतको क्या हुआ है? उसे ठीक कर ले। जब तेरे जेल जाने का समय आये तब तू जेल जाना। फिलहाल तो पींजना, कातना आदि रुईकी सभी प्रक्रियाएँ सीख, गरीबोंकी सेवा कर, और सादगी को अपना। क्या तू 'कुरान' पढ़ती है? उर्दू लिखती है?

बापूकी दुआ

[पुनश्च :]

अमतुल सलामबहन यहीं है।

बेटी सुल्ताना कुरैशी
श्री विट्ठल कन्या विद्यालय
नडियाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७६२)से। सौजन्य : गुलाम रसूल कुरैशी

२६१. पत्र : अमतुस्सलामको

९ दिसम्बर, १९४०

बेटी,

ज्यों-ज्यों तेरे खतका ख्याल करता हूं मेरी कदर बढ़ती है। मुझे अच्छा लगता है। तुझे तेरा काम अपनी जिम्मेदारीपर करना चाहीये। सच्च है कि तु तेरा मिशन लेकर मेरे पास आई थी और तेरा हि मिशन ले कर सिंध गई थी और जायगी। मेरी सलाह् तुझको जरूर मिलेगी। लेकिन जो कुछ करेगी वह तेरी जिम्मे-दारीपर। जेरामदास और जो दूसरे जिसपर तेरी निगाह ठरे उनसे मश्विरा अवश्य करेगी। तू जब चाहे तब जा सकती है। मैंने बुला ली सो तो अच्छा ही हुआ। वहांतक डा० दासकी सलाहसे चलना। यहां किसीके तुझे संबंध ही न रखना। मेरी थोड़ी-सी सेवाका भी मोह छोड़ दे। नहि छोड़ सकती है तो भले कर।

लेकिन जितनी कम करेगी इतना घर्षण कम होगा। मेडम वाडीया[1] यहां रहेगी तवतक तो उनके साथ रहेगी। उनसे मश्वरा करेगी। उसमें काफी वक्त जायगा।

अब सिंधमें क्या करना? तुझे कैदियोंका, मंझिलगाहका सब छोड़ना चाहिए।[2] सबकी बात तो सुनना होगा। लेकिन यह मामला दरबारका है। सिंधके मुसलमानों को तुझे बताना है कि स्यासी और दूसरे कामोंमें खून या जबरदस्ती या झूठसे इन्साफ नहि मिल सकता है। तेरा सिंधमें जाना और जान तक देना सिर्फ खूनको रोकने के लिये है भले मुसलमानोंको इनसाफ मिलता हो या गेरइनसाफ। यह मेरा हेतु तुझे भेजने में था और अब भी है।

मेरे ऐसे ख्याल होते हुए तुझे मुझे ज्यादा समझाने का नहीं है, ज्यादा मश्विरा करने का भी नहि है। मैं कुछ सलाह नहि दे सकुंगा क्योंकि स्यासी बाबतमें मुझे मौलानाकी बात सुनना होगा और वे कहें ऐसे करना होगा। खूनके बारेमें उनसे मश्विरा करने की जरूरत नहि रहती है। मुझे लगता है सही कि तुझे मौलानाका विरोध करके कुछ नहि करना। मुस्लिम लीगवालोंसे मिलना, उनकी बातें सुनना, उनसे महोबत करना तेरा फर्ज है। मैं मानता हुं कि उनको छोड़ कर हिं[दू-] मु[स्लिम] ऐक्य नहि बन सकता है।

खुदा तेरा रास्ता साफ कर दे। वही एक रेहनुमा है और तू, मैं, हम सब उसके बंदे हैं, बाकी सब झूठ है।

बापुकी क़रोड़ों दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५९)से

२६२. पत्र : कृष्णचन्द्रको

९ दिसम्बर, १९४०

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा खत स्वच्छ है। 'योग: कर्मसु कौशलं', लेकिन कर्म कौशलमें भक्ति होनी चाहिये। वह भक्ति है रामनाम खाने के समय, सोने के समय। मेरे पास वानरकी त्रिमूर्ति है उसे नित्य आकर देख जाओ। तुमको और कुछ देखने का समय हि कहां है। देखा सो भूल जाओ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३६४)से

१. सोफिया वाडिया

२. १ अक्तूबर, १९३९ को सक्खरके मुसलमानोंने मंजिलगाहपर कब्जा पाने के लिए सत्याग्रह छेड़ दिया था, जिसके कारण साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे थे और २० नवम्बरको पुलिसको गोली चलानी पड़ी थी; देखिए खण्ड ७०, पृ० ४३९-४०। "पत्र : अब्दुल कय्यूमको", ३-३-१९४१ की पाद-टिप्पणी भी।

२६३. चर्चा: टी० आर० देवगिरिकरके[1] साथ

[१० दिसम्बर, १९४० के पूर्व][2]

महात्माजी से पूछा गया कि क्या उनका उपवास शुरू होने पर सत्याग्रह बन्द हो जायेगा। वे इसपर एकदम गम्भीर हो उठे और बोले कि यदि वे उपवास शुरू करते हैं तो सत्याग्रह बन्द क्यों हो। दोनोंमें कोई सम्बन्ध नहीं। उपवासके बावजूद सत्याग्रह चलता रहेगा और चलना ही चाहिए। मैंने उनको सूची दिखाई। उन्होंने मुझसे पूछा कि जिनके नाम मैंने उसमें सुझाये हैं, उनके सम्बन्धमें क्या पूरी जानकारी मेरे पास है। मैंने कहा: "हाँ, मैं ले आया हूँ।"

गांधीजी: क्या आप इन सत्याग्रहियोंमें से हरएक की आयु जानते हैं?

देवगिरिकर: नहीं, उसकी जानकारी तो मेरे पास नहीं। लेकिन हैं सभी अट्ठारह वर्षसे ऊपरके ही।

गां०: यह काफी नहीं है। क्या आपको इसकी जानकारी है कि इनमें से हर सत्याग्रहीपर कितने व्यक्ति आश्रित हैं? मिसालके लिए श्री महाजनको ले लीजिए। उनपर कितने लोग आश्रित हैं?

मैं इसका उत्तर नहीं दे सका। उन्होंने कहा:

कुछ लोग मेरे पास आकर कहते हैं कि उनको तेरह व्यक्तियोंका भरण-पोषण करना पड़ता है। मैं या कांग्रेस इतना पैसा कहाँसे दे सकते हैं? उनको अपने परिवारोंके गुजारेके लिए कांग्रेस कमेटियोंके भरोसे नहीं रहना चाहिए।

देव०: उन्होंने जो प्रतिज्ञा-पत्र भरे हैं, उनमें इसकी सहमति उन्होंने दी है कि वे सहायता नहीं माँगेंगे। क्या यह काफी नहीं है?

गां०: हाँ, लेकिन मैं जानना चाहता हूँ कि वे किन मजबूरियोंको झेलते हुए सत्याग्रह करने जा रहे हैं। आप जानते हैं कि फौजमें क्या होता है, सैनिकका पूरा-पूरा विवरण मौजूद रहता है। कमाण्डर जिनको मोर्चेपर भेजता है, उनके बारेमें उसे छोटीसे-छोटी बातोंकी भी जानकारी रहनी चाहिए। मैं जब गोलमेज परिषदके लिए गया था, सरकारके पास हम सबके बारेमें पूरी-पूरी जानकारी मौजूद थी। मैं एक परिचय-पुस्तिका तैयार करना चाहता हूँ। मैं एक ऐसी पुस्तिका प्रकाशित

१. अध्यक्ष, महाराष्ट्र प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी

२. लगता है कि यह चर्चा १७ अक्तूबर, १९४० को सत्याग्रह शुरू हो जाने के बाद हुई है। तिथि-निर्धारण चर्चामें प्यारेलालको जेल भेजनेकी योजनाके उल्लेखके आधारपर किया गया है। वे १० दिसम्बरको जेल गये थे; देखिए पृ० २४६।

करना चाहता हूँ, जिसमें सत्याग्रहियोंके बारेमें पूरा विवरण दिया गया हो। मैं अंग्रेजोंको ही नहीं, सारी दुनियाके लोगोंको बताना चाहता हूँ कि हमारे सत्याग्रही किस धातुके बने हैं। आप 'पायनियर' के श्री यंगको जानते हैं। जब वे यहाँ आये तो वे एकदम कंगाल थे, भिखमंगे-जैसे। उनको 'पायनियर' में नौकरी मिली। वे पत्रके सम्पादक बन गये, लेकिन युद्ध शुरू होते ही सरकारने उनको ५,००० रुपयेके वेतन पर रख लिया। वे उस पत्रमें काम करनेवाले अपने सभी अंग्रेज सहकर्मियोंको अपने साथ ले गये, उनको ऊँचे-ऊँचे पदों और ऊँची-ऊँची तनख्वाहोंपर रख दिया। वे सब भी अपनी शक्ति-भर भारतका शोषण कर रहे हैं। युद्धके इन दिनोंमें अंग्रेज जनता ऐसा ही त्याग कर रही है। इस तुलनाके द्वारा मैं दिखाना चाहता हूँ कि एक ओर जहाँ अंग्रेज लोग भारतके धनसे अपनेको मोटा करने में लगे हैं, वहीं दूसरी ओर भारतके सपूत अपने बड़े-बड़े परिवारोंके भरण-पोषणकी समस्याकी परवाह न करते हुए अपने देशके लिए खुशी-खुशी जेल जा रहे हैं। मैं दुनियाको दिखलाऊँगा कि तेरह-तेरह आश्रित व्यक्तियोंके परिवार रखनेवाले सत्याग्रहियोंने अपने देशके लिए सर्वोच्च त्याग किया है। क्या ऐसा त्याग गौरवकी बात नहीं?

"जी हाँ, है", मैं बोला। मैंने कहा कि मैं पूना पहुँचते ही सारा ब्योरा उनको भेज दूँगा।

गां० : हाँ, जरूर भेज दीजिएगा। आन्ध्रके लोगोंने मेरे पास पूरा ब्योरा भेज दिया है। आप अपने प्रान्तके बारेमें पूरा ब्योरा मुझे जरूर दे दें। आप जानते ही हैं कि यह कोई सामूहिक सत्याग्रह नहीं है। मैं नहीं चाहता कि लोग बहुत बड़ी संख्यामें जेल जायें। मैं चाहता हूँ कि सबसे अच्छे और चुनिन्दा लोग सत्याग्रह करें, यही नहीं कि वे जनताके प्रतिनिधि हों, उन्हें ऊँचे दरजेके इन्सान भी होने चाहिए। मैं ऐसे सत्याग्रही चाहता हूँ। वे संख्यामें भले ही कम हों, पर हों सर्वोत्तम। मैं प्यारेलालको जेल भेज रहा हूँ। आप जानते हैं कि इससे मुझे कितनी दिक्कतोंका सामना करना पड़ेगा? वह मेरा हाथ-पैर है, बल्कि दिमाग भी है। उसके बिना मैं काम नहीं कर सकता। पर मैं उसको भी १५[1] तारीखको भेज रहा हूँ। मैं महादेवको भी भेजना चाहता हूँ, लेकिन उसे अभी भेज देने से तो मैं बिलकुल अपंग ही हो जाऊँगा। पर उसकी बारी भी जल्द ही आयेगी। चुनाव करते समय इस बातको ध्यानमें रखिए।

देव० : मजिस्ट्रेटोंको दिये गये नोटिस कैसे होने चाहिए?

गां : क्या, आपको नहीं मालूम?

देव० : जी, मालूम है, हम कह रहे थे कि हम लोग महात्माजी द्वारा चुने गये हैं।

गां० : हाँ, इसी रूपमें होने चाहिए। नोटिसमें आपको लिखना चाहिए कि आपको सत्याग्रह करने के लिए मैंने चुना है; देश-भरमें उसका रूप एक ही रहना चाहिए। नोटिस एक ही तरहका होना चाहिए। दीवानी विधि संहिता (सिविल प्रोसीड्यर कोड)के तहत सरकार जो सम्मन जारी करती है, उनकी एक निश्चित इबारत

१. लेकिन देखिए पृ० २४०, पा० टि० २।

होती है। देशके किसी भी दूरसे-दूरके हिस्सेमें चले जाइए, आपको सम्मनोंकी भाषा एक-सी मिलेगी। सत्याग्रहकी हमारी भाषा भी एकरूप होनी चाहिए, इसका विशेष ध्यान रखिए।

देव० : हमारे चुने हुए आदमियोंके अलावा कुछ और लोग भी जिला-मजिस्ट्रेटोंको नोटिस देंगे और जेल जायेंगे। हम इसे कैसे रोक सकते हैं?

गां० : इससे तो एक बड़ी मुश्किल खड़ी हो जायेगी। ऐसा उनको नहीं करना चाहिए। उनको हमें परेशानीमें नहीं डालना चाहिए।

देव० : महात्माजी, खरे और खोटे सत्याग्रहियोंके बीच फर्क करने का एक उपाय मैं सुझाऊँ?

गां० : हाँ, जरूर।

देव० : सरकारके जिला-मजिस्ट्रेटको आपके मंजूर किये हुए सत्याग्रहियोंकी एक पूरी सूची दे दी जाये, तो कैसा रहेगा?

गां० : बहुत बढ़िया, आप यही कीजिएगा। सरकारको जानकारी रहनी चाहिए कि हमारे कौन-कौन आदमी हैं और कौन लोग हमारा काम बिगाड़ने को हमारे आड़े आ रहे हैं।

देव० : और प्रान्तीय तथा जिला कांग्रेस कमेटियोंका क्या रहेगा? उनको क्या काम करना चाहिए और उसे करने के लिए कार्यकर्त्ता कहाँ हैं?

गां० : आप कौन-सी सामान्य प्रवृत्तियाँ चला सकते हैं? उन्हें चलाने के लिए आपको अच्छे आदमी नहीं मिलेंगे। सारे संविधानको निलम्बित कर दीजिए। संगठनकी बागडोर सिर्फ एक व्यक्तिके हाथमें रहनी चाहिए।

देव० : मुझे बताया गया है कि आपने प्रान्तोंको स्थानीय संस्थाओंके बारेमें अपनी नीति खुद तय करने का अधिकार दे दिया है। हमने स्थानीय संस्थाओंके सदस्योंसे इस्तीफे दे देने के लिए कहा है।

गां० : नहीं, नहीं; इस्तीफे देने के लिए आपको नहीं कहना चाहिए। वे इस्तीफे क्यों दें? आपने उनको इस शर्तपर तो कांग्रेसके टिकटपर खड़ा किया नहीं था कि यदि राजनीतिक स्थिति इस तरहकी बन जाये, जैसी कि अब बन गई है, तो उनको जेल जाना चाहिए या फिर इस्तीफे दे देने चाहिए। मनु सूबेदारने इस्तीफा दे दिया है। उन्होंने आज मुझे लिखा कि उनको जेल जाने की शर्तपर कांग्रेस टिकट नहीं दिया गया था। उनका कहना है कि वे जेल जाने से डरते नहीं हैं। उनकी बात ठीक है। मैंने अभी-अभी लिख दिया है कि वे इस्तीफा न दें। यदि सदस्यगण जेल जाते हैं तो उनके स्थान खाली पड़े रहने दें, स्थानीय संस्थाओंका काम चलते रहना चाहिए। यदि आप इस्तीफा दे देंगे, तो गलत किस्मके लोग उन स्थानोंपर कब्जा जमा लेंगे।

देव० : क्या कम्युनिस्टोंको सूचीमें शामिल किया जाये?

गां० : नहीं।

देव० : हम लोग स्वयंसेवक शिविर खोलें या नहीं?

गां० : नहीं।

देव० : सभाएँ की जायें?

गां० : सत्याग्रहके सिलसिलेमें कोई भी सभा नहीं की जानी चाहिए, उसका मतलब होगा हिंसाका वातावरण तैयार करना। घाटकोपरकी घटनापर गौर कीजिए। मैं हिंसाके लिए रत्ती-भर भी गुंजाइश नहीं छोड़ना चाहता। सिर्फ नारे लगाये जायें। जिला-मजिस्ट्रेटको नोटिस देना ही काफी है। अपने सत्याग्रहके बारेमें आपको आम जनताको सूचित नहीं करना चाहिए। तीन नारे हैं: (१) रुपये-पैसे मत दो, (२) फौजके लिए जवान मत दो और (३) अहिंसात्मक साधनोंसे युद्धकी कार्रवाइयोंका विरोध करो। ये नारे हरएकके ओठोंपर ठीक उसी तरह रहने चाहिए जैसे रामनाम रहता है। क्या इसके लिए आम जनताको पहलेसे सूचित करने की जरूरत है? ये नारे हर स्त्री, पुरुष और बच्चेको दोहराने चाहिए। सारे वातावरणमें यही मन्त्र गूँज उठने दीजिए। सभाएँ तो आप कर सकते हैं, लेकिन वे सत्याग्रहके लिए नहीं होनी चाहिए।

मैंने उनसे कहा कि धारा १२९ के अन्तर्गत गिरफ्तार किये गये व्यक्तियोंको दो महीने जेलमें रखने के बाद एक स्थानमें नजरबन्दीके आदेश दे दिये जायेंगे। "क्या उन्हें उन आदेशोंको तुरन्त भंग करना चाहिए?"

गां० : हाँ, यदि मैंने उनके नाम मंजूर किये हों, तो उनको आदेशोंकी अवज्ञा करनी चाहिए।

देव० : और वे लोग क्या करें जो अपनी सजाएँ पूरी करने के बाद जेलसे छूटे हों?

गां० : उनको मैंने चुना है और मैं चाहता हूँ कि वे बार-बार जेल जायें। उनको सत्याग्रह करने के लिए मुझसे बार-बार इजाजत लेने की जरूरत नहीं। यह आखिरी लड़ाई है और इसके लिए हमें सब-कुछ बलि-वेदीपर चढ़ा देना है। आप अभी जल्दी ही सत्याग्रह न करें।

देव० : यह कैसे होगा? मैं यह काम कर रहा हूँ और मुझे किसी भी दिन गिरफ्तार किया जा सकता है।

गां० : हाँ, हाँ, मैं मृत्युके द्वारपर बैठा हूँ, आपके और मेरे साथ कुछ भी हो सकता है। लेकिन अपने उत्तराधिकारीको आप मेरे आदेशका ध्यान रखने की हिदायत कर दें। दूसरी सूची जनवरीसे पहले शुरू नहीं होनी चाहिए।

गांधीजी काफी आशान्वित और सफलताके बारेमें पूर्ण आश्वस्त दिखाई पड़े। मैंने उनसे आज्ञा माँगी और चला आया।

[अंग्रेजीसे]

होम, पॉलिटिकल, फाइल सं० ३/३३/४०–पॉलि० (१)। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

२६४. तार: मैसूरके कांग्रेसियोंको[1]

[१० दिसम्बर, १९४० या उसके पूर्व][2]

इस महत्त्वपूर्ण सफलतापर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। अब आपको रचनात्मक रूपसे निर्माण-कार्य करना है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-१२-१९४०

२६५. तार: पुरुषोत्तमदास टंडनको

वर्धागंज

१० दिसम्बर, १९४०

पुरुषोत्तमदास टंडन
सम्मेलन
इलाहाबाद

सुना है आप यह सोच रहे हैं कि अनुशासनका तकाजा है कि आप अपने वर्त्तमान कार्यको छोड़कर [सत्याग्रहके लिए] जायें। किन्तु अनुशासनका तकाजा तो यह है कि हाथमें लिये कार्यको पूरा करने के बाद ही आपको जाना चाहिए। इसलिए जबतक आपकी अन्तरात्मा ही अन्यथा आदेश न दे, तबतक मेरा दृढ़ मत है कि आप पूना-सम्मेलनमें[3] भाग लेने के उपरान्त ही जायें।

गांधी

मूल अंग्रेजीसे: गांधी-टंडन कॉरेस्पोंडेंस सं० १४/५१। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१ और २. मैसूर नगरपालिकाके चुनावमें कांग्रेसके सभी स्थान जीत लेने पर महादेव देसाईने तार द्वारा गांधीजी का यह सन्देश भेजा था। यह सन्देश दिनांक "बम्बई, १० दिसम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. हिन्दी साहित्य सम्मेलनका वार्षिक अधिवेशन

२६६. तार : चमनलालको

सेवाग्राम
१० दिसम्बर, १९४०

दीवान चमनलाल[1]
लाहौर

मैंने आपको खादीमें अथवा अहिंसाकी पद्धतिमें विश्वास करते कभी नहीं पाया है। क्या आप नियमपूर्वक चरखा चलाते और आदतन खादी पहनते हैं? इससे पहले कि मैं आपको अनुमति और आशीर्वाद दूं आप मुझे अपने बारेमें उक्त जानकारी दें।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२६७. पत्र : सर जे० जी० लेथवेटको

सेवाग्राम, वर्धा
१० दिसम्बर, १९४०

प्रिय श्री लेथवेट,

समय आ गया है कि मैं वाइसराय महोदयको बता दूं कि मेरे अन्तरमें क्या-कुछ चल रहा है और उसकी बाह्य अभिव्यक्ति कैसे होनेवाली है।

प्रत्येक कदम उठाते समय मेरे ध्यानमें वे विपत्तियाँ होती हैं जिनसे ब्रिटेनकी बहादुर जनता गुजर रही है। इसलिए मैं धीरे-धीरे और बहुत सोच-समझकर आगे बढ़ रहा हूँ। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि मैं जो-कुछ कर रहा हूँ, उसके द्वारा मैं अपने देशवासियोंके साथ-साथ अंग्रेजोंकी भी, उनके न चाहते हुए भी, उतनी ही सेवा कर रहा हूँ। और यह मैं तभी कर सकता हूँ जब मैं इस आन्दोलनको पूर्णतया अहिंसात्मक या उतना अहिंसात्मक रखूं जितना कि कोई जन-आन्दोलन रखा जा सकता है। मैं जानता हूँ कि अतिशय सावधानी बरतने पर भी मैं कभी-कभी धोखा खा जाता हूँ। लेकिन मैं यह भी जानता हूँ कि कुल मिलाकर ईमानदारीका ही पलड़ा भारी रहता है। इस चीजकी गारण्टीके लिए तथा आन्दोलन सही दिशामें चले इसके लिए मैंने शुरुआत अपने सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधिसे की, जिन्हें स्वीकृत अर्थोंमें राजनीतिज्ञ नहीं कहा जा सकता। मेरा मतलब श्री विनोबा भावेसे है। फिर मैंने

१. पंजाब विधान-सभाके सदस्य

ऐसे व्यक्तियोंको लिया जो विशुद्ध रूपसे राजनीतिज्ञ हैं। लेकिन मैं ऐसे अनेकानेक लोगोंकी ईमानदारीके बारेमें सुनिश्चित नहीं हो सकता जिनके साथ मेरा व्यक्तिगत सम्पर्क नहीं है। उनके विषयमें मुझे मजबूरन अपने राजनीतिक सहयोगियोंके प्रमाण-पत्रोंपर भरोसा करना पड़ता है। मेरा ऐसा खयाल है कि अधिकांश मामलोंमे चुनाव ठीक ही हुआ है। लेकिन चूँकि मैं स्वयं सविनय अवज्ञा नहीं कर रहा हूँ इसलिए मैं यह महसूस करता हूँ कि मुझे श्री विनोबा भावे-जैसे लोग ज्यादा भेजने चाहिए, क्योंकि मैं यह जताना चाहता हूँ कि यह आन्दोलन विशुद्ध राजनीतिक आन्दोलन नहीं है। यह उससे बहुत अधिक है। इसीलिए आज प्यारेलाल नैयर [सत्याग्रहके लिए] गये हैं। वे और महादेव इधर वर्षोंसे मेरे सतत सहचर रहे हैं। सत्याग्रह आत्म-शुद्धि और आत्मोत्सर्गका आन्दोलन है। मुझे अपने सर्वोत्तम साथियोंको अपनेसे विलग करते रहना होगा। अतः महादेव भी यथासमय प्यारेलालका अनुसरण करेंगे। बहुत-से ऐसे लोग हैं जिनकी कोई राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा नहीं है, पर फिर भी जिनका आजादीसे और उससे भी बढ़कर भारतके करोड़ों भूखे लोगोंसे गहरा लगाव है। इनमें से अनेकको भेजना अभी बाकी है। उन्हें तथा कांग्रेस संस्थाके ऐसे निर्वाचित सदस्योंको जो चरखा, अस्पृश्यता तथा साम्प्रदायिक मेल-मिलापकी मेरी शर्तोंपर पूरे उतरते हों, सविनय अवज्ञाके लिए पेश किया जायेगा। मेरा विचार उन्हें नये वर्षके आरम्भसे भेजने का है।

जबतक कि मैं शासक सत्ताको यह विश्वास न दिला दूँ कि सत्याग्रही देशके सुनिश्चित मतका और करोड़ों देशवासियोंका प्रतिनिधित्व करते हैं, मुझे इस तरहका उत्सर्ग करते रहना होगा। उनका ध्येय शान्तिका है और उसे सिद्ध करने के लिए वे अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को तैयार हैं। जिस ब्रिटिश सत्ताके साथ वे आज संघर्षरत दिखाई पड़ते हैं, उसके समान ही यह उनके लिए भी जीवन-मरणका सवाल है। वे हिटलरशाही और फासिस्टवादके उतने ही विरोधी हैं जितनी कि ब्रिटिश सत्ता है। फर्क सिर्फ इतना ही है कि वे अहिंसाके शस्त्रोंसे लड़ रहे हैं, जब कि ब्रिटिश सत्ता हिटलर और मुसोलिनी द्वारा प्रयुक्त शस्त्रोंका ही उनसे भी बढ़-चढ़कर निर्माण और उपयोग करके, हिटलरशाहीको ध्वस्त करने की दुराशा रखती है। आशा है कि यह तर्क वाइसराय महोदयको नहीं खटकेगा। यह बात मैं अपना यह दावा पेश करने के लिए कह रहा हूँ कि हमारा आन्दोलन भी उतना ही सत्य और सशक्त है जितना कि ब्रिटिश सत्ता अपने उद्देश्यको मानती है। इस बातका महत्त्व केवल इस कारण कम नहीं हो जाता कि यह बात पूरे भारतवर्षपर लागू नहीं होती। इसलिए श्री एमरीका यह कहना कि आन्दोलन कृत्रिम है, गलत था। क्या जेल जानेवाले सैकड़ों लोगोंको जेल-जीवनसे प्रेम है? यह बात समझने के लिए बहुत ज्यादा अक्लकी जरूरत नहीं है कि साँवली या काली चमड़ीवाला व्यक्ति भी गोरी चमड़ीवाले व्यक्ति-जितना संवेदनशील हो सकता है।

महादेवने मेरे लिए जो रिपोर्ट तैयार की थी, उसमें बताया गया है कि आपने उनसे यह कहा है:

> 'हरिजन'-सम्बन्धी आपके प्रश्नका मुझे उत्तर देना है। देखिए, श्री गांधीको अपना निश्चय स्वयं करना है। बस वे या आप लोगोंको किसी प्रकारके कानून-भंगकी सलाह न दें।

यदि महादेवने आपकी बात ठीक-ठीक उद्धृत की है तो मैं यह कहना चाहूँगा कि आपकी चेतावनी अनावश्यक थी। यदि कोई आन्दोलन गैर-कानूनी है तो उसके प्रवर्तकको देश-देशमें निकलनेवाले समाचारपत्र द्वारा उसका संचालन कानून-सम्मत कैसे हो सकता है? किन्तु जबतक सरकारकी इच्छा हो तबतक अनेक बातें वैध रहती हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि हमारी लिखी हुई बहुत-सी बातोंके लिए आप महादेव या मुझपर कानूनी कार्रवाई कर सकते हैं। इसलिए आन्दोलनके चालू रहते 'हरिजन' फिरसे आरम्भ तभी हो सकता है जब सरकारको ऐसी इच्छा हो और वह यह मानती हो कि यह एक ऐसा मुखपत्र है जो दोनों देशोंकी ही नहीं, समस्त मानव-जातिकी सेवा कर रहा है।[1]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५९) से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

२६८. पत्र: पुरुषोत्तम का० जेराजाणीको

सेवाग्राम, वर्धा
१० दिसम्बर, १९४०

भाई काकुभाई,

तुम लोभी हो। भाई वैधके हाथों मैंने तुम्हें सुन्दर सन्देश भेजा, लेकिन उससे भी तुम्हारा पेट न भरा। लो, ये रहे मेरे हस्ताक्षर। तुम्हारी 'खादी पत्रिका' का अंक मुझे बहुत पसन्द आया। उसमें बताये गये तीन कार्य यदि अच्छी तरहसे किये जायें तो बम्बई [भण्डार] केवल खादी-भण्डार न रहकर सुन्दर उत्पादन-केन्द्र भी बन जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८५०) से। सौजन्य: पुरुषोत्तम का० जेराजाणी

1. इस पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करते हुए १४ दिसम्बरको लेथवेटने गांधीजीको लिखा था: "आपका पत्र वाइसराय महोदयकी सेवामें प्रस्तुत कर दिया गया है और उन्होंने मुझसे कहा है कि अपने विचार और इरादोंसे उन्हें अवगत कराने के लिए मैं आपको उनकी ओरसे धन्यवाद दे दूँ।"

२६९. पत्र : एस० सी० चटर्जीको

सेवाग्राम, वर्धा
११ दिसम्बर, १९४०

प्रिय प्रिंसिपल चटर्जी,

आपका लम्बा पत्र[1] मैंने पढ़ा। किन्तु उससे मैं जरा भी कायल नहीं हो सका हूँ। आपने मुस्लिम स्टुडेन्ट्स फेडेरेशनके नाम जो पत्र लिखा था, उसपर से मैंने अपना मत निर्धारित किया है। आपने उससे इन्कार भी नहीं किया है।[2] मैंने आपको सिर्फ इसलिए पत्र लिखा था कि यदि आप उस पत्रके औचित्यके बारेमें कुछ कहना चाहें तो कह सकते हैं, अथवा यदि पत्र जाली हो तो आप मुझे उसके बारेमें बता सकें। दुर्भाग्यवश आपके पत्रमें ऐसी कोई बात नहीं है जिससे उसका औचित्य सिद्ध किया जा सकता हो। आपमें बौद्धिक क्षमता, निष्पक्ष परोपकार-भावना और अन्य अनेक गुण भले हों, लेकिन वे इस मामलेमें उतने ही असंगत हैं जितना कि ब्रिटिश सरकारके सम्बन्धमें मेरा आचरण।[3] निःसन्देह, आप हमारे बीच हुए पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करनेके लिए स्वतन्त्र हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

होम, पॉलिटिकल, फाइल सं० ३/३३/४०–पॉलि० (१)। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. ८ दिसम्बरका पत्र, जो उनके ७ दिसम्बरके पत्रमें लिखी बातोंके अनुक्रममें था। देखिए पृ० २३४, पाद-टिप्पणी १, और पृ० २३५, पाद-टिप्पणी १ और २।

२. चटर्जीने लिखा था: "आपने मुझपर सिर्फ इसलिए उग्र सम्प्रदायवादी होनेका आरोप लगाया है, कि मैंने फेडेरेशनकी मार्फत मुस्लिम छात्रोंको इस बातके लिए प्रोत्साहित किया कि वे कायर न बनें और कॉलेज आनेके अपने मौलिक अधिकारका उपयोग करनेके मामलेमें दूसरोंके हाथोंमें अपने-आपको गुलाम न बनायें। मेरी समझमें, आप श्री जिन्नाकी भारतके बँटवारेकी योजनाके विरुद्ध हैं; मैं भी उसके विरुद्ध हूँ। किन्तु क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि आपकी भारत-विषयक कल्पना क्या उससे भिन्न है जो मैंने मुस्लिम छात्रोंके सामने रखी है?"

३. चटर्जीने अपने पत्रके अन्तमें लिखा था: "आपकी राजनीतिक सूझबूझपर मेरी आस्था कब-की टूट चुकी है। इधर हालमें महायुद्धमें भारतके योगदानके प्रति आपका जो दृष्टिकोण है, वह मेरी समझसे बिलकुल परे है।"

२७०. पत्र : एन० एस० हार्डीकरको

सेवाग्राम, वर्धा
११ दिसम्बर, १९४०

प्रिय हार्डीकर,

आपका मार्मिक पत्र मिला। आप ५ जनवरीके बाद जायेंगे। इस बीच आप अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखें और अपने पत्रका काम-काज समेटकर बन्द कर दें।

मैं आपको यहाँ रखकर आपकी खाँसीका इलाज करना चाहूँगा। इस समय मेरे पास एक समुचित शिक्षा-प्राप्त डाक्टर[1] हैं, जो पिछले दस वर्षोंसे आहार-सम्बन्धी परिवर्तनोंके जरिये रोगियोंका इलाज करते आ रहे हैं। यदि आ सकें तो आ जाइए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजीसे : एन० एस० हार्डीकर पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। प्यारेलाल पेपर्स भी; सौजन्य : प्यारेलाल

२७१. पत्र: अमतुस्सलामको[2]

[१२ दिसम्बर, १९४० के पूर्व][3]

बेटी,

तेरा खत बहुत खराब है। मैंने तो शक किया ही नहीं है। इसलिए वही तेरा पाप है तो पाप है कहो। तू तेरे गुनाहको जानती ही नहीं है। मैं कहता हूं कि जबतक तू साफ नहीं हुई है, तुझे कामयाबी नहीं होगी। इसमें शुद्ध सत्य है। मौलानाके पास जाना फिजूल है। तू चाहे या न चाहे, मैं तो जयरामदासको लिखूंगा।

१. अनुमानतः यहाँ आशय डॉ० दाससे है, देखिए "पत्र: अमतुस्सलामको", पृ० २३८; साथ ही "पत्र: अमृतकौरको", ११-१-१९४१।

२. गांधीजीने अमतुस्सलामको सिन्ध जाने की इजाजत नहीं दी थी, इसलिए उन्होंने गांधीजी से पूछा था कि आपके दिलमें क्या शक है और मैंने क्या पाप किया है।

३. जयरामदास दौलतरामको लिखे पत्रके उल्लेखपर से; देखिए "पत्र: जयरामदास दौलतरामको", पृ० २५१।

तू इजाजत दे तो सोफिया और काफीसे बात करने को तैयार हूं। तुझे फाका करना है तो यहां नहीं हो सकता है। तेरी शुद्धिका उपाय फाका नहीं है।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१२)से

२७२. तार : श्रीरामको[1]

[१२ दिसम्बर, १९४० या उसके पूर्व][2]

यदि आप सरदार सम्पूरण सिंहको[3] आदर्श मानते हैं तो आप [सत्याग्रहके लिए] न जायें। यदि आप पंडित जवाहरलाल नेहरूको आदर्श मानकर चलते हैं तो आप जा सकते हैं। आप विधान-सभाके अपने साथी सदस्योंमें कृपया इस [तार] को घुमा दें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-१२-१९४०

२७३. तार : भालेरावको[4]

१२ दिसम्बर, १९४०

जो लोग मुझसे सहमत हों, फिर चाहे वे संख्यामें कम हों अथवा ज्यादा, उन्हें [पेन्टेन्युलर क्रिकेट मैचका] बहिष्कार करना चाहिए।

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

गांधी

१ और २. पंजाबकी विधान-सभाके कांग्रेसी सदस्य श्रीरामने "पंजाबमें सत्याग्रह करने के सिलसिलेमें गांधीजीसे निर्देशोंकी मांग" की थी। यह तार दिनांक "रोहतक, १२ दिसम्बर" के अन्तर्गत छपा था।

३. देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० २२८-२९।

४. बम्बई हिन्दू क्रिकेट क्लबके सेक्रेटरी भालेरावने अपने ११ दिसम्बरके तारमें गांधीजीसे पूछा था कि क्या आपकी रायमें केवल हिन्दुओंको ही पेन्टेन्युलर क्रिकेट मैचका बहिष्कार करना चाहिए अथवा औरोंको भी करना चाहिए; देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० २२९-३०।

२७४. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ दिसम्बर, १९४०

प्रिय जयरामदास,

मैंने एक नाबालिगको[1] सिन्ध भेजा था और समझा था कि वह बालिग होकर लौटी है। उसके लिखे एक पत्रका, जिसका मैंने उत्तर भी दिया था, यही असर मेरे मनपर पड़ा था। उसने आपको मेरे उत्तरकी एक प्रतिलिपि भेजी है। मैंने उसके बारेमें जो धारणा बनाई थी, उसे उसने अपने व्यवहारसे निर्मूल सिद्ध कर दिया है और यह बात वह स्वयं भी समझ गई है। उसने देखा कि मैंने उसके बारेमें जो जरूरतसे ज्यादा उदार धारणा बनाई है, उसके अनुरूप वह किसी भी तरह [नहीं] बन सकती। इसलिए वह जैसी गई थी अब भी वैसी है, अर्थात् एक नाबालिग है, जिसकी बहुत ज्यादा देख-भाल की जानी चाहिए। जब वह बिलकुल ठीक हो जायेगी, तब उसे वापस भेज दिया जायेगा और जब आप और मौलाना साहब उचित समझेंगे तब वह आ सकेगी। उसका जीवन सिन्धमें शान्ति स्थापित करने और आतंकवादको रोकने के लिए समर्पित है। वहाँ होनेवाली निरर्थक हत्याएँ तो उस आतंकवादके बाहरी लक्षण-मात्र हैं।

अमतुल सलामकी बात सोच-सोच कर अपने को बीमार मत कर लेना। वह तो भगवानके हाथोंमें है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२५६) से। सौजन्य: जयरामदास दौलतराम

१. अमतुस्सलामको; देखिए "पत्र: जयरामदास दौलतरामको", पृ० २३१ भी।

२७५. पत्र : अमतुस्सलामको

[१२ दिसम्बर, १९४० के पश्चात्][1]

जो मुझे सुनाया उसमें मेरा दिमाग नहीं चलेगा। पैसेकी बात है। मैंने तो अपील की थी। उसमें से जो आया वह सही। अब तो तुझे सीधा मौलानासे काम लेना है और जयरामदाससे। तू उनको सब लिख। मैंने तो मैं जितना कह सकता हूं उस खतमें लिख दिया। सिंधियोंको सीधा मिल गया।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८८) से

२७६. पत्र : अचरेकरको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ दिसम्बर, १९४०

प्रिय अचरेकर,

आपकी कठिनाइयोंके[2] बारेमें पढ़कर दुःख हुआ। जबतक आपकी ये कठिनाइयाँ दूर नहीं हो जातीं, तबतकके लिए आप निश्चय ही सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें शामिल होना स्थगित कर सकते हैं। तथापि मुझे उम्मीद है कि आप नियमित रूपसे चरखा चलाते होंगे और रचनात्मक कार्यमें भाग लेते होंगे। आशा है कि आप यह भी जानते होंगे कि कताईमें धुनाई भी शामिल है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. जयरामदास दौलतरामको लिखे पत्रके उल्लेखपर से; देखिए पिछला शीर्षक।
२. आर्थिक

२७७. पत्र : जतीन्द्रमोहन दत्तको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ दिसम्बर, १९४०

प्रिय मित्र,

मेरे कुछ भी करने से स्थिति[1] नहीं बदलनेवाली है, लेकिन मेरा खयाल है, चूंकि कांग्रेसकी ओरसे वहिष्कारकी घोषणा नहीं की गई है, इसलिए कोई कठिनाई नहीं होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

जतीन्द्रमोहन दत्त
४५, बैरकपुर ट्रंक रोड
डाकघर कोसीपुर

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२७८. पत्र : प्रेमनाथ बजाजको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ दिसम्बर, १९४०

प्रिय प्रेमनाथ,

आपका पत्र मिला। हिन्दी और उर्दूके बारेमें निकाला गया आदेश[2] ऊपरसे देखने पर निर्दोष प्रतीत होता है। लेकिन समस्याके सभी पहलुओंके बारेमें अच्छी तरहसे जाने बिना मैं कोई अन्तिम राय नहीं दे सकता। और यदि जरा भी सम्भव हो तो आप मुझे इसका अध्ययन करने के कष्टसे बचाइएगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. जतीन्द्रमोहन दत्तने गांधीजीसे अनुरोध किया था कि बंगाल जनगणना मंडलको अपना आशीर्वाद दें और हिन्दुओंसे गणनामें अपना नाम दर्ज करवाने के लिए कहें।

२. यह आदेश काश्मीर सरकार द्वारा जारी किया गया था, जिसमें सरकारी स्कूलोंमें देवनागरी और फारसी दोनों लिपियोंके उपयोगकी अनुमति दी गई थी।

२७९. प्रमाणपत्र : पृथ्वीसिंहको

सेवाग्राम
१४ दिसम्बर, १९४०

सरदार पृथ्वीसिंहने जो व्यायामकी योजना मुझे दी है, उसे मैं पढ़ गया हूँ। बहुत बरस पहले वह जनताके सामने रखी गई थी; फिर भी उसपर कहीं अमल हो रहा है, ऐसा नहीं जान पड़ता। योजना मुझे तो पसन्द आई है, वह देशकी स्थितिको ध्यानमें रखकर बनाई गई है, सरल है, खर्चीली नहीं है, और ऐसी है कि तुरन्त अमलमें लाई जा सकती है। मेरा सदासे यह मत रहा है कि सच्ची शिक्षामें शारीरिक, बौद्धिक तथा आत्मिक, तीनों शक्तियोंका एकसमान और एकसाथ विकास होना चाहिए। लेकिन सच पूछिए तो एक ही के विकासकी ओर ध्यान दिया जाता है, और वह भी बिना देशकी स्थितिका विचार किये। सरदार पृथ्वीसिंहने शारीरिक शक्तिके बारेमें जो सुझाव दिया है, वह विचारणीय है। मैं आशा करता हूँ कि इस क्षेत्रके विशेषज्ञ इस योजनाका अध्ययन करेंगे, और यदि यह योजना उन्हें ठीक लगेगी तो इसपर अमल करायेंगे।

मो० क० गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६४३)से। सी० डब्ल्यू० २९५४ से भी; सौजन्य : पृथ्वीसिंह

२८०. पत्र : गुरुमुखसिंह मुसाफिरको

१५ दिसम्बर, १९४०

प्रिय ज्ञानीजी[1],

आपने दस गुरुओंकी शिक्षाओंपर मेरी व्याख्या पूछी है, सो निम्नलिखित है:

गुरु ग्रन्थ साहबकी मैं विश्वके धर्मग्रन्थोंमें गणना करता हूँ। मैं अपनेको गुरुओंकी शिक्षाओंका एक विनम्र अनुयायी मानता हूँ, ठीक वैसे ही जैसे मैं अपनेको इस्लाम, ईसाई धर्म, जरथुस्त्री धर्म, यहूदी धर्म और हिन्दू धर्मकी शिक्षाओंका पालन करनेवाला समझता हूँ। इन शिक्षाओंका सार (जहाँतक अहिंसाका ताल्लुक है और यही आप मुझसे जानना भी चाहते हैं) यही है कि इनमें अहिंसा-धर्मका पालन करने का

१. पंजाब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी कार्य-समितिके सदस्य

आदेश कर्त्तव्य-रूपमें दिया गया है, लेकिन जब अनुयायीके सामने कायरतापूर्ण आत्म-समर्पण अथवा शस्त्र-प्रयोगका सवाल उठे तब हिंसाको स्वीकार किया गया है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई। प्यारेलाल पेपर्स भी; सौजन्य : प्यारेलाल

२८१. पत्र : बलवन्तसिंहको

१५ दिसम्बर, १९४०

चि० बलवन्तसिंह,

सिंहका नाद और गायोंका रुदन[1] दोनों सुना। अब गाय जहां है वहीं रहेगी। आर्यनायकमजी[2] और आशादेवीको कह दिया है।

बस ना?

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९३९) से

२८२. पत्र : पटवर्धनको

सेवाग्राम
१५ दिसम्बर, १९४०

भाई पटवर्धन,

तुम्हारा खत मैं पढ़कर खूब हंसा। मैं तुम्हारे संतोषजनक न्याय दूं तब तुम्हारी श्रद्धा बैठे—अच्छा है कि मैंने न्याय करने की इच्छा ही नहीं की है। मैं तो मित्र भावनासे जो कुछ कर सकता हूं करता हूं। सहस्रबुद्धेको भी मैंने दादाके[3] खतकी नकल भेजी है। उनका उत्तर नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल.

१. जब बलवन्तसिंहको यह पता चला कि जिस भूमिका उपयोग गोशालाके लिए किया जा रहा था वह तालीमी संघको दी जानेवाली थी, तो उन्होंने गांधीजी को एक कड़ा पत्र लिखा। वह पत्र उन्होंने गूँगी गायकी ओरसे लिखा था।

२. ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम्

३. दादा धर्माधिकारी

२८३. पत्र : हंसराज राधारको[1]

[१६ दिसम्बर, १९४० के पूर्व][1]

देशी राज्योंमें व्यक्तिगत या सामूहिक किसी भी प्रकारकी सविनय अवज्ञा नहीं की जानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, १८-१२-१९४०

२८४. पुर्जा : अमृतकौरको

मौन दिवस बहुत सवेरे, १६ दिसम्बर, १९४०

मैं पागल . . .[3] के बीचमें था। उन्होंने मुझे घेर लिया था। बड़ी मुश्किलसे वे मुझे उठाकर मेरे घरके दरवाजेतक ले गये। लेकिन मेरे एक प्रशंसकने मुझे पकड़ लिया और छोड़ता ही नहीं था। सो मैं मददके लिए चीखने लगा।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४२२०)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७८५६ से भी

२८५. पत्र : मुहम्मद हमीदुल्ला खाँको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ दिसम्बर, १९४०

प्रिय नवाब साहब,

साथमें जाकिर[4] का दर्द-भरा पत्र है। मैं मददके लिए आपसे निवेदन कर रहा हूँ, उम्मीद है आप इसका बुरा नहीं मानेंगे। जामिया[5] एक छोटी-सी संस्थासे एक बहुत बड़ी संस्था बन गई है। आप जानते हैं कि अलीबन्धु, हकीम साहब और डॉ०

१ और २. साधन-सूत्रके अनुसार जिन्द राज्यके एक राजनीतिक कार्यकर्ता, हंसराज राधारने गांधीजी से अनुरोध किया था कि वे राज्य-कांग्रेसको जिन्द राज्यमें सत्याग्रह करने की अनुमति दें। यह पत्र दिनांक "लाहौर, १६ दिसम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. मूलमें एक शब्द अस्पष्ट है। गांधीजी एक स्वप्नका वर्णन कर रहे थे।

४. जाकिर हुसैन

५. जामिया मिलिया इस्लामिया

अन्सारीने मिलकर इसकी सर्जना की थी। डॉक्टर जाकिर मुहम्मद अलीकी पसन्दगी थे। और जहाँतक मुझे मालूम है, उन्होंने ऊँचीसे-ऊँची अपेक्षा भी पूरी की है। उनके पास जो सहायक हैं, वे योग्य और आत्मत्यागी हैं। मैं जानता हूँ कि बहुत सारे लोग आपसे पैसा माँगते हैं। लेकिन यह आपको ज्यादा नहीं लगना चाहिए। मैं इस मामलेको आपपर छोड़ता हूँ।

आशा है, आप ठीक होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

हिज हाइनेस नवाब साहब, भोपाल

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२८६. पत्र : परीक्षितलाल मजमूदारको

१६ दिसम्बर, १९४०

चि० परीक्षितलाल,

तुम्हारी रिपोर्ट पढ़ गया। खेड़ा और अहमदाबादमें असफल होने का क्या कारण है? क्या तुम विरोधियोंके हृदयको जीतने का पूरा प्रयत्न कर रहे हो? क्यों न ऐसी जगहोंमें आदर्श पाठशालाएँ खोली जायें और अन्य विद्यार्थियोंको उनमें पढ़ने के लिए लुभाया जाये? उसमें खर्च तो होगा। वह खर्च शायद अम्बालालभाई[1] जैसे कोई उठायें। खेड़ामें विरोध करनेवाले पाटीदार ही हैं, या कोई दूसरे, या सब? सरकारी सहायतामें अगर देर हो गई हो, तो क्यों न गुलजारीलाल[2] सम्बन्धित अधिकारीसे मिलें?

बापूके आशीर्वाद

परीक्षितलाल मजमूदार
हरिजन आश्रम
साबरमती

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९९२)से। सी० डब्ल्यू० १५० से भी; सौजन्य : परीक्षितलाल मजमूदार

१. अम्बालाल साराभाई

२. गुलजारीलाल नन्दा, जो उस समय अहमदाबाद कपड़ा मिल मजदूर संघके मन्त्री थे

२८७. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ दिसम्बर, १९४०

चि० प्रभा,

इस बीच तेरा पत्र नहीं आया। उम्मीद है, तेरी तबीयत ठीक होगी।

पत्र लिखने का कारण यह है कि मैं आशा लगाये बैठा हूँ कि जयप्रकाश आकर मुझसे मिलेगा। मुझे आश्चर्य होता है कि उसका पत्र क्यों नहीं आया और वह अभीतक मुझसे मिला क्यों नहीं। अब तुझसे मालूम होगा।

सुशीला २२-२३ तारीखको आयेगी। मनु यहीं है। और भी बहुत लोग हैं। आश्रम भर गया है।

मेरी तबीयत ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५४९) से

२८८. पत्र : पुरुषोत्तमदास टंडनको

१६ दिसम्बर, १९४०

भाई टंडनजी,

आपका खत मिला। स० पृथ्वीसिहकी सूचना पर वैशंपायनजीको मैंने सेवाग्राम आने की विनंती की थी। वे आये थे। उन्होंने मुझको भी पैसेके बारेमें कहा था। श्री देवने क्या सोचा था मुझे पता नहीं है, लेकिन समिति स्वागतका खर्च करे वह नीति मुझे तो अच्छी नहीं लगती है। वैशंपायनजी और देव पक्षमें नीति भेद है। इस हालतमें भी उनको समितिके पैसे दिलवाना मुसीबत हैं। स्वागतका खर्च स्वागत समितिओंको उठा ही लेना चाहिये। ऐसा मेरा तो अभिप्राय है। और मैंने वैशंपायनजीको यही कहा। और भी बातें हुई हैं। आशा तो है कि अच्छा ही होगा।

राजेन्द्रबाबु तो बीमारीके कारण नहीं आ सकेंगे। जमनालालजीकी तारीख निश्चित हो गई है। बदलनी नहीं चाहिये। जो न्याय आपके लिये है वह और किसीको लागु नहीं हो सकता है। सम्मेलनके जन्मदाता और प्राण आप ही हैं और मुझे

संपूर्ण विश्वास है कि आपका वहां होना पर्याप्त होगा। काकाजी[1] और श्रीमन[2] अवश्य जायेंगे। राजेन्द्रबाबुकी तबियत कबूल करे तो उनको भी जाना चाहिये। मैं लिखूंगा।

आप अच्छे होंगे।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२८९. पत्र : अमतुस्सलामको

मौनवार, १६ दिसम्बर, १९४०

बेटी,

अगर तू उसूलसे चलना चाहती है तो उसूलमें मेरी सेवाकी जगह हि कहां? उसूलसे तो तेरा सब समय शास्त्रीजीकी सेवामें हि जाना चाहिये। मैं तो जो करता हूं बापकी हैसीयतसे। माकी नहि क्यों मा होनेकी तमन्ना रखता हूं। और बापकी हैसियतसे इसलिये पुरुषकी मर्यादामें।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६२)से

२९०. पत्र : अमतुस्सलामको

१६ दिसम्बर, १९४०

बेटी,

तेरे ढंगसे मैं परेशान हो रहा हूं। तेरेमें बहुत रोष है इतनी ही गरूरी है। तेरे दिलमें है तू बहुत जानती है लेकिन हकीकतमें मूर्ख है। उसूलकी बातें करती है जानती कुछ नहि। उसूलके मुताबिक चलती नहीं है या सचमुच तेरा उसूल हि एक है। मेरे नजदीक रहना और मेरी ही सेवा करना। यह कोई उसूलकी बात नहि हुई। यह तो प्रेमकी बात हुई। उस प्रेमके वश होकर मैं तुझे सेवा दऊं तो

१. दत्तात्रेय बा० कालेलकर
२. श्रीमन्नारायण

तू उसूलकी बात मेरे मूं पर फेंकती है। इतनी सीधी बात कब समजेगी? नहिं समजेगी तबतक तेरा सिख जाना फिजूल समज।

इस खतपर गौर कर। रोष निकाल, गरूरी फेंक दे और नम्र बन।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३)से

२९१. सत्याग्रहियोंके लिए निर्देश[1]

वर्धागंज
१७ दिसम्बर, १९४०

गांधीजी के निर्देशानुसार मुझे यह घोषणा करनी है: सब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियाँ और दूसरी समितियाँ भी इस बातका ध्यान रखें कि क्रिसमसके दिनोंमें, अर्थात्, २४ दिसम्बरसे लेकर ४ जनवरी तक, जिसमें ये दोनों दिन भी शामिल हैं, कोई सत्याग्रह नहीं होना चाहिए। तीन अनुमत श्रेणियोंको छोड़कर दूसरे सत्याग्रही ५ जनवरी और उसके बाद सत्याग्रह आरम्भ कर सकते हैं और गांधीजी ने जिन सत्याग्रहियोंके नामोंको अपनी स्वीकृति दे दी है, उन्हें ५ अप्रैल तक सत्याग्रहमें भाग ले लेना चाहिए।

देशके विभिन्न भागोंसे अनेक प्रार्थना-पत्र सीधे यहाँ आ रहे हैं। बहुतोंको तो हमने सम्बन्धित प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंके पास भेज दिया है। लेकिन हम अभी तक सारे प्रार्थना-पत्रोंको देख नहीं पायेहैं। सत्याग्रहका इरादा रखनेवालेसभी लोगोंको चाहिए कि वे अपनी-अपनी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंको ही अपने आवेदन-पत्र भेजें, जिसमें स्पष्ट रूपसे उनका नाम, पता, वय, धन्धा लिखा हो और यह भी बताया गया हो कि वे हर प्रकारकी जिम्मेदारियोंसे मुक्त और नीरोग हैं तथा उन्हें सत्य, अहिंसा तथा रचनात्मक कार्यक्रममें पूरा-पूरा विश्वास है। ठोस शब्दोंमें कहें तो बम्बई प्रस्तावके[2] अनुसार उन्हें स्वराज्य प्राप्त करने के एकमात्र साधनके रूपमें तथा सभी युद्धोंका अन्त करने के एकमात्र उचित उपायके रूपमें अहिंसापर अपना पूरा विश्वास व्यक्त करना चाहिए; साथ ही उन्हें यह भी घोषित करना चाहिए कि अहिंसा और रचनात्मक कार्यक्रमके अनिवार्य सम्बन्धमें उनकी आस्था है और इसे वे नियमपूर्वक चरखा चलाकर, हमेशा खादी पहनकर, हाथकी बनी वस्तुओंके उपयोगपर ही आग्रह रखकर तथा ग्रामोद्योग और दस्तकारीको प्रोत्साहन देकर, अस्पृ-

१. ये निर्देश महादेव देसाईने जारी किये थे।
२. देखिए पृ० १-३।

श्यताका पूर्ण निवारण करके तथा साम्प्रदायिक एकतापर आग्रह रखकर सिद्ध करते हैं।

बेहतर तो यही होगा कि सब प्रान्तोंके पास ऐसे फार्म हों जिनमें यह सब ब्योरा दिया गया हो और सत्याग्रहके इच्छुक लोग इन फार्मोको जिम्मेदार कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंकी उपस्थितिमें भरें। कुछ प्रान्त तो पहले ही इस कार्य-पद्धतिको अपना चुके हैं। इससे समयकी और डाक-खर्चकी काफी बचत होगी।

उपर्युक्त शर्तोको पूरा करने के बावजूद जिन लोगोंने पढ़ाई छोड़ने का निश्चय नहीं किया है और जिन्होंने अपने माता-पिता या अभिभावकोंकी अनुमति नहीं ली है, उन्हें आवेदन-पत्र नहीं भेजने चाहिए।

मैं समाचारपत्रोंसे अनुरोध करना चाहूँगा कि वे सत्याग्रह-सम्बन्धी कोई अनधिकृत वक्तव्य प्रकाशित न करें। उदाहरणार्थ, यह खबर कि दिल्लीमें सत्याग्रह रोक देने का निर्देश दिया गया है, बिलकुल निराधार है।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, १८-१२-१९४०

२९२. पत्र : सैयद महमूदको

सेवाग्राम, वर्धा
१७ दिसम्बर, १९४०

प्रिय डॉ० महमूद,

आपका पत्र और संलग्न कागजात[1] मिले और इन दोनोंको मैंने बापूको पढ़कर सुनाया। बापू यह जानकर अत्यन्त प्रसन्न हुए कि आप पहलेसे अच्छे हैं। लेकिन लिखावटको लेकर उनके और मेरे बीच हुए विवादमें आपने उनके विरुद्ध जो फैसला दिया है उसके एवजमें वे आपको एक वर्षतक के लिए धीरज रखने का आदेश देते हैं! मैं उनसे पूर्णतया सहमत हूँ। आपको तो अपनेको गिरफ्तार करवाने की बात स्वप्नमें भी नहीं सोचनी चाहिए। निश्चय ही बाहर भी बहुत सारा काम करने को पड़ा है। और जब सही नेतृत्व करनेवाले और सलाह देनेवाले अधिकांश लोग जेल जा चुके होंगे तब जेलके बाहर जिम्मेदार मार्गदर्शकोंका होना बहुत जरूरी है।

बेशक, वह 'अफवाह'[2] मनगढ़न्त थी। बापू कहते हैं कि आपको डॉ० शौकतसे पूछना चाहिए कि इस अव्यवस्थाके लिए सचमुच कौन जिम्मेदार था। वे इसके बारेमें आपको कुछ बता सकेंगे।

१. देखिए पृ० २३६-३७।
२. गांधीजी के उपवासके बारेमें; देखिए पृ० २०२-३ भी।

मैं आपको अभिवादन भेजती हूँ और आशा करती हूँ कि आप शीघ्र स्वस्थ हो जायेंगे।

हृदयसे आपकी,
अमृतकौर

पुनश्च :

बापूका रक्तचाप तबतक ठीक रहता है जबतक वे सामर्थ्यसे ज्यादा काम नहीं करते। लेकिन आजकल उन्हें नियन्त्रणमें रखना कठिन है। इतना सारा काम करने को पड़ा हुआ है!

मूल अंग्रेजीसे: डॉ० सैयद महमूद पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। जी० एन० ५११२ से भी

२९३. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

सेवाग्राम
१७ दिसम्बर, १९४०

यह जवाब बस मेरे और तेरे विनोदके लिए ही है। तूने सूत्र-वाक्य तो लिखे, किन्तु उन्हें सिद्ध नहीं किया। बलिदानसे कार्यकी हानि अथवा कार्यका क्षय होगा, यह तूने कैसे मान लिया? मैं तो यह मानता हूँ कि यह बलिदान कार्यकी शोभा बढ़ायेगा और उसे हलका करेगा। मेरे इस कथनके पीछे मेरे पास सबूत है। तेरा कथन अनुमानपर आधारित है और गलत है। अब भी क्या तू महादेवके जाने को आपत्तिजनक कहने की हिम्मत कर सकता है? मेयरका फतवा तो बम्बईकी सीमाके भीतर ही काम दे सकता है। उस सीमाके बाहर तो तुझे युक्तिसे ही जीतना पड़ेगा।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १७९

२९४. पत्र : पी० बी० गोलेको

[१८ दिसम्बर, १९४० के पूर्व][1]

मुझे बताया गया है कि मैंने सारे सवर्ण हिन्दुओंके लिए अस्पृश्यता-पालनका जो मानदण्ड मूलत: बनाया था, आप लगभग उसीका पालन करते हैं। स्पष्ट ही है कि वह मानदण्ड कांग्रेसजनों और विशेषत: कांग्रेसके नेताओंके लिए पर्याप्त नहीं है। इसी कारण मैंने कहा था कि आपकी धारणाओं और आचरणके विषयमें मुझे जो बताया गया है, यदि वह सच है तो आपको सविनय-अवज्ञा नहीं करनी चाहिए।

फिर भी, जब किशोरलाल मशरूवालाने मुझे एक पत्र भेजा कि आपको मेरे कथनसे दु:ख पहुँचा है, तो मैंने तत्काल आपको आकर मुझसे मिलने के लिए बुलाया और आपने शीघ्र ही मुझसे मिलने की कृपा की। आपके साथ हुई बातचीतके दौरान मैं समझ गया कि हिन्दू-धर्मको अस्पृश्यता-रूपी विकृति और उसके फलस्वरूप उच्च या निम्न वर्ण या बहिष्कृत वर्णकी भावनासे मुक्त करने की आवश्यकतापर आपकी आस्था उतनी ही शुद्ध और उच्च कोटिकी है जितनी कि किसी भी बड़ेसे-बड़े कांग्रेसीकी हो सकती है; लेकिन अपने घरमें आप शुचिताके नियमोंका बड़ी कठोरतासे पालन करते हैं और इस तरह आप अपने चौकेमें उन लोगोंको नहीं आने देते जो आपके परिवारके सदस्योंके समान शुचिताके नियमोंका पालन नहीं करते, फिर भले ही वे किसी भी जातिके क्यों न हों। इस व्यवहारका अस्पृश्यतासे कोई सम्बन्ध नहीं है और विशेष रूपसे यह हरिजनोंपर लागू नहीं होता है। इसका अपना स्वतन्त्र आधार है। मैं यह भी समझ गया कि पारिवारिक क्षेत्रसे बाहर आपका हरिजनोंके प्रति व्यवहार हूबहू वैसा ही है जैसा किसी भी कांग्रेसीका होता है।[2]

मुझे खेद है कि अज्ञानवश मैंने आपपर और डॉ० पारसनीसपर ऐसे विश्वास रखने का आरोप लगाया जो आप दोनों नहीं रखते हैं। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि मेरी धारणा गलत थी, और मैं आप दोनोंको सत्याग्रही दलका सदस्य मान सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २४-१२-१९४०

१. यह पत्र दिनांक "नागपुर, १८ दिसम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजी ने इन शब्दोंके साथ "मध्य प्रान्त और बरारके भूतपूर्व कांग्रेसी मन्त्री पी० बी० गोलेको सत्याग्रह करनेकी अनुमति प्रदान की थी"।

२९५. पत्र : सुरेशचन्द्र बनर्जीको[1]

[१९ दिसम्बर, १९४० के पूर्व][2]

यदि आप शान्ति बनाये रख सकें तो जो-कुछ कर रहे हैं वही चालू रखें। इस पूरे प्रश्नपर धैर्यपूर्वक विचार करने की जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-१२-१९४०

२९६. बातचीत : घनश्यामदास बिड़ला और देवदास गांधीसे

१८/१९ दिसम्बर, १९४०

मैं दो दिन, १८ और १९ दिसम्बरको, वर्धामें गांधीजी के साथ रहा। . . .

मैंने उनसे पूछा कि आपकी अगली योजना क्या है। वे वाइसरायको उसकी सूचना पहले ही दे चुके हैं। अगला चरण तीन महीने और जारी रहेगा। उस अरसेमें करीब १०,००० व्यक्ति जेल जायेंगे। सभी नामोंकी अच्छी तरह छान-बीन की जायेगी। मैंने पूछा, "उसके बाद क्या होगा?"

[गांधीजी :] उसके बाद कोई और चरण नहीं होगा। वही अनिश्चित काल तक जारी रहेगा और मैं जितने आदमी भेज सकता हूँ उतनेको जेल भेजूँगा। कभी-कभी अपने युवकोंकी मनोवृत्तिपर मुझे थोड़ी चिन्ता होती है। मैं जानता हूँ कि वे उतावले हो रहे हैं। वे कोई बेवकूफीका काम कर सकते हैं। दुर्भाग्यसे साम्यवाद युवकोंको आकर्षित करता है।

मैंने जवाब दिया कि पहले जब भी सत्याग्रह चला, साम्यवाद उतने समय के लिए गायब हो गया, लेकिन उसके दबते ही फिर सामने आ गया। उन्होंने यह बात स्वीकार की। . . .

वे महादेवको जेल भेजने के लिए उत्सुक थे। मैंने उन्हें समझाने की कोशिश की कि वे महादेवको न भेजें। उनके बिना गांधीजी एक तरहसे अपंग हो जायेंगे। महादेवको निश्चित लगता है कि उनकी अनुपस्थितिसे गांधीजी के स्वास्थ्यको

१ और २. अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेसके भूतपूर्व अध्यक्ष सुरेशचन्द्र बनर्जीने गांधीजी से सलाह माँगी थी, क्योंकि "बार-बार सत्याग्रह करने के बावजूद" उन्हें गिरफ्तार नहीं किया गया था। यह पत्र दिनांक "कलकत्ता, १९ दिसम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

नुकसान पहुँच सकता है। प्यारेलाल पहले ही जेलमें हैं। इसलिए महादेवका यह विचार है कि उन्हें अवश्य बाहर रहना चाहिए। परन्तु गांधीजी इससे सहमत नहीं हैं :

यह आन्दोलन आत्मशुद्धिके लिए है, किसीको परेशान करने के लिए नहीं है। मुझे जो मेरे लिए सर्वोत्तम है उसीका त्याग करना चाहिए। बहुत-से अन्य महान् कार्योंके लिए मुझे महादेवकी बाहर जरूरत थी। इससे उनका मूल्य और बढ़ गया है। परन्तु इसी कारण उन्हें जेल भेजना और भी जरूरी है, क्योंकि यह त्याग और भी बड़ा होगा।

फिर मैंने उन्हें बताया कि बम्बईमें मुझे बताया गया कि सरदार पटेल और अन्य लोग यरवडा जेलमें काफी खुश और आरामसे हैं। मैंने उन्हें यह भी बताया कि मुलाकातोंपर बहुत अधिक प्रतिबन्ध है और इसके बारेमें मैंने बम्बईके गवर्नरसे बात की है। वे सब आरामसे हैं, यह जानकर उन्हें खुशी हुई।

तब देवदासने बताया कि मद्रासमें हालात भिन्न हैं। राजाजीको रातको तालेमें बन्द कर दिया जाता है। मुलाकातें २० मिनटसे अधिक चलने नहीं दी जातीं। और सी० आई० डी० के लोग मुलाकातके वक्त बराबर मौजूद रहते हैं। मैंने कहा कि मैं इस बातकी ओर वाइसरायका ध्यान दिलाऊँगा। लेकिन गांधीजी ने कहा, इसमें शिकायतके लायक कोई खास बात नहीं है। जेल आखिर जेल ही है और उसमें रहते हुए आदमीको बहुत अपेक्षाएँ नहीं रखनी चाहिए। यदि सभी तरहकी स्वतन्त्रताएँ दे दी जायें तो कारावासका कोई अर्थ ही नहीं रहेगा। कुल मिलाकर उनका यह विचार था कि सरकार सज्जनतासे लड़ाई लड़ रही है। सरकारकी यह प्रशंसा सुनकर मुझे खुशी हुई। अच्छा सम्बन्ध बड़ी अच्छी चीज है और उसका मूल्य जितना भी आँकिए कम है।

वाइसरायके भाषणके[1] बारेमें मैंने उन्हें अपनी राय बताई। इसपर देवदास ने गांधीजी को वाइसरायका कलकत्ताका भाषण पढ़कर सुनाया, जो उन्होंने तबतक पूरा नहीं पढ़ा था। उन्होंने वह बहुत ध्यानसे सुना। देवदास जब पढ़ना समाप्त कर चुके तो मैंने गांधीजी से पूछा कि इसपर आपकी प्रतिक्रिया क्या है। गांधीजी ने कहा, यह बहुत सौहार्दपूर्ण है, पर कोई प्रगति नहीं हुई है। वाइसरायके साथ हुई अपनी कुछ पुरानी बातचीतका उन्होंने जिक्र किया और फिर यह राय जाहिर की :

१. तात्पर्य १६ दिसम्बरको कलकत्तामें एसोशिएटेड चैम्बर्स ऑफ कामर्समें दिये गये वाइसरायके भाषणसे है। इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४०, खण्ड २, पृ० ३६४ के अनुसार, इसमें तथा १२ दिसम्बरको लन्दनके एक भोजमें दिये गये भारत-मन्त्री एल० एस० एमरीके भाषणमें, दोनों बार, वाइसरायके ८ अगस्तके वक्तव्यमें रखे गये प्रस्ताव (देखिए खण्ड ७२, परिशिष्ट ७) दोहराये गये थे, जिनमें "भारतके लिए एक राष्ट्रीय सरकारकी तजवीज थी — ऐसी सरकारकी जो युद्ध सलाहकार परिषद्के ज़रिये भारतीय रियासतोंसे सम्बद्ध होगी — जिसमें उन महान दलों और समुदायोंके प्रतिनिधि होंगे जो युद्धके संचालनपर पूरा और वास्तविक प्रभाव डालेंगे. . . ।"

लेकिन वाइसरायको अपने विचारोंके औचित्यमें बहुत ही दृढ़ विश्वास है। मैं उन्हें उनकी स्थितिसे कभी भी डिगा नहीं सका।

तब मैंने उन्हें बताया कि सर रॉजर लमलीको मैंने क्या सुझाव दिया है। उसका सार इस प्रकार है:[1]

> कोई समझौता न हो पाने का जिक्र करते हुए मैंने कहा, मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि असफलताका कारण बहुत हदतक आपसी गलतफहमी मानी जा सकती है। शायद इसीलिए गांधीजी जब लॉर्ड अर्विनसे समझौतेके लिए बातचीत करने गये थे तो उन्हें उनको यह लिखना पड़ा था: "मैं मानव अर्विनसे मिलना चाहता हूँ।" . . . औपनिवेशिक दर्जेकी पेशकशके सिलसिलेमें . . . वाइसरायके वक्तव्यपर श्री एमरीके भाषणने[2] यह भाव पैदा कर दिया है कि इस पेशकशके साथ क्योंकि इतनी शर्तें जुड़ी हुई हैं, इसलिए वह दर्जा प्राप्त करना असम्भव है। अलगाव तक पर राजी हुआ जा सकता है, पर ऐसी स्थितिपर राजी नहीं हुआ जा सकता जिसमें मुसलमानोंके स्वीकृति देने तक कोई प्रगति ही न हो सके। . . . वर्तमान गतिरोधको समाप्त करनेवाले समाधान की चर्चा करते हुए मैंने यह सुझाव रखा कि वाइसरायकी परिषद्का तुरन्त विस्तार किया जाये और उसमें ऐसे व्यक्ति शामिल किये जायें जो न कांग्रेसी हों न लीगी, पर जिनका लोग सम्मान करते हों। . . . मैंने कुछ नाम बताये और कहा कि मैं और नाम भी दे सकता हूँ।

मैंने गांधीजी को बताया कि मेरी रायमें इस तरहका विस्तार कई तरहसे उपयोगी होगा। इससे गतिरोध निश्चित रूपसे खत्म हो जायेगा। मैंने यह दलील दी कि यदि हमें राष्ट्रीय सरकार भी प्राप्त हो जाये तो भी कांग्रेस युद्ध-प्रयत्नोंसे अपनेको नहीं जोड़ेगी। हाँ, वह गांधीजी के नेतृत्वको फिर त्यागने को तैयार हो तो बात दूसरी है। लेकिन कांग्रेसके लिए गांधीजी के नेतृत्वको एक बार फिर त्यागना अब शायद सम्भव न हो। इसलिए, व्यवहारतः तो, कांग्रेसमें राष्ट्रीय सरकारतक के शामिल होने की सम्भावना खारिज समझी जा सकती है। शायद लीगको भी, भिन्न कारणोंसे, खारिज माना जा सकता है। पर सिर्फ इन दो दलोंके लिए ही प्रतीक्षा क्यों की जाये। यदि सरकार, जैसा कि कहा जाता है, भारतको उसके लक्ष्यकी ओर बढ़ाने के लिए सचमुच कोशिशें करना चाहती है तो शुरुआत क्यों न की जाये? मैंने यह बात स्वीकार की कि इस योजनाकी सफलता ऐसे व्यक्तियोंके चयनपर निर्भर करती है जो सचमुच अच्छे हों, जो भले ही कांग्रेस या लीगके विश्वासपात्र न हों, पर कमसे-कम ऐसे जरूर हों जिनका न केवल ये दो राजनीतिक दल बल्कि पूरा देश सम्मान करता हो। दूसरी बात यह कि न्याय और व्यवस्था, वाणिज्य, वित्त, युद्ध-सम्भरण, प्रतिरक्षा, रेलवे आदि सभी महत्त्वपूर्ण विभाग इन व्यक्तियोंको सौंप दिये जायें।

१. यहाँ उसका कुछ अंश ही दिया गया है।

२. देखिए पिछले पृष्ठकी पाद-टिप्पणी।

इसपर गांधीजी की प्रतिक्रिया असन्तोषप्रद नहीं थी। उन्होंने कहा कि यदि केन्द्रमें सचमुच एक प्रतिनिधि सरकार बना दी जाये तभी वे इसे पसन्द करेंगे। वह उत्तरदायी भले ही न हो, पर जिनका चयन किया जाये वे कमसे-कम प्रतिनिधि ढंगके हों। इन दोनों दलोंसे बाहर ऐसे स्वतन्त्र व्यक्तियोंको पाना कितना कठिन है, वे यह समझते थे। पर मैंने उन्हें कुछ नाम बताये और उनका खयाल था कि उनका चयन शायद बुरा न रहे।

उन्होंने यह स्वीकार किया कि युद्धकी आवश्यकताओंको ध्यानमें रखते हुए सम्राटकी सरकार इस समय इससे आगे नहीं जा सकेगी, और यदि वह इससे आगे नहीं जाती है तो वे झगड़ेंगे नहीं। मैं, अलबत्ता, यह मान रहा था कि इस तरहके व्यक्तियोंसे बनी कोई भी कार्यकारी परिषद् राजनीतिक नेताओंको जेलमें बन्द नहीं रख सकती और न ही वह उनका मुंह बन्द रख सकती है। स्मट्स हर्टजोगका मुंह बन्द नहीं रख सके, पर युद्ध-प्रयत्न दक्षिण आफ्रिकामें फिर भी जारी रहे। इसी तरह मेरी योजनाके अन्तर्गत भारतमें युद्ध-प्रयत्न और भी जोरोंसे जारी रह सकते हैं। उन्हें निश्चित रूपसे तेज किया जा सकेगा। भाषणकी स्वतन्त्रता रहेगी, परन्तु एक बार वह स्वतन्त्रता दे दी जाये तो मुझे यकीन है कि उसका दुरुपयोग नहीं होगा।

गांधीजी की इस अच्छी प्रतिक्रियाके लिए देवदास तैयार नहीं थे। स्पष्टीकरणके लिए वे बीचमें बोले : "युद्ध-प्रयत्नोंका क्या होगा? क्या वे जारी रहेंगे? और क्या कांग्रेस उन्हें बरदाश्त करेगी?" गांधीजी ने कहा :

हाँ, वे जारी रहेंगे। आज भी वे जारी हैं। वे सब स्वैच्छिक होंगे। किसी तरहकी जोर-जबरदस्ती नहीं होगी। और भाषणकी स्वतन्त्रता दे दी जायेगी। आखिर कांग्रेसका मुख्य विचार यह है कि नागरिकोंको युद्धमनस्क बनने न दिया जाये। सरकार परेशानीमें पड़े, यह इच्छा तो नहीं है। इसके अलावा, आज भी सारा देश तो युद्धमनस्कताका विरोधी है नहीं। ऐसे भी लोग हैं जिनका यह हार्दिक विश्वास है कि युद्ध लड़ा जाये। कांग्रेसका कार्य केवल लोगोंको शिक्षित करना है। यदि कांग्रेस कभी भी सारे राष्ट्रको युद्धमनस्कताका विरोधी बना सकी, तो उसे लड़ने को मजबूर कौन कर सकेगा? परन्तु आज तो ऐसा है नहीं। इसलिए यदि युद्धमनस्क लोग युद्धसे सम्बन्ध रखें तो हमें डाह क्यों होनी चाहिए?

मैंने इस बातकी ओर ध्यान दिलाया कि इस तरहका मन्त्रिमण्डल हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच एक सेतु भी बना सकता है और युद्धके बाद संविधान-रचनाकी स्थिति लाने के लिए जमीन भी तैयार कर सकता है। उन्होंने कहा :

हाँ, शायद यह ठीक है।

मैंने उनसे पूछा कि क्या प्रातिनिधिक सरकार द्वारा दी गई भाषणकी स्वतन्त्रता के दुरुपयोगका खतरा नहीं है। उनका ऐसा खयाल नहीं था। पर साथ ही उन्होंने कहा कि यदि ऐसा कोई उल्लंघन हो तो सजा देने के लिए कानून तो है ही। कांग्रेस यह सहन नहीं करेगी कि उसके लोग ऐसा कोई दुरुपयोग करें।

प्रान्तोंका प्रश्न फिर भी अनसुलझा ही रहेगा। परन्तु शान्तिकी इस स्थितिसे शायद हमें अगले कदमके लिए साँस लेने का मौका मिल जायेगा।

मैंने यह सुझाव रखा कि अगला कदम उठाने से पहले छः सप्ताहके लिए कार्यवाही रोकने का ऐलान क्यों न कर दिया जाये।

पर अगला कदम तो उठाया जा चुका है। बेशक, सरकार यदि चाहे तो यह रोका जा सकता है।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८६०)से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

२९७. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको

वर्धा
२० दिसम्बर, १९४०

अपने हालके मुकदमेके समय सरदार सम्पूर्णसिंहने जो आचरण किया था, उसपर मैंने समाचारपत्रोंको एक वक्तव्य[1] जारी किया था। वे उस सम्बन्धमें मुझसे मिलने आये थे। हालाँकि मैंने उन-जैसे व्यक्तियोंको अनुमति न देने की जो बात कही थी वह सच है, फिर भी मैं स्वीकार करता हूँ कि उन्हें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने सत्याग्रह करने की अनुमति दी थी और उसपर से उन्होंने यह मान लिया था कि अनुमति मेरे कहने पर ही दी गई होगी। इसलिए मैं स्वीकार करता हूँ कि जहाँतक अनुमतिका सवाल था, उनका सत्याग्रह करना सर्वथा उचित था।

तथापि मुकदमेके समय उनका आचरण बिलकुल अनुचित था, और मेरे खयालमें, सरदारजी अब मेरे द्वारा की गई आलोचनाका ठीक अर्थ और उसका औचित्य समझ गये हैं। वे यह भी समझ गये हैं कि उचित रूपसे कोई भी यह नहीं कह सकता कि वह अनुशासनके तौरपर अहिंसामें विश्वास रखता है। सरदारजी अब इस सीधी-सी बातको अच्छी तरहसे समझ गये हैं कि किसी भी व्यक्तिकी अहिंसा-पर या तो आस्था है या नहीं है, फिर भले ही अहिंसाके बारेमें उसकी कैसी भी धारणा क्यों न हो। सरदारजी अब इस सीधे-सादे सत्यको समझते हैं। मैंने अब उन्हें बता दिया है कि वे जो स्पष्ट भूल कर बैठे थे उसे सुधारा जा सकता है। वे मेरे सुझावपर विचार कर रहे हैं। अतः मैं जनतासे अनुरोध करना चाहूँगा कि वह अभी सरदार सम्पूर्णसिंहके आचरणके सम्बन्धमें कोई निश्चित मत न बनाये।

सरदारजीने मुझे बताया है कि जहाँतक उन्हें मालूम है, पंजाबमें किसी भी व्यक्तिकी अहिंसामें आस्था नहीं है; और जिनकी है उनकी अनुशासनकी बातके तौरपर ही है। यह यदि सत्य हो तो बहुत ही गम्भीर बात है और

१. देखिए पृ० २२८-२९।

मैं ऐसे सभी व्यक्तियोंको मैदानसे हट जाने के लिए कहूँगा। यदि कांग्रेसियोंको कांग्रेसकी मौलिक नीति या सिद्धान्तमें सिर्फ इसीलिए विश्वास है कि ऐसा विश्वास रखना अनुशासनकी माँग है तो मैं कांग्रेसको सफलताकी मंजिलतक नहीं ले जा सकता। कोई भी कांग्रेसी इसलिए सत्याग्रही वनता है कि उसे सिपाहीगिरीकी कला आती है और उसका उसमें विश्वास है। लेकिन यदि वह युद्धमें विजय प्राप्त करना चाहता है तो एक बार सत्याग्रही वनने के वाद उससे उसी प्रकारके कड़े अनुशासनकी अपेक्षा की जाती है जो प्रत्येक सैनिकसे, जिसमे वह लगा हुआ है उस युद्धको यदि जीतना है तो, वाजिव तौरपर लड़ाई की जाती है। और यह उचित भी है। हमारी लड़ाई अहिंसक है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। यदि कोई फर्क पड़ता है तो यही कि सत्याग्रहीको और भी कड़े अनुशासनका सहर्ष पालन करना है।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, २२-१२-१९४०

२९८. पत्र : कृष्णचन्द्रको

सेवाग्राम
२० दिसम्वर, १९४०

चि० कृष्णचन्द्र,

पानीके वारेमें मैंने वैद्यजीको कहा है। मैं एक टांकी वनवाने की कोशीष कर रहा हूं। दरम्यान कुल्ली करने के लिये उवला हूआ पाने देना चाहीये। वरतन भी आखरमें उवले पानीसे धो लेना चाहीये। उसमें ज्यादा पानीकी दरकार नहीं है। सुशीलावहन परसों आवेगी, उनसे भी मश्विरा कर लो।

दर्शनार्थी वि० आते हैं उनको हम खाना नहीं दे सकते है। मांगे असमर्थता वताना हैं। कोई दूरसे आ जाय और अनजान है, भूखा है उसको देना धर्म हो जायगा। दूध, घी किसीको नहीं। रोटी, तेल, कच्ची भाजी इ० दे सकते हैं।

सस्ता [साहित्य] मंडलसे हम एक-एक पुस्तक मंगवा सकते हैं।

एक रामायण मोटे अक्षरोंका है। वह रा० ना०[1] को दिया जाय। वच्चोंके लिये दो चार आनाकी पुस्तक मंगवा सकते हैं।

रामनामके वारेमें तुमारा प्रश्न रह गया है। मेरा स्मरण २४ घंटो चलता है उसका मतलव यह नहि कि मैं जानता हूं। लेकिन संकल्प है कि २४ घंटों तक चले और चलता है जैसे श्वासोश्वास।

वापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३६५)से

१. रामनारायण चौधरी, राजस्थानके एक कार्यकर्ता

२९९. सन्देश : खादी-प्रदर्शनीको

[२१ दिसम्बर, १९४० के पूर्व][1]

मैं सच्चे दिलसे आशा करता हूँ कि खादी-प्रदर्शनी अत्यन्त सफल सिद्ध होगी और बम्बई-निवासी इसके प्रति समुचित उत्साह दिखायेंगे। वर्त्तमान सत्याग्रह आन्दोलनकी सफलताके लिए आवश्यक है कि आम जनता खादीको संरक्षण दे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-१२-१९४०

३००. पत्र : सी० ए० तुलपुलेको

सेवाग्राम, वर्धा
२१ दिसम्बर, १९४०

प्रिय श्री तुलपुले,

गांधीजी के नाम लिखा आपका पत्र मिला। उनका कहना है कि यदि आपको उनसे कोई ऐसी बात नहीं कहनी हो जिसकी ओर तत्काल ध्यान देना उनके लिए आवश्यक हो तो बेहतर होगा कि आप उनसे न मिलें। इसके लिए वे आपका आभार मानेंगे। उनकी तबीयत ठीक नहीं है, उन्हें शक्ति-क्षयसे यथासम्भव बचना है और डाक्टरोंने उन्हें कमसे-कम बोलने की सलाह दी है। हाँ, आप जब चाहें मगन-वाड़ी देखने अवश्य आ सकते हैं। इसके लिए आप श्री जे० सी० कुमारप्पासे समय निश्चित कर लीजिए।

हृदयसे आपकी,
अमृतकौर

श्री सी० ए० तुलपुले
तिलक रोड
पूना सिटी

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० २९०३)से। सौजन्य: सी० ए० तुलपुले

१. २१ दिसम्बरको बम्बईके मेयर मथुरादास त्रिकमजीने इस प्रदर्शनीका उद्घाटन किया था।

३०१. पत्र : क्रिस्टोफर ऐक्रायडको[1]

वर्धा
२१ दिसम्बर, १९४०

मुझे खेद है कि मैं अबतक आपके पत्रकी प्राप्ति सूचित नहीं कर पाया। लेकिन आशा है कि मैंने चतुर्वेदीको[2] जो पत्र लिखा था, वह पत्र उन्होंने आपको दिखाया होगा। उसमें मैंने इस बारेमें अपना मत लिखा था कि क्या करना चाहिए। मैंने प्रिंसिपलके साथ अपने पत्र-व्यवहारकी[3] प्रतिलिपियाँ आपको भेजी थीं। उनमें लिखी बातें इतनी स्पष्ट हैं कि अलगसे कहने की कुछ जरूरत नहीं। मुझे इस बारेमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि यदि वे उस अपमानजनक परिपत्रको वापस नहीं लेते और अपने साम्प्रदायिक दृष्टिकोणमें सुधार नहीं करते, तो वे अध्यापक होने के अयोग्य हैं। वे चाहे कितनी ही क्षमा-याचना क्यों न करें, लेकिन जबतक उसमें निश्चित हृदय-परिवर्तनके लक्षण दिखाई नहीं देते, तबतक उसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। मेरे विचारमें आपका अपने प्रति और भारतके प्रति यह कर्त्तव्य है कि आपको प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी रूपमें ऐसी संस्थाका पोषण नहीं करना चाहिए जिसका प्रिंसिपल चटर्जी जैसे विचारोंका व्यक्ति हो।

कृपया यह पत्र श्रीयुत निगमको भी पढ़वायें।

[अंग्रेजीसे]

होम, पॉलिटिकल, फाइल सं० ३/३३/४०-पॉलि० (१)। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. इस पत्रपर एक टिप्पणी दी गई है, जिसमें लिखा है : "गोपनीय। एस० पी० जी० मिशनके मन्त्री तथा द मदरहुड, कानपुरके अध्यक्ष प्रोफेसर क्रिस्टोफर ऐकरायडके नाम मो० क० गांधी, सेवाग्राम, वर्धा, सी० पी० द्वारा २१ दिसम्बर, १९४० को लिखे और डाक-पात्राके दौरान पुलिसके हाथमें आये पत्रकी प्रतिलिपि"।

२. कानपुर छात्र संघके अध्यक्ष

३. देखिए पृ० २३४-३५ और २४८।

३०२. भेंट : अखिल भारतीय छात्र सम्मेलनमें आये मद्रासके प्रतिनिधियोंको[1]

सेवाग्राम, वर्धा
२१ दिसम्बर, १९४०

छात्रोंने गांधीजी से हड़ताल-सम्बन्धी अनेक समस्याओंपर चर्चा की। गांधीजी ने छात्रोंको सलाह दी कि अपना विरोध व्यक्त करने के लिए वे हड़तालसे कुछ बेहतर उपाय सोचें, जैसे कॉलेजके समयके आगे-पीछे प्रदर्शन या सभाएँ आदि करना। यदि वे हड़ताल करने का संकल्प करते हैं तो उन्हें उसके सभी परिणामोंके लिए तैयार रहना चाहिए; यहाँतक कि पढ़ाई छोड़ देने के लिए भी तैयार रहना चाहिए। गांधीजी ने यह आशंका व्यक्त की कि आजकल जो हड़तालें होती हैं. उनमें दृढ़ संकल्पका अभाव होता है। यही कारण है कि विद्यार्थी लोग साम्राज्यवादके विरुद्ध अपने संघर्षमें अधिक सफल नहीं हो पाते। गांधीजी ने कहा : मेरी रायमें विरोध व्यक्त करने का सबसे सटीक तरीका यह है कि आधे-अधूरे उपाय अपनाने के बजाय विद्यार्थियोंको कॉलेज छोड़ देने चाहिए।

अन्नामलाइनगरकी (छात्रोंकी गिरफ्तारी-सम्बन्धी) घटनाओंके विषयमें गांधीजी की यह निश्चित राय थी कि यदि सरकार निष्पक्ष जाँच नहीं करवाती, तो सम्बद्ध विद्यार्थियोंको चाहिए कि वे विद्यार्थियोंके मौलिक अधिकारोंका घोर उल्लंघन किये जाने के विरोधमें विश्वविद्यालयका पूर्ण बहिष्कार कर दें। गांधीजी ने यह आशा व्यक्त की कि सरकार अपने दृष्टिकोणमें सुधार करेगी और स्थितिकी गम्भीरताको समझकर निष्पक्ष जाँच करवायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१-१९४१

१. इस भेंटकी सूचना मद्रास स्टुडेन्ट्स आर्गेनाइजेशनके महामन्त्री आर० अच्युतनने दी थी।

३०३. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२१ दिसम्बर, १९४०

चि० कृष्णचन्द्र,

रामनाम स्मरण जब श्वासोश्वासवत स्वाभाविक होता है, तब दूसरे कामोंमें विघ्नकर नहि होता लेकिन बल देता है। तंबूराका सूर दूसरे सूरोंको बल देता है। ऐसे इसमें दो काम एक समयमें करने का दोष नहिं आता। आंख अपना काम करती है, कान अपना। सब एक साथ होता है।

अब समज सकते हो कि मेरे दूसरे कामोंको रामनाम सरल करता है सफल भी। उसका स्वरूप अवर्णनीय है अनुभवगम्य है।

ब्रह्मचर्य और अहिंसा शारीरिक तप है उस बारेमें मुझे भी शंका थी। अब नहि है। दोनोंका संबंध शरीरके साथ है। मनोविकारका असर शरीरपर जाता है। ऐसे ही क्रोधादि हिंसक विकारोंका। अगर शरीर न हो तो अहिंसा और ब्रह्मचर्य अर्थविहीन हो जाते हैं, अर्थात् दोनों शरीरके धर्म हैं और दूसरे शरीरके साथ संबंध रखते हैं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३६५)से

३०४. पत्र : हीरालाल शर्माको

२३ दिसम्बर, १९४०

चि० शर्मा,

तुमारा नाम तो मेरे पास है हि। लेकिन जबतक मैं तुमसे रचनात्मक कार्य लेना चाहुं तबतक [जेल] क्यों भेजुं? और तुम सामाजिक प्राणी नहिं बनोगे तो मैं कैसे तुमको भेजुं? कहो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २९४ पर प्रकाशित प्रतिकृतिसे

३०५. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सेवाग्राम, वर्धा
२३ दिसम्बर, १९४०

भाई सतीशबाबु,

हरिलालको पैसे क्यों दिये, कितने दिये? उसमें उसका भला नहिं है। सब शराबमें गये।

अन्नदाके बारेमें ठीक लिखा है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३३) से

३०६. तार : एगथा हैरिसनको[1]

[२४ दिसम्बर, १९४० या उसके पूर्व][2]

मेरा स्वास्थ्य ठीक ही है। स्थितिसे निपटने के लिए समय चाहिए। अत्यधिक सावधानीसे कदम उठा रहा हूँ। व्हाइटहॉल तथा कलकत्ताकी घोषणाओंमें[3] ठोस तथ्योंकी अवहेलना की गई है। सप्रेम।

[अंग्रेजीसे]

होम, पॉलिटिकल, फाइल सं० ३/३३/४०-पॉलि० (१)। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. क्वेकर सम्प्रदायके कुछ व्यक्तियों द्वारा बनाई हुई इंडिया कंसिलिएशन ग्रुप नामक संस्थाकी मन्त्री।

२. गृह-विभागके इंटेलिजेंस ब्यूरो द्वारा इस तारके बारेमें लिखे २८ दिसम्बरके गैर-सरकारी नोट सं० ८/पी० एफ० (डी०)/४०-२ पर से, जिसमें इसी तारसे सम्बन्धित ब्यूरोके इससे पूर्व २४ दिसम्बरके गैर-सरकारी नोट सं० ८/पी० एफ० (डी०)/४०-३ का हवाला दिया गया है।

३. देखिए पृ० २६५ की पाद-टिप्पणी।

३०७. पत्र : एडोल्फ हिटलरको[1]

वर्धा
२४ दिसम्बर, १९४०

प्रिय मित्र,

मैं किसी औपचारिकतावश आपको मित्र कहकर सम्बोधित नहीं कर रहा हूँ। मैं किसीको अपना शत्रु नहीं मानता। पिछले ३३ वर्षोंसे मेरे जीवनमें एक ही काम रहा है : जाति, रंग या धर्मका भेद किये बिना मानव-जातिको मित्र बनाकर सारी मानव-जातिकी मैत्री प्राप्त करना।

मानव-जातिका एक बहुत बड़ा भाग विश्व-बन्धुत्वके इस सिद्धान्तसे प्रभावित रहा है। मुझे आशा है, आपको यह जानने की इच्छा होगी और आपके पास इसके लिए समय भी होगा कि आपके कार्योंके बारेमें मानव-जातिका यह भाग क्या सोचता है। हमें आपकी वीरता या देशभक्तिमें सन्देह नहीं है, और न हम यही मानते हैं कि आपके विरोधी आपको जिस तरह राक्षसके रूपमें चित्रित करते हैं आप वैसे हैं। किन्तु आपके अपने और आपके मित्रों और प्रशंसकोंके लेखों और वक्तव्योंसे इस बातमें कतई सन्देह नहीं रहता कि आपके बहुत-से कार्य राक्षसी हैं और मनुष्यकी गरिमाके योग्य नहीं हैं — खासकर मुझ-जैसे विश्व-मैत्रीमें विश्वास रखनेवाले लोगोंकी निगाहमें तो वे ऐसे ही हैं। चेकोस्लोवाकियाका पद-दलन, पोलैण्डपर बलात्कार और डेनमार्कको हड़पना — ये आपके कुछ ऐसे ही कार्य हैं। मैं जानता हूँ कि आपके जीवन-दर्शनके अनुसार लूट-मारके ये काम सत्कार्य हैं। लेकिन हमें बचपनसे यही सिखाया गया है कि ऐसे काम इन्सानको उसकी इन्सानियतसे गिराते हैं। इसलिए हम आपकी फौजोंकी सफलताकी कामना नहीं कर सकते।

किन्तु हमारी स्थिति कुछ अनोखी है। हम ब्रिटिश साम्राज्यवादका भी उतना ही विरोध करते हैं जितना नाजीवादका। अगर कुछ फर्क है तो मात्राका। पूरी मानव-जातिके पंचमांशको जिन तरीकोंसे ब्रिटेनके अधीन किया गया, वे गलत और निंद्य तरीके थे। ब्रिटिश शासनका हम विरोध करते हैं, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि हम ब्रिटेनके लोगोंको कोई नुकसान पहुँचाना चाहते हैं। हम उन्हें युद्धक्षेत्रमें पराजित करना नहीं चाहते, बल्कि उनका हृदय-परिवर्तन करना चाहते हैं। हमारा विद्रोह ब्रिटिश शासनके विरुद्ध निःशस्त्र विद्रोह है। हम उनका हृदय-परिवर्तन कर सकें अथवा न कर सकें, लेकिन हम अपने अहिंसक असहयोगके जरिये उनके शासनको

१. इस पत्रको तत्कालीन भारत सरकारने दबा दिया था; देखिए "पत्र : एगथा हैरिसनको", १७-१-१९४१ तथा अगला शीर्षक भी। इससे पूर्व गांधीजी ने एडोल्फ हिटलरको एक पत्र २३ जुलाई, १९३९ को भी लिखा था; देखिए खण्ड ७०, पृ० २३।

असम्भव बना देने पर आमादा हैं। यह तरीका ऐसा है जो अचूक है। यह तरीका इस ज्ञानपर आधारित है कि कोई भी लुटेरा तबतक अपना इष्ट सिद्ध नहीं कर सकता जबतक उसे अपने शिकार हुए व्यक्तिकी ओरसे इच्छा या अनिच्छावश थोड़ा-बहुत सहयोग नहीं मिलता। हमारे शासक हमारी जमीन और हमारे शरीरपर अधिकार भले कर लें, किन्तु हमारी आत्मापर अधिकार नहीं कर सकते। हमारी जमीन और हमारे शरीरपर अधिकार वे तभी कर सकते हैं जब वे प्रत्येक भारतीय पुरुष, स्त्री और बच्चेका सम्पूर्ण नाश कर दें। यह सही है कि सभी लोग शायद ऐसी वीरता न दिखा सकें, और काफी आतंक द्वारा विद्रोहकी कमर तोड़ी जा सकती है, लेकिन यह तर्क अप्रासंगिक होगा। कारण, यदि भारतमें ऐसे स्त्री-पुरुष काफी बड़ी संख्यामें मिल सकें जो घुटने टेकने के बजाय लुटेरोंके प्रति बिना कोई द्वेष-भाव रखे अपने प्राण न्यौछावर करने को तैयार हों, तो वे हिंसाके आतंकसे स्वतन्त्र होने का मार्ग दिखा देंगे। आप विश्वास करें कि आपको भारतमें ऐसे स्त्री-पुरुष अप्रत्याशित रूपसे बड़ी संख्यामें मिलेंगे। वे पिछले २० वर्षोंसे इसी चीजका प्रशिक्षण प्राप्त करते रहे हैं।

पिछले पचास सालोंसे हम ब्रिटिश शासनको उखाड़ फेंकने की कोशिश करते रहे हैं। स्वतन्त्रताका आन्दोलन जितना मजबूत इस समय है उतना पहले कभी नहीं था। सबसे शक्तिशाली राजनीतिक संगठन — मेरा अभिप्राय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेससे है — इस लक्ष्यको प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा है। अहिंसात्मक प्रयत्नोंसे हमें काफी-कुछ सफलता प्राप्त हो चुकी है। ब्रिटिश सत्ता संसारकी सबसे अधिक संगठित हिंसात्मक सत्ता है और इसका मुकाबला करने के लिए हम किसी सही उपायकी तलाश कर रहे थे। आपने उसी ब्रिटिश सत्ताको चुनौती दी है। अब यह देखना है कि कौन ज्यादा सुसंगठित है — जर्मन सत्ता या ब्रिटिश सत्ता। हम जानते हैं कि ब्रिटिश सत्ताके पैरों तले रहने का हमारे लिए और दुनियाकी गैर-यूरोपीय जातियोंके लिए क्या मतलब है। लेकिन हम जर्मनोंकी मददसे ब्रिटिश शासनका अन्त करना कभी नहीं चाहेंगे। हमें अहिंसाके रूपमें एक ऐसी शक्ति प्राप्त हो गई है जिसे यदि संगठित कर लिया जाये तो वह संसार-भरकी सभी प्रबलतम हिंसात्मक शक्तियोंके गठजोड़का मुकाबला कर सकती है। इसमें कोई सन्देहकी गुंजाइश नहीं है। जैसा कि मैंने कहा, अहिंसात्मक तरीकेमें पराजय नामकी कोई चीज है ही नहीं। यह तरीका तो बिना मारे या चोट पहुँचाये "करने या मरने" का तरीका है। इसका इस्तेमाल करने में धनकी लगभग कोई जरूरत नहीं है और उस विनाश-शास्त्रकी सहायताकी तो नहीं ही जिसे आपने पूर्णताके चरम-बिन्दुपर पहुँचा दिया है। मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि आप यह भी नहीं देख पाते कि विनाशकारी यन्त्रोंपर किसीका एकाधिकार नहीं है। अगर ब्रिटिश लोग नहीं तो कोई और देश निश्चय ही आपके तरीकोंसे ज्यादा बेहतर तरीका ईजाद कर लेगा और आपके ही तरीकोंसे आपको नीचा दिखायेगा। आप अपने देशवासियोंके लिए कोई ऐसी विरासत नहीं छोड़ रहे हैं जिसपर उन्हें गर्व होगा। वे एक क्रूर कर्मकी चर्चा करने में गर्वका अनुभव नहीं करेंगे, फिर भले ही वह कृत्य कितनी

ही निपुणतापूर्वक नियोजित क्यों न किया गया हो। अतः मैं मानवताके नामपर आपसे युद्ध रोक देने की अपील करता हूँ। आपके और ब्रिटेनके बीच जो विवादके मुद्दे हैं यदि आप उन्हें किसी ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरणके सामने रख दें जिसे आप और ब्रिटेन दोनों मिलकर पसन्द करें, तो ऐसा करके आप कुछ खोयेंगे नहीं। यदि आपको युद्धमें सफलता मिल जाती है तो इससे यह सिद्ध नहीं होगा कि आपका पक्ष सही था। उससे केवल इतना ही सिद्ध होगा कि आपकी विनाश-शक्ति अपेक्षाकृत ज्यादा प्रबल थी। इसके विपरीत, एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा किया गया फैसला यह सिद्ध करेगा कि कौन-सा पक्ष न्याय पर था।

आप जानते हैं कि कुछ ही समय पहले मैंने मेरा अहिंसात्मक प्रतिरोधका तरीका अपनाने की हर ब्रिटेनवासीसे अपील[1] की थी। मैंने ऐसा इसलिए किया था कि अंग्रेज जानते हैं कि यद्यपि मैं विद्रोही हूँ तो भी उनका मित्र हूँ। आपके और आपके देशवासियोंके लिए मैं अजनबी हूँ। मैंने हर ब्रिटेनवासीसे जो अपील की थी, वैसी अपील आपसे करने का साहस मुझमें नहीं है। ऐसी बात नहीं कि वह अपील आपपर भी उसी प्रभावकारी ढंगसे लागू नहीं होगी जिस ढंगसे अंग्रेजोंपर होती है। बल्कि बात यह है कि मेरा मौजूदा प्रस्ताव कहीं ज्यादा सीधा-सादा है, क्योंकि वह ज्यादा व्यावहारिक और जाना-पहचाना है।

इस मौसममें, जब यूरोपवासियोंके दिल शान्तिके लिए ललक रहे हैं, हमने खुद अपना शान्तिपूर्ण संघर्ष भी स्थगित कर दिया है।[2] क्या इस समय आपसे शान्तिके लिए कोशिश करने को कहना बहुत ज्यादा होगा? यह ऐसा समय है जिसका व्यक्तिगत रूपसे आपके लिए भले ही कोई महत्त्व न हो, लेकिन करोड़ों यूरोपवासियोंके लिए उनका बहुत महत्त्व है। मेरे कान करोड़ों मूक लोगोंकी पुकार सुनने के अभ्यस्त हैं, और मैं अपने इन्हीं कानोंसे करोड़ों यूरोपवासियोंकी शान्तिकी मूक पुकार सुन रहा हूँ। मैंने सोचा था कि आपके और श्री मुसोलिनीके नाम मैं एक संयुक्त अपील निकालूँगा। श्री मुसोलिनीसे मैं गोलमेज-सम्मेलनके एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे अपनी इंग्लैंड-यात्राके अवसरपर रोममें मिला था।[3] मैं आशा करता हूँ कि मेरी इसी अपीलको आवश्यक परिवर्तनोंके साथ वे अपने नाम लिखी गई अपील समझेंगे।

हृदयसे आपका मित्र,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८६१) से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. देखिए खण्ड ७२, पृ० २६१-४।

२. गांधीजीने बड़े दिनके दौरान सत्याग्रह-आन्दोलन स्थगित करने की आज्ञा दी थी; देखिए पृ० २६०-६१।

३. १२ दिसम्बर, १९३१ को; देखिए खण्ड ४८, पृ० ४७५, ४८०-८१ और ५१४।

३०८. तार : सर जे० जी० लेथवेटको

२४ दिसम्बर, १९४०

श्री हिटलरके नाम खुला पत्र[1] समाचारपत्रोंमें भेजा जा रहा है। आशा है कि वाइसराय महोदय उसे पश्चिमको तत्काल भेजे जानेकी अनुमति प्रदान करेंगे।[2]

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

३०९. पत्र : नृपेन्द्रनाथ सरकारको

सेवाग्राम, वर्धा
२४ दिसम्बर, १९४०

प्रिय सर नृपेन,

आपका पत्र मिला। मैं इसके समर्थनमें खुशीसे हस्ताक्षर दूंगा। धन उगाहने के लिए मैं अपने नामका उपयोग करने की अनुमति देता हूँ। पैसा जमा करने के विचारसे मैं सर प्रफुल्लचन्द्र रायका नाम अपने नामसे ज्यादा उपयुक्त समझता हूँ। मुझे याद है कि जब मैं किशोर था, उस समय भी वे गरीब विद्यार्थी हों या अन्य कोई हों, उनकी मददमें अपनी सारी शक्ति लगा रहे थे। लेकिन जबतक आप चन्दा देनेवाले व्यक्तियोंकी एक निजी बैठक नहीं बुलाते और उनसे एक न्यूनतम नकद राशि इकट्ठा नहीं कर लेते, तबतक मैं अपीलमें अपना नाम नहीं दूंगा। मुझे ऐसी अपीलें किये जाने का, उनपर बड़े-बड़े लोगोंके हस्ताक्षर करने का और फिर भी उनके व्यर्थ जाने का दु:खद अनुभव है। भारतके महान वैज्ञानिक और परमार्थी व्यक्तिके नामपर अपील जारी की जाये और वह बेकार जाये, इससे तो मैं चाहूँगा कि

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. इस पत्रके उत्तर में २७ दिसम्बरको लेथवेटने अपने पत्रमें लिखा था: "उन्होंने [लॉर्ड लिनलिथगोने] अभी-अभी आपके खुले पत्रको देखा है, लेकिन उन्हें खेद है कि उस पत्रमें जो-कुछ कहा गया है उसे वे भारतके साथ ग्रेट ब्रिटेनके सम्बन्धोंका सही चित्रण माननेमें बिलकुल असमर्थ हैं। भारतने वर्षोंके इतने लम्बे समयतक साम्राज्यके साथ रहकर बड़े-बड़े फायदे उठाये हैं, और उसके तथा बाहरी आक्रमणकारी ताकतोंके बीच आज मात्र साम्राज्यकी ही शक्ति है जो रक्षण-दीवार बनकर खड़ी है। अत: ऐसे हालातमें आपने उस बारेमें जो मदद माँगी है, उसे प्रदान करना उनके लिए सम्भव नहीं है।" देखिए "पत्र : सर जे० जी० लेथवेट को", पृ० २९०-९१ भी।

कोई अपील की ही न जाये। इसलिए आप अपीलपर हस्ताक्षर करनेवाले लोगोंसे बातचीत करें, प्रयत्न करके उनसे पैसा इकट्ठा करें। तार द्वारा मुझे सूचित करें कि आपने कितना पैसा इकट्ठा किया और यदि वह राशि पर्याप्त हुई तो आपको मेरे हस्ताक्षर मिल जायेंगे। अन्यथा नहीं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३१०. पत्र : पृथ्वीसिंहको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२४ दिसम्बर, १९४०

भाई पृथ्वीसिंह,

भावनगर अवश्य जाओ। पुनामें सब संतोषजनक ही होगा। नलिनीको लिखता हूँ।

बापुके आशीर्वाद

सरदार पृथ्वीसिंह
मार्फत श्री वैशंपायनजी
'वन्देमातरम्'
७८७ सदाशिव पेठ
पूना सिटी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६४४) से। सी० डब्ल्यू० २९५५ से भी; सौजन्य : पृथ्वीसिंह

३११. पत्र : दुनीचन्दको[1]

[२५ दिसम्बर, १९४० के पूर्व][2]

गांधीजी ने मुझे एक पत्र द्वारा यह सूचना दी है कि केवल वे ही व्यक्ति सत्याग्रह कर सकते हैं जो निम्नलिखित शर्तोंपर पूरे उतरें :

१. वे आदतन नियमपूर्वक कताई करते हों।

२. वे आदतन खादी पहनते हों।

३. उन्हें साम्प्रदायिक एकता और हर प्रकारकी अस्पृश्यताके निवारणकी आवश्यकतामें विश्वास हो।

४. वे हर क्षेत्रमें गाँवोंकी दस्तकारी तथा स्वदेशीको संरक्षण देने की आवश्यकतामें विश्वास रखते हों।

५. वे यह मानते हों कि अहिंसाके बिना लाखों-करोड़ों लोगोंके लिए स्वराज्य असम्भव है।

६. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके बम्बई-प्रस्तावमें उनकी आस्था हो।

७. वे उपर्युक्त सभी मुद्दों और अहिंसाके बीच एक अनिवार्य सम्बन्ध होने में विश्वास रखते हों।

महात्मा गांधी इस बातपर जोर देते हैं कि केवल अनुशासनके नामपर किसीको जेल जाने की जरूरत नहीं है। इस प्रकार सविनय अवज्ञा अनुशासनकी बात न होकर अटूट आस्थाकी चीज बन जाती है। कांग्रेस — कमसे-कम महात्मा गांधी — किसी ऐसे व्यक्तिसे सविनय अवज्ञाकी अपेक्षा नहीं रखते जिसे इसकी अत्यावश्यकता पर विश्वास न हो। महात्मा गांधीका विचार है कि यदि कोई कांग्रेसी यह कहता है कि वह केवल अनुशासनकी खातिर सविनय अवज्ञा करेगा तो यह उसके लिए शर्मकी बात है। उन्होंने आगे कहा कि कांग्रेस-सिद्धान्तमें अधकचरी आस्थासे हम अपने उद्देश्यको प्राप्त नहीं कर सकते और कांग्रेसके कार्यक्रममें बेमनसे रखे राजनीतिक विश्वाससे भी हमारा प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

जो लोग रचनात्मक कार्यमें लगे हुए हैं वे सत्याग्रहियोंसे कुछ कम नहीं हैं। गांधीजी का कहना है कि आस्थापूर्वक सेवा-कार्यमें जुटे रहकर वे सत्याग्रहके उद्देश्यमें सन्दिग्ध सत्याग्रहियोंसे कहीं अधिक योगदान देते हैं।

१ और २. यह पत्र पंजाब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष दुनीचन्द द्वारा समाचारपत्रोंको दिये गये एक वक्तव्यमें प्रकाशित हुआ था। उन्होंने "सभी सम्बद्ध व्यक्तियोंसे अपील की थी कि वे लोग गांधीजी की इच्छाओंको ध्यानपूर्वक समझ लें और पंजाबके नामपर कोई आँच न आने दें"। यह वक्तव्य दिनांक "२५ दिसम्बर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

महात्मा गांधीने कहा है कि यदि सत्याग्रहको रचनात्मक कार्यके रूपमें देशका समर्थन मिलेगा तो हम अपने ध्येयको प्राप्त कर लेंगे। महत्त्व इस बातका है कि इस संघर्षमें कैसा योगदान मिलता है, न कि कितने लोग सत्याग्रह करते हैं। हां, यदि दोनोंका योग हो तो यह हमारे लिए अवश्य खुशीकी बात होगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-१२-१९४०

३१२. पत्र : वल्लभराम वैद्यको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२५ दिसम्बर, १९४०

भाई वल्लभराम,

तुम्हारा पत्र मिला। जब आना हो आ जाना। नासिककी बात मुझे नहीं जंचती। वहां ठीक चीज नहीं मिलेगी। वैसे जीवनलालभाई[1] सज्जन व्यक्ति हैं। नासिक जगह अच्छी है। यहां कठिनाई तो है ही, लेकिन जो अनुभव यहां प्राप्त होगा, वह और कहीं नहीं मिलेगा। विचित्र स्वभावके लोगोंके बीच जीवन व्यतीत करना और जंगलकी जड़ी-बूटियोंका अध्ययन करना, ये दोनों कठिन काम हैं। अगर तुम्हारा शरीर दुर्बल है, तो फिर तुम वैद्य कैसे हो? तुम्हारा स्वास्थ्य भी शायद यहीं ठीक होगा।

बापूके आशीर्वाद

वैद्यराज श्री वल्लभराम
धन्वन्तरि आयुर्वेद अस्पताल
१५९, प्रिन्सेस स्ट्रीट
बम्बई – २

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २९०९)से। सौजन्य: वल्लभराम वैद्य

१. जीवनलाल मोतीचन्द शाह

३१३. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम
२६ दिसम्बर, १९४०

चि० अमृत,

तुमने जो तार भेजने का वादा किया था वह मिल गया है। मुझे खुशी हुई। सब-कुछ ठीक-ठाक चल रहा है।

तुम्हें तो मालूम ही होगा कि तुम्हारे पार्सलमें क्या-क्या सामान था। प्रकट ही है कि वह एक षड्यन्त्र था। उसमें आलू बुखारे क्यों थे? तुम्हें पता है कि बोतलें डाकसे भेजने में काफी पैसा लग जाता है? लेकिन तुम तो यही कहोगी, "प्रेम मूल्यकी चिन्ता नहीं करता"।

हिटलरके नाम लिखा पत्र[1] अभीतक प्रकाशित नहीं हुआ है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९५५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२३०४ से भी

३१४. सन्देश : अखिल भारतीय महिला परिषद्को[2]

[२७ दिसम्बर, १९४० या उसके पूर्व][3]

बहनोंको मैं पहले ही स्वराज्य-प्राप्तिका राजमार्ग दिखा चुका हूँ, जिसपर वे अपने भाइयोंसे आगे बढ़कर चल सकती हैं। इस मार्गपर चलकर वे सफलता प्राप्त कर सकती हैं।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०३६३) से। सौजन्य: अखिल भारतीय महिला परिषद्

१. देखिए पृ० २७५-७७।

२ और ३. यह सन्देश परिषद्के वार्षिक अधिवेशनके लिए भेजा गया था, जो बंगलौरमें २७ से ३० दिसम्बर, १९४० तक चला था।

३१५. पत्र : यू० ए० असरानी और बी० एल० त्रिपाठीको

सेवाग्राम, वर्धा
२७ दिसम्बर, १९४०

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र और प्रस्ताव[1] पसन्द आया। मैं आप लोगोंके नामोंको ध्यानमें रखूंगा और जब जरूरत हुई तब [जेलके] अन्दर भेजूंगा। इस बीच आप रचनात्मक कार्य करते रहें।

मुझे उम्मीद है कि आप स्वयं भी निष्ठापूर्वक चरखा चलाते हैं और विद्यार्थियोंमें उसका प्रचार कर रहे हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३१६. पत्र : श्रीमती रलिया रामको

सेवाग्राम, वर्धा
२७ दिसम्बर, १९४०

प्रिय बहन,

आपके २४ तारीखके पत्रके लिए गांधीजी आभारी हैं। वे भी प्रत्युत्तरमें आपको क्रिसमसकी शुभकामनाएँ भेजते हैं और आशा करते हैं कि आपका अधिवेशन सफल रहेगा।

आपने जो कतरनें भेजी हैं उसके सम्बन्धमें उनका कहना है कि यह आरोप तो उन्होंने पहले-पहल ही सुना है कि हिन्दू महासभाके कार्यों (या प्रस्तावों)के पीछे उनका हाथ है। 'हरिजन' के पृष्ठ इस आरोपको झूठा सिद्ध करते हैं। दुर्भाग्यसे इस समय 'हरिजन' तो बन्द है और गांधीजी के पास इतना समय नहीं कि समाचारपत्रोंमें छपनेवाली सभी बातोंका उत्तर दे सकें।

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

मूल अंग्रेजीसे : फाइल सं० ८३। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. यू० ए० असरानी और बी० एल० त्रिपाठीने, जो बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें अध्यापक थे, २४ दिसम्बरके अपने पत्रमें गांधीजी से सत्याग्रह-आन्दोलनमें शामिल होने की अनुमति माँगी थी।

३१७. पत्र : मगनलाल और मंजुला मेहताको

सेवाग्राम, वर्धा
२७ दिसम्बर, १९४०

चि० मगन और मंजुला,

रोज तुम्हें लिखने का विचार करता था, लेकिन लिख नहीं पाया। उर्मिला मजेमें है।

मांकी मृत्युके लिए शोक करनेकी बात नहीं है, उलटे उन्हें शान्ति मिली; यह प्रभुकी कृपा है। इसके लिए तुम्हें प्रभुके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए।

उर्मिलाके बाल आज मैंने ही काटे। अब वह बहुत अच्छी लग रही है। उसके बाल बहुत झड़ रहे थे।

तुम्हारा घर तैयार होने में समय लगेगा। लेकिन जब तुम [दोनों] आने लगोगे, तब मैं तुम्हारे लिए अलग रसोई बनाने का प्रबन्ध कर दूंगा। मुझे नोटिस देना।

तुम्हारा व्रत सफल हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६११) से। सौजन्य : मंजुलाबहन म० मेहता

३१८. पत्र : आर्थर मुअरको

२८ दिसम्बर, १९४०

प्रिय श्री मुअर,[1]

आपके युक्तिपूर्ण पत्रके लिए धन्यवाद। मैं देखता हूँ कि हम तथ्योंको लेकर आपसमें सहमत नहीं हो सकते और जहाँ हममें परस्पर सहमति है, वहाँ उनपर विचार करने का हमारा दृष्टिकोण भिन्न है। इसलिए फिलहाल हमें इस बातपर सहमत होना चाहिए कि हमारे मत भिन्न-भिन्न हैं। "जब कोहरा छँट जायेगा; तब हम एक-दूसरेको ज्यादा अच्छी तरहसे समझने लगेंगे।" मैं जानता हूँ कि हमारे आपसी मतभेदसे हमारी मित्रतामें कोई अन्तर नहीं आनेवाला है।

क्रिसमसकी शुभकामनाओं-सहित,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. स्टेट्समैनके सम्पादक

३१९. पत्र : के० सूर्यप्रकाश रावको

सेवाग्राम
२८ दिसम्बर, १९४०

प्रिय श्री सूर्यप्रकाश राव,

आपका २४ तारीखका पोस्टकार्ड मिला। आपको अपनी मौजूदा नौकरीमें बने रहकर ही सूत कातना, खादी पहनना, हिन्दी सीखना और कुछ रचनात्मक कार्य करते रहना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२७५)से। सौजन्य: के० सूर्यप्रकाश राव

३२०. पत्र : सर्वपल्ली राधाकृष्णन्‌को

सेवाग्राम, वर्धा
२८ दिसम्बर, १९४०

प्रिय सर राधाकृष्णन्,

आपने कृपापूर्वक मुझे अपना जो दीक्षान्त भाषण भेजा था, उसे मैंने अभी-अभी पढ़कर समाप्त किया है। वह मुझे बहुत ही पसन्द आया। आपकी भाषा तो बिल्कुल विशिष्ट है। फिर भी आप मुझे यह कहने की अनुमति देंगे कि आपकी लेखनी या वाणीसे मैं जिस ओजकी आशा रखता हूँ वह इसमें नहीं है। अहिंसाके सन्देशमें अधिकाधिक ओज होना चाहिए, लेकिन कटुता तनिक भी नहीं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी, खण्ड ६ के पृष्ठ ८ और ९ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे

३२१. पत्र : जे० बी० कृपलानीको

सेवाग्राम, वर्धा
२८ दिसम्बर १९४०

प्रिय प्रोफेसर,

यदि मैं अध्यक्षोंसे सीधा सम्पर्क रखता हूँ और प्रेस-विज्ञप्तियाँ जारी करता हूँ, तो तुम्हें शिकायत क्यों होनी चाहिए? इसमें कुछ भी अनियमित नहीं है। फिर ये सब काम तुम्हारी मार्फत करने में कितनी झंझट है? महादेव तुम्हें नकलें भेज सकता था। पर अगर तुम उसे काम करते देखो तो तुम्हें उसपर दया ही आयेगी। और अगर कभी वह भी चला जाये, तब!

बहुत दिनसे तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला। तुम्हारे पत्रके उत्तरमें मैंने तुम्हें तार भेजा था। पर न तो जवाब मिला और न कृपलानी!

आशा है, सुचेताको[1] तुमने स्वस्थ पाया होगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० १०८७७)से। सौजन्य: गिरधारी कृपलानी

३२२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेवाग्राम, वर्धा
२८ दिसम्बर, १९४०

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। इसे धोत्रे[2] आदिको भेजने के बाद नारणदासको भेजूंगा।

सुना है कि सुशीला[3] तुझसे मिल गई है। तब तो तूने सब-कुछ सुना होगा। भागवतने[4] मुझे लिखा तो था ही।

१. जे० बी० कृपलानी की पत्नी
२. रघुनाथ श्रीधर धोत्रे, गांधी सेवा संघके मन्त्री
३. सुशीला पै
४. सासवड आश्रमके संचालक

कताई, प्रार्थना आदि नियमानुसार होती है, यह सरोजिनी देवीने[1] भी कहा था। सब बहनें अच्छे शरीर लेकर और रचनात्मक कार्यके लिए खूब कुशलता प्राप्त करके [जेलसे बाहर] निकलेंगी, ऐसी आशा रखता हूँ।

प्रभावती अभी यहीं है। जयप्रकाशके साथ उसने खूब यात्रा की। यहाँ तीन दिन रही। आज या कल जयप्रकाश आयेंगे और ले जायेंगे। तेरी दी हुई शिक्षा और दीक्षा उसके लिए फलवती सिद्ध हुई है। वह पहली जनवरीको अपने कामपर लग जायेगी। वह एक मासकी छुट्टी लेकर निकली थी।

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें अखबारोंमें जो निकले उसे बेकार समझना। मेरी तबीयत ठीक ही रहती है। अपनी सेहतका ध्यान रखता हूँ। जबतक ईश्वरको मुझसे काम लेना है तबतक मेरी तन्दुरुस्ती अच्छी ही रहेगी।

बा साथ ही है। वह शान्त है। लीलावती यहाँ आनेके बारेमें संयमसे काम ले रही है।

महादेव आदि सब मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४१६)से। सी० डब्ल्यू० ६८५५ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

३२६. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको[2]

सेवाग्राम, वर्धा
२९ दिसम्बर, १९४०

प्रिय सुभाष,

चाहे तुम बीमार हो या स्वस्थ, लेकिन अदम्य हो। किन्तु आक्रोश-प्रदर्शनसे पहले स्वस्थ तो हो जाओ।

[इस विषयपर] मैंने मौलाना साहबके साथ सलाह-मशविरा नहीं किया है, किन्तु अखबारोंमें निर्णय पढ़कर मैं उसका समर्थन किये बिना नहीं रह सका। मुझे आश्चर्य होता है कि तुम अनुशासन और अनुशासनहीनतामें भेद करनेके लिए तैयार नहीं हो।

फिर भी मैं तुम्हारी इस बातसे सहमत हूँ कि जहाँतक लोकप्रियताका सवाल है, तुम दोनों ही मौलाना साहबसे बढ़कर हो। किन्तु मनुष्यकी लोकप्रियताके बजाय

१. सरोजिनी नायडू

२. यह पत्र सुभाषचन्द्र बोसके २३ दिसम्बरके पत्रके उत्तरमें था; देखिए परिशिष्ट ६। मुकुन्दलाल सरकारने यह पत्र-व्यवहार गांधीजीकी सहमतिसे अखबारोंमें छपवाया था।

अन्तरात्माको ऊँचा पद देना पड़ता है। मैं जानता हूँ कि बंगालमें तुम दोनोंके बिना सुचारू रूपसे कार्य करना कठिन है और यह भी जानता हूँ कि तुम दोनों कांग्रेसके बिना भी अपना काम चला सकते हो। लेकिन कांग्रेसको भारी असुविधाके बावजूद किसी-न-किसी प्रकार अपना काम चलाना है।

सुरेशने[1] मुझे लिखा था कि शरत यहाँ आ रहे हैं और मैं इन्तजार करता रहा हूँ। वे जब चाहें आ सकते हैं और तुम भी आ सकते हो। तुम्हें मालूम ही है कि यहाँ तुम्हारी भली प्रकारसे देखभाल होगी।

रही बात तुम्हारे ब्लॉक[2] द्वारा सविनय अवज्ञामें शामिल होने की, तो मेरा खयाल है कि तुम्हारे और मेरे विचारोंमें मौलिक रूपसे जो भेद है उसे देखते ऐसा सम्भव नहीं है। जबतक हम दोनोंमें से कोई एक-दूसरेके विचारोंका कायल नहीं हो जाता, तबतक हमें अपने-अपने तरीकेसे काम करना होगा, फिर चाहे दोनोंका उद्देश्य एक ही क्यों न प्रतीत, केवल प्रतीत, होता हो।

फिलहाल हम एक-दूसरेसे स्नेह रखें और एक ही परिवारके सदस्य बने रहें, जो हम वास्तवमें हैं भी[3]।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-२-१९४१

१. सुरेशचन्द्र बनर्जी

२. ऑल इंडिया फॉर्वर्ड ब्लॉक

३. अपने १० जनवरी, १९४१ के पत्रमें सुभाषचन्द्र बोसने लिखा था: "आपका पत्र पाकर खुशी हुई। उसमें लिखी बातोंपर से इतनी खुशी नहीं हुई जितनी आपके विचारोंके स्पष्टीकरणसे हुई है. . .। केवल मैं ही नहीं बल्कि वे लोग भी आपके साथ पूरे हृदयसे सहयोग करना चाहते हैं जिनका समर्थन मुझे प्राप्त है। ऐसा करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक सिद्धान्तों या सम्बन्धोंका समर्पण या त्याग करने की न तो आवश्यकता है और न यह वांछनीय ही है।. . . पिछले संघर्षमें कितने ही लोगोंने उत्कट गांधीवादियोंके साथ कंधेसे-कंधा मिलाकर काम किया था, हालाँकि कई महत्त्वपूर्ण प्रश्नोंपर उनमें परस्पर मतभेद था। ऐसा ही अब फिर क्यों नहीं हो सकता? आपसे मेरी विनती है कि आप अपने निश्चयपर एक बार फिरसे विचार करें. . .।" देखिए "पत्र: मुकुन्दलाल सरकारको", १६-२-१९४१ भी।

३२४. पत्र : देवदास गांधीको

सेवाग्राम
२९ दिसम्बर, १९४०

चि० देवदास,

तेरे पत्र मिले। तू मेरा प्रेम पहचानता है, इसलिए मुझे सन्तोष है। यदि तुझमें अज्ञान है, तो उसके लिए तू अकेला जिम्मेदार नहीं है; मैं भी हूँ न? तुम सब भाइयोंकी शिक्षा अधूरी मानी जाती है न? मुझे उसका पश्चात्ताप नहीं है। मुझे उसका भान है। तुम सब भी मेरे प्रयोगोंकी बलि चढ़े हो। लेकिन समूचे हिन्दुस्तानकी भी तो यही स्थिति है न? आलोचक कहते भी हैं कि मैं देशका नाश कर रहा हूँ।

प्यारेलालके वक्तव्यमें शुद्ध सत्य है। वह कुछ सिद्ध करने के लिए थोड़े ही लिखा गया था।

हिटलरको लिखा पत्र[1] भी हृदयसे निकला है। उसमें कटुता बिलकुल नहीं है। हां, जिसे मैं सत्य मानता हूँ, वह उसमें अवश्य है। तू यह सब नहीं मानता, इससे मुझे दुःख नहीं होता। किसीका भी अच्छा ही पहलू हम देखें, यह एक गुण है। लेकिन अगर बुरा पहलू देखें और फिर उसे ढकें, तो यह अवगुण हुआ न? 'गॉड सेव द किंग' गानेवाला मैं ही था न? बहुत अनुभवके बाद मैं काला पहलू देख पाया हूँ।

सरकारका जवाब[2] मुझे मिल गया है। उसकी नकल मैं तुझे भेज रहा हूँ; उसमें जहर है। हिटलरको लिखे पत्रको प्रकाशित देखने की जल्दी मुझे नहीं है। तू तैयार है, इतना काफी है। तेरा वक्त आयेगा, तब मैं तुझे लिखूंगा।

महादेवको लिखे पत्रमें अपनी नीतिके विषयमें तूने जो लिखा है, वह ठीक है। तुझे अकेले खड़े रहने की कोई जरूरत नहीं है। ऐसा व्यवहार करना ही उचित है जिसमें दूसरे भी साथ दे सकें। महादेवको तेरी जगह लेने के लिए नहीं भेजा जा सकता। मेरा सुझाव कुछ और ही था। लेकिन अब वह भी अमलमें नहीं लाया जा सकता। तुझसे जो भूमिका निभाते बने, वह तू निभा। देशके युद्धका अभी तो आरम्भ ही है। कठिन समय तो अब आनेवाला है। देखें, ईश्वर मुझे कबतक चलाता है। कौन जाने वह मुझसे क्या काम लेना चाहता है। जैसा वह नचाता है, वैसा मैं नाचता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०२३)से

१. देखिए पृ० २७५-७७।
२. देखिए पृ० २७८, पा० टि० २; और अगला शीर्षक भी।

३२५. पत्र : सर जे० जी० लेथवेटको

सेवाग्राम, वर्धा
३० दिसम्बर, १९४०

प्रिय श्री लेथवेट,

आपके २७ तारीखके पत्रके[1] लिए, जो मुझे कल मिला है, धन्यवाद।

आपके पत्रमें एक बुनियादी सवाल उठाया गया है। मैं इस तथ्यको भली प्रकार समझ सकता हूँ कि वाइसराय महोदयका जो दृष्टिकोण है वही हो सकता था। मुझ-जैसे भारतीय राष्ट्रवादियोंको निराशा इस बातसे रही है कि ब्रिटिश अधिकारियोंको तसवीरका दूसरा पहलू भी देखने के लिए राजी नहीं किया जा सका। और इस तरह, सारी कोशिशोंके बावजूद, उनके और राष्ट्रवादियोंके बीच खाई बढ़ती जाती है। मौजूदा संघर्ष, बहुत-से अन्य प्रयासोंकी तरह, इस बातका सबसे ताजा प्रयास है कि ब्रिटिश साम्राज्यके निर्माताओंको हालातको राष्ट्रवादियोंकी नजरसे देखने के लिए राजी किया जाये। जबतक सचाई समझमें नहीं आती, इस तरहका प्रयास जारी रहना चाहिए। हमारे बीच और हमारे बारेमें उनका जो कार्य है उसपर निर्णय देनेवाले वे खुद ही क्यों बनें? कायदेसे तो अपने मुंह उपकारी बननेवालोंकी बजाय, उपकृतोंको ही उसपर निर्णय देना चाहिए। परन्तु अभी मैं एक ऐसे सवालपर, जिसपर फिलहाल ब्रिटिश शासकोंमें और हममें मतभेद है, इस कभी न खत्म होनेवाली बहसमें नहीं पड़ूंगा।

लेकिन उस मतभेदके कारण मेरी जबान बन्द नहीं की जानी चाहिए। मैंने मदद इसलिए चाही कि संचारके सभी साधन सरकारके नियन्त्रणमें हैं। भारतीय समाचारपत्रोंपर लगाई गई पाबन्दीके लिए मैं तैयार नहीं था। बाहरी प्रतिबन्धके लिए तो मैं तैयार था। श्री हिटलरके नाम मेरे पत्रके जिस ढंगसे मैंने चाहा था, उस ढंगसे विश्वमें प्रकाशित होने से युद्धके वास्तविक प्रयत्नोंपर क्या प्रभाव पड़ता है, इसके एकमात्र निर्णायक तो वाइसराय महोदय ही हो सकते हैं। परन्तु आपके पत्रसे मुझे ऐसा लगता है कि जबानबन्दी किसी उच्च नीतिके कारण नहीं बल्कि इसलिए लगाई गई है कि वाइसराय महोदयके विचारमें ब्रिटिश शासनका जो चरित्र-चित्रण मैंने किया है वह तथ्योंके अनुरूप नहीं है। यह एक खतरनाक सिद्धान्त है, जिसका तर्कसंगत परिणाम यह होगा कि ईमानदारीसे जाहिर किये गये उन सभी विचारोंको, जो राज्यके प्रमुख अधिशासक या उनके नायब या नायबोंकी मर्जीके खिलाफ होंगे, दबाया जायेगा। जाहिर है कि इसका युद्धके सवालसे कोई सम्बन्ध नहीं है। वाइसराय महोदयका ध्यान मैं इस तथ्यकी ओर खींचना चाहूँगा कि श्री हिटलरके

१. देखिए पृ० २७८, पा० टि० २।

नाम अपने खुले पत्रमें मैंने जो भाव व्यक्त किये हैं उन्हें मैं 'हरिजन' के स्तम्भोंमें और अन्यत्र अकसर व्यक्त करता आया हूँ। मेरी पुस्तिका 'हिन्द स्वराज्य'[1] या 'इंडियन होम रूल' में भी इसी तरहके भाव हैं।

यदि आपको उचित लगे तो मैं यह जानना चाहूँगा कि आपके पत्रका मेरा यह अर्थ क्या सही है।

मैं बता दूं कि समाचारपत्रोंको वितरित करनेके लिए मैंने उस पत्रकी नकलें तैयार करवा ली थीं। परन्तु प्रेस-सलाहकारके नोटके कारण मैंने उन नकलोंका वितरण रोक दिया है। मैंने एक नकल केवल अपने पुत्रको इस आदेशके साथ भेजी है कि फिलहाल इसे प्रकाशित न किया जाये। राष्ट्रीय ध्येयके, जैसा कि मैं उसे समझता हूँ, हितोंके अनुरूप जहाँतक भी सम्भव है, मैं न तो इसे चोरीसे प्रकाशित करना चाहता हूँ और न खुली अवज्ञाका ही सहारा लेना चाहता हूँ। अतः मैं आपकी ओरसे दो शब्दोंकी उत्सुकतासे प्रतीक्षा करूँगा।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

३२६. पत्र : ग्लैडिस ओवेनको

सेवाग्राम, वर्धा
३० दिसम्बर, १९४०

प्रिय ग्लैडिस,

तुम्हारा पत्र मिला। हमारे यहाँ भीड़ तो काफी है, किन्तु तुम्हारे लिए जगह बना ही लूँगा। ५ तारीखको या जब चाहो अवश्य आओ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१९७)से

१. देखिए खण्ड १०, पृ० ६-६९।
२. इस पत्रके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ७।

३२७. पत्र : लक्ष्मी सत्यमूर्तिको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
३० दिसम्बर, १९४०

प्रिय लक्ष्मी,

अंग्रेजीमें पत्र लिखने के लिए मुझे तुम्हें क्षमा तो करना ही पड़ेगा, लेकिन तुम जल्दी-जल्दी हिन्दी सीख लो। पिताजी[1] से कह देना कि अपने ऊपर आराम थोपने के बाद भी यदि निर्धारित अवधिमें वे पूर्ण स्वस्थ नहीं हो पाये तो शर्मकी बात होगी।

सप्रेम,

कुमारी लक्ष्मी
मार्फत श्री एस० सत्यमूर्ति
त्यागरायनगर
मद्रास

मूल अंग्रेजीसे : एस० सत्यमूर्ति पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। सी० डब्ल्यू० १०२७६ से भी; सौजन्य : तमिलनाडु सरकार

३२८. पत्र : मुहम्मद दिलावरखाँको[2]

३० दिसम्बर, १९४०

प्रिय मित्र,

हाँ, श्री खुर्शीदबहनने[3] मुझे आपके और आपकी उदारताके बारेमें बहुत-कुछ बताया है। क्या मैं आपके पत्रकी[4] एक प्रति आपके मित्रोंको भेज सकता हूँ?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. एस० सत्यमूर्ति; एक राजनीतिक कैदी, जिनका उस समय मद्रासके जनरल अस्पतालमें इलाज हो रहा था।

२. पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें बन्नूके डिप्टी कमिश्नर

३. दादाभाई नौरोजीकी पौत्री खुर्शीद नौरोजी

४. २४ तारीखके अपने पत्रमें दिलावरखाँने गांधीजी से शिकायत की थी कि बन्नू क्षेत्रमें कानून व व्यवस्था स्थापित करने में स्थानीय कांग्रेस कमेटीके सदस्य कोई सहायता नहीं कर रहे हैं।

३२९. पत्र : मणिलाल गांधीको

सेवाग्राम, वर्धा
१९४०[1]

चि० मणिलाल,

सिस्टर मेरी बार हमारे बीचकी एक अत्यन्त कर्मठ कार्यकर्त्री हैं। उन्हें घर ले जाना और उन्हें जो-कुछ मददकी जरूरत हो, देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९१६)से

३३०. पत्र : चिमनलाल न० शाहको

मौन दिवस [१९४०][2]

चि० चिमनलाल,

क्या तुमने मथुरादासको[3] उसका काम समझाने के लिए बुलाया था? नहीं बुलाया, तो कब बुलानेवाले हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०६६२)से

१. साधन-सूत्रके अनुसार
२. साधन-सूत्र (जी० एन०) में यह पत्र १९४० के पत्रोंके अन्तमें रखा गया है।
३. मथुरादास पुरुषोत्तम

३३१. पत्र : अरुणचन्द्र गुहको[1]

[२ जनवरी, १९४१ या उसके पूर्व][2]

[सत्याग्रहियोंकी] लम्बी-चौड़ी संख्या नहीं चाहिए। मैं दावेसे कहता हूँ कि सुयोग्य [सत्याग्रही] हों तो विजय सुनिश्चित है।

हमारा युद्ध तो अभी शुरू ही हुआ है और यह तो लम्बा चलेगा और श्रम-साध्य ही होगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१-१९४१

३३२. पत्र : के० सूर्यप्रकाश रावको

२ जनवरी, १९४१

आपने अपने पत्रमें जिस संस्थाका उल्लेख किया है, उसमें शामिल होने की आपको कोई आवश्यकता नहीं। आप स्वतन्त्र रहकर किसी संस्थाका सदस्य बने बिना ही रचनात्मक कार्य कर सकते हैं।[3]

आशीर्वाद सहित,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०३८४)से। सौजन्य : के० सूर्यप्रकाश राव

१ और २. यह पत्र बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्री अरुणचन्द्र गुहके पत्रके उत्तरमें था, जिन्होंने बंगाल प्रान्तमें सत्याग्रहियोंकी सूची तैयार करने के बारेमें लिखा था। यह दिनांक "कलकत्ता, २ जनवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. देखिए "पत्र : के० सूर्यप्रकाश रावको", पृ० २८५ भी।

३३३. पत्र : कुँवरजी खेतसी पारेखको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२ जनवरी, १९४१

चि० कुँवरजी,

तुम्हारा पत्र पढ़कर बहुत प्रसन्न हुआ। खान-पानमें सावधानी बरतकर अपना स्वास्थ्य सँभालना। पैसा तुम दे दोगे, यह मैं जानता हूँ।[1] कान्ति कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७४४) से। सी० डब्ल्यू० ७२४ से भी; सौजन्य : नवजीवन ट्रस्ट

३३४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२ जनवरी, १९४१

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे दो काफी लम्बे पत्र लगभग साथ-साथ मिले। तुम दोनों अकेले पड़ गये हो, यह तो अच्छा ही है। जो सत्यको साथ लिये हैं, वे अकेले होकर भी दुकेले हैं, और जो सत्यका विरोध करते हैं, वे करोड़ों हों तब भी बेकार हैं।

तारी तीन दिनसे मेरे पास है। खूब बीमार है। वह आजसे चौथे दिन अर्थात् ५ तारीखको दिल्ली जायेगी। सुशीला यहाँ है, वह उसे ले जायेगी। तारीके साथ शायद उसकी सखी जायेगी। मनुड़ी तो यहाँ है ही। उसकी लड़की[2] बड़ी खिलाड़ी है। फिर शारदा और उसका बच्चा, तथा निर्मला और उसकी बच्ची : इस प्रकार तीन बच्चे हो गये हैं।

बा काफी ठीक है। काम तो वह करती ही रहती है।

आश्रममें खड़े होने की भी जगह नहीं है, ऐसा कहा जा सकता है। सदा बहुत भीड़ रहती है।

जानकी देवीको मैंने कल यहाँ बुला लिया। उन्हें बवासीर है। उन्होंने आजसे उपवास शुरू किया है।

१. कुँवरजी पारेखको क्षय हो गया था और वे इलाजके लिए मैसूर सैनीटोरियम भेजे गये थे।
२. उर्मिला मशरूवाला

किशोरलालकी तबीयत अभी तो ठीक है।

अपनी तो मैं कहूँ ही क्या?

श्लेसिनका[1] पत्र आया था। कैलेनबैकका[2] इस बीच तो कोई पत्र नहीं आया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९१९)से

३३५. पत्र: साठेको

४ जनवरी, १९४१

प्रिय डॉ० साठये,

आपका सूत बहुत बढ़िया है। मुझे आशा है कि लिबर्टी हॉलमें[3] रहते हुए आपकी सेहत अच्छी रहेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९१९)से

३३६. पत्र: एस० अम्बुजम्मालको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
४ जनवरी, १९४१

चि० अम्बुजम[4],

तुमारा खत और किताब मिला। पुस्तक सुंदर है। हिंदि और कातन जारी है अच्छी बात है। तुमारे व्यथा मात्र छोड देनी है। सब सुखदुःख ईश्वरार्पण करना। रंगनायकी ठीक है।

बापुके आशीर्वाद

मूलसे: अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। सी० डब्ल्यू० ९६१६ से भी; सौजन्य: एस० अम्बुजम्माल

१. सोन्या श्लेसिन, जो दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजी की सेक्रेटरी थीं; देखिए खण्ड २९, पृ० १३७-३८।

२. हरमन कैलेनबैक, एक जर्मन वास्तुकार, जो दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजी के सहयोगी थे।

३. शब्दार्थ 'स्वातन्त्र्य मन्दिर'; यहाँ आशय जेलसे है।

४. एस० श्रीनिवास अय्यंगारकी पुत्री

३३७. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
[५ जनवरी, १९४१][1]

चि० अम्बुजम[2],

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे भेजे हुए फल मुझे नियमित रूपसे मिल रहे हैं। तुम्हें मुझे फलोंके दाम बताने होंगे। यदि फल महँगे हैं तो मुझे तुमसे नहीं लेने चाहिए। चाहे फल भेंटमें ही हों, मुझे वहींसे मँगाने होंगे जहाँ सस्ते मिलते हों। इस समय मेरे पास तीन मरीज हैं।

तुम्हारा तर्क ठीक है और नहीं भी है। मैं तो अन्धविश्वासके बजाय अस्पताल ही पसन्द करूँगा। किन्तु एक मध्यम मार्ग भी तो है — रोगियोंका घरपर ही उचित इलाज करना चाहिए और विश्वासके साथ उसके परिणामकी प्रतीक्षा करनी चाहिए। राजाओंको भी एक-न-एक दिन जाना पड़ता है। अस्पतालोंमें भी हजारों लोग मरते हैं। यह सब तो जुएकी बाजी है। जीवनकी कुंजी तो भगवानके हाथमें है। हम तो उसके नियमोंका पता लगाकर उनका पालन-भर कर सकते हैं। मुझे तो आशा नहीं कि कभी ऐसा समय आयेगा कि प्रत्येक ग्रामवासीको उसके चाहने पर अच्छा अस्पतालका इलाज नसीब हो सकेगा। किन्तु मैं ऐसे भविष्यकी अवश्य आशा रखता हूँ जब उसे अपने घरमें ही उचित सलाह मिल सकेगी। किन्तु वह समय भी अभी दूर है।

आशा है, तुम सब अच्छे होगे।

सप्रेम,

बापू

श्री अम्बुजम अम्माल
अमजदबाग
लुज, माइलापुर
मद्रास

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६१५)से। सौजन्य: एस० अम्बुजम्माल

1. डाककी मुहरसे
2. साधन-सूत्रमें यह देवनागरीमें है।

३३८. सत्याग्रहियोंके लिए निर्देश[1]

[५ जनवरी, १९४१ या उसके पूर्व][2]

कोई भी सत्याग्रही, स्त्री या पुरुष, सत्याग्रहके लिए रवाना होने के बाद, गिरफ्तार न होने पर भी वापस घर नहीं लौटेगा, बल्कि गाँव-गाँव घूमकर युद्ध-विरोधी नारे लगायेगा और जहाँ आवश्यक होगा, युद्ध-विरोधी सभाओंमें भाषण देगा और रचनात्मक कार्य करेगा।

यदि किसी कारणवश उसे घर लौटना आवश्यक लगे तो उसे फिरसे सत्याग्रह करने के लिए विशेष अनुमति लेनी पड़ेगी।

सत्याग्रह करने के बावजूद यदि गिरफ्तारी न हो तो उसे जिला-मजिस्ट्रेटको नये सिरेसे सूचना देनेकी आवश्यकता नहीं है।

सत्याग्रही अपने अभियानके दौरान किसी सवारीका उपयोग नहीं करेगा। उसे हड़बड़ी भी नहीं करनी है। वह धीरे-धीरे आगे बढ़े और थोड़ी ही दूरी तय करे। आवश्यकता पड़ने पर वह एक स्थानपर एक दिनसे अधिक भी टिक सकता है।

सत्याग्रहीको किसी व्यक्ति या सवारीको जबरदस्ती नहीं रोकना चाहिए और न ही उसे बिना बुलाये किसीके अहातेमें घुसकर नारे लगाने चाहिए।

सत्याग्रहीको अधिकारपूर्ण स्वरमें नहीं, बल्कि समझाने-बुझानेके स्वरमें नारे लगाने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१-१९४१

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह गांधीजी के निर्देशोंके अन्तर्गत नागपुर जिला कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष द्वारा नागपुरमें सत्याग्रहियोंके लिए जारी किया गया।

२. सत्याग्रह क्रिसमसके दिनोंमें स्थगित रहने के बाद ५ जनवरी, १९४१ को फिरसे आरम्भ कर दिया गया था; देखिए पृ० २६०-६१।

३३९. पत्र : पुरुषोत्तमदास टंडनको

सेवाग्राम
६ जनवरी, १९४१

भाई टंडनजी,

यह खत प्रातःकालमें ४ बजेकी प्रार्थनाके पहले लिख रहा हूं। कल मैंने श्रीमन, नाणावटी,[1] पेरिनवहन,[2] दीक्षित[3] और काकासाहेबसे बातें कीं। अब मौलाना साहेब तो नहीं आयेंगे। मुझे ऐसा लगता है कि मुझे सम्मेलनसे हट जाना चाहिये। मैंने जो एक नीति इख्तियार करवाई थी उसका करीब-करीब पूनामें नाश हुआ है। सम्मेलनको परिवर्तन करने का संपूर्ण अधिकार था। प्रश्न मात्र मेरे कर्तव्यका रह जाता है। मुझे तो धर्मसंकट है। आप आईये और निर्णय करने में मदद दीजिये। मैं सम्मेलनसे भागना नहीं चाहता। रहूं भी कैसे? मैं मिश्रित भाषा का पक्षपाती हूँ। मेरे नजदीक नामकी कोई किम्मत नहीं है। कामकी ही है। अगर मैं सम्मेलनमें रहूं तो मैं अपर्नातमें भागीदार बनता हूं। छोड़ू तो संभव है झगड़ेका मूल बनुं। अगर आ सकते है तो शीघ्र आईये।

स्वास्थ्यकी रक्षा करते हुए आईये।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९९७) से

१. अमृतलाल नानावटी
२. पेरीनबहन कैप्टेन
३. सीताचरण दीक्षित

३४०. पत्र : डॉ० एस० के० वैद्यको

६ जनवरी, १९४१

भाई वैद्य[1],

तुम चिन्ता क्यों करते हो? राजकुमारीने मुझसे बात की है। तुम्हारे वापस लौट जाने में न कोई शर्मिन्दा होने की बात है, न कोई नुकसान है। भूल करने के बाद भी उससे चिपके रहना बेवकूफी मानी जाती है, और भूल जान लेने के बाद तुरन्त उसे सुधारना होशियारी मानी जाती है। तुम-जैसे एकान्त-प्रिय व्यक्तिके लिए यहाँका भीड़-भड़क्का असह्य हो सकता है। बम्बईमें ज्यादा तैयारी करके फिर वापस आओ, यह ज्यादा अच्छा है। अगर चेतकर वापस बम्बई चले जाओ, तो सम्भव है, कुछ महीनों या एक बरसमें वापस लौट सको। इस बीच जब भी तुम दो-चार दिन के लिए यहाँ आना चाहो, तब आ सकते हो। सब-कुछ सुन लेने के बाद मुझे तो लगता है कि तुम आज ही चले जाओ तथा अपनी तबीयतको मत बिगाड़ो। मेरी इच्छा तो यह है कि तुम्हें पूर्ण शान्ति मिले, जिससे तुम पूर्ण सेवा कर सको। तुम बम्बईमें रहकर भी मेरा ही काम करोगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७४२) से

३४१. पत्र : डॉ० एस० के० वैद्यको[2]

[६ जनवरी, १९४१ के पश्चात्][3]

मुझे कोई जल्दी है ही नहीं। तुम्हारी शान्ति बनी रहे, तो जरूर रहो। तुम जाओ,[4] तो स्वस्थ होकर कुछ समय बाद सबको लेकर आ सकते हो। लेकिन यह तो एक सुझाव-मात्र है। वैसे जो तुम्हारी इच्छा हो वही मेरी इच्छा है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७४३) से

१. एक नामी रोग-निदान-विशेषज्ञ
२ और ३. यह पत्र एस० के० वैद्यके ६ जनवरीके लिखे पत्रपर ही लिखा गया था।
४. बम्बईको; देखिए पिछला शीर्षक।

३४२. पत्र : सर रॉवर्ट ई० हॉलैंडको

सेवाग्राम, वर्धा
७ जनवरी, १९४१

प्रिय श्री हॉलैंड,

आपके पत्र और उसमें दी गई महत्त्वपूर्ण सूचनाके लिए धन्यवाद। आप भरोसा रखें कि मैं इस विषयमें आवश्यक कार्रवाई करूँगा।

यदि आपको उत्तरकी ओर जाते हुए वर्धामें उतरना सुविधाजनक हो तो मुझे आपसे भेंट करके बड़ी प्रसन्नता होगी।

आपको यह जानकर दुःख होगा कि मणिलाल कोठारी[1] अब नहीं रहे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६६६) से

३४३. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सेवाग्राम
८ जनवरी, १९४१

भाई सतीशबाबु,

तुमारा खत मिला है। जाजूजी[2] ने कुछ लिखा है। मैंने देखा नहिं है। अन्नदाजी देखना चाहे और जब देखना चाहे, बगैर रोकटोकके बताओ।

ये दो पुरजे तुमारे देखने के लिये भेजता हूं। उसे वापस नहीं करना है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३८) से

१. इनकी मृत्यु ११ अक्तूबर, १९३७को अहमदाबादमें हुई थी।
२. श्रीकृष्णदास जाजू, अ० भा० चरखा संघके मन्त्री

३४४. सत्याग्रहियोंके लिए निर्देश

सेवाग्राम

१० जनवरी, १९४१

इस संघर्षके सिलसिलेमें एक बड़ा गम्भीर प्रश्न मेरे सामने है। कितने ही स्थानोंपर मजिस्ट्रेट सत्याग्रहियोंपर भारी जुर्माना ठोंक रहे हैं और कुछ मामलोंमें तो कारावासका विकल्प भी नहीं है। सत्याग्रहियोंपर चाहे जो भी दण्ड लगाया जाये, उसकी वे न शिकायत कर सकते हैं और न ही उन्हें करनी चाहिए; और कोई भी सरकार हमेशा मानवीय स्वभावकी दुर्बलताओंका लाभ उठायेगी। अभी तक मैंने सत्याग्रहियोंको यही सलाह दी है कि वे जुर्माने स्वेच्छापूर्वक अदा न करें और यह कि अधिकारियोंको कुर्की द्वारा जुर्मानोंकी वसूली करने दी जाये। पिछले संघर्षके दौरान इसके परिणामस्वरूप लोगोंके दिलोंमें बहुत ज्यादा कटुता और जलन पैदा हुई थी। जिन्होंने कौड़ीके मोलपर चल या अचल सम्पत्ति खरीदी वे जनताकी दुर्भावनाके शिकार हुए। मैं आशा करता हूँ कि यदि सरकार अचल सम्पत्तिको हाथ लगाती है तो वह उसे बेचेगी नहीं बल्कि जब्त रखेगी। क्योंकि जब भी संघर्ष समाप्त होगा, अचल सम्पत्ति अन्ततः वास्तविक स्वामियोंको, अर्थात् सत्याग्रहियोंको, वापस दे दी जायेगी। बम्बईकी पिछली सरकारको मालूम है कि अचल सम्पत्तिके दूसरे हाथोंमें चले जाने के बाद उसको सत्याग्रहियोंको लौटाना सरकारके लिए कितना कठिन पड़ा था। किन्तु जुर्मानोंके विषयमें मैंने जो तर्क दिया है उसमें मुझे एक बातका एहसास हुआ है, जिसे मेरे तर्कका एक दोष भी कहा जा सकता है। अब मुझे ऐसा लगता है कि जिस प्रकार सत्याग्रहीसे कारावासका स्वागत करने की अपेक्षा रखी जाती है उसी प्रकार उससे अन्य प्रकारके दण्डकी, जैसे जुर्मानेकी भी, अपेक्षा की जाती है। वह अपने लिए जो भी दण्ड स्वीकार करता है उसे हर्षपूर्वक सहना भी चाहिए। इसलिए जब किसी सत्याग्रहीपर जुर्माना होता है और वह उसे देने की स्थितिमें भी है तो उसे स्वेच्छासे जुर्माना देना चाहिए। इसका परिणाम सहज ही यह हो सकता है कि सरकार ऐसे व्यक्तिपर बार-बार जुर्माना लगायेगी और यदि वह सत्याग्रह करता ही जाये तो उसकी कुछ भी सम्पत्ति नहीं बचेगी। इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। सच तो यह है कि सविनय अवज्ञाका सार यही है कि अधिकारी सत्याग्रहीकी सारी सम्पत्ति जब्त कर लें अथवा न करें, इसके प्रति वह उदासीन बन जाता है। इसलिए जिन लोगोंके पास सम्पत्ति है यदि वे लोग सविनय अवज्ञामें भाग लेना चाहते हैं तो उन्हें इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि सरकार उनकी सारी सम्पत्ति ले सकती है। हमारा यह आन्दोलन तबतक खत्म नहीं होनेवाला है, जबतक हमें

सफलता नहीं मिल जायेगी। इसलिए सरकार जिन व्यक्तियोंपर जुर्माना करती है यदि उनके पास नकदी हो तो उन्हें चाहिए कि वे जुर्माना भर दें और यदि न हो और सरकार उनकी सम्पत्ति जब्त कर लेती है तो उनके मित्रोंको उक्त सम्पत्ति खरीदने की छूट होनी चाहिए। इससे दूसरोंके नुकसानसे लाभ उठानेवालोंकी लोभ-वृत्तिपर अंकुश लगेगा और लोगोंमें दुर्भावना नहीं फैलेगी। मैंने ऊपर जो तर्क दिया है उसका एक सहज परिणाम यह भी होगा कि जैसे मैंने यह कहा है कि सरकारने सत्याग्रहियोंकी जो अचल सम्पत्ति जब्त कर ली है अथवा बेच दी है वह संघर्षके अन्तमें सत्याग्रहियोंको वापस लौटानी होगी, उसी तरह जुर्मानोंके रूपमें अदा की गई राशिकी पाई-पाई भी उन्हें देनी पड़ेगी। हाँ, यह बात जरूर है कि जुर्माने भरनेवाले सत्याग्रहियोंको तबतक सत्याग्रह करते जाना होगा जबतक उन्हें जेलमें बन्द नहीं कर दिया जाता। इससे यह अर्थ भी निकलता है कि जो सम्पत्तिवान व्यक्ति अपनी सम्पत्ति खोने का खतरा नहीं उठाना चाहते उन्हें संघर्षमें शामिल नहीं होना चाहिए। तथापि मैं आशा रखता हूँ कि जिन देशभक्तोंको सविनय अवज्ञाकी प्रभावकारी शक्तिमें विश्वास है उन लोगोंको अपनी सारी धन-सम्पत्ति खोने में कोई हिचकिचाहट नहीं होगी। वे सेठ जमनालालके ये शब्द याद रखें :

> मैंने बहुत समय पहले ही महसूस किया था कि धन-सम्पत्तिका सुख भोगने और मनुष्य-जीवनकी सुरक्षाकी खातिर कुछ थोड़े-से लोगोंको बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ी है और अब भी पड़ रही है। वह कीमत है करोड़ों बुभुक्षितों का रक्त और उन लोगोंका पौरुष जिन्हें अपनी, अपने परिवारकी और अपने देशकी सुरक्षाके लिए अपना खून बहाने को तत्पर रहना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन, सं० ६, १९४२, फाइल सं० ३/४२/४१–पॉलि० (१)। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

३४५. पत्र : जगन्नाथको[1]

१० जनवरी, १९४१

मैंने तुम्हारा नाम ध्यानमें रख लिया है। तुम्हारी बारी आने पर मैं अवश्य ही तुम्हें [सत्याग्रहके लिए] भेजूंगा। मैं चाहता हूँ कि तबतक तुम रचनात्मक कार्य करो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९८६) से। सौजन्य : जगन्नाथ

१. सर्वेन्ट्स ऑफ द पीपुल सोसाइटी, लाहौरके सदस्य श्री जगन्नाथने दिनांक "सेवाग्राम, १० जनवरी, १९४१" को एक पत्रमें गांधीजीसे अपना नाम "पंजाबके सत्याग्रहियोंकी सूचीमें" दर्ज करवाने की अनुमति देने का अनुरोध किया था।

३४६. सन्देश : पंजाबके कांग्रेसियोंको[1]

[१० जनवरी, १९४१ या उसके पश्चात्][2]

निस्सन्देह खिन्न हो उठने-जैसी कोई बात नहीं है। मैंने पंजाबके कांग्रेसियोंकी कभी भर्त्सना नहीं की है। मेरा विश्वास है कि पंजाबका औसत कांग्रेसी उतना ही अच्छा है जितना कि भारतके किसी भी प्रान्तका कांग्रेसी। पंजाबके कांग्रेसी हिम्मत रखें और कताई करके तथा हरिजनों तथा दूसरोंको — हिन्दुओं, मुसलमानों, सिखों इत्यादिको — अपना सगा भाई मानकर अपनी योग्यता सिद्ध करें। वे अहिंसाके गुणमें जीवन्त आस्था रखें तो वे सब सत्याग्रहके लिए चुन लिये जायेंगे।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९८८) से। सौजन्य : जगन्नाथ

३४७. स्वतन्त्रता-दिवसके लिए निर्देश[3]

११ जनवरी, १९४१

मैं आशा रखता हूँ कि भारतका प्रत्येक स्त्री-पुरुष, चाहे वह कांग्रेसी हो या न हो, इस संघर्षकी गम्भीरताको समझेगा और आगामी स्वतन्त्रता-दिवसपर देशके करोड़ों लोगोंकी सेवामें अपना जीवन अर्पित करने का संकल्प करेगा। अहिंसापर आधारित स्वराज्यका अर्थ केवल सत्ताका हस्तान्तरण नहीं है। इसका अर्थ होगा लाखों परिश्रम करनेवाले लेकिन भूखे लोगोंकी आर्थिक दासताकी भयानक बुराईसे मुक्ति। यह तभी सम्भव है जब चन्द सम्पत्तिवान लोग, करोड़ों गरीब लोगोंके साथ अपना तादात्म्य स्थापित करेंगे, और उनकी खातिर अपना सब-कुछ न्योछावर करने को तत्पर रहेंगे। आजका दिन हमारे लिए भाईचारेका, अपने हृदयोंसे अस्पृश्यताकी भावना निकाल फेंकने का, मादक द्रव्योंका त्याग करने का, स्वयं सूत कातने,

१ और २. यह सन्देश जगन्नाथके जरिये उनके १० जनवरीके उस पत्रके उत्तरमें भेजा गया था, जिसमें उन्होंने अनुरोध किया था : "लाहौरके मेरे एक मित्रने, जो स्वयं एक जिम्मेदार तथा अच्छे जानकार कांग्रेसी कार्यकर्ता हैं और जिनका समग्र पंजाबके कांग्रेसजनोंसे सतत सम्पर्क है, मुझे लिखा है कि पंजाबमें हालमें हुई घटनाओंसे वहाँके कांग्रेसियोंका मन खिन्न हो उठा है और उन घटनाओंको लेकर वे सोचमें पड़ गये हैं तथा उन्हें लगता है कि वे आपकी दृष्टिमें गिर गये हैं और यह कि शायद आप उनकी ओरसे निराश भी हो गये हैं। आपके दो शब्दोंसे उन्हें ढाढ़स बँधेगा। . . ."

३. २६ जनवरीको मनाया जानेवाला

खादी तथा ग्रामोद्योगोंकी बिक्री और प्रचार करने का दिन होना चाहिए। उस दिन कोई सविनय अवज्ञा नहीं होगी, क्योंकि उस दिन हमें अपनी सभाओं, जुलूसों, प्रभात-फेरियोंमें कोई विघ्न नहीं पड़ने देना चाहिए। दिवसका आरम्भ प्रभात-फेरी, उसके बाद ध्वजोत्तोलन तथा ध्वजाभिवादनसे किया जा सकता है। शामको जुलूस निकलें जिनका अन्त सार्वजनिक सभाओंमें हो जहाँ प्रतिज्ञा[1] के प्रत्येक वाक्यांशका क्रमसे अर्थ समझाया जाये और सभापति श्रोताओंको वह प्रतिज्ञा दिलायें तथा वे सब गम्भीर भावसे उसे ग्रहण करें। जहाँ पहलेसे ही कोई प्रतिबन्ध हों, वहाँ उनका पालन किया जाये। प्रतिबन्धोंका इस तरह स्वेच्छासे पालन करने से सविनय अवज्ञा करने के अधिकारको शक्ति प्राप्त होती है।

प्रतिज्ञा २[2]

यह देखते हुए कि व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाकी शुरुआत हो ही चुकी है और पूरे भारतवर्षमें भारी संख्यामें कांग्रेसजन गिरफ्तार हो चुके हैं, प्रत्येक भारत-वासीका यह विशेष कर्त्तव्य बन जाता है कि वह दुगने उत्साहके साथ रचनात्मक कार्यक्रममें भाग ले जिसे पूरा किये बिना हम किसी भी प्रकारकी सविनय अवज्ञा — सामूहिक अथवा व्यक्तिगत — द्वारा स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते और न ही उसे बनाये रख सकते हैं। ठोस शब्दोंमें कहें तो रचनात्मक कार्यक्रमका अर्थ है हाथ-कताई और खादीको सार्वजनीन बनाना और ग्रामोद्योगों और ग्रामोत्पादनोंको लोकप्रिय बनाना। हम यह भी मानते हैं कि अहिंसा-भावके प्रभावकारी प्रसार द्वारा साम्प्रदायिक एकता स्थापित होगी और हर प्रकारकी अस्पृश्यता दूर हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन, सं० ६, १९४२। फाइल सं० ३/४२/४१–पॉलि० (१); सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

३४८. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
११ जनवरी, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा तार आ पहुँचा है। तुम्हें पत्र लिखने का कल मेरा पूरा इरादा था। लेकिन बेकार। तीन बजे मेल-मुलाकातका जो सिलसिला शुरू हुआ वह कहीं शामके

१ और २. यहाँ प्रतिज्ञाका केवल अन्तिम अनुच्छेद दिया गया है। गांधीजी ने पहले-पहल जनवरी १९३० में प्रतिज्ञाका मसौदा बनाया था; देखिए खण्ड ४२, पृ० ३९५-७। दिसम्बर १९३९ में कांग्रेस कार्य-समिति द्वारा उसमें सुधार किये जाने पर (देखिए खण्ड ७१, परिशिष्ट १) उसमें यह अनुच्छेद भी जोड़ दिया गया।

भोजनकी दूसरी घंटीके बाद जाकर खत्म हुआ। इस प्रकार कामकी भीड़में तुम्हारी बारी ही नहीं आई। किन्तु तुम्हारे नाम आये हुए कुछ पत्र अवश्य मैंने पता बदलकर तुम्हें भेज दिये थे। उससे तो कुछ सन्तोष मिला होगा।

उम्मीद है कि वहाँ[1] तुम्हारा समय लाभप्रद रूपसे बीतता होगा। तुम अम्बुजमसे मिलने की बातपर आग्रह रखना और हिन्दी प्रचार कार्यालय भी अवश्य जाना।

जो फल तुम लाओ उनकी कीमत भी जान लेना। नारियल तो तुम जरूर लाओगी, साथ ही नीबू (खट्टे) भी लेती आना। वर्धाके बाजारमें नीबू बहुत कम मिल रहे हैं। दासके प्रयोगका प्रसार हो रहा है। तुम्हारे यहाँ रहते जितना उत्साह था उससे अधिक उत्साहसे मैं भी इसमें शामिल हो गया हूँ। मैंने पकाई हुई तरकारियाँ छोड़ दी हैं और रक्तचाप अद्‌भुत रूपसे घट गया है। जाँचके समय तीनों बार प्रकुंचनमें लगभग १५० या उससे कम, और अनुशिथिलनमें १०० ही निकला। कारण है पेटमें वायुका न होना।

जिस परिपत्रका[2] मैं मसौदा तैयार कर रहा था वह आज पूरा हो गया है। चाहो तो वहीं पढ़ लेना या फिर लौटते समय यहाँ आकर पढ़ना।

शास्त्रीजी कुछ अच्छे हैं। अपनी मेजबानको मेरी याद दिलाना।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९९६)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३०५ से भी

३४९. सत्याग्रहियोंके लिए निर्देश

सेवाग्राम, वर्धा
१२ जनवरी, १९४१

मौलाना साहबने अपनी अप्रत्याशित गिरफ्तारीसे[3] बहुत पहले घोषणा की थी कि वे सत्याग्रह करने से पहले सेवाग्राम आयेंगे और मेरे साथ साम्प्रदायिक प्रश्नोंसे सम्बन्धित और अनेक दूसरे मामलोंपर परामर्श करेंगे। किन्तु ऐसा होना नहीं था। जो शासक जनता द्वारा मनोनीत न हों वे अपने इरादे जनतापर प्रकट नहीं करते। वे तो उन्हें अपने कार्योंसे ही प्रकट होने देते हैं। मौलाना साहबकी जो (कांग्रेसके दृष्टिकोणसे) असमय गिरफ्तारी हुई उसका ठीक अर्थ शायद यही समझा जा सकता

१. मद्रासमें
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. ३ जनवरीको

है कि सरकार उन्हें मुझसे मिलने देना नहीं चाहती थी। किन्तु इसमें शिकायतका कोई कारण नहीं। सरकारसे यह आशा तो नहीं की जा सकती कि वह कांग्रेसकी सुविधाका ध्यान रखे। किन्तु कांग्रेसजनोंको यह समझ लेना भी उचित है कि शासक कांग्रेसकी अहिंसापर विश्वास नहीं रखते। वे मुझे धूर्त तो शायद नहीं, समझते, किन्तु मूर्ख अवश्य समझते हैं। इसमें तो वे उन अन्य लोगोंका अनुसरण-मात्र करते हैं जिनके मतमें कांग्रेसी मुझे धोखा दे रहे हैं और उनकी अहिंसा उनकी हिंसात्मक उपायोंकी तैयारी यदि न भी हो तो भी अपनी हिंसावृत्तिको छिपाने के लिए वे इसकी आड़ अवश्य लेते हैं। इस कारण हम अपने संघर्ष द्वारा यह सिद्ध कर दें कि हमारी अहिंसा न तो हिंसा या घृणावृत्तिको छिपाने का साधन है और न ही आसन्न या दूर भविष्यमें हिंसात्मक उपायोंकी तैयारी है। अतएव हमारी सफलता भारी संख्यामें लोगोंके जेल जाने में सन्निहित नहीं है, बल्कि इसमें सन्निहित है कि हम अपने कार्यो द्वारा समग्र रूपसे कितनी शुद्धता और अहिंसात्मकता सिद्ध कर पाते हैं। संख्याका महत्त्व तो तभी है जब वे सब लोग बिलकुल उपयुक्त किस्मके हों। यदि गलत प्रकारके लोग सत्याग्रही हों तो वे निश्चय ही आन्दोलनको हानि पहुँचायेंगे।

मेरे लिए पीछे मुड़ने का कोई सवाल नहीं, चाहे मेरे सत्याग्रहियोंकी संख्या अधिक हो या कम। मैं मूर्ख किन्तु शक्तिशाली कहलाना पसन्द करूँगा, लेकिन धूर्त और कायर कहलाना नहीं। चाहे सारा संसार मेरे दावेको ठुकरा दे, किन्तु मैं तो फिरसे यही कहूँगा कि यह संघर्ष ईश्वर-प्रेरित है और मैं उसके हाथोंका तुच्छ साधन-मात्र हूँ। उसके मार्ग-दर्शनके बिना, चाहे वह सत्य हो या काल्पनिक, मैं इस भारको, जिसे समझा जाता है कि मैं वहन कर रहा हूँ, वहन करने में अपने-आपको नितान्त असमर्थ पाऊँगा।

अब मैं यह बताता हूँ कि इस संघर्षके विषयमें मेरे क्या विचार हैं। मौलाना साहब चले गये हैं किन्तु उनका कोई उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं किया जायेगा। प्रत्येक प्रान्तमें कार्यवाहक अध्यक्षकी नियुक्तिकी पुष्टि मुझसे करा ली जाये। ऐसे अध्यक्ष हों ही, यह भी कोई आवश्यक नहीं है। गाँवसे लेकर प्रान्तीय समितियोंतक के सभी सदस्योंमें से प्रतिनिधि कांग्रेसजनोंको जेल जाना है, बशर्ते कि वे स्वस्थ हों और मैंने उनके नामोंपर अपनी रजामन्दी दी हो। किन्तु यदि उन्हें स्वास्थ्य या किसी और कारणसे ऐसी रजामन्दी न मिले, तो उनसे काम करने की आशा भी नहीं की जा सकती — सिवाय कुछ विरले व्यक्तियोंके मामलेमें और वह भी मेरी रजामन्दीके बाद। जेल चले जाने-वालों की जगह नये व्यक्ति चुनने के लिए कोई नये निर्वाचन न हों। इसके पीछे विचार यह है कि अन्ततः प्रत्येक कांग्रेसजन अपनी जिम्मेदारीपर स्वयं कदम उठाये। वह स्वयं अपना ही अध्यक्ष बने, किसी दूसरेका नहीं। किसी पूर्णरूपेण अहिंसायुक्त संस्था या समाजके विषयमें मेरी यही कल्पना है। जिन्होंने कष्ट-सहनकी कला सीख ली है उन्हें निर्देशोंकी बहुत कम ही आवश्यकता होगी। सभीको मालूम है कि सविनय अवज्ञा करने की योग्यता पाने के लिए किन शर्तोंको पूरा करना होता है। कोई भी समझदार और शरीरसे स्वस्थ वयस्क व्यक्ति उन शर्तोंकी पूर्ति आसानीसे कर सकता है। जबतक

मेरी गिरफ्तारी नहीं होती, तबतक कामके विषयमें कोई दुविधा नहीं हो सकती, क्योंकि मेरी सहमतिके बिना कोई व्यक्ति सीधी कार्रवाई नहीं कर सकता। गिरफ्तारीके लिए प्रयत्न न करने का मेरा इरादा तो कायम है किन्तु शासकोंका इरादा इससे भिन्न हो सकता है। यदि मैं गिरफ्तार हो गया तो वह सबके लिए बाह्य प्रतिबन्धोंसे, चाहे वे कितने ही अहिंसामय हों, मुक्त होने का सच्चा अवसर होगा और साथ ही उन सबकी सच्ची परीक्षा भी हो जायेगी। मैं उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं करूँगा। इस प्रकार मेरी गिरफ्तारी होनेपर सभीपर अपनी-अपनी अन्तरात्माका अनुशासन ही लागू होगा। अतएव सिद्धान्त-रूपसे एक समय ऐसा आना सम्भव है जब लाखों-करोड़ोंको सत्याग्रह करने की अपनी योग्यताका निर्णय स्वयं करना होगा।

यह संघर्ष ऐसा नहीं कि इसका शीघ्र अन्त किया जा सके। हम एक ऐसी सत्तासे लोहा ले रहे हैं जो स्वयं एक हठधर्मी शत्रुके साथ अपनी जीवन-रक्षाके लिए जूझ रही है। इस सत्ताका एक ऐसे देशसे नाता है जिसने कभी हार नहीं जानी। जिनका जीवन खतरेमें है वे या तो अपनी दृष्टिमें सामान्य जँचनेवाले तत्त्वोंके मामलेमें शीघ्र झुक जाते हैं या फिर अपनी दृष्टिमें मूलभूत जँचनेवाले तत्त्वोंके लिए अन्ततक लड़ते रहते हैं। उस राष्ट्र द्वारा हमारी माँगका ठुकराया जाना इस बातका द्योतक है कि वे हमारे संघर्षको दूसरी श्रेणीमें रखते हैं। अतएव हमारा संघर्ष जारी रहना चाहिए, कमसे-कम यूरोपीय संघर्षके अन्ततक। अतः अल्पकालीन कारावासका दण्ड पानेवाले सभी सत्याग्रहियोंको समझ लेना चाहिए कि हर बार रिहा होते ही उन्हें तबतक फिरसे सत्याग्रह करते जाना है जबतक कि संघर्षका अन्त न हो जाये।

दो कार्य-रीतियाँ ध्यान देने योग्य हैं। कारावासका विकल्प मिले बिना जुर्मानेके दण्डके विषयमें मैं एक परिपत्र[1] निकाल चुका हूँ।

दूसरा सवाल सत्याग्रहियोंकी गिरफ्तारी ही न होने की दशामें उठता है। दोनों स्थितियोंमें प्रत्येक सत्याग्रहीको जगह-जगह रुकते हुए दिल्लीकी दिशामें कूच करते जाना है। वे प्रतिदिन दो या तीन मील भी चल लें तो ठीक है। ग्रामीण जो-कुछ भी भोजन दें उसीको स्वीकार करते हुए उन्हें पैदल चलते जाना है।

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन, सं० ६, १९४२। फाइल सं० ३/४२/४१–पॉलि०(१); सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. देखिए पृ० ३०२-३।

३५०. पत्र : कृष्णनाथ शर्माको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१२ जनवरी, १९४१

प्रिय शर्मा,

अपनी शोकसन्तप्त पुत्रीको मेरा आशीर्वाद देना और उससे कहना कि होनी-पर शोक न करे। मुझे खुशी है कि तुम इस क्षतिको साहसपूर्वक झेल रहे हो। जबतक तुम्हारी बेटी स्थिरचित्त न हो जाये, तबतक सविनय अवज्ञामें भाग लेना स्थगित रखो।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री कृष्णनाथ शर्मा, एम० एल० ए०
बार एसोशिएशन
जोरहाट, आसाम

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२३३)से

३५१. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१३ जनवरी, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा ९ का खतका उत्तर लिखने बैठा तो तुमारा आजका खत नजर आया। आजका खतसे तुमने हि अगले खतका उत्तर दे दिया है। अहिंसा दूसरी तरह काम हि नहीं करती है। जो दोष तुमने बताये हैं वे हैं लेकिन हमारा संघ हि शंभु संघ है। अनेक प्रकारके मनुष्य आते जाते हैं। उनका ताप सहन करें तो संसारका सहन कर सकेंगे। उनको साथ रखकर आनंदसे रह सकें तो कोई रोज अहिंसक तंत्रकी आशा रख सकते हैं।

कुछ नियम तो हैं हि। उसके अमल कैसे कर सकते हैं यह प्रश्न है। जबतक मैं हूं तबतक तो उसका अमल मैं जैसे करूं वही हमारा कानून हो सकता है। देखो, धैर्यसे सब उलझनें सुलझ जायगी। अपनी टूटीओं [त्रुटियों] पर दुःखित न हो। हैं इतना ज्ञान बस है। दूर करने का प्रयत्न तो करते हि हो। तुमारा कल्याण हि होगा। फिर भी कहना है तो कहो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३६८)से

३५२. पत्र : अमतुस्सलामको[1]

सेवाग्राम, वर्धा
[१४ जनवरी, १९४१ के पूर्व][2]

वेटी,

तू क्यों खत लिखेगी? ठीक ही रहेगी तो तेरे खतसे भी मुझे अधिक मिला समझूंगा। वहीदका गुस्सेका खत मुझे मिला। वह अगर तूने देखा है तो तुझे उसके दुःखका अन्दाजा मिल सकेगा। मुझको उसके गुस्सेसे दुःख नहीं हुआ। उसको ऐसा गुस्सा करने का हक था। अब मेरी सलाह है कि मां की सब व्यवस्था करके और तू खुद अच्छी होकर ही आयेगी।

मेरी तबीयत अच्छी रहती है। कंचन एक ओर, और दूसरी ओर आभा सोती है। खान साहब तेरे बारेमें लिखते हैं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९८)से

३५३. पत्र : अमतुस्सलामको

१४ जनवरी, १९४१

बेटी अमतुस्सलाम,

मैंने तुझे दुःख तो दिया, लेकिन मैंने ठीक ही किया। रामेश्वरका[3], देवाका[4] और आनन्दका[5] खत तेरे पर है। मां अच्छी होगी। रास्तेमें कुछ तकलीफ नहीं [हुई] होगी। सुशीला मिली होगी। तार दिया था।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६५)से

१. प्रस्तुत पत्र अमतुस्सलामके भाई अब्दुल वहीद खाँके उस पत्रके जवाबमें लिखा गया था जिसमें उन्होंने गांधीजी से अमतुस्सलाम को अपनी माँ की देख-भाल करने के लिए भेजने को लिखा था।

२. प्रस्तुत और अगले शीर्षकमें माँकी बीमारीका जिक्र होने के आधारपर

३. रामेश्वरदास पोद्दार

४. देवदास गांधी

५. आनन्द तो० हिंगोरानी

३५४. तार: कार्ल हीथको[1]

वर्धागंज

[१५ जनवरी, १९४१][2]

हीथ

फ्रेण्ड्स हाउस

लन्दन

संसद-सदस्योंके पत्रमें[3] तथ्योंकी अवहेलना की गई है। विचारोंका स्पष्ट और मुक्त आदान-प्रदान असम्भव कर दिया गया है। हम सबके बीच ईश्वर है।[4]

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४८)से

१. यह तार कार्ल हीथके २२ दिसम्बर, १९४० को प्राप्त तार (जी० एन० १०४७) के उत्तरमें था, जो इस प्रकार था: "आपके युद्ध-विरामसे बहुत ही सुख हुआ। मेरे विचारमें संसद-सदस्योंके स्वयंप्रेरित अनौपचारिक पत्रपर उसकी अपूर्णताओंके बावजूद ध्यानपूर्वक विचार करना और उसका उत्तर देना चाहिए। क्योंकि वह संवैधानिक गतिरोध दूर करने की गहरी इच्छाका द्योतक है।"

२. डाककी मुहरसे

३. गांधी — १९१५-१९४८: ए डिटेल्ड क्रॉनोलॉजीके अनुसार, भारतवासियोंके नाम ब्रिटिश संसद-सदस्यों द्वारा लिखे गये २३ दिसम्बर, १९४० के पत्रमें कहा गया था: "हम आपको पहले औपनिवेशिक दर्जा और उसके बाद पूर्ण स्वराज्य देनेके लिए कृत-संकल्प हैं, और इस बीच कोई अस्थायी प्रबन्ध करना होगा।" द इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४१, खण्ड १, पृ० ३० में स्पष्ट किया गया है कि प्रमुख भारतीय उदारपंथियोंने, जिनमें वी० एन० चन्दावरकर, पी० एस० शिवस्वामी अय्यर और वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री शामिल थे, उक्त पत्रके उत्तरमें १७ जनवरी, १९४१ को एक वक्तव्य भेजा था, जिसमें कहा गया था कि "अभीतक ब्रिटिश सरकार ब्रिटिश और भारतीय हितोंको एकात्म बनाने में तथा भारतीय जनताके अन्दर ब्रिटिश उद्देश्यके प्रति उत्साह पैदा करने में असफल रही है।" हस्ताक्षर-कर्ताओंने यह आशा भी व्यक्त की थी कि "यदि ब्रिटेन दूरदर्शिता और साहससे काम ले तो स्थितिमें आमूल सुधार हो सकता है।"

४. देखिए "पत्र: कार्ल हीथको", पृ० ३२२-२४ भी।

३५५. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१५ जनवरी, १९४१

चि० मीरा,

तुम्हारे दो पत्र मिले। तुम्हें जितनी जरूरत हो, उतना छना हुआ पानी पीयो। तुम्हें आलूबुखारा व अन्य फल काफी मात्रामें लेने चाहिए। पेटी-चरखा तुम्हारी सूचीमें था तो सही किन्तु इसे तुम कन्हैयालालको ही ले लेने दो। तुम्हारे पत्रोंको पढ़कर मनमें कितने ही विचार उठते हैं। पर्वतीय स्थल हमारे रहने योग्य नहीं हैं। हम तो मैदानोंमें, नदी या समुद्रके किनारे ही रह सकते हैं। पहाड़ तो अमीरोंके लिए हैं। तुम्हें अवश्य ही समुद्र-तट या नदी-तटपर कोई एकान्त निवासस्थान मिल जायेगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४६८)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८६३ से भी

३५६. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

१५ जनवरी, १९४१

तुमने जो सुझाव रखे हैं, मैं उन सभीसे सहमत हूँ — दोनोंमें[1] से कोई अभी शादी नहीं करना चाहता। दोनोंका एक-दूसरेके प्रति परस्पर आकर्षण मैंने देखा है। प्रश्न यह है कि ऐसा ही चलने दिया जाये या दोनोंको एक-दूसरेसे अलग कर दिया जाये। मेरे विचारसे इसमें कोई बुराई नहीं है। यदि वे अविवाहित रहें तो वह आदर्श स्थिति होगी। किन्तु यदि वे अपने ऊपर संयम नहीं रख सकते तो उन्हें किसी दूसरेका विचार भी नहीं करना चाहिए। तुम्हारी शर्तें युक्ति-युक्त हैं।

जहाँतक तुम्हारे पुत्रकी किताबोंकी बात है, मैं अनिश्चित कालके लिए जिम्मेदारी नहीं लेना चाहता।[2] यदि हम उचित मर्यादासे बाहर जाते हैं तो हम

१. यहाँ अभिप्राय अमृतलालकी पुत्री आभा और नारणदास गांधीके पुत्र कनु गांधीसे है। इन दोनोंका विवाह ७ नवम्बर, १९४४ को हुआ; देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ५-३-१९४१ भी।

२. देखिए "पत्र: सतीशचन्द्र दासगुप्तको", २२-१-१९४१ भी।

सार्वजनिक पैसेका दुरुपयोग करेंगे। दो गृहस्थियाँ तो बोझ हैं। तुम बेशक सारी बातकी मुझसे चर्चा कर सकते हो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४५४)से। सौजन्य: अमृतलाल चटर्जी

३५७. पत्र : सर जे० जी० लेथवेटको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ जनवरी, १९४१

प्रिय सर गिल्बर्ट,

आपके ४ तारीखके पत्रके[1] लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

आपके अति गम्भीर पत्रके उत्तरमें मैं कोई गम्भीर पत्र लिखने नहीं जा रहा हूँ। मेरे पत्र प्रकाशन या प्रचारके लिए नहीं लिखे गये हैं। वे अहिंसात्मक तरीकेसे काम करने के प्रयासमें लिखे गये हैं। और न ही वे किसी अजनबीको लिखे गये हैं। यह तो हुई प्रस्तावना।

अधिकारी-वर्गकी भाषा, जाहिर है, खास तौरसे सीखनी पड़ती है। आपका पत्र इस बातका उदाहरण है। अपनी सीधी-सादी भाषामें आपकी भाषाको मैं इस प्रकार रखता हूँ:

> मैं आपको यह बताना भूल गया कि आपकी प्रार्थनाको न मानने का केवल यही कारण नहीं था कि ब्रिटिश सम्बन्धके मूल्यांकनके बारेमें वाइसराय महोदयकी आपसे असहमति थी। असली या पूरा कारण आपको बताना असुविधाजनक होगा। इसलिए इस पत्र-व्यवहारको कृपया अब समाप्त समझिए।

आपके पत्रका यह अर्थ करने और इसे इसके अन्तिम पैरेके साथ पढ़ने पर मैंने अन्तमें यह फैसला किया कि श्री हिटलरके नाम खुले पत्रके[2] प्रचारकी कोशिश न की जाये। इसीलिए मैंने अपने पुत्रसे कह दिया है कि उस पत्रका कोई उपयोग न किया जाये और वह नष्ट कर दिया जाये।

मैंने आपको बताया था[3] कि मैंने वह पत्र अपने पुत्रके सिवा और किसीको नहीं दिखाया है। उसके बाद मैंने वह एक अंग्रेज मित्रको दिखाया, जिसकी मेरे तरीकेमें आस्था है। वह अपनी इस जानकारीका उपयोग केवल कलकत्ताके बिशप-जैसे कुछ मित्रोंके बीच करेगी, और कहीं नहीं। उसके प्रकाशनको रोकने में वाइसराय

१. देखिए परिशिष्ट ७।
२. देखिए पृ० २७५-७७।
३. देखिए पृ० २९१।

महोदयके साथ मेरे इस हार्दिक सहयोगका अर्थ प्रतिबन्धके औचित्यको स्वीकार कर लेना नहीं है। यह तो मेरी इस इच्छाकी बानगी है कि जहाँतक सम्भव हो, अधिकारियोंको परेशानीमें न डाला जाये।

लेकिन, संलग्नपर[१] प्रतिबन्ध लगाने की सेंसरकी कार्रवाई समझमें नहीं आती। मैं यह आशा पाले हुए हूँ कि सेंसरकी इस कार्रवाईकी वाइसराय महोदयको कोई जानकारी नहीं है। आप मुझे यह बताने की कृपा करें कि क्या इसमें उनकी स्वीकृति है। यदि ऐसा है और यदि मैं इसे स्वीकार कर लूं, तब तो जनसाधारणसे सभी तरहका खुला सम्पर्क ही बन्द हो जायेगा। वह समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रतामें एक अनुचित हस्तक्षेप होगा और उससे एक गम्भीर समस्या पैदा हो जायेगी। मुझे आशा है कि यदि सम्भव हो तो इस स्थितिको टाला जायेगा।

चूँकि यह मामला तत्काल ध्यान देने लायक है, इसलिए मैं शीघ्र उत्तरकी[२] अपेक्षा रखता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे: लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

३५८. पत्र: एगथा हैरिसनको

सेवाग्राम, वर्धा
१७ जनवरी, १९४१

प्रिय एगथा,

मेरे सम्मुख तुम्हारा ३० अक्तूबरका पत्र है, जो कल पहुँचा। मैं तुम्हें पत्र नहीं लिखता, क्योंकि मुझे पता नहीं कि मेरे पत्र तुमतक पहुँचेंगे भी या नहीं। और यदि पहुँचे भी तो वे तबतक सम्भवतः पुराने हो चुके होंगे। और आजकल तो यह भी समझमें नहीं आता कि क्या लिखा जाये। मुझे यह बुरा नहीं लगता कि मैं जो-कुछ लिखूं उसे सेन्सर पढ़ ले, किन्तु वह उसे दबा दे, यह अवश्य खलता है। तथापि युद्ध तो युद्ध ही है। हमें शिकवा नहीं करना चाहिए। योद्धा लोग तो इस युद्धमें विजय प्राप्त करना चाहते हैं और वे ऐसी कोई चीज बरदाश्त नहीं करेंगे जो उनके विचारसे उनके इस उद्देश्यमें बाधा पहुँचानेवाली हो। यह समझकर मैं धैर्य रखे हुए हूँ। मैं नहीं जानता कि तुम क्या कर सकती हो। यहाँ तो कदम-कदमपर मेरे रास्तेमें रोड़े अटकाये जाते हैं। अपनी समझमें मैंने श्री हिटलरके नाम एक अच्छा-सा

१. देखिए "सत्याग्रहियोंके लिए निर्देश", पृ० ३०२-३ और ३०६-८।
२. इस पत्रके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ८।

पत्र[1] लिखा था, किन्तु वह दबा दिया गया। मैं उसको निस्सन्देह फौरन छपवा सकता था, किन्तु मैं ऐसा नहीं करना चाहता। मुझे वाइसरायके निर्णयके आगे सिर झुकाना है। स्पष्टतः वे समझते हैं कि मेरा वह पत्र सरकारके युद्ध-सम्बन्धी प्रयासोंमें बाधक सिद्ध होगा। चूंकि खुले रूपसे उसके प्रकाशनके लिए तो सरकारकी अनुमति चाहिए, इस कारण मैंने उसका प्रचार न करना ही उचित समझा, क्योंकि वह तो अवज्ञा द्वारा ही सम्भव था, जिसका आरम्भ केवल गुप्त रूपसे ही हो सकता था।

लेकिन सरकार इससे भी एक कदम आगे बढ़ गई है। वह मेरे वक्तव्योंको स्थानीय समाचारपत्रोंमें प्रकाशित होने देने के मार्गमें बाधा डाल रही है। मेरे वक्तव्यों का प्रकाशित होना जरूरी है। इसलिए मैं वक्तव्योंको प्रकाशित करवाने का उपाय ढूंढ़ रहा हूँ। लेकिन चाहे जो भी बाधाएँ डाली जायें, हमारा संघर्ष जारी रहेगा। यदि तुम्हें जरूरत हो तो यह वचन मैं तुम्हें देता हूँ कि कोई भी अशोभन बात या जो लेशमात्र भी हिंसक कही जा सके, ऐसी बात हम जान-बूझकर कभी नहीं करेंगे। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस अहिंसाकी अन्ततः विजय होगी। इसका दमन नहीं होने देना चाहिए। संसद-सदस्योंकी अपीलका[2] कोई असर नहीं हुआ। उसमें सचाईकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया है। किसी सम्मानजनक समझौतेकी राहमें हिन्दू-मुस्लिम मतभेद बाधक नहीं हैं। इच्छाका अभाव है। पुरानी प्रथा नहीं टूटेगी। उन लोगोंको दोषी ठहराना व्यर्थ है। वे तो बढ़ते ही जाते हैं और, यदि सम्भव हो तो, वे सही या गलतका विचार करने के लिए नहीं रुकते। यह ढंग शासकोंका ढंग नहीं है। उनका कर्त्तव्य तो केवल शासन करना है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

एन्ड्रयूजकी बहनोंके विषयमें तुम्हारी सलाहपर ध्यान दे रहा हूँ।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५१७)से

१. देखिए पृ० २७५-७७।
२. देखिए पृ० ३११ और ३२२-२४ भी।

३५९. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१७ जनवरी, १९४१

चि० शर्मा,

तुमारे दोनों खत मिले। तुमको क्षमा तो सदा ही है। तुमारा आग्रह होगा तो मैं तुमको अभी [जेल] जाने दूंगा। अगर धीरज रखोगे तो अच्छा होगा। वहां काम तो कर हि रहे हो। लेकिन अशांति रहे तो मैं भेजने को तैयार हूं।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २९५ पर प्रकाशित प्रतिकृतिसे

३६०. पत्र : पृथ्वीसिंहको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१८ जनवरी, १९४१

भाई पृथ्वीसिंह,

तुमारा खत वहुत ध्यानसे पढ़ गया हूं।[1] मेरे साथ बात करने में डरना क्या?

मैं तुमको यहां खींच कर रखना नहि चाहता हूं। पूर्ण शांतिसे और मनसे रह सकते हो तो हि तुमारे रहने से मुझे आनंद हो सकता है। लेकिन मैं समझता हूं कि जबतक आश्रमजीवनके साथ ओतप्रोत नहि हो सकते हैं तुमारा यहां रहना निरर्थक है। मैं यह भी समझ सकता हूं कि जिसने सब डरको छोड़ा है वह आश्रमसे क्या लेंगे। इसलिए तुमको जहां जाना है वहां जाने का और जो करना है वह करने का संपूर्ण अधिकार है। तुमको मेरे आशीर्वाद तो है हि। मैं जानता हूं जहां जाओगे, जो कुछ करोगे उसमें अहिंसा और सत्य होंगे हि। मूझे लिखा करो। ठिकाना दिया करो। और हो सकता हो तो बताया करो क्या करते हो। जब इस तरफ आने का दिल होवे, अवश्य आ जाओ। मेरे साथ इस बारेमें बात करना है तो अवश्य करो। शुभवृत्तिसे जूदा होने में भी दुःख क्यों? धर्म पालनमें सुख हि है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २६४५) से। सी० डब्ल्यू० २९५६ से भी; सौजन्य : पृथ्वीसिंह

१. पृथ्वीसिंहने लिखा था कि वे आश्रमके अपने साथियोंके साथ मतैक्य न होनेके कारण आश्रम छोड़ना चाहते हैं।

३६१. पत्र : पुरुषोत्तमदास टंडनको

२० जनवरी, १९४१

भाई टंडनजी,

आपका मालवीजी महाराजका तार पढ़ें और उचित समझा जाय सो करें। प्रयागसे एक तार था कि राधाकान्तका[1] विरोध करना चाहते हैं। मेरा अभिप्राय तो मैंने दिया है लेकिन आप लोग स्वयं निर्णय करें। मैं वहांकी परिस्थितिसे बिलकुल अपरिचित हूं।

आपका,

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

३६२. पत्र : नीला नागिनीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२१ जनवरी, १९४१

चि० नीला,[2]

मैं आशा करता हूं कि कुछ ही दिन पूर्व तुम्हारे पत्रका मैंने जो उत्तर भेजा था वह तुम्हें मिल गया होगा। अब मुझे श्री ह्विटामोरकी मार्फत तुम्हारा दूसरा पत्र मिला है। वे बहुत प्रीतिकर व्यक्ति हैं। हम सबने उनके साथ जो समय बिताया वह बड़ा लाभप्रद रहा।

तुम वहां अच्छा कार्य कर रही हो। स्विरियससे[3] कहो कि मुझे पत्र लिखे। तुमने उसे कहां रखने का निश्चय किया है?

जब भी तुम आओ, तुम्हारा स्वागत है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२१८)से

१. मदनमोहन मालवीयके पुत्र राधाकान्त मालवीय

२. नीला क्रैम कुक, एक अमेरिकी महिला, जिसने तलाकके बाद भारत आकर हिन्दू-धर्म ग्रहण कर लिया था और हरिजन-सेवा कर रही थी। सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

३. नीला नागिनीका पुत्र

३६३. पत्र : डॉ० एस० के० वैद्यको

२१ जनवरी, १९४१

भाई वैद्य,

तुम्हारा पत्र ही नहीं आया? यह क्या बात है? क्या 'आँख ओट तो पहाड़ ओट'? वैसे मैं ऐसा अर्थ नहीं लगाता। मैं जानता हूँ कि तुम नहीं लिखते तो मेरा एक-एक क्षण बचाने के लिए। लेकिन तुम्हारी याद भूलती नहीं। तुम कैसे हो? क्या हो रहा है, लिखो। लेबोरेटरीके[1] क्या हाल हैं? अम्बु[2] कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७४४) से

३६४. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२२ जनवरी, १९४१

प्रिय सी० आर०,

यह पत्र तुम्हारी नहीं, नरसिंहन्‌की[3] खुशीके लिए लिख रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि तुम्हें मेरे किसी औपचारिक या दूसरी तरहके पत्रकी जरूरत नहीं है। दिल जब एक-दूसरेसे बात कर सकते हों तो पत्रोंका कोई मतलब नहीं रहता। मैं जानता हूँ कि तुम वहाँ[4] अपना कर्त्तव्य पूरा कर रहे हो, जैसे कि हम बाहर करने की कोशिश कर रहे हैं। अपनेको स्वस्थ रखना और हिन्दीकी अपनी शिक्षा पूरी करना।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८७९) से। सौजन्य : सी० आर० नरसिंहन्

१. पंत भवन, सैंडहर्स्ट रोड, बम्बईमें स्थित
२. डॉ० एस० के० वैद्यकी पुत्री अम्बा जुगतराम वैद्य
३. चक्रवर्ती राजगोपालचारीके पुत्र
४. जेल में; च० राजगोपालाचारीको ३ दिसम्बरको गिरफ्तार कर लिया गया था और उन्हें एक साल सादा कारावासकी सजा हुई थी।

३६५. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२२ जनवरी, १९४१

भाई सतीशबाबू,

अमृतबाबूका लड़का रमेन्द्रनाथ पढ़ता है। नमी श्रेणीमें दाखल हुआ है इसलिये उसे कुछ पुस्तकें चाहिये। उसे बुलाकर सोच लो क्या चाहिये और ऐसे पुस्तकोंका दाम क्या होगा। वह 'फ्री' विद्यार्थी है। ठिकाना ४/१ शामचरण डे स्ट्रीट' है। कहते हैं प्रतिष्ठान कार्यालयसे एक मिनिट है। 'राष्ट्रवाणी' मैं हर सप्ताह ध्यानसे पढ़ता हूं।

बापूके आशीर्वाद

श्री सतीशबाबू
खादी प्रतिष्ठान
१५ कॉलिज स्क्वेयर
कलकत्ता[2]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३४)से

३६६. पत्र : एक पत्रकारको[3]

[२३ जनवरी, १९४१ के पूर्व][4]

अहिंसा एक सक्रिय शक्ति है। क्या तुम यह महसूस नहीं करते कि जब अहिंसाका बोलबाला होता है तो भौतिकतावादका स्थान गौण हो जाता है, रास्ते बदल जाते हैं; और अहिंसक युद्धमें श्रम, सम्पत्ति व नैतिकताकी बरबादी नहीं होती?

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-१-१९४१

१ और २. मूलमें दोनों पते अंग्रेजी लिपिमें हैं।

३ और ४. साधन-सूत्रके अनुसार इस पत्रकारने गांधीजी से पूछा था : "भौतिकतावादी विश्वमें शान्ति स्थापित करने में अहिंसा कहाँतक सफल हो सकती है?" यह दिनांक "नई दिल्ली, २३ जनवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३६७. सन्देश : गुजरात कॉलेजके विद्यार्थियोंको

[२३ जनवरी, १९४१ के पूर्व][1]

यदि प्रिंसिपलका बरताव वास्तवमें वैसा ही है जैसा कि आप लोगोंने बताया है तो निश्चय ही उसके विरोधमें आवाज उठाई जानी चाहिए। आपको उनके साथ आदरपूर्वक बातचीत करनी चाहिए और प्रमुख नागरिकोंसे सहायता माँगनी चाहिए तथा लोकमत तैयार करना चाहिए। फिर भी यदि आपके साथ न्याय नहीं होता तो आपको हड़ताल करने का अधिकार है। इस अधिकारका प्रयोग करना या न करना विद्यार्थियोंकी शक्तिपर निर्भर है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-१-१९४१

३६८. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२३ जनवरी, १९४१

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। मेरी बुद्धि तो मुझसे नहीं कहती कि किसीके मरने के बाद हम जो दान-पुण्य करते हैं, उसका लाभ मरनेवालेको मिलता है। हाँ, ऐसा करके हम उसके प्रति अपनी निष्ठा अवश्य प्रकट करते हैं। ऐसा ही मैं प्रार्थनाके बारेमें समझता हूँ। लेकिन ऐसी बातोंमें बुद्धिका उपयोग करने की अपेक्षा श्रद्धाका सहारा लेना ज्यादा अच्छा होता है। कमसे-कम ऐसा करने से कोई नुकसान तो नहीं ही होता। दान बुद्धिपूर्वक करना चाहिए। मुझे थकावट विशेष नहीं है। जो है, वह तो अब उम्रके साथ होगी ही। यहाँ बहुत लोग बीमार हैं। मनुको बुखार है।

बापूके आशीर्वाद

श्री विजयाबहन
ग्राम दक्षिणामूर्ति
आंबला, सोनगढ़ होते हुए
काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१३६) से। सी० डब्ल्यू० ४६२८ से भी; सौजन्य : विजयाबहन म० पंचोली

१. यह सन्देश दिनांक "अहमदाबाद, २२ जनवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३६९. सलाह : कांग्रेसजनोंको

सेवाग्राम
२४ जनवरी, १९४१

मैंने देखा है कि पंजाबमें लोग कागज [या] धातुके बने तिरंगे बिल्ले खरीदते हैं और लगाते हैं। तिरंगेकी विशिष्टता तो इस बातको लेकर है कि वह खादीका बना होता है और खादी जन-सामान्यके साथ तादात्म्य तथा अहिंसाका प्रतीक है। इसलिए बिल्ले खादीके ही बनने चाहिए। धातु या कागजके बिल्लोंका कांग्रेसजनोंके लिए फालतू सजावटके अलावा और कोई महत्त्व नहीं। परीक्षाकी इस घड़ीमें मैं कांग्रेसके सदस्यों और उससे सहानुभूति रखनेवालोंसे आचारके आवश्यक नियमोंका पालन करने की अपेक्षा रखता हूँ। छोटी-छोटी बातोंको तुच्छ समझकर उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। तफसीलोंके कुल योगके आधारपर ही कोई सिद्धान्त निर्धारित किया जाता है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कांग्रेस कमेटी फाइल सं० १३६२, १९४१। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३७०. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२४ जनवरी, १९४१

चि० मीरा,

तुम्हारा दूसरा पत्र अभी मिला। अगर अन्तमें यह फैसला हो कि तुम्हें बरोड़ा चले आना चाहिए, तो तुम्हारी इच्छाको ध्यानमें रखूँगा। परन्तु मेरा अन्देशा यह है कि तुम बहुत समयतक वहाँ सुखी नहीं रहोगी। अगर तुम तन्दुरुस्त रहो तो तुम्हें अपनेको इधर-उधर करने की उस समयतक जरूरत नहीं है, जबतक तुम्हें अच्छी तरह यह न लगने लगे कि मनुष्योंके बीच रहकर तुम्हें शान्ति मिल सकती है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६८६९) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८६४ से भी

३७१. पत्र : कार्ल हीथको

सेवाग्राम, वर्धा
२५ जनवरी, १९४१

प्रिय मित्र,

आपका अतिशय कृपापूर्ण पत्र मुझे मिला है। आपके पत्रमें उल्लिखित आपके तारके उत्तरमें मैंने जो तार[1] भेजा था वह आपको मिला या नहीं, इसकी आपने अपने पत्रमें कोई चर्चा नहीं की है। २८[2] अक्तूबर, १९४० को भेजा हुआ मेरा वह तार इस प्रकार था:

> **सभी प्रयास असफल रहे। भारतीय परिस्थिति सर्वथा भिन्न और अनोखी है। समाचारपत्रोंकी जबान बन्द कर दी गई है। 'हरिजन' साप्ताहिकोंको बन्द कर दिया गया है। सविनय अवज्ञाको अहिंसाकी न्यूनतम अपेक्षाओंतक सीमित रख रहा हूँ।**

उसके बाद मैंने आपके दिसम्बरके अन्तिम सप्ताहके तारके उत्तरमें निम्नलिखित तार[3] भेजा था:

> **संसद-सदस्योंके पत्रमें तथ्योंकी अवहेलना की गई है। विचारोंका स्पष्ट और मुक्त आदान-प्रदान असम्भव कर दिया गया है। हम सबके बीच ईश्वर है।**

आपने जो दलील दी है उसे मैं समझ गया हूँ। क्वेकर दृष्टिकोण वैयक्तिक है। कांग्रेसका दृष्टिकोण एक बड़ी संस्थाका दृष्टिकोण है। अहिंसापर आधारित संस्था होनेके नाते कांग्रेस हिंसाके विभिन्न प्रकारोंमें कोई भेद नहीं कर सकती। मैं ऐसा नहीं समझता कि यदि ब्रिटेनकी सैन्य शक्ति जर्मनी द्वारा अपनाये गये तरीकोंसे जर्मनीपर विजय प्राप्त कर लेती है तो संसारकी दशा कुछ सुधर जायेगी। अन्ततः कांग्रेसके सामने प्रश्न यह है कि न्यायको सिद्ध करनेके लिए व्यक्तियोंके बीच या राष्ट्रोंके बीच शस्त्रास्त्रोंके प्रयोगका निराकरण किस प्रकार किया जाये।

१ और ३. देखिए पृ० १४४ और ३११।
२. साधन-सूत्रमें "२७" दिया गया है।

भारत अहिंसाके जरिये अपनी स्वतन्त्रताकी जो लड़ाई लड़ रहा है उसमें यह सार्वभौम सिद्धान्त सन्निहित है।

पूना-प्रस्तावमें परिलक्षित होनेवाले कांग्रेस दृष्टिकोणके दोषको आपने ठीक पहचाना है। उसीके कारण और उसी समय मैंने कांग्रेसका मार्ग-दर्शन करना और उसकी बहसोंमें भाग लेना छोड़ दिया था। किन्तु बादके बम्बई-प्रस्ताव द्वारा कांग्रेसके भूल-सुधार करने पर मैंने अपना विरोध वापस ले लिया। मेरे खयालमें यदि कांग्रेस हर स्थितिमें अहिंसाका पालन नहीं कर सकी तो इससे उसकी प्रतिष्ठापर कोई आँच नहीं आती। कांग्रेसकी नीति सत्य और अहिंसाकी है। इस कारण उसके लिए ईमानदारी सर्वोपरि है। इसलिए जब उसने देखा कि पूनाकी उसकी माँग ठुकरा दी गई है तो वह अपनी पुरानी स्थितिपर आ गई और उसने मुझसे सविनय अवज्ञा आन्दोलनका नेतृत्व करने का आग्रह किया। मुझे इसे स्वीकार करने में कोई हिचकिचाहट नहीं हुई, क्योंकि मैं जानता था कि भारतका जनमानस स्वभावतः अहिंसक है। यह बात भी आपके ध्यानसे छूट गई जान पड़ती है कि यदि मैं उस समय दुर्बल न पड़ गया होता तो पूना प्रस्ताव कभी भी पारित न हो पाता। अपनी इस भूलको मैंने 'हरिजन' के पृष्ठोंमें कई बार स्वीकार भी किया है।[1]

मेरा अनुभव यह रहा है कि कांग्रेसके अन्दर अहिंसाका धीमी गतिसे ही सही किन्तु उत्तरोत्तर विकास होता रहा है। और यदि मैं उपयुक्त समयपर कांग्रेसके माध्यमसे अहिंसाका प्रस्तुतीकरण न करता तो मैं उसका अयोग्य प्रतिपादक ही सिद्ध होता।

कांग्रेस नाजीवादके उतनी ही विरुद्ध है जितनी साम्राज्यवादके। यदि सरकारने बिना सोचे-विचारे ही कांग्रेसकी युद्ध-विरोधी गतिविधियोंपर प्रतिबन्ध न लगाया होता और कांग्रेसको नाजी-समर्थक घोषित न किया होता तो वह बड़ी आसानीसे यह दावा कर सकती थी कि समूचा भारत नाजी-विरोधी है। इसमें कांग्रेसकी अहिंसामें विश्वास रखनेवाले लोग और हिंसाके प्रयोगका समर्थन करनेवाले लोग, दोनों शामिल होते। यदि सरकारने यह सब न किया होता तो आज जो कटुता है उसे टाला जा सकता था। यही नहीं, विश्वको भी सहिष्णुताका पाठ सीखने का एक अवसर मिला होता और उसका नैतिक समर्थन ब्रिटेनके पक्षमें होता। अभी भी बहुत देर नहीं हुई है, ब्रिटेन चाहे तो अपनी इस भूलको सुधार सकता है।

ब्रिटिश सरकार चाहे अपनी भूलको स्वीकार करे और उसे सुधारे या नहीं, लेकिन कांग्रेसका रास्ता तो बिलकुल साफ है। चूँकि इस विश्वासका आधार विशुद्ध रूपसे नैतिक है, इसलिए तात्कालिक परिणामोंकी परवाह किये बिना इसपर आचरण

१. देखिए पृ० ३२-३५; और खण्ड ७२, पृ० ४२१-२३ और ३९१-९४ भी।

करना चाहिए। नैतिक साधन तो प्रायः अपने-आपमें साध्य होता है। क्या सद्गुण अपना पुरस्कार आप नहीं होता?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

फ्रेण्ड कार्ल हीथ
व्हाइट विंग्स मैनर वे
गिल्डफर्ड, सरे

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४९) से

३७२. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

सेवाग्राम, वर्धा
२५ जनवरी, १९४१

प्रिय सर तेजबहादुर,

'ट्वेंटिएथ सेंचुरी' में प्रकाशित आपका लेख[1] मैंने अभी-अभी पढ़कर समाप्त किया है।

मैं आपसे बिलकुल सहमत हूँ कि हमें अपनी घरेलू झंझटोंका निपटारा स्वयं ही करना चाहिए और इसपर विचार नहीं करना चाहिए कि हमारी संयुक्त माँगोंको शासक स्वीकार करेंगे या नहीं। आपको मालूम होना चाहिए कि इसी विश्वासके साथ मैं बम्बईमें कायदे-आजम जिन्नासे मिलने के लिए विशेष रूपसे गया था[2] और उनसे कई बार बातचीत की; बादमें सुभाषबाबू भी मिलने गये। किन्तु हम कुछ भी प्रगति नहीं कर पाये। कारण शायद आपको मालूम ही होगा। फिर इस निश्चयके साथ कि जब हम दोनों वाइसरायसे मिलने जायें तो दो अजनबियों की तरह न जायें, मैं खुद ही उनके दिल्ली-स्थित आवासपर पहुँचा और फिर वहाँसे हम दोनों उन्हींकी गाड़ीमें बैठकर वाइसरायके यहाँ गये।[3] लेकिन इतनेपर भी हम वाइसरायके सामने अपने आपसी मतभेदोंका परिचय देने से अधिक कुछ नहीं कर सके। यदि मैं यह न जानता होता कि मेरे जाने से उन्हें झुंझलाहट होगी, तो मैं बार-बार जिन्ना साहबसे मिलने जाता। इस भयसे कि कहीं वे मुझे गलत न समझ बैठें, मैं उनके साथ मजाक भी नहीं कर सकता। मेरी अपनी धारणा यह है कि वे तबतक कोई समझौता नहीं चाहते जबतक कि वे लीगकी स्थितिको इतनी सुदृढ़ न बना लें कि वे शासकों-समेत सबपर अपनी शर्तें थोप सकें। और

१. जिसका शीर्षक था "द नीड ऑफ द आवर"।
२. अप्रैल १९३८ में
३. नवम्बर १९३९ में

यदि सचमुच ही उन्होंने यह स्थिति अपना ली है तो मैं इसके लिए उन्हें दोष नहीं देता। लेकिन इस धारणाके साथ मेरा उनके पास जाना व्यर्थ है। कई बार उन्हें पत्र लिखने का मेरा मन तो होता है, किन्तु कलम उठाने तक साहस छूट जाता है। लेकिन यदि आपको भरोसा है तो आप किसी दूसरेके सुझावकी प्रतीक्षा किये बिना स्वयं उनसे क्यों नहीं मिल लेते?

आशा करता हूँ, आप बिलकुल स्वस्थ होंगे।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५८४) से। सी० डब्ल्यू० १०३३९ से भी; सौजन्य: नेशनल लाइब्रेरी

३७३. पत्र : वीरबल मेहताको

सेवाग्राम, वर्धा
२५ जनवरी, १९४१

प्रिय मित्र,

आपका कृपा-पत्र[2] मिला। मैं स्मारक-सम्बन्धी प्रवृत्तिको दिलचस्पीके साथ देखता आया हूँ। लेकिन इसके विषयमें मुझे कोई उत्साह नहीं महसूस हुआ। श्री नटराजनको मैं वर्षोंसे जानता हूँ – तबसे जब वे मुझे जानते भी न थे। मैं महापुरुषोंका पुजारी हूँ और समाज-सुधारकके रूपमें वे मेरे लिए एक महापुरुष थे। फिर हम एक-दूसरेको जानने लगे और दोनों अच्छे मित्र बन गये और अभी भी हैं। लेकिन मैंने उन्हें पत्रकारके रूपमें कभी नहीं जाना है। वे सम्पादक इसलिए बने कि वे एक सुधारक थे। मैं पत्रकारितामें छात्रवृत्ति दिये जाने की बातमें विश्वास नहीं करता। मैं तो चाहूँगा कि श्री नटराजनका नाम स्त्रियोंका दर्जा ऊँचा उठाने, हरिजनोंका उत्थान करने अथवा किसी ऐसे सामाजिक कार्यसे जुड़ा हुआ हो जो उनको प्रिय है। लेकिन समितिने जो रास्ता अपनाया है उसे मैं बदलना नहीं चाहता, विशेषकर जब कि श्री नटराजन उसपर अपनी सहमति व्यक्त कर चुके हैं। मेरी तो केवल यही इच्छा है कि आप मुझे भूल जायें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. तेजबहादुर सप्रूके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ९।

२. अपने २३ जनवरीके इस पत्रमें वीरबल मेहताने, जो नटराजन-समितिके अवैतनिक मन्त्री थे, गांधीजी से इंडियन सोशल रिफॉर्मर के भूतपूर्व सम्पादक के० नटराजनके नामपर एक स्मारक बनवाने के लिए चन्देके निमित्त निकाली गई अपीलपर अपना आशीर्वाद देनेके लिए कहा था।

३७४. एक पत्र

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२५ जनवरी, १९४१

भाई,

मेरे वसकी बात होती, तो मैंने कोई-न-कोई हल बहुत पहले निकाल लिया होता। तुम्हारे पत्रमें मुझे धमकीकी गन्ध आती है। अगर अदालतसे ही वसूल करना है, तो फिर मेरी जरूरत भी क्या है? मैंने तो तुम्हें लिख ही दिया है कि जो मुझे करना था, वह मैं कर चुका हूँ। मैं लाचार हूँ। तुम्हें जो ठीक लगे, सो करो।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
भावनगर समाचार, १७-१२-१९५५

३७५. एम० एल० शाहको लिखे पत्रका अंश[1]

[२६ जनवरी, १९४१ के पूर्व][2]

मैं देशके लिए लड़ रहा हूँ। देशमें समाजके अन्य हिस्सोंकी तरह विद्यार्थी भी शामिल हैं। लेकिन विद्यार्थी-समाजपर मेरा कुछ विशेष अधिकार है और इसी तरह विद्यार्थी-समाजका मुझपर। कारण, मैं अब भी अपनेको एक विद्यार्थी ही मानता हूँ। इसके अलावा यह बात भी है कि भारत लौटने के समयसे ही मैं विद्यार्थियोंके निकट सम्पर्कमें रहा हूँ और उनमें से बहुतोंने सत्याग्रहमें हाथ बँटाया है। इसलिए यदि मुझे सम्पूर्ण विद्यार्थी-जगत् त्याग दे — हालाँकि स्वभावतः उसकी इस कार्रवाईके कारण अस्थायी ही होंगे — तब भी मैं अपने-आपको केवल इस भयसे उन्हें उचित सलाह

१. गांधीजी को लिखे अपने पत्रमें एम० एल० शाहने कहा था: "मैं अब भी मानता हूँ कि छात्र-संघकी नीति अपने अधिकारोंकी प्राप्ति और अपनी शिकायतें दूर करवाने के लिए शान्तिपूर्ण कार्रवाई करने की ही थी। यदि साम्यवादी अन्यथा सिद्ध कर सकें तो मैं अपने विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाईके लिए तैयार हूँ। हम कांग्रेसी, समाजवादी, फार्वर्ड-ब्लाकिस्ट तथा साम्यवादियोंको छोड़कर अन्य सभी विद्यार्थी मानते हैं कि छात्र-मंचको किसी राजनीतिक दलका पिछलग्गू नहीं होना चाहिए। उसे दलगत राजनीतिसे दूर रहना चाहिए।"

२. २७-१-१९४१ के **हिन्दू** से; उसमें यह पत्र दिनांक "बम्बई, २६ जनवरी" के अन्तर्गत छपा था।

देने से नहीं रोक सकता कि वे उसे अस्वीकार कर देंगे। विद्यार्थियोंका दलगत राज-नीतिमें भाग लेना किसी तरह मुनासिब नहीं है। वे सभी दलोंकी बात बड़े शौकसे सुनें — ठीक उसी तरह जिस तरह वे सभी तरहकी किताबें पढ़ते हैं — लेकिन उनका काम उन सभी दलोंकी बातोंमें निहित सत्यको ग्रहण करके शेषको त्याग देना है। यही एकमात्र ऐसा उचित रवैया है जो वे अपना सकते हैं। सत्ताकी राजनीतिसे विद्यार्थी-जगत्का कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए। इस तरहके काममें पड़ते ही वे विद्यार्थी नहीं रह जाते हैं और इसलिए वे संकटकी घड़ीमें देशकी सेवा भी नहीं कर पायेंगे। और अगर आप महामन्त्रीकी हैसियतसे सत्ताकी राजनीतिमें हिस्सा लेते हैं तो आप विद्यार्थियोंकी कुसेवा ही करेंगे।

जिस तरह सभी कांग्रेसी फरिश्ते नहीं हैं उसी तरह सभी साम्यवादी भी बुरे नहीं हैं। इसलिए साम्यवादियोंके महज साम्यवादी होने से मुझे उनसे कोई शिकायत नहीं है। उन्होंने अपने दर्शनका जैसा इजहार मेरे सामने किया है, उस रूपमें उस दर्शनको मैं स्वीकार नहीं कर सकता। डॉ० अशरफकी काबलियतके लिए मेरे मनमें बड़ी इज्जत है। मैंने उनके देशप्रेममें कभी शंका नहीं की है।[1] लेकिन मेरा निश्चित मत है कि विद्यार्थी-जगत्को जो गलत मार्ग-दर्शन वे दे रहे हैं उसके लिए उन्हें एक दिन पछताना पड़ेगा। लेकिन चूंकि अपने विचारोंपर वे मुग्ध हैं और खुद अपने विचारोंपर मैं मुग्ध हूँ और चूंकि हम दोनों समान रूपसे हठपर डटे हुए हैं, इसलिए मुझे ऐसी आशा नहीं है कि मैं बातचीत करके उन्हें उनकी गलतीका यकीन दिला सकूंगा और इसीलिए मैं उनसे दलील नहीं करता। और मेरे इस व्यवहारका उचित उत्तर वे भी मुझसे कतराते रहकर देते हैं। लेकिन विद्यार्थी यह याद रखें कि इस समय मैं देश-हितके लिए लड़ रहा हूँ। मैं कोई अनुभवहीन सेना-पति नहीं हूँ, बल्कि ५० वर्षोंका अनुभववाला एक तपा-परखा योद्धा हूँ। इसलिए मेरी यह सलाह अस्वीकार करने से पहले वे अच्छी तरह सोच लें कि मुझसे पूछे बिना वे हड़तालोंके चक्करमें न पड़ें। मैंने कभी भी ऐसा नहीं कहा या सुझाया है कि उन्हें किसी भी हालतमें हड़तालोंका सहारा लेना ही नहीं चाहिए। क्राइस्ट चर्च कॉलिजके विद्यार्थियोंको हालमें मैंने जो सलाह[1] दी उसे उन्हें भूलना नहीं चाहिए। उस सलाहपर मुझे कोई पश्चात्ताप नहीं है। उन्हें उसका पूरा लाभ उठाना चाहिए।

पहली बात तो यह है कि आपने मुझे संघकी ओरसे कोई आश्वासन दिया ही नहीं।[2] दूसरे, यदि आपने दिया भी होता तो मैंने वह आश्वासन स्वीकार न किया होता, क्योंकि आपको मुझे कोई अग्रिम आश्वासन देने का अधिकार नहीं था।

[अंग्रेजीसे]

हितवाद, २९-१-१९४१

१. देखिए पृ० १८९-९०, २०८ और २१८-१९।

२. देखिए "भेंट: एम० एल० शाहको", पृ० २०८।

३७६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
२६ जनवरी, १९४१

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे अस्पतालके[1] बारेमें तुम्हारे संदेशे मिले थे। डॉ० मेहता[2] इलाहाबाद हो आये हैं और उनका विचार है कि उसका उद्घाटन २८ फरवरीको मेरे हाथों होना चाहिए। सभी बातोंको देखते हुए मेरी राय भी यही है कि मुझे ही इसका उद्घाटन करना चाहिए और वह भी जल्दीसे-जल्दी २८ फरवरीको। मेरे आने-से सम्भवतः अनुमानित राशिका शेष भाग इकट्ठा हो जायेगा और तब हम भविष्यकी विशेष चिन्ता किये बिना अस्पतालका उद्घाटन कर सकेंगे। मैं जानता हूँ कि उस समय तुम सब मनसे हमारे पास होगे। मेरा खयाल है कि हमें सरूप[3] और इन्दुकी[4] प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए।

यदि तुम्हें तार द्वारा अपना मत भेजने की अनुमति है तो अवश्य भेज देना। तब मैं हलके मनसे इलाहाबाद जा सकूँगा।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]
गांधी-नेहरू पेपर्स, १९५१। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. कमला नेहरू स्मारक अस्पताल
२. डॉ० जीवराज मेहता
३. जवाहरलाल नेहरूकी बहन, विजयालक्ष्मी पण्डित
४. जवाहरलाल नेहरूकी पुत्री इन्दिरा

३७७. पत्र : रामभाऊ तिलकको

सेवाग्राम, वर्धा
२६ जनवरी, १९४१

प्रिय रामभाऊ,

मैंने आपको एक सन्देश भेजकर उपवास तोड़ने के लिए जरूर कहा था। मैंने आपके कागजात पढ़ लिये हैं और मेरी राय है कि आपको न्यासियोंका विरोध नहीं करना चाहिए। और किसी भी हालतमें उपवास करने लायक तो कोई मामला है ही नहीं।

उम्मीद है कि आप अपना उपवास तोड़ देंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री रामभाऊ वी० तिलक

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३७८. पत्र : गोपालरावको[1]

[२७ जनवरी, १९४१ के पूर्व][2]

आन्दोलन चलाने में जल्दबाजीसे काम मत लीजिए; सफल ढंगसे कार्य करने के लिए चाहे जितनी बार रुकना पड़े, रुका जाये।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-१-१९४१

१. साधन-सूत्रके अनुसार नागपुर जिला कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष गोपालरावने "गांधीजी से नागपुर जिलेमें सत्याग्रहको १ फरवरीसे ४ फरवरीतक स्थगित करने की अनुमति माँगी थी"। रिपोर्टमें यह भी कहा गया था कि नागपुर जिला कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीके अनुसार "यह निश्चय गांधीजी द्वारा जारी किये गये नये निर्देशोंको ध्यानमें रखते हुए उन सत्याग्रहियोंके फार्मोंकी फिरसे जाँच करने के लिए किया गया था जिनके नामोंको गांधीजी पहले ही स्वीकृति दे चुके थे।" देखिए पृ० २९८, ३०२-३, ३०४-५ और ३०६-८।

२. यह पत्र दिनांक "नागपुर, २७ जनवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३७९. पत्र : सैयद महमूदको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२७ जनवरी, १९४१

प्रिय महमूद,

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि तुमने खाट छोड़ दी है। घूमना-फिरना शुरू करने से पहले पूरा आराम कर लो। मैं सम्भवतः २८ फरवरीके आसपास इलाहाबादमें होऊँगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०८७) से

३८०. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

२७ जनवरी, १९४१

चि० काका,

तुम्हारे लिए मसौदा तो मैंने तैयार कर दिया। लेकिन फिर रातमें विचार करने लगा। एक तो मुझे नाम पसन्द नहीं आया। कोई दूसरा नाम खोजो। फिर, फिलहाल ऐसे संघकी कहाँतक आवश्यकता है, इसपर विचार करो। कल चार बजे आ जाना। आज तो आश्रम भरा हुआ है। बालके पत्र इसके साथ हैं, उम्दा हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९३९) से

३८१. एक पत्र

२७ जनवरी, १९४१

भाइओ,

मैंने सरक्युलर देखा नहीं है। लेकिन आप लिखते हैं उसमें मुझे कोई कष्ट नहीं है। कांग्रेसने राष्ट्रभाषाका नाम हिन्दुस्तानी रखा है। हमारी भाषाका नाश नाम बदलने से नहि होगा लेकिन हम अगर नालायक सिद्ध हुए तो अवश्य होगा। मेरी सलाह है कि आप नामके झगडेमें न पड़ें। हमारा काम क्या है उसे अच्छी तरह सोचें।

आपका,

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३८२. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२७ जनवरी, १९४१

बेटी,

तेरा खत तो इस वक्त मिला हि नहिं। मेरे खत तुझे मिले या नहिं इसका भी पता नहिं। लेकिन अच्छा है तू गई, मांको मुंबई लाई और तुझे भी अच्छा है। यही मुझे कनुने तेरे टेलिफोनके बारेमें कहा। मेरी सलाह है कि तू और भी अच्छी हो जा, मांकी सेवा कर और बादमें आ। कभी भी आवेगी आश्रमका सब काम करेगी। मेरी खास सेवा नहिं। जैसी सब करते हैं ऐसी तू भी। बराबर सोचकर आवेगी तो मुझे अच्छा लगेगा। मेरी तबीयत बिलकुल अच्छी है। मनुबहन और रामना० का[1] बुखार कम है लेकिन चलता है।

बापुकी दुआ

बीबी अमतुस्सलाम
मार्फत मौलवी बागी खान साहब
ईस्टर विला, सेवेंथ रोड
सान्ताक्रुज, बम्बई[2]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६६) से

१. रामनारायण
२. मूलमें पता अंग्रेजी लिपिमें

३८३. तार: शरतचन्द्र बोसको

सेवाग्राम, वर्धा
२८ जनवरी, १९४१

श्री शरत बोस
वुडबर्न पार्क
कलकत्ता

सुभाषके बारेमें खबर चौंकानेवाली है।[1] कृपया सचाई तारसे सूचित करें। चिन्तित हूँ। उम्मीद है सब ठीक होगा।[2]

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल। हिन्दू, ३०-१-१९४१ से भी

३८४. पत्र: समाचारपत्रोंके सम्पादकोंको

सेवाग्राम
२८ जनवरी, १९४१

प्रिय सम्पादक,

समाचारपत्रोंका मुँह बन्द किये जाने की कार्रवाईके हम इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि हमें शायद पता भी नहीं है कि हमारे समाचारपत्र आंशिक रूपसे ठप हो गये हैं। "युद्ध-प्रयत्न" के नामपर ऐसी कोई ईमानदाराना राय जाहिर करने की छूट नहीं है जो अधिकारी-वर्गके विचारमें युद्ध-प्रयत्नके विरुद्ध हो। हाँ, यदि कोई सम्पादक या प्रकाशक अपने समाचारपत्र और प्रेससे हाथ धो बैठने का खतरा उठाने को तैयार हो तो बात दूसरी है। मसलन मेरा अपना प्रयत्न — यदि मेरी ईमानदारीपर सन्देह न हो तो — युद्ध-मात्रको समाप्त करने का असली प्रयत्न है और इसलिए न वह ब्रिटेन-विरोधी है और न जर्मन-समर्थक। यदि लोकमत चाहे कि अमुक ढंगके समाचार प्रकाशित नहीं किये जाने चाहिए, तो समाचारपत्रोंके कर्त्ता-धर्त्ता स्वयं ही ऐसे

१. सुभाषचन्द्र बोस १७ जनवरी, १९४१ को कलकत्तामें अपने एल्गिन रोडके मकानसे गायब हो गये थे।

२. हिन्दूके अनुसार, इस पत्रके उत्तरमें शरतचन्द्र बोसने अपने तारमें इस प्रकार लिखा था: "सुभाषके बारेमें जनताकी तरह हमें भी कोई जानकारी नहीं है। वे कहाँ हैं और उनके क्या इरादे हैं तथा वे किस समय घर छोड़कर गये थे, इसका कुछ पता नहीं। पिछले तीन दिनोंसे बहुत कोशिश करने के बावजूद कोई सफलता नहीं मिली। परिस्थितियोंसे लगता है कि उन्होंने संन्यास ग्रहण कर लिया है।"

समाचारों और विचारोंका प्रकाशन छोड़ देंगे जो लोकमतको ठीक न लगें। लेकिन भारतमें तो अधिकांश भारतीय सम्पादक सत्याग्रहके समाचार सहर्ष छापना चाहेंगे, बशर्ते कि उनपर कोई पाबन्दी न लगी हुई हो।

बातको स्पष्ट करने के लिए मैं खुद अपने मामलेका दृष्टान्त देना चाहता हूँ। आन्दोलन चलाने के लिए, बल्कि इसे नियन्त्रणमें रखने के लिए भी, मुझे समय-समय पर वक्तव्य जारी करने पड़ते हैं। पिछले चार दिनोंमें ऐसे तीन वक्तव्योंमें से दो को प्रकाशित नहीं होने दिया गया। इसके जो कारण बताये गये हैं वे निम्न प्रकार हैं :

१. १६ जनवरी, १९४१ : आपके सूचनार्थ लिख रहा हूँ कि महात्मा गांधीका सविनय अवज्ञा आन्दोलन जारी रखने से सम्बन्धित १२ जनवरीका[1] वक्तव्य दो समाचार-एजेंसियों द्वारा प्रकाश्यताके निर्णयके लिए प्रस्तुत किया गया, लेकिन वह प्रकाश्य नहीं माना गया। तदनुसार मैं यह तथ्य आपके ध्यानमें ला रहा हूँ।

२. २८ जनवरी, १९४१ : आपके सूचनार्थ लिख रहा हूँ कि महात्मा गांधीका सत्याग्रहियों द्वारा जुर्माने भरने से सम्बन्धित १० जनवरीका[2] वक्तव्य दो समाचार-एजेंसियों द्वारा प्रकाश्यताके निर्णयके लिए प्रस्तुत किया गया, लेकिन उसे इस कारण प्रकाश्य नहीं माना गया कि वह आपत्तिजनक है और उसमें ऐसी खबर है जो युद्ध-विरोधी सविनय अवज्ञा जारी रखने की प्रेरणा देती है। तदनुसार मैं यह तथ्य आपके ध्यानमें ला रहा हूँ।

मैं अपने वक्तव्य उन्हीं समाचार-एजेंसियोंकी मार्फत भेजा करता था जिनका उपयोग आम तौरपर इसके लिए करता रहा हूँ। लेकिन जब मैंने देखा कि उन्हे सेंसर किया जाता है, तब मुझे अपने वक्तव्य कुछ चुने हुए समाचारपत्रोंको भेजने पड़े और इस तरह वे कुछ समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हो गये। आप खुद ही देख सकते हैं कि ये खबरें आपत्तिजनक हैं या नहीं। शायद छप जाये, इस आशासे वक्तव्य भेजने का तरीका बड़ा अनिश्चित है। चूँकि मैं विशेष प्रेस कानूनों और अध्यादेशोंके सम्बन्धमें सविनय अवज्ञा नहीं करना चाहता था, इसलिए मैंने 'हरिजन' साप्ताहिक बन्द कर दिये,[3] यद्यपि इन पत्रोंका मुख्य उद्देश्य केवल अहिंसा और रचनात्मक कार्यक्रमके रूपमें विख्यात कार्यक्रमका प्रचार-भर करना था। मैं सविनय अवज्ञाके दायरेको यथासम्भव वर्तमान क्षेत्रतक ही सीमित रखना चाहता हूँ। लेकिन यदि समाचारपत्र प्रासंगिक समाचार छापने का अपना असली काम छोड़ देते हैं तो कह नहीं सकता कि इस मर्यादाका पालन मैं कर पाऊँगा या नहीं। इसलिए समाचारपत्रोंसे मेरा निवेदन है कि वे अनुचित प्रतिबन्धोंकी परवाह न करके

१. देखिए पृ० ३०६-८; साधन-सूत्रमें यहाँ "१३ जनवरी" दिया गया है।
२. देखिए पृ० ३०२-३; साधन-सूत्रमें यहाँ "९ जनवरी" दिया गया है।
३. देखिए पृ० १३३-३५, १४९-५१ और १५४-५६।

सत्याग्रह-सम्बन्धी सभी समाचारोंको पूरा-पूरा छापें और इस तरह अपनी स्वतन्त्रताका आग्रह करें। बेशक सम्पादकोंको इस आन्दोलनकी या जो वक्तव्य जारी किये जायें उनकी निन्दा और आलोचना करने का पूरा अधिकार है। प्रेसपर लगे प्रतिबन्धोंके प्रति अपना विरोध प्रकट करने के लिए सम्पादक आपत्तिजनक वक्तव्योंको प्रकाशित कर सकते हैं, भले ही इसके कारण उन्हें सरकार द्वारा कानूनी कार्रवाई किये जाने का खतरा उठाना पड़े या प्रेसकी जब्तीका खतरा उठाना पड़े। दूसरा रास्ता यह है कि विरोध-स्वरूप वे अपने समाचारपत्रोंका प्रकाशन बिलकुल बन्द कर दें। विरोध प्रकट करने के और भी तरीके हो सकते हैं, लेकिन मैंने यहाँ केवल दो का उल्लेख किया है।

देखता हूँ, अगले महीनेकी पहली तारीखको सम्पादकोंकी स्थायी समितिकी बैठक होनेवाली है।[1] समितिसे निर्भीकतापूर्वक समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रताका आग्रह करने की आशा की जाती है। यदि वह स्वतन्त्र मत-प्रकाशनपर लगे प्रतिबन्धोंको स्वीकार करती है तो उसकी शक्ति वैसी नहीं रह जायेगी जैसी कि होनी चाहिए।

कहने की जरूरत नहीं कि भारत-जैसे पराधीन देशमें समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रता दुगनी मूल्यवान है और अगर आप ब्रिटिश स्वामित्वमें चलनेवाले समाचारपत्रोंके प्रतिनिधि हैं तो देशके इतिहासकी इस नाजुक घड़ीमें आपकी जिम्मेदारी बहुत बड़ी है।

इस तथ्यकी ओर भी ध्यान दिलाने की जरूरत नहीं है कि मैं विशुद्ध अहिंसाका प्रतिनिधित्व करता हूँ और अहिंसाका प्रचार किसीके लिए हानिकर नहीं हो सकता। यह कहना गलत और अन्यायपूर्ण है कि चूँकि मैं साम्राज्यवादका विरोध करता हूँ इसलिए नाजीवाद या फासिज्मसे मेरा कोई सरोकार हो सकता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कांग्रेस कमेटी फाइल सं० १३६२, १९४१। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. अखिल भारतीय समाचारपत्र सम्पादक सम्मेलनकी स्थायी समितिकी बैठक १ फरवरी, १९४१ को *हिन्दुस्तान टाइम्स*के कार्यालयमें हुई। *हिन्दू* के सम्पादक के० श्रीनिवासनने बैठककी अध्यक्षता की।

३८५. पत्र : डॉ० एस० के० वैद्यको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२८ जनवरी, १९४१

भाई वैद्य,

तुम्हारा विस्तृत पत्र मिला। मेरी तो बड़ी इच्छा है कि तुमने जो ज्ञान प्राप्त किया है, उसका ठीक-ठीक लाभ जनताको दो, और यह करते हुए खादीका वरण करो। यहां तो तुम्हारा घर है ही। जब इच्छा हो, आ जाना। यहांके बारेमें कोई सुझाव देने जैसा हो तो दो। अम्बुकी तबीयत सुधर ही नहीं सकती, ऐसा मैं तो नहीं मानता। शास्त्रीके बारेमें तो चमत्कार जारी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७४५) से

३८६. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२८ जनवरी, १९४१

बेटी,

तेरा खत मिला। मैंने तुझको तीन खत लिखे थे। मेरा कलका खत मिला होगा। बीमारीकी हालतमें यहां आकर क्या करेगी? और अब तो कायदे आश्रम व[ग़ैरह] को मिल रही है। देखो क्या होता है।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६७) से

३८७. तार : मीराबहनको

वर्धा
३० जनवरी, १९४१

मीराबाई
पालमपुर
कांगड़ा जिला

तुरन्त वरोड़ा चली आओ।[1] प्यार। अच्छा हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४७०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८६५ से भी

३८८. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
३० जनवरी, १९४१

बेटी,

तूने झोहराको मुंबई बुलाई है उसे मैं बड़ी गलती मानता हूं। तेरा खत अकबरने मुझे बतलाया। झोहराको अगर अलीगढ़ नहिं जाना है तो भले यहां आवे। इंदौरमें रहना चाहे तो रहे। मुंबईमें तो नुकसान हि है। मैं अच्छा हूं। रा० कु० आज विद्यार्थी सम्मेलनके लिये बनारस जा रही है। मनुका बुखार अब तक नहिं गया है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६८) से

१. देखिए "पत्र: मीराबहनको", पृ० ३२१ भी।

३८९. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
३१ जनवरी, १९४१

चि० अमृत,

महादेव गया।

आज तेरा स्मरण रहता है क्योंकि कठिन कामके लिए जा रही हो।[1] ईश्वर तो तेरे साथ है ही। दो तारीख याद रखुंगा। आखरमें देखा जाता है कि सुभाषबाबु पकडे नहिं गये हैं। मनुको आज भी बुखार है। मेरा अच्छा है। ठंडी काफी है इसलिए छप्परके नीचे सोया था। किशोरलाल आ गये हैं। वहां महाराणी[2] और महाराज कुंवरको[3] आशीर्वाद।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८७३) से। सी० डब्ल्यू० ४२४० से भी; सौजन्य : अमृतकौर

३९०. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
३१ जनवरी, १९४१

भाई सतीशबाबु,

यहांसे रुपयाका खर्च करो वह मंगवा लेना कि मैं रु० १५ भेज दूं? खादी प्र[तिष्ठान] के सर्टीफिकेशनकी बात निकली है। हमारे लिये अच्छा यहि है के ले लेना। मिलने में कुछ दिक्कत तो होगी हि नहिं, ऐसा मैं मानता हूं। हेमप्रभाका[4] खत जाजूजीने मुझे भेजा है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३५) से

१. विद्यार्थी सम्मेलनमें शामिल होनेके लिए; देखिए पिछला शीर्षक भी।
२ और ३. विजयनगरम्‌के
४. सतीशचन्द्र दासगुप्तकी पत्नी

३९१. पुर्जा : के० टी० भाष्यम्को[1]

[१ फरवरी, १९४१ या उसके पूर्व][2]

इतने सारे नामांकन-पत्रोंका अत्यन्त तुच्छ कारणोंके आधारपर रद्द किया जाना एक गम्भीर बात है। यह अन्याय मैसूरमें किया गया, यह देखकर मुझे गहरा दुःख हुआ है। महाराजा साहबको आवेदनपत्र भेजकर आपने बहुत ठीक किया। मुझे आशा है कि इसके फलस्वरूप यह स्पष्ट अन्याय सुधार दिया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३-२-१९४१

३९२. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
१ फरवरी, १९४१

अमतुस्सलाम
मार्फत मैडम वाडिया
आर्य संघ, मलाबार हिल
बम्बई

किसीसे मिलने को मैंने तुम्हें नहीं कहा। मैं हिन्दुओंका प्रतिनिधि नहीं हूँ, न हिन्दुओंकी ओरसे बोल सकता हूँ। तुम्हारा पहला काम है कि अच्छी हो जाओ। प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६९) से

१. मैसूर राज्य कांग्रेसके अध्यक्ष। "मैसूर विधानमण्डलके लिए कई कांग्रेसी उम्मीदवारोंके" नामांकन-पत्र रद्द कर दिये जाने की सूचना संसदीय उप-समितिके अध्यक्ष और मैसूर कांग्रेसके भूतपूर्व अध्यक्ष श्री एच० सी० दासप्पासे प्राप्त होने के बाद गांधीजीने यह सन्देश भेजा था।

२. यह दिनांक " वर्धा, १ फरवरी " के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३९३. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

सेवाग्राम, वर्धा
१ फरवरी, १९४१

प्रिय सर तेजबहादुर,

आपके कृपापत्रके[1] लिए धन्यवाद। कायदे-आजम जिन्नाका कहना है कि मैं उनसे एक हिन्दूकी हैसियतसे केवल हिन्दुओंकी तरफसे ही बात कर सकता हूँ। मैं यह नहीं कर सकता। यदि मैं उन्हें लिखूँ कि मैं उनसे मिलना चाहता हूँ तो वे मुझसे भेंट करना अस्वीकार नहीं करेंगे। लेकिन इसका परिणाम मुझे मालूम है। वे तुरन्त इस मुलाकातका विवरण तोड़-मरोड़कर दे देंगे। वे सोचते हैं कि मैं ही रास्तेमें सबसे बड़ा रोड़ा हूँ। अतः मैं अनुकूल अवसरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। अवसर आते ही मैं निश्चय ही उनसे तथा अन्य लोगोंसे भेंट करनेकी कोशिश करूँगा। आपने देखा ही होगा कि उन्होंने किस प्रकार वर्तमान सविनय अवज्ञा आन्दोलनको तोड़-मरोड़कर मुस्लिम-विरोधी आन्दोलनके रूपमें प्रस्तुत किया है।[2] लेकिन आप अपने ढंगसे जिस किसीके सहयोगसे इस मामलेमें प्रयास करना योग्य समझें उसके सहयोगसे प्रयास अवश्य करें।[3]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५८३) से। सी० डब्ल्यू० १०२७७ से भी; सौजन्य : नेशनल लाइब्रेरी

१. २८ जनवरीका, देखिए परिशिष्ट ९।

२. २७ जनवरीको लखनऊ विश्वविद्यालयके छात्रोंके प्रश्नका उत्तर देते हुए जिन्नाने कहा था: "मुझे उम्मीद है कि मुस्लिम छात्र कांग्रेसकी मददके लिए किसी भी हड़ताल, विरोध-सभा या किसी अन्य कार्रवाईमें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे भाग नहीं लेंगे, क्योंकि कांग्रेसका उद्देश्य ब्रिटिश सरकारको अपनी माँगें स्वीकार करनेके लिए विवश कर देनेका है, जो कि देशके मुसलमानोंके हितोंके लिए बहुत ही हानिकारक हैं।"

३. इसके उत्तरमें श्री सप्रूने अपने ६ फरवरीके पत्र (सी० डब्ल्यू० १०३८०) में लिखा था : "बहुत सोच-विचार करनेके बाद मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि श्री जिन्नाको एक पत्र लिखूँ और मैं उसे आज ही भेज रहा हूँ।... मैंने उसमें केवल यह सुझाव दिया है कि यदि आप उन्हें पत्र लिखें और बम्बई अथवा अन्य किसी स्थानपर मिलनेकी इच्छा प्रकट करें तो उनको आपसे भेंट करनेको तैयार रहना चाहिए।..."

३९४. पत्र : मनोरंजन चौधरीको

सेवाग्राम, वर्धा
१ फरवरी, १९४१

प्रिय मनोरंजन बाबू,[1]

मुझे आपका लम्बा पत्र मिला। मुझे अफसोस है कि मैं आपकी मदद नहीं कर सकूँगा। आपके सुझावके अनुसार मैं सत्याग्रह आन्दोलनका नेतृत्व नहीं कर सकता।[2] सत्याग्रहकी अपनी मर्यादाएँ हैं। और फिर हिन्दू महासभाके बहुत ही कम सदस्य अहिंसामें आस्था रखते हैं। न तो श्री सावरकर,[3] न ही डॉ० मुंजे[4] और न ही भाई परमानन्द अहिंसामें विश्वास रखते हैं। इसमें उनका कोई दोष नहीं है। वे अपने स्वतन्त्र विचार रखने के हकदार हैं। किन्तु वे सत्याग्रह-आन्दोलन का नेतृत्व नहीं कर सकते। मेरे विचारमें इतना तो वे स्वयं भी स्वीकार कर लेंगे।

आपका यह कहना कि यदि आपको मेरा आशीर्वाद प्राप्त न होता तो आप महासभाके सदस्य भी न बने होते, हमारी बातचीतका खींच-तान कर अर्थ निकालना हुआ। मैंने केवल इतना कहा था कि यदि आप ऐसा सोचते हैं कि कांग्रेस शक्ति-हीन है और महासभा राहत दिला सकती है तो आपको उसका सदस्य बनने का पूरा अधिकार है।

हृदयसे आपका,
बापू

श्री मनोरंजन चौधरी
२११ बहूबाजार स्ट्रीट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०४३८) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१. बंगाल प्रान्तीय हिन्दू महासभाके मन्त्री

२. अमृतलाल चटर्जीके अनुसार बंगालके हिन्दू महासभाई नेताओंने माध्यमिक शिक्षा विधेयक और कलकत्ता म्युनिसिपल संशोधन अधिनियमके विरुद्ध सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ने का सुझाव दिया था। ये दोनों विधेयक बंगालके मुस्लिम लीग मन्त्रिमण्डलने पेश किये थे।

३ और ४. विनायक दामोदर सावरकर तथा डॉ० बी० एस० मुंजे, हिन्दू महासभाके अध्यक्ष व उपाध्यक्ष

३९५. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१ फरवरी, १९४१

बेटी,

तुझको तार[1] दिया है। मेरे तरफसे तू क्या आशा कर सकती है? मेरे नामसे कुछ भी बात नहि हो सकती है। तू बिलकुल समझी नहि है। तू जबतक निरोगी नहि होगी तबतक तू एक भी कामको आखर तक नहि ले जा सकेगी। सब चीज छोड़कर पहले तो बिलकुल अच्छी हो ले। पीछे सबकुछ।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७०) से

३९६. पत्र: डाह्याभाई म० पटेलको

सेवाग्राम, वर्धा
२ फरवरी, १९४१

भाई डाह्याभाई,

रामजीभाई तुम्हारी खूब तारीफ करता है। यह पत्र उसके सन्तोषके लिए भेज रहा हूँ। हरिजनोंके लिए तुमसे भला क्या सिफारिश की जाये? हम उनकी जितनी सेवा करें, कम ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २७१३) से। सौजन्य: डाह्याभाई म० पटेल

१. देखिए पृ० ३३८।

३९७. पत्र : अमतुस्सलामको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२ फरवरी, १९४१

तेरा ख़त मिला। मैंने तार कल दिया। पत्ता [कार्ड] भी लिखा। मेरी कुछ चांच बुड नहिं सकती।[1] मैं देख रहा हूं। मेरा एतबार बंदगीमें है। तू अच्छी हो ले।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७१) से। **बापूके पत्र – ८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम**, पृ० २०९ भी

३९८. तार : अमृतकौरको

वर्धा
३ फरवरी, १९४१

राजकुमारी
मार्फत सर महाराज सिंह
माल एवेन्यू
लखनऊ

हस्ताक्षरयुक्त फोटो पाकर ख़ुशी हुई। आशा है कि सकुशल हो। प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९९७) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७३०६ से भी

१. यह गुजराती मुहावरा है, जिसका इस सन्दर्भमें अर्थ होगा : "मैं कुछ भी समझाने में असमर्थ हूँ"। पुस्तकके अनुसार यहाँ संकेत मुस्लिम लीगके लाहौर-प्रस्तावकी ओर है, जिसमें भारतके विभाजनकी माँग की गई थी।

३९९. पत्र : मुहम्मद नोमानको[1]

सेवाग्राम, वर्धा
३ फरवरी, १९४१

प्रिय मित्र,

आपकी बीमारीका मुझे दुःख है। आशा है, आप शीघ्र ही स्वस्थ हो जायेंगे। स्वस्थ हो जायें तो मैं सहर्ष आपको दुबारा भेंटका समय दे दूंगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०९१) से

४००. टिप्पणी : मुन्नालाल गं० शाहको[2]

[३ फरवरी, १९४१][3]

इसका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७११५) से। सी० डब्ल्यू० ८५१४ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१. पत्र पानेवालेका नाम जी० एन० रजिस्टरसे लिया गया है।

२ और ३. यह टिप्पणी मुन्नालालके ३ फरवरी, १९४१ के पत्रपर लिखी गई थी, जिसमें उन्होंने गांधीजी से पूछा था कि आश्रमके फार्मपर पैदा किये गये जिस गेहूं में घुन लग गया है उसे इस्तेमालमें लाया जाना चाहिए या नहीं अथवा बाजारसे अच्छा गेहूं खरीद लेना चाहिए।

४०१. पत्र : कृष्णचन्द्रको

३ फरवरी, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

आज वह रामजी गोपे आवेगा। कहीं भी पडा रहेगा। पाँच दिनसे इधर-उधर रहता है। सज्जन लगता है। साथका उसका पुत्र है।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३६९) से

४०२. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
४ फरवरी, १९४१

चि० प्रभा,

तूने तो गजब कर दिया! एक कार्ड लिखने की भी फुर्सत तुझे नहीं मिलती, यह मैं नहीं मानता। जयप्रकाशने समाचारपत्रोंको जो वक्तव्य दिया है, वह मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगा। इससे अच्छा तो था कि उसने वह निकाला ही न होता। तू उससे मिले, तो यह कह देना। अब तो जो होना था सो हो गया। अपनी तबीयतका ध्यान रखना। मनु मजेमें है। अमतुस्सलाम आज बम्बईसे आ गई। राजकुमारी लखनऊमें है, महादेव दिल्लीमें। मीराबहन ७ को आयेगी। तबतक सब आ जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५१) से

४०३. ई० ई० मेंकको लिखे पत्रका अंश[1]

[५ फरवरी, १९४१ या उसके पूर्व][2]

मेरे मतमें किसी कांग्रेसजनका रेडक्रॉसमें चन्दा देना या रेडक्रॉसका उचित प्रशिक्षण लेना कांग्रेसी अनुशासनका भंग नहीं है। किन्तु यदि कोई कांग्रेसी बाहरी दबावके आगे झुक जाये और किसी अधिकारीके कोपसे बचने के लिए अथवा किसी स्वार्थपूर्ण उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए रेडक्रॉसमें चन्दा दे तो वह भिन्न बात होगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-२-१९४१

४०४. पत्र : सुल्ताना कुरैशी और कुसुम गांधीको

[५ फरवरी, १९४१ या उसके पूर्व][3]

चि० सुल्ताना और कुसुम,

तुम दोनोंका पत्र मिला। तुम दोनोंके अथवा किसीके भी बीच झगड़ा नहीं होना चाहिए। सुल्तानाकी उर्दूकी पढ़ाई यदि अभी ढीली चल रही है तो कोई हर्ज नहीं। अभी तुम लोगोंको वहाँ कितना समय लगेगा? खाना क्या मिलता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७६३) से। सौजन्य : गुलाम रसूल कुरैशी

१ और २. नेल्लूरके डिस्ट्रिक्ट जज ई० ई० मेंक गांधीजी के साथ "रेडक्रॉस संगठनके उद्देश्यों" के बारे में पत्र-व्यवहार कर रहे थे। यह पत्र दिनांक "वर्धागंज, ५ फरवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. डाककी मुहरसे

४०५. पत्र : मंजुलाबहन म० मेहताको

सेवाग्राम, वर्धा
६ फरवरी, १९४१

चि० मंजुला,

तेरा पत्र मिला। तूने प्रभाशंकरके बारेमें लिखा, अच्छा किया। मैं उसे लिख दूंगा।

तू लिखती है कि तुम लोग मईके महीनेमें आओगे। इतनी देर क्यों? मईके महीनेमें तो गर्मी बहुत पड़ती है। उसका डर न हो, तो कोई हर्ज नहीं। तुम्हारे मकानके तैयार होने में समय लगेगा। लेकिन जो मकान बन रहे हैं, मैं उनमें तुम्हारे लिए गुंजाइश निकाल सकूंगा, और वहाँ तुम्हारे लिए अलग रसोई बनाने का सुभीता कर सकूंगा। ऐसा एक मकान तो जल्दी तैयार हो जायेगा। तैयार होने पर खबर दूंगा। वैसे तो जब तुम लोगोंको आना हो, आ सकते हो। चूंकि तुम लोग असुविधाको बरदाश्त कर सकते हो, इसलिए मैं तुम्हारी फिक्र नहीं करता।

ब्रह्मचर्यका व्रत लिया है, उसका पालन अवश्य करना। मेरी इच्छा तो बहुत है कि तुम उसका पालन कर सको तो अच्छा है। अमुक संख्यामें बच्चे हो जाने के बाद सबको ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए। यह नहीं करते, इसीलिए लोग कृत्रिम उपायोंसे बच्चोंका होना रोकते हैं। लेकिन उससे अन्तमें नुकसान ही होता है। नैतिकता-जैसी कोई चीज ही नहीं रहती। मेरी रायमें बिना संयमका जीवन व्यर्थ है। और बिना संयमके सच्ची सेवा तो हो ही नहीं सकती। जो ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते हैं, उन्हें सादा और संयमका जीवन बिताना चाहिए। अपना सारा समय शारीरिक तथा मानसिक सत्कर्मोंमें बिताना चाहिए। वाचन भी ऐसा करना चाहिए जिससे सद्विचारोंको प्रोत्साहन मिले। पति और पत्नी, दोनोंको सेवा-कार्यमें लगे रहना चाहिए, जिससे स्वेच्छाचारका विचार बिलकुल मनमें उठे ही नहीं। और भी कुछ पूछना हो, तो पूछना। अपनी सामर्थ्यके बाहर तो कुछ करना ही नहीं चाहिए। संयम पालनेवाले तो कोई विरले ही होते हैं, इसलिए अगर तुम दोनों संयमका पालन लम्बे समयतक के लिए न कर सको, तो मेरे लिए कहने को क्या रह जाता है? अतः दोनों विचार करके जो ठीक लगे सो करना।

देवदास कहता था कि मगन पूना जाने का विचार कर रहा था। अगर तुम्हारा यहाँ रहने का इरादा न हो, तो पूना दिल्लीसे अवश्य बेहतर है।

उर्मिला मजेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६१३)से। सौजन्य: मंजुलाबहन म० मेहता

४०६. पत्र : बलवन्तसिंहको

६ फरवरी, १९४१

चि० बलवंतसिंह,

तुमारा लिखना[1] सही है। मैं सावधानीसे काम ले रहा हूं। यदि अधूरा छोडके मर गया तो सब काम टीकापात्र होगा। अगर पूरा करके मरा तो सब देखेंगे। इतना कहता हूं कि खादको बरबाद नहिं होने दूंगा। मैं जो कुछ करता हूं सब अंतमें गरीबोंके हि लिये है। लेकिन आज तो इसमें से कुछ भी सेवाग्राममें सिद्ध नहिं कर सकता हूं। श्रद्धा रखो और अपना निजी जीवन सादा और विशुद्ध रखोगे तो देखोगे कि सो ठीक ही किया है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुमने लिखा सो ठीक हि किया है। इसमें न दांत है न पंजा।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९४०) से

४०७. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

६ फरवरी, १९४१

चि० मुन्नालाल,

कोई हर्ज नहीं जो तुमने लम्बा पत्र लिखा। उससे मेरा रक्तचाप बढ़ नहीं जायेगा। बलवन्तसिंहको लिखा पत्र[2] पढ़ना। तुमने जो लिखा है, वह बिलकुल सही है। अब देखो, नतीजा क्या निकलता है। बादशाही-जैसा लगता है पर जीवन दरअसल बिलकुल सादा है। वैसे, प्रयोगकी दशामें यह सब साबित नहीं किया जा सकता। लेकिन इतना समझने की कोशिश करो कि यदि सब लोग रोटीके सिवाय बाकी सब कुछ बिना पका खायें, तो क्या खर्च होगा? दूधका परिमाण कम हो जायेगा, ईंधन कम लगेगा, और फलोंमें घरके फल और साग-भाजीसे काम चल जायेगा। इसी दृष्टिकोण से मैं इस प्रयोगमें नवयुवकके-जैसे उत्साहसे लग गया हूँ। वैसे हमारा आश्रमका समाज बहुरंगी है, यह एक बड़ी बाधा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५१३) से। सी० डब्ल्यू० ७११९से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१. बलवन्तसिंहने लिखा था कि गांधीजी ने एक सेप्टिक टैंक बनानेकी इजाजत दे दी है।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

४०८. पत्र : पटवर्धनको

६ फरवरी, १९४१

भाई पटवर्धन,

तुम्हारा पत्र मिला। डा० खरे कांडका इससे क्या संबंध हो सकता है? मैं तो अभी भी कहता हूं कि मुझपर किसीने बोझ डाला नहीं है, न मैं उठाना चाहता हूं। शुरूसे ही मैंने यही कहा है। विद्यालयमें मेरा भी तो हाथ है न? इसी कारण मैंने मित्र-भावनासे तुम्हारी और स०[1] की बात सुनी। मैं तो दोनोंको मिलाकर ही कुछ कर सकता हूं। अदालतकी जगह मैं नहीं लूंगा।

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४०९. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

सेवाग्राम

७ फरवरी, १९४१

प्रिय अमृतलाल,

तुमने जो-कुछ लिखा सो अच्छा ही किया। हलचलसे लाभ ही होगा। तुम्हें सब्र रखना चाहिए, सब-कुछ ध्यानसे देखना चाहिए और फिर तुम भी यही कहोगे कि ग्राम्य जीवनके आदर्शको आघात पहुँचानेवाला कोई कदम नहीं उठाया जायेगा।

तुम्हारा,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४५५) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१. सहस्रबुद्धे

४१०. पत्र : कामेश्वरम्माको

सेवाग्राम, वर्धा
७ फरवरी, १९४१

प्रिय बहन,

मुझे आपका करुण पत्र मिला। आपको अपने पतिको[1] ध्यानमें रखते हुए सत्याग्रह नहीं करना चाहिए या सक्रिय रूपसे कोई राजनीतिक कार्य नहीं करना चाहिए। रचनात्मक कार्यका क्षेत्र आपके लिए खुला हुआ है। यह क्षेत्र काफी विस्तृत है। यदि अलग रहने के बावजूद कुछ हो जाता है तो आपको उसके लिए तैयार रहना चाहिए और खुशीके साथ उसे सहन करना चाहिए।

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२७९)से

४११. दिल्लीके एक कांग्रेसीको लिखे पत्रका अंश

[९ फरवरी, १९४१ के पूर्व]

हरएक सत्याग्रही अपना नेता स्वयं होगा और मेरे गिरफ्तार होने पर राष्ट्रीय संघर्षकी पूरी जिम्मेदारी वहन करेगा।

यह धारणा गलत है कि सत्याग्रहमें भाग लेकर गिरफ्तारीको आमन्त्रण देनेवाले ही देशके महान् ध्येयमें योगदान देते हैं। मेरे विचारमें जो लोग अपने समयका हर खाली क्षण कताई व कांग्रेसके दूसरे रचनात्मक कार्योंमें लगाते हैं, उनका भी राष्ट्रीय आन्दोलनमें बहुत बड़ा योगदान है।

गांधीजी ने यह भी कहा है कि उनके (गांधीजी के) हाथोंमें आन्दोलनकी बागडोर रहते हुए किसी भी भारतवासीको यह कल्पना नहीं करनी चाहिए कि यह आन्दोलन जन-आन्दोलनका रूप धारण कर सकेगा। उन्होंने प्रत्येक भारतवासीका आह्वान किया है कि सभी सत्याग्रहियोंके लिए जिन नियमोंका निर्धारण किया गया है, उनको पूरा करें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-२-१९४१

१. मैसूर विश्वविद्यालयके प्रो० कर्पूरस्वामी

४१२. पत्र : निर्मलानन्दको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
९ फरवरी, १९४१

प्रिय निर्मलानन्द,

मुझे आशा है कि तुम्हारी अनुपस्थितिमें सब ठीक रहेगा। तुम्हारी भेजी हुई रिपोर्ट अच्छी है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३९४) से

४१३. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

सेवाग्राम, वर्धा
९ फ़रवरी, १९४१

प्रिय सर तेजबहादुर,

आपका पत्र[1] अभी-अभी मिला है। इसने मुझे कुछ बेचैन कर दिया है। मेरे विचारमें मैं आपको बता चुका हूँ कि मैं उन्हें तबतक नहीं लिखूँगा जबतक कि मुझे यह पता नहीं चल जाता कि वे किसी समझौतेपर आना चाहते हैं। मेरी जानकारीके अनुसार उनका ऐसा कोई मंशा नहीं है। कायदे-आजम जिन्नाको लिखे आपके पत्रकी[2] नकल मेरे पास होती तो अच्छा होता। निश्चय ही मैं यह नहीं चाहता कि आप किसी गलतफ़हमीको, यदि कोई है तो, दूर करने के लिए और कोई कदम उठायें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५८२) से। सी० डब्ल्यू० १०२८१ से भी; सौजन्य : नेशनल लाइब्रेरी

१. ६ फरवरीका; देखिए पृ० ३३९, पा० टि० ३।

२. १२ फरवरीको गांधीजी को लिखे गये अपने पत्रमें सर तेजबहादुर सप्रूने इस पत्रके अंशोंको उद्धृत किया था, जिनके लिए देखिए परिशिष्ट १०। सर तेजबहादुरको जिन्नाका जो उत्तर मिला था, उसे उन्होंने १४ फरवरीको गांधीजी को भेज दिया था। देखिए "पत्र : तेजबहादुर सप्रूको", पृ० ३६९ भी।

४१४. तार : आर० के० सिधवाको[1]

सेवाग्राम
१० फरवरी, १९४१

चुनावके[2] सम्बन्धमें मौलानाके निर्देशोंका पालन करो। सबसे ठीक निर्णय स्थानीय लोग ही दे सकते हैं।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

४१५. पत्र : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' को

सेवाग्राम, वर्धा
१० फरवरी, १९४१

महोदय,

आपने अपने ७ फरवरीके अंकमें मुझे संबोधित करके गम्भीरतापूर्वक जो-कुछ लिखा है उसका जवाब देना आवश्यक है।

आपके अविश्वासके बावजूद मैं अपने इस विश्वासपर दृढ़ हूँ कि पतितसे-पतित व्यक्तिपर भी अहिंसाका अनुकूल प्रभाव पड़ सकता है। अहिंसाकी सारभूत विशेषता यह है कि वह हर प्रकारके विरोधपर विजय पा लेती है। यह बहुत सम्भव है कि मैं स्वयं उस हदतक अहिंसाका प्रदर्शन न कर पाऊँ और दूसरे लोग उससे भी कम अहिंसा प्रदर्शित कर पायें। परन्तु मैं अहिंसाकी शक्तिको कम नहीं आँक सकता। न मुझे यह सन्देह है कि हिटलरपर सच्ची अहिंसाकी अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं होगी।

अपने अविश्वासके समर्थनमें आपने जो उदाहरण दिये हैं, वे सब अनुपयुक्त हैं, क्योंकि वे इस मामलेमें कतई लागू नहीं होते। यह आवश्यक नहीं कि हथियार डाल देने का मतलब यह हो कि मनुष्य अहिंसापर चल रहा है। हो सकता है कि चेकोस्लोवाकिया, डेनमार्क, आस्ट्रिया और पोलैण्डके लोगोंने बड़ी बुद्धिमत्ताका काम किया हो, लेकिन निश्चय ही उन्होंने अहिंसात्मक ढंगसे काम नहीं किया। अगर वे शस्त्रोंकी मददसे शत्रुका सफलतापूर्वक विरोध कर सकते तो अवश्य करते और ऐसा करके वे अपने देशवासियोंकी सराहनाके पात्र बनते। और सशस्त्र प्रतिरोध

१. रुस्तमजी खुर्शेदजी सिधवा; सिन्ध विधान-सभामें कांग्रेस दलके नेता
२. यहाँ संकेत सिन्धमें सक्खर जिलेके रोहरी डिवीजनमें उपचुनावसे है।

असम्भव हो जाने पर उन्होंने हथियार डाल दिये, इसके लिए मैं उनकी निन्दा भी नहीं करता। परन्तु इसी तरहके संकटोंका मुकाबला करने के लिए और इस उद्देश्यसे कि विनाशके आधुनिक शस्त्रोंसे पूर्णतः सुसज्जित बलवान व्यक्तियोंके मुकाबलेमें कमजोरसे-कमजोर व्यक्ति भी अपनेको अशक्त अनुभव न करे, मैंने १९०७ में दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रहकी खोज और उसका प्रयोग किया था।[1] उसके बादसे इसका प्रयोग विभिन्न तथा और भी कठिन परिस्थितियोंमें सफलतापूर्वक किया जाता रहा है। किन्तु, क्षमा कीजिए, भारतपर हिटलरके हमलेकी स्थितिमें मुझे जिन ताकतोंका सामना करना पड़ सकता है उनके और जिन ताकतोंका मुझे अभी तक सामना करना पड़ा है उनके बीच मैं किसी किस्मका फर्क नहीं करता। इस सम्भावनासे कि वह प्रत्येक सत्याग्रहीको मौतके घाट उतार देगा, मुझे न तो आतंक होता है और न निराशा ही। अगर हिन्दुस्तानको इस तरहकी अग्नि-परीक्षामें से गुजरना पड़े और अगर बहुत-से सत्याग्रही अपने हृदयमें बिना कोई द्वेष-भावना रखे हिटलरकी सेनाका मुकाबला करते हुए मर जायें, तो यह उसके लिए एक नया अनुभव होगा। हिटलरपर उसकी कोई प्रतिक्रिया हो या न हो, परन्तु मैं यह अवश्य जानता हूँ कि उसकी सेनाका मुकाबला करनेवाले ये सत्याग्रही इतिहासमें वैसे ही वीर और वीरांगनाएँ समझे जायेंगे, जिनका उल्लेख हमें कहानियों और गाथाओंमें मिलता है।

लेकिन जब आप मेरे सहयोगियोंकी ईमानदारी और अहिंसापर अविश्वास व्यक्त करते हैं तो आपका आधार उतना कमजोर नहीं है। आपको हक है कि आप पूना-प्रस्ताव मेरे मुँहपर मार दें। मैं पहले ही स्वीकार कर चुका हूँ[2] कि अगर मुझमें क्षणिक कमजोरी न आती तो पूना-प्रस्ताव किसी भी हालतमें स्वीकार नहीं किया जा सकता था। जहाँतक ईमानदारीकी कमी अथवा दोषपूर्ण अहिंसाका प्रश्न है, मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि इस बातका प्रमाण तो भविष्य ही देगा कि ये सत्याग्रही नाममात्रके सत्याग्रही थे, अथवा उतने ईमानदार और अहिंसक सत्याग्रही थे जितना कि कोई मनुष्य हो सकता है। मैं यह बात दावेके साथ कह सकता हूँ कि अहिंसाके उचित स्तरको ध्यानमें रखते हुए ही बड़ी सतर्कतापूर्वक सत्याग्रहियोंका चुनाव किया गया है। फिर भी मैं मानता हूँ कि इनमें कुछ पाखण्डी लोग भी घुस आये हैं। परन्तु मेरा विश्वास है कि अधिकांश सत्याग्रही सच्चे उतरेंगे। कांग्रेस अध्यक्षने अहिंसाकी अपनी मर्यादाएँ साफ-साफ घोषित कर दी हैं।[3] लेकिन जहाँतक मैं उनके भावोंको जानता हूँ —— और मेरा दावा है कि अगर मैं नहीं जानता तो कोई नहीं जानता —— उनकी अहिंसा उनके द्वारा निर्धारित मर्यादाओंके भीतर कैसे भी

१. २२ मार्च, १९०७ को पारित ट्रान्सवाल एशियाई पंजीकरण कानूनके विरोधमें

२. देखिए पृ० ३२-३५; और "पत्र : कार्ल हीथको", पृ० ३२२-२४ भी।

३. **इंडियन एनुअल रजिस्टर**, १९४०, खण्ड २, पृ० ५६ के अनुसार, लाहौरमें ३० दिसम्बर, १९४० को अबुल कलाम आजादने एक भेंटके दौरान कहा था: "यदि कल भारतपर हमला हो और मेरे देशकी रक्षा करने का कोई दूसरा चारा न हो, तो मुझे हथियार उठाकर लड़ने में झिझक न होगी।"

प्रलोभनसे विचलित नहीं होगी। अगर मेरे पास मौलाना साहबके-जैसे मर्यादित विश्वासवाले सहयोगी हों तो मैं हिटलरका अहिंसात्मक प्रतिरोध करूँ। ऐसी अहिंसा कसौटीपर खरी उतरेगी या नहीं, यह एक विवादास्पद विषय है। पर अबतक मैंने ऐसी ही सामग्रीके सहारे सफलता प्राप्त की है।

आपका यह कहना गलत है कि मैं भाषण अथवा समाचारपत्रोंके लिए अनियन्त्रित स्वतन्त्रताकी माँग कर रहा हूँ।[1] मैंने तो यह कहा है[2] कि हमें अनियन्त्रित स्वतन्त्रता चाहिए, बशर्ते कि अहिंसाके साथ उसकी विसंगति न हो। कांग्रेसी मन्त्रियोंकी प्रतिबन्धक कार्रवाई इस मर्यादासे बाहर थी, मुझे इसका कोई ज्ञान नहीं है। अगर थी तो निश्चय ही वह कार्रवाई कांग्रेसकी घोषित नीतिके खिलाफ थी और वह न मेरा पथ-प्रदर्शन कर सकती है और न मेरे लिए कोई कसौटी हो सकती है।

मुझपर सबसे निर्मम प्रहार तो इस व्यंग्यमें है कि पूर्वोक्त मर्यादाके साथ भाषणकी स्वतन्त्रताकी मेरी माँग "ब्रिटेनसे राजनीतिक रियायतें ऐंठने का एक तरीका है।" अगर सविनय अवज्ञाका डर दिखलाकर भी राजनीतिक रियायतें माँगी जायें तो राजनीतिक दृष्टिसे उसमें कोई दोष नहीं है। लेकिन सभी लोग जानते हैं कि पूनाका प्रस्ताव मंसूख हो चुका है। और जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, युद्धके जारी रहते वह प्रस्ताव मेरे लिए मंसूख ही है। अगर भाषणकी स्वतन्त्रताका अधिकार मान लिया गया और देशमें पहले-जैसी ही स्थिति कायम कर दी गई तो निश्चय ही सविनय अवज्ञा आन्दोलन वापस ले लिया जायेगा। पिछले आन्दोलनके दौरान मैंने कभी यह नहीं कहा था कि वे सम्भवतः लम्बे चलेंगे। परन्तु इस बार मैंने ऐसा कहा है, क्योंकि मेरा यह विश्वास है कि युद्धके दौरान कांग्रेसके साथ तबतक समझौता नहीं हो सकता जबतक भारतको पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं दे दी जाती। और इसका सीधा-सादा कारण यह है कि कांग्रेस युद्धमें जन और धनकी सक्रिय सहायता देने का वायदा नहीं कर सकती। ऐसा करने का मतलब कांग्रेसकी उस अहिंसा-नीतिके विरुद्ध काम करना होगा जिसपर वह पिछले बीस बरससे चलती आ रही है। और जबतक युद्ध जारी है तबतक आजादी किसी समझौतेके जरिये हासिल नहीं हो सकती। इसलिए जहाँतक मुझे मालूम है, अगर कांग्रेसको अहिंसात्मक रूपसे अपना विकास करने की पूरी आजादी दे दी जाये तो उसे सन्तोष हो जायेगा। कांग्रेसकी यह माँग सभी लोगों और दलोंके लिए है।

आपने मुझसे सवाल किया है कि इन सब तथ्योंको ध्यानमें रखते हुए "क्या मौजूदा आन्दोलनको जारी रखना नैतिक दृष्टिसे उचित है?" उसका जवाब आपने

१. **टाइम्स ऑफ इंडिया** ने लिखा था: "वे [गांधीजी] समाचारपत्रोंकी और लोगोंके लिए जो चाहे सो कहनेकी अनियन्त्रित स्वतन्त्रताकी माँग करते हैं। ये तथाकथित अधिकार संसारमें कहीं भी नहीं हैं। जब गांधीजी की कांग्रेस भारतके प्रान्तोंमें पदारूढ़ थी उस समय भी ये अधिकार नहीं थे। बम्बई और मद्रास इसके प्रमाण हैं। जो अधिकार कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलोंतक ने जनताको नहीं दिये थे, उन अधिकारोंकी अपने और औरोंके लिए माँग करना क्या गांधीजी के लिए उचित है?"

२. देखिए पृ० ३३२-३४।

स्वयं ही नकारात्मक रूपमें दे दिया है। परन्तु यह आवश्यक नहीं कि मैं आपके जवाबको स्वीकार कर लूं। पहली बात तो यह है कि जैसा मैंने ऊपर कहा है, मैं आपके तथ्योंको तथ्य नहीं मानता; दूसरे, आपके जवाबको स्वीकार कर लेने का मतलब मेरे लिए अपने-आपको बिलकुल दिवालिया घोषित कर देना होगा। पिछले लगभग पचास सालसे अहिंसाकी शक्तिपर मेरा जो अडिग विश्वास रहा है, ऐसा करना उसके प्रति विश्वासघात होगा। हो सकता है कि मैं अपने काममें असफल नजर आऊँ। लेकिन, लोगों द्वारा सर्वथा गलत समझे जाने का खतरा उठाकर भी, मुझे इसी आस्था और विश्वासको लेकर जीना और कार्य करना है कि मैं भारत, ब्रिटेन और मानवताकी सेवा कर रहा हूँ। मैं ब्रिटेनको नुकसान पहुँचाकर भारतकी भलाई नहीं चाहता, और इसी तरह जर्मनीको नुकसान पहुँचाकर ब्रिटेनका कल्याण नहीं चाहता। हिटलर तो दुनियामें आते और जाते रहेंगे। जो लोग सोचते हैं कि हिटलरके मर जाने अथवा पराजित हो जाने पर हिटलरी भावना भी मर जायेगी वे बड़ी भारी भूल कर रहे हैं। विचारणीय प्रश्न तो यह है कि हम उस भावनाका मुकाबला कैसे करते हैं — हिंसासे या अहिंसासे। अगर हम उसका मुकाबला हिंसासे करते हैं तो हम उस दुर्भावनाको प्रोत्साहन देते हैं। अगर हम उसका मुकाबला अहिंसासे करते हैं तो हम उसे निर्बीज कर देते हैं।

आप मुझसे कहते हैं कि मैं अपना ध्यान आन्तरिक एकताकी स्थापनामें लगाऊँ। आन्तरिक एकताकी मेरी लगन उतनी ही पुरानी है जितनी कि अहिंसा की। वस्तुतः अपने पारिवारिक घेरेके बाहर मेरा पहला अहिंसात्मक प्रयोग इसी एकताको बढ़ाने के लिए था। इसमें मुझे पर्याप्त सफलता मिली। अतः आप कृपया विश्वास करें कि वर्त्तमान आन्दोलनके कारण एकता स्थापित करने का मेरा प्रयास रुका नहीं है, बल्कि और तीव्र हुआ है। अहिंसात्मक प्रयत्नका सौन्दर्य इस बातमें है कि इसकी विफलतासे यदि किसीको नुकसान होगा तो केवल उन्हींको जो यह प्रयत्न कर रहे हैं, जब कि इसकी सफलताका लाभ चतुर्दिक होगा।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
टाइम्स ऑफ इंडिया, १५-२-१९४१

४१६. पत्र : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के सम्पादकको

सेवाग्राम, वर्धा
१० फरवरी, १९४१

प्रिय सम्पादक महोदय,

इसे[1] आप बिना किसी परिवर्तनके छापिए, अन्यथा पूर्णतया अस्वीकार कर दीजिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी, खण्ड ६, पृ० १६ और १७ के बीच प्रकाशित प्रतिकृति

४१७. पत्र : प्रफुल्लचन्द्र घोषको

सेवाग्राम
१० फरवरी, १९४१

प्रिय प्रफुल्ल,

तुम्हारा पत्र पाकर मुझे बड़ी खुशी हुई। क्या तुम्हारे साथीने 'गीता' का शुद्ध पाठ किया था? कताईमें तुम्हारी गति तो बड़ी अच्छी हो गई है। आशा करता हूँ कि तुम्हारा सूत बिलकुल एकसार व मजबूत निकलता है।

सरदारका स्वास्थ्य बहुत अच्छा चल रहा है और वे अपना लगभग सारा समय कताईमें लगा देते हैं। उन्होंने अपने साथियोंको भी ऐसा ही करने को प्रेरित किया है, भले ही वे उतना समय न लगायें। वे सामूहिक प्रार्थना करते हैं और अपने समयका सदुपयोग कर रहे हैं।

मेरे स्वास्थ्यके समाचारोंपर विश्वास मत करो। मेरा स्वास्थ्य बिलकुल अच्छा है और यदि मैं रातके समय काम न करूँ तो रक्तचाप नियन्त्रणमें रहता है।

जमनालालजी नागपुर जेलमें विनोबा व प्यारेलालके साथ हैं। उनकी एक बड़ी मण्डली बन गई है और वे सब नियमित रूपसे कताई करते हैं।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

मुझे २८ तारीखको कमला [नेहरू] अस्पतालका उद्घाटन करने इलाहाबाद जाना है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७८०)से

४१८. पत्र : ईश्वर शरणको

१० फरवरी, १९४१

प्रिय मुंशीजी,

यदि मैं वहाँ आया तो आश्रम आने की जरूर कोशिश करूँगा। किन्तु कृपया मेरे आने की न कोई पूर्व-घोषणा कीजिए और न कोई विशेष आयोजन ही कीजिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री मुंशी ईश्वर शरण
हरिजन आश्रम
इलाहाबाद

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० १०२८२)से। सौजन्य : इलाहाबाद म्युनिसिपल म्यूजियम

४१९. पत्र : कुँवरजी खेतसी पारेखको

सेवाग्राम, वर्धा
१० फरवरी, १९४१

चि० कुँवरजी,

तुम्हारा पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। मनु यहाँसे तो ज्वरमुक्त होकर गई है, इसलिए अब अगर उसे वहाँ बुखार आया, तो उसका दोष मैं तुम सबके सिर मढ़ूँगा। डाक्टरोंकी परीक्षाका परिणाम सूचित करना। तुम अच्छे हो, यह बहुत अच्छा हुआ। अपनी तबीयत बिगड़ने मत देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९७४५)से। सी० डब्ल्यू० ७२५ से भी; सौजन्य : नवजीवन ट्रस्ट

४२०. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१० फरवरी, १९४१

भाई घनश्यामदास,

कांतिका खत सरल तो है — लेकिन नीति-विरुद्ध है इसलिये यह बात कुछ भाई नहिं, लेकिन मैं रोकुं भी कैसे? इसलिये भले भेजा।[1]

बापुके आशीर्वाद

मूल (सी० डब्ल्यू० ८०४१) से। सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

४२१. पत्र : पी० कोदण्डरावको

सेवाग्राम, वर्धा
११ फरवरी, १९४१

प्रिय कोदण्डराव[2],

तुम्हें बीमार पड़ने का कोई अधिकार नहीं है।

जब लोगोंको आशीर्वादकी जरूरत होती है तो वे डाक द्वारा आशीर्वाद नहीं मांगते। इसलिए मेरीको यहाँ आना पड़ेगा और यथोचित विनय-भावसे उसके लिए प्रार्थना करनी होगी।

रही तुम्हारे मामलेकी बात, सो मेरी पैरवीके बावजूद फैसला तुम्हारे पक्षमें नहीं हो सका। किसी भी प्रकारकी तकरीरबाजीसे मुझे हृदयसे अरुचि है। और गोखलेके[3] बारेमें तो मैं बिलकुल भाषण नहीं दे सकता। अतः तुम्हें मेरे बिना ही काम चलाना होगा।

अन्ततः जबतक कर्त्तव्यकी प्रबल पुकार न हो तबतक मुझे सेवाग्रामसे खींचना जीवदयाके विरुद्ध है।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२८२) से

१. घनश्यामदास बिड़लाने अपने पत्रमें गांधीजी को लिखा था : "मैं कान्तिसे मिले पत्रकी एक प्रति संलग्न कर रहा हूँ। . . मैंने उसे हर महीने ५० रु० भेजने का वादा किया है और मैंने शुरूके तीन महीनोंके लिए १५० रु० उसे भेज भी दिये हैं।"

२. सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीवाले

३. जिनकी २६ वीं पुण्यतिथि १९ फरवरीको थी।

४२२. पत्र : चारुप्रभा सेनगुप्तको

सेवाग्राम, वर्धा
११ फरवरी, १९४१

प्रिय बहन,

गांधीजी को आपका पत्र मिला है। आपको सत्याग्रह नहीं करना है और यदि प्रान्तीय कमेटीवालोंका आग्रह ही न हो कि आप पदपर बनी रहें, तो आप अपना त्यागपत्र भी दे दीजिए। रचनात्मक कार्य करने के कारण जिन लोगोंकी गिरफ्तारी हो जाये, वे अदालतमें अपना बचाव पेश कर सकते हैं।

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

श्रीमती चारुप्रभा सेनगुप्त
३२/५ बीडन स्ट्रीट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन ८७१२)से

४२३. पत्र : सुरेन्द्र मशरूवालाको

सेवाग्राम, वर्धा
११ फरवरी, १९४१

चि० सुरेन्द्र,

तुम दोनोंका[1] पत्र मिला। कल मैंने कुँवरजीके पत्रका उत्तर[2] दे दिया। मनुको दवाकी गुलाम मत बना देना। मैं समझता हूँ कि उसे यहाँ बहुत फायदा हुआ था। उसे इसे बनाये रखना चाहिए। रोगका जो निदान हो, मुझे बताना।

मुझे लगता है, मनुके ऊपर हुआ खर्च तुझसे लेना मेरा कर्त्तव्य है। मैं कोई अलगसे हिसाब तो रखता नहीं। ऐसे मामलोंमें मैं यह सम्बन्धित व्यक्तिपर ही छोड़ देता हूँ। यों खर्चका मोटा हिसाब बनवा सकता हूँ। तू अगर मेरे मतको उचित माने, तो तुझसे जितनी रकम भेजते बने, भेज देना; उससे तेरे धर्मकी रक्षा

१. सुरेन्द्र मशरूवाला और उनकी पत्नीका
२. देखिए पृ० ३५६।

होगी। कमाते-धमाते लड़के सार्वजनिक कोषपर निर्भर न करें, यही ठीक है। तेरी खुदकी तबीयत भी तो बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५७६)से। सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला

४२४. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

सेवाग्राम, वर्धा
११ फरवरी, १९४१

चि० मनुड़ी,

ऊपर जो मैंने लिखा है,[1] वह ठीक है न? जबतक तू कुँआरी थी, तबतक भले तेरा खर्च सार्वजनिक कोषमें से होता था, लेकिन अब नहीं होना चाहिए न? लेकिन इससे अगर तुझे दुःख होता हो, तो मुझे पैसे नहीं चाहिए।

जल्दी अच्छी हो जा।

वीणाबहन[2] आ गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५७७)से। सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला

४२५. पत्र : कृष्णचन्द्रको

११ फरवरी, १९४१

चि० कृ०,

तुमारा उदाहरण अच्छा नहि है। क्या नियममें यह बात आ सकती है? अगर है तो नियम यही हो सकता है कि तुमारे तो बता देना। हम मोटा बारीककी बात नहि कर सकते हैं कालरकी भी नहि। यह सब प्रेमभावसे कहा जाय। फिर तो वह मेरे पास आ सकते हैं तो तुमारी जिम्मेदारी मेरे पास आने की नहि रहती। इसमें निराशाको स्थान नहि है। दृढ़ताका हि काम है। धर्म असिधारा है। तुम्हारे

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. एक जर्मन महिला

लिये यह उच्च काल है। सैलेनको तुमारे कुरते दे दो। भले मेरे पास शिकायत लाना है तो लावे। भविष्यमें ये भी कर सकते हो कि कोई इस तरह चीज मांगे तो मेरी चिट्ठी मांगो। जैसा सुभिता लगे वही करो। नियमावलि बनाओगे तो मैं देखुंगा और ठीक कर दूंगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७०)से

४२६. पत्र : ई० ई० मैकको

वर्धा
१२ फरवरी, १९४१

प्रिय श्री मैक,

आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। बेशक मैं आपकी बातका भरोसा करता हूँ। मैंने कभी कुछ प्रकाशित नहीं किया। जो चीजें [मेरी न होते हुए भी मेरी] कही जाती हैं, उनके लिए मुझे जिम्मेदार नहीं ठहराना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. १० फरवरीका यह पत्र रेडक्रॉस संस्थासे सम्बन्धित गांधीजी के साथ हुए श्री मैकके पत्र-व्यवहारके प्रकाशनके बारेमें था; देखिए पृ० ३४५ भी।

४२७. पत्र : मीराबहनको

१२ फरवरी, १९४१

चि० मीरा,

मैंने कल और आज तुमसे मिलने की पूरी उम्मीद रखी थी।[1] उस हालतमें मैं तुम्हारे साथ दिन नियत कर लेता। तुम्हें अनुकूल हो तो बुधवार और शनिवार को रातके ८.१५ बजे समय मिल सकता है।[2] आज रातसे शुरू कर सकती हो।

सप्रेम,

बापू[3]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४७१) से। सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८६६ से भी

४२८. पत्र : गांधी अन्नमलैको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१२ जनवरी, १९४१

प्रिय मित्र,

गांधीजी को आपका ७ तारीखका पत्र मिला। उनका कहना है कि आप अपनी नौकरी अभी न छोड़ें। यहांका संघर्ष तो लम्बा चलेगा, आपको अभीसे मैदानमें कूद पड़ने की कोई जरूरत नहीं।

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३४६) से। सौजन्य: जयरामदास दौलतराम

१. मीराबहन लिखती हैं: "मैं पर्वतोंपर से लौट आई थी और पहाड़ीपर बनी अपनी कुटियामें ठहरी हुई थी।"

२. मीराबहन लिखती हैं: "बापूसे मिलने के लिए। उस समय मैं अपना मौन तोड़ देती थी।"

३. पत्रकी पीठपर मीराबहनने लिखा था: "मुझे बहुत दुःख है। अगर मैं जानती तो उत्तरके लिए आ गई होती।"

४२९. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ फरवरी, १९४१

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। हाँ, राजकुमारी आ गई है। आश्रम भरा हुआ है। नये मकान बन रहे हैं। बने नहीं कि भर जायेंगे। तेरी तबीयत भी ठीक रहती है, उससे मालूम होता है कि पहले तेरे हाथमें काम नहीं था। जयप्रकाशसे मिलने में तुझे कोई अड़चन होगी, ऐसा नहीं लगता। मुझे २८ को इलाहाबाद जाना पड़ेगा, तब ज्यादा समझमें आयेगा। तुझे आना हो तो आ जाना। मुझे कमला [नेहरू] अस्पतालका उद्‌घाटन करने जाना है। मैं खूब मजेमें हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५२) से

४३०. पत्र : ना० र० मलकानीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१२ फरवरी, १९४१

भाई मलकानी,

जब काका साहेब हि आते हैं तो मेरा संदेशा क्या? वही मेरा संदेशा है न? आशा है सारी सफर सफल होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९४१) से

४३१. पत्र : पटवर्धनको

१२ फरवरी, १९४१

भाई पटवर्धन,

मार्गदर्शन तो मैंने किया ही था कि सहस्रबुद्धे राजी न होवे तो भी पैसे तो किसी पंचके नामपर रखे जायें। इतना करने को स० तैयार था ऐसा मैं समझा था। अब क्या किया जा सकता है, मैं नहीं समझता हूं। अब पैसा किस तरह रखा है सो भी मैं नहीं जानता हूं। मैं कुछ अधिक स्पष्ट देख सकूं तो बताऊं।

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

४३२. भेंट : वामनराव जोशीको

[१३ फरवरी, १९४१ के पूर्व][1]

मैं संख्या-बल नहीं बल्कि गुण-बल चाहता हूँ। इस प्रकारके सत्याग्रही भले आज कम मिलें, लेकिन उनकी संख्या बढ़ना सुनिश्चित है। मैं सैकड़ों सत्याग्रहियोंके मुकाबले पांच गुणवान सत्याग्रही पसन्द करूँगा, क्योंकि ये पांच अन्ततक लड़ेंगे। अतः प्रान्तोंमें संख्याके लिए स्पर्धा नहीं होनी चाहिए।[2]

समझा जाता है कि बरार प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने सत्याग्रहियोंके लिए प्रशिक्षण शिविर चलाने का जो प्रस्ताव पेश किया है, वह महात्मा गांधीको पसन्द नहीं है।

खबर है, बरार प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री वामनराव जोशीने हालमें ही महात्मा गांधीसे जो भेंट की थी उसमें महात्माजी ने उनसे कहा कि वे ऐसे प्रशिक्षण-शिविर आरम्भ न करें, क्योंकि इसपर सरकार प्रतिबन्ध लगा सकती है और वे [महात्मा गांधी] सरकारको उलझनमें नहीं डालना चाहते।

१. भेंटका पहला विवरण दिनांक "नागपुर, १३ फरवरी" के अन्तर्गत छपा था।

२. यह अनुच्छेद १४-२-१९४१ के बॉम्बे क्रॉनिकल से लिया गया है, जिसमें बताया गया है कि गांधीजी ने यह बात इस प्रश्नके उत्तरमें कही थी कि क्या प्रान्तको यथासम्भव अच्छेसे-अच्छे सत्याग्रही तैयार करने चाहिए अथवा यदि निर्धारित कसौटीपर कोई खरा न उतरे तो सत्याग्रही भरती ही न किये जायें।

महात्मा गांधीको शुद्ध रचनात्मक कार्यकर्त्ताओंके लिए प्रशिक्षण-शिविरोंकी स्थापना करने पर कोई आपत्ति नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-२-१९४१ और १५-२-१९४१

४३३. सन्देश : पंजाबके कांग्रेसियोंको[1]

वर्धागंज
१३ फरवरी, १९४१

सेवा और कर्ममें विश्वास रखिए। यह ज्यादा बड़ा कर्त्तव्य है।

ऐसा समझा जाता है कि महात्मा गांधीने रचनात्मक कार्यको, जो सत्याग्रहके समान ही महत्त्वपूर्ण है, गतिको और तेज करने पर बल दिया है।

अपने प्रतिद्वन्द्वियोंकी चापलूसी मत कीजिए, परन्तु अपने कार्य तथा प्यारसे उन्हें जीतिए और उन्हें अपने विचारोंके कायल कीजिए या कांग्रेस कार्यक्रममें सच्चा विश्वास रखनेवालोंके रूपमें कांग्रेस संगठनमें लाइए।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-२-१९४१

४३४. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१३ फरवरी, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा हिस्सा यह है कि सबके साथ प्रेमसे वर्ताव रखना। साथ जो नियमके बाहर लगे उसे नहि करने देना। अर्थात उसमें सम्मत नहि होना। और जब नियम भंग करे तब मुझे बता देना।[2] लेकिन नियम क्या? एकादश व्रत[3] तो है हि। उसमें से उपनियम होने चाहिये। उसे मैं फुरसद मिले तो अवश्य बनाउं लेकिन नहि है इसलिये तुमारे सरपे बोझ डाला है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७१) से

१. यह सन्देश मोगा (पंजाब) कांग्रेस कमेटीके मन्त्री, श्री रामनाथ अग्रवालके हाथों भेजा गया था, जो सेवाग्राममें एक पखवाड़ा बिताकर १३ फरवरीको वहाँसे रवाना हुए थे। १४-२-१९४१ के *हितवाद*के अनुसार मोगामें १३ फरवरीको सत्याग्रह शुरू किया जानेवाला था और वहाँ रचनात्मक कार्यके लिए एक केन्द्रकी स्थापना होनेवाली थी।

२. देखिए "पत्र : कृष्णचन्द्रको", पृ० ३५९-६० भी।

३. आश्रमवासियों द्वारा ग्रहण किये अहिंसा, सत्य इत्यादि के ग्यारह व्रत; देखिए खण्ड ६१, पृ० ६७।

४३५. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
१४ फरवरी, १९४१

प्रिय भगिनि,

तुमारा खत मिला है। विद्यार्थीओंका तुमने लिखा है ऐसा ही है। यथासंभव उनसे संबंध रखो और कुछ असर पड़े तो पाडो।

तुमारे सविनय भंग करने के बारेमें मुझे तो लगता है कि और सेवा बाहर रहकर करो। बाहर भी काफी काम पडा है। जेल जाने का मोह नहिं होना चाहिये। मुझे कोई पकडनेवाले नहि है। लेकिन पकडे भी तो तुमारे जैसे बाहर होंगे तो ईश्वर प्रेरणासे मिले वह काम करेंगे।

हां, राजकुमारीने बड़ा काम किया। सब ऐसा ही कहते हैं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९९३) से। सी० डब्ल्यू० ३०९० से भी; सौजन्य : रामेश्वरी नेहरू

४३६. पत्र : अद्वैतकुमार गोस्वामीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१४ फरवरी, १९४१

भाई अद्वैतकुमार,

तुमारा खत अभी मिला। मेरा अभिप्राय है कि सामुदायिक प्रार्थनाके लिये लड़ाई न करें। व्यक्तिगतमें बाधा करें तो दूसरी बात है। कमरेमें भी चीखकर नहि होनी चाहिये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १५०) से

४३७. पत्र : रमादेवी चौधरीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१४ फरवरी, १९४१

चि० रमा[1],

तुमारा खत पढ़कर मैं तो बहुत हि खुश हूआ हूं। जो शिक्षकोंने निश्चय किया है उनको धन्यवाद। मेरी आशा है कि दूसरे शिक्षक भी इसी तरह त्याग करेंगे और अपनी शाला नहि छोडेंगे। देहातीओंको भी धन्यवाद। अगर यह काम सफल होगा तो वड़ी सेवा होगी।

वापुके आशीर्वाद

श्री रमादेवी
आश्रम
डाकखाना वाड़ीकट
उड़ीसा

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२९८) से

४३८. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

सेवाग्राम, वर्धा
१४ फरवरी, १९४१

चि० आनंद,

तुमारा खत मिला। कान बिगडते जाते हैं ये तो अच्छा नहि है। मुंबईमें एक जगह है वहां तुमारा इलाज करवाना चाहता हूं। जल्दीमें आ सको तो लिखो। ये हैं दो शब्द।

आनन्द हिंगोरानीने मेरे लेखोंका विभिन्न उचित शीर्षकोंके अन्तर्गत जो संकलन प्रस्तुत किया है वह मुझे पसन्द आया है। उनकी छपाई और जिल्द आकर्षक बनाने पर उन्होंने जो श्रम किया है उसे पाठक सराहे बिना नहीं रहेंगे।

मो० क० गांधी[2]

१. गोपबन्धु चौधरीकी पत्नी; पति-पत्नी मिलकर बाड़ीकटमें एक आश्रमका संचालन कर रहे थे।

२. आनन्द हिंगोरानीके अनुसार मूल रूपसे अंग्रेजीमें लिखी गई यह "प्रस्तावना" उनके द्वारा सम्पादित और प्रकाशित "'गांधी पुस्तक-माला' के सभी शीर्षकोंके लिए" थी। "१ मार्च, १९४१ को इलाहाबादमें गांधीजी" ने इसमें "संशोधन किया था"।

इसे छापना, ब्लोक[1] नहिं बनाना। विद्या और बालक अच्छे होंगे। जेरामदास कैसे हैं? प्रेमी क्या करती है? पिताजीके साथ अच्छा है न?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

४३९. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१५ फरवरी, १९४१

चि० कृ० चं०,

कचराके बारेमें कुछ नहीं। ऐसी भूलें होती रहेगी। जबतक सावधानी आ जाती है खैर ही है।

मुन्नालालने जो सूचना की है उसका अमल करने लायक लगता है। अर्थात् पेसावकी बालटीको दूसरी जगहमें रखना। अंजनादेवीके तरफसे जो तकलीफ होती है वह बताओ तो मैं उसे दूर करने की कोशीश करूंगा। उनके लडके अच्छे हैं। खासकर प्रताप। मुझे लगता है कि उसके खातर भी हम इस कुटुंबको सहन करें।

नियमावली मेरे पास पड़ी है। तुम्हारे जो लिखना है सो अवश्य लिखो और मिलो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७२) से

१. तथापि "गांधी पुस्तक-माला" के अन्तर्गत प्रकाशित सभी शीर्षकोंके आवरण-पृष्ठपर उपर्युक्त प्रस्तावनाके ब्लॉककी प्रतिकृति ही दी गई थी। **टु द स्टुडेंट्स** और **टु द वीमेन** शीर्षकोंसे पहले दो संकलन २ अक्तूबर, १९४१ को प्रकाशित हुए थे।

४४०. पत्र : मुकुन्दलाल सरकारको

सेवाग्राम
१६ फरवरी, १९४१

प्रिय मुकुन्दलाल,

आपका पत्र मिला।[१] आपको उत्तर देने में मुझे देरी इसलिए करनी पड़ी कि मुझे सुभाष बाबूके पत्रकी आपकी भेजी नकल पहले मिली और उसके बाद उनका अपना पत्र मिला।

हमारे मामलेमें जो मतभेद हैं वे बहुत महत्त्वपूर्ण और बुनियादी हैं। सुभाष बाबू उन्हें जानते हैं, और मेरा खयाल है कि आप भी उन्हें जानते हैं। हिंसा द्वारा प्राप्त हुई स्वतन्त्रताके अन्तस्तत्त्व अहिंसा द्वारा प्राप्त स्वतन्त्रताके अन्तस्तत्त्वोंसे निश्चय ही भिन्न होंगे। मेरी कल्पनाकी स्वतन्त्रता गरीबसे-गरीब और तुच्छसे-तुच्छ लोगोंकी स्वतन्त्रता है। लेकिन राजनीतिक भाषामें कहें तो हम सभीको—साम्यवादियों, समाजवादियों, किसान-सभाइयों, मजदूर दलवालों और अन्य लोगोंको भी—स्वतन्त्रताकी बात सोचनी ही होगी, भले हो इन सबोंके लिए स्वतन्त्रता शब्दके अर्थ भिन्न-भिन्न हों।

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मुझे सारा पत्र-व्यवहार प्रकाशित कर देने पर कोई आपत्ति नहीं है।

सुभाष बाबू कहाँ हैं, इसकी कोई खबर मिलते ही कृपया आप मुझे सूचित कीजिएगा।[२]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-२-१९४१

१. साधन-सूत्रमें कहा गया था: "श्री बोसका १० जनवरीका पत्र [देखिए पृ० २८८, पा० टि० ३] अनुत्तरित रहा, इस कारण श्री मुकुन्दलाल सरकारने गांधीजी को २८ जनवरीको तार देकर उसके उत्तर की माँग की। किन्तु जब उन्हें सेवाग्रामसे पता चला कि महात्मा गांधीको वह पत्र नहीं मिला, तो श्री सरकारने ८ फरवरीको उसकी एक नकल उन्हें भेजी।"

२. २१ फरवरीको इसका उत्तर देते हुए मुकुन्दलाल सरकारने इस प्रकार लिखा था: "हालाँकि मैं इस विषयमें पत्र-व्यवहार समाप्त समझता हूँ तथापि मुझे दुःखके साथ कहना पड़ता है कि आपने अपने पत्रमें हिंसक और अहिंसक साधनोंके बारेमें जो वाक्य लिखा है उसका तो मेरी रायमें कोई सवाल ही नहीं पैदा होता, और सुभाष बाबूने जो स्पष्टीकरण माँगा है उसके सन्दर्भमें वह सर्वथा अप्रासंगिक है, क्योंकि सुभाष बाबू कांग्रेसी हैं और फॉरवर्ड ब्लॉकवाले भी कांग्रेसी हैं। इसी कारण सुभाष बाबू और फॉरवर्ड ब्लॉकके उनके साथियोंने स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए 'अहिंसक' जन-आन्दोलनके तरीकेको एकमात्र प्रभावकारी तरीका बताया है और उसका समर्थन किया है, और इस प्रकार इस तरीकेसे प्राप्त होनेवाला स्वराज्य अहिंसक साधनोंसे प्राप्त होनेवाला स्वराज्य ही होगा।"

४४१. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ फरवरी, १९४१

प्रिय सर तेजबहादुर,

आपके दोनों पत्रोंके[1] लिए धन्यवाद। अब मुझे आपके उठाये हुए प्रश्नोंकी चर्चा करने की कोई जरूरत नहीं है। कायदे-आजम जिन्नाके पत्रसे मेरी आशंकाकी पुष्टि हो गई है। यदि मैं "हिन्दू जातिका प्रतिनिधि" बनकर जाऊँ तभी वे मुझसे मिलेंगे। और यह मैं नहीं कर सकता। मैं हिन्दू जातिका प्रतिनिधित्व नहीं करता, यहाँतक कि मैं हिन्दू महासभाका सदस्य भी नहीं हूँ। किन्तु अब आप इस मामलेसे अलग न हटें। आप मेरी चेतावनी पर[2] ध्यान न दें। यदि आप मुझसे सहमत हैं तो मेरा सुझाव है कि आप कायदे-आजमको पत्र लिखें और कहें कि उनकी स्थिति दोषपूर्ण है। और यदि आप मुझसे सहमत नहीं हैं तो आपको मुझे इस बातके लिए राजी करने की कोशिश करनी चाहिए कि मैं हिन्दू जातिका प्रतिनिधि बनकर जाऊँ।[3]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५८१) से। सी० डब्ल्यू० १०२८५ से भी; सौजन्य: नेशनल लाइब्रेरी

१. दिनांक १२ तथा १४ फरवरीके; १२ फरवरीके पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट १०।

२. ९ फरवरीके पत्रमें; देखिए पृ० ३५०।

३. सर तेजबहादुर सप्रूने १९ फरवरीके अपने पत्र (सी० डब्ल्यू० १०२८६) में लिखा था: "...१५ फरवरीसे मैं तेज बुखारमें पड़ा हुआ हूँ... आजकल मैं कोई भी काम नहीं कर रहा हूँ... मैंने अभी-अभी श्री जिन्नाको केवल यह बताने के लिए पत्र लिखा है कि मुझे उनका पत्र मिल गया है।... मुझे तो स्वयं सफलताकी कोई आशा नहीं है। मैं नहीं समझता कि मैं आपको हिन्दुओंके प्रतिनिधि के रूपमें उनसे मिलने के लिए राजी कर सकता हूँ और न ही मैं उनसे अपना दृष्टिकोण बदलने के लिए कह सकता हूँ। फिर भी मैं इसपर विचार करूँगा और यदि कुछ उपयोगी बातें ध्यानमें आयेंगी तो उसपर अमल करूँगा। फिलहाल मैं कोई भी कदम नहीं उठा रहा हूँ।"

४४२. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

सेवाग्राम
१६ फरवरी, १९४१

चि० मनुड़ा,

बा भले गुस्सा हो,[1] लेकिन हमें तो अपना कर्त्तव्य करना ही चाहिए। तो आखिर तूने आठ रुपयों सहित अपनी थैली खो दी न? या फिर बादमें मिल गई? वीणाको कलम देने की बिलकुल जरूरत नहीं थी। उसने तो मुझे दे दी। मैंने कहा तो है कि कलम वही रखे। तू बिलकुल अच्छी हो जा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५७८) से। सौजन्य : मनुबहन सु० मशरूवाला

४४३. पत्र : सुरेन्द्र मशरूवालाको

सेवाग्राम
१६ फरवरी, १९४१

चि० सुरेन्द्र,

दवाके पैसे जो बचा लिये, उनका क्या हुआ? क्या बच गया, इसका हिसाब करने बैठेगा, तो तेरा बोझ बहुत बढ़ जायेगा। लेकिन इस सबके लिए मैं तो तुझे माफ ही कर दूंगा। बा तो सचमुच ही चिढ़ गई थी। [बोली :] "अगर छोकरीसे पैसा लेना था तो उसे बुलाया ही क्यों?" अब मैं तो बुलाऊँगा ही नहीं। इस तरह मेरा संसार चल रहा है। फिर भी मेरे लिए तो कर्त्तव्यका पालन करने के सिवाय और चारा नहीं है।

मनुके पेटके बच्चेको तो कोई खतरा नहीं है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५७९) से। सौजन्य : मनुबहन सु० मशरूवाला

१. देखिए अगला शीर्षक; पृ० ३५८-५९ भी।

४४४. पत्र : बलवन्तसिंहको

१६ फरवरी, १९४१

चि० बलवंतसिंह,

शाकभाजीके बारेमें थोड़ी अव्यवस्था सहन करने योग्य है।[1] जो आश्रममें न चाहिये सो बाहर बेचने की हमारी शक्ति होनी चाहिये। डाक्तरसे बात करके भविष्यका पाक बनाना चाहिये। शाकभाजी ताजी और अच्छी बनाने की शक्ति हमारेमें होनी चाहिये।

गेहूं खराब हो जाय तो फेंकना हि चाहिये। गरीबको भी ऐसा हि करना चाहिये। हमारे गेहूं बिगड़े क्यों?

इस आश्रम खतम होनेवाला नजर नहि आता है। परिवर्तन होना संभव है। जो होगा सो हमारे या कहो मेरे कर्मोंका फल होगा। धैर्य रखें।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९४१) से

४४५. पी० नारायणको लिखे पत्रका अंश[2]

[१७ फरवरी, १९४१ के पूर्व][3]

मेरे विचारमें मजिस्ट्रेट द्वारा की गई टीका-टिप्पणी[4] मान-हानिकारक है। किन्तु उसके विरुद्ध अपील नहीं की जानी चाहिए। उन्होंने जो-कुछ कहा उसके बारेमें कुछ कहने या लिखने का मेरा कोई इरादा नहीं है। वे इस आन्दोलनको क्षति नहीं पहुँचा सकते। उन्होंने तो राजसेवक वर्गको कलंकित करके उसीको हानि पहुँचाई है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-२-१९४१

१. बलवन्तसिंहने यह शिकायत की थी कि मैं यह नहीं पता लगा पा रहा हूँ कि आश्रममें कितनी शाकभाजीकी जरूरत है और मुझे डर है कि अव्यवस्थाके कारण कहीं आश्रम बन्द न हो जाये।

२ और ३. यह पत्र गुन्टूर के पी० नारायन नामक एक कांग्रेसीके उस पत्रके उत्तरमें था जिसमें गांधीजीका ध्यान स्थानीय सब-डिविजनल मजिस्ट्रेट श्री आर० गैब्रीकी कुछ टीका-टिप्पणियोंकी ओर खींचा गया था, जोकि उन्होंने सत्याग्रहियोंके विरुद्ध मुकदमोंके अन्तमें निर्णय सुनाते हुए और

४४६. पत्र : एस० मैलकिन्सनको

सेवाग्राम, वर्धा
भारत
१७ फरवरी, १९४१

प्रिय मित्र,

मैं आपके पत्रको ध्यानपूर्वक पढ़ गया हूँ। उसमें विचारोंका उलझाव है। मेरा शान्तिवाद नाजियोंकी सहायता नहीं कर सकता। भारतमें दो वर्ग हैं। एक वर्गका ब्रिटेन अनुचित रूपसे पूरा लाभ उठा रहा है। मैं उन करोड़ों मूक लोगोंका प्रतिनिधित्व करता हूँ जो सदासे शान्त रहे हैं। नाजी भावना कोई नई चीज नहीं है, केवल नाम नया है। यदि इसका अन्त होना है तो केवल मेरे तरीकेसे ही होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एस० मैलकिन्सन
१३३ प्रिंसेज स्ट्रीट
पोर्ट एलिजाबेथ
दक्षिण आफ्रिका

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१६८) से

गुडूरमें १ फरवरीको एनुगा नरसा रेड्डी द्वारा किये गये सत्याग्रहके बारेमें हुई एक आम सभामें बोलते हुए की थीं। यह समाचार दिनांक "गुडूर, १७ फरवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

४. **द हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस**, खण्ड २, पृ० २६५ के अनुसार गैलेटी अपने अदालती फैसलोंमें यह कहने के साथ-साथ कि बड़े-बड़े षड्यन्त्रकारियोंके बजाय छोटे-मोटे कार्यकर्त्ताओंपर पुलिस द्वारा मुकदमा चलाना गलत है, सार्वजनिक सभाओंमें शरीक होकर भी आन्दोलनके गुण-दोषोंपर टीका-टिप्पणी किया करते थे। उन्हें ऐसा विश्वास था कि उनके प्रमंडलमें स्वयं गांधीजी भी युद्ध-प्रयासोंके मार्गमें रुकावट नहीं डाल सकते। ई० ई० मैक और गांधीजी के बीच पत्र-व्यवहार (देखिए पृ० ३४५ और ३६०) की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि गांधीजी अपने आध्यात्मिक पथसे विचलित नहीं हो सकते। उन्होंने यह भी कहा कि क्वेकर लोगोंकी भाँति गांधीजी ने युद्धका नैतिक विरोध करते हुए भी कांग्रेसियोंसे रेड क्रॉसकी मदद करनेको कहा है। नतीजा यह है कि बहुत-से कांग्रेसी उनसे नाराज हो गये हैं। अधिकांश कांग्रेसियोंमें ईमानदारीका अभाव है।

४४७. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१७ फरवरी, १९४१

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिल गया है। पिछलेका जवाब मैंने दिया था। अब तो मुझे प्रतीक्षा करनी ही होगी। राजेन्द्र बाबूका तो ऐसे ही चलेगा। 'आश्रम समाचार' जब प्रकाशित होगा, तब ये लोग जरूर तुझे भेजेंगे, लेकिन नियमपूर्वक निकलता ही कहाँ है? 'सुराज भवन' यानी 'स्वराज-भवन'[1] ही न? क्या अब तू जयप्रकाशके बहनोईके[2] यहाँ नहीं रहती?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५३) से

४४८. पत्र : पुरुषोत्तमदास टंडनको[3]

सेवाग्राम
१७ फरवरी, १९४१

भाई टंडनजी,

इसका निरीक्षण करवाइये और अब्दुस समद साहबको भी लिखीये।[4]

आपका,
मो० क० गांधी

मूलसे : पुरुषोत्तमदास टंडन कलेक्शन। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. इलाहाबादमें मोतीलाल नेहरूका निवास

२. ब्रिजबिहारी सहाय

३. गांधीजी ने यह अब्दुस समद अन्सारीके उस पत्रके हाशियेपर लिखा था, जिसमें उन्होंने कांग्रेसी सदस्यों द्वारा सुलतानपुरके डिस्ट्रिक्ट बोर्डके अध्यक्षके चुनावमें रिश्वत लेने और मुसलमान-विरोधी कार्य किये जानेकी शिकायत की थी।

४. अपने ४ मार्चके पत्रमें टंडनजी ने लिखा था कि अन्सारी द्वारा दिया गया ब्योरा सही है, किन्तु भ्रष्टाचार तथा मुस्लिम-विरोधी पूर्वाग्रहका कोई प्रमाण नहीं मिलता।

४४९. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

१८ फरवरी, १९४१

चि० मुन्नालाल,

तुमने लिखा, यह बहुत अच्छा किया। मैं दखल दूं और वह तुम्हें खले, तो उसकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। मेरे बुरा मानने का प्रश्न ही नहीं उठता। मैं खुद ही नियमका भंग करूँ तो नियम पाले कौन? अतः जहाँ मैं नियम भंग करता दिखाई देता हूँ, वहाँ भी तुम्हें नियम-पालन ही मिलेगा। कृपालानीके बारेमें मुझे पता चलता, तो मैं उन्हें रोकता। तिसपर भी धर्म यह कहता है कि अगर कोई मेहमान अनपेक्षित आ जाये और भोजन अन्दाजका ही बना हो, तब भी उसमें से उसे देना चाहिए। इसमें विवेक-बुद्धिकी आवश्यकता होती है। जिसके लिए भोजन बना हो, वह प्रसन्नतापूर्वक दे, तभी वह धर्म कहा जायेगा। बा आपत्ति करती है, यह खेदकी बात तो है ही। लेकिन यह तो उसके स्वभावमें है, इसलिए सहन कर लिया जाये, यही उपाय है। धीरजके साथ बा ने बहुत-कुछ सुधार कर लिया है। मैं मेहनत करूँ, तो और भी सुधार हो। लेकिन मैं समय बचाता हूँ। फिर भी देखूंगा।

दातुनोंपर तुम्हें कब्जा कर लेना चाहिए। जो ले वह आँख मींचकर जो उसके हिस्सेमें आ जाये, वह ले। पसन्दसे न चुने। बिलकुल रद्दी जो आ गई हों, उन दातुनोंको फेंक देना चाहिए।

साबुनका पानी बनाकर रख दो, यह मुझे तो ठीक लगता है। मेरी समझमें साबुन बहुत खर्च होता है। इसमें बचत कैसे की जाये, समझमें नहीं आता। कोई रास्ता निकले तो निकालना। सबके साथ सलाह करनी चाहिए। ५०१ [साबुन] तो बन्द ही हो जाना चाहिए। तरल साबुन हम खुद ही क्यों न बनायें? सोचना।

अन्य सुधार जो तुमने सुझाये हैं, मुझे पसन्द हैं।

रसोईघरका काम लगभग सब समय होता रहता है, इसमें मुझे तो कुछ अनोखा नहीं लगता। हाँ, आवश्यक व्यवस्था होनी चाहिए। और रसोईघरमें काम करनेवाले स्थितप्रज्ञ होने चाहिए। अगर वे स्थितप्रज्ञ हों तो सारी व्यवस्था अच्छी तरह चले। मेरी मददकी जरूरत हो, तो लेना। सब-कुछ हँसकर करना और कराना; और जो बिलकुल न हो सके, उसके सम्बन्धमें धीरजसे काम लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५१२) से। सी० डब्ल्यू० ७१२० से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

४५०. अली गुल खाँको लिखे पत्रका सारांश

[१९ फरवरी, १९४१ के पूर्व][1]

पता चला है कि महात्मा गांधीने सीमा प्रान्त कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष अली गुल खाँको एक पत्र भेजा है, जिसमें उन्होंने खान अब्दुल गफ्फार खाँके इस सुझाव पर अपनी सहमति व्यक्त की है कि सत्याग्रही रचनात्मक कार्यको पूरा करने के लिए सीमा प्रान्तमें ही रहें। अतः फिलहाल सत्याग्रहियोंको दिल्लीकी ओर कूच करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

बताया जाता है कि जो सत्याग्रही किसी-न-किसी बहानेसे सत्याग्रहको टालना चाहते हैं उनके बारेमें महात्मा गांधीने यह सलाह दी है कि जो लोग सत्याग्रहको टालने के ठोस कारण न दे सकें, उनके नाम सत्याग्रहियोंकी सूचीमें से निकाल दिये जायें।

अली गुल खाँ यह पत्र अब्दुल गफ्फार खाँको भेज रहे हैं, जो उतमंजईमें हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-२-१९४१

४५१. पत्र : असम प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके महामन्त्रीको[2]

सेवाग्राम, वर्धा

१९ फरवरी, १९४१

महामन्त्री

असम प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी

कांग्रेस भवन

गोहाटी

प्रिय मित्र,

महामन्त्रीको लिखा आपका १६ फरवरी, १९४१ का पत्र मैंने गांधीजी को दिखाया। गांधीजी ने मुझे आपको निम्नलिखित उत्तर देने को कहा है :

१. यह रिपोर्ट दिनांक "पेशावर, १९ फरवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

२. इस पत्रकी एक प्रति जोरहाट जिला कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री के० चालिहा, एम० एल० ए० और कृष्णनाथ शर्मा (जोरहाट) को भेजी गई थी।

वर्त्तमान सरकारने जो मद्य-निषेध अभियान शुरू किया है उसमें कांग्रेसियों द्वारा सहायता किये जाने पर उन्हें [गांधीजी को] कोई आपत्ति नहीं है, बशर्ते कि इससे सत्याग्रह-अभियानपर कोई प्रभाव न पड़ता हो। कहने का तात्पर्य यह है कि जो लोग सत्याग्रहके प्रतिज्ञा-पत्रपर हस्ताक्षर कर चुके हैं और पूर्वसूचित तिथियोंपर सत्याग्रह करनेवाले हैं, उन्हें इस अभियानसे अपने निर्णयको प्रभावित नहीं होने देना चाहिए। आप कहते हैं: "कुछ कांग्रेसी, जिनमें से अधिकतर सक्रिय सत्याग्रही हैं, मद्य-निषेध समितियोंके सदस्य बनाये गये हैं और कुछ मामलोंमें उन्होंने उत्तरदायित्व-पूर्ण भूमिका स्वीकार कर ली है।" लेकिन श्री चालिहा गांधीजी को लिखे अपने १५ फरवरी, १९४१ के पत्रमें कहते हैं: "जो कांग्रेसी इस कार्यमें अपनी सेवाएँ प्रस्तुत कर रहे हैं वे लगभग (सभी?) गैर-सत्याग्रही हैं, और १५० सदस्योंमें से केवल कुछ ही लोग सत्याग्रही हैं।" सच क्या है? जो भी हो, हमारा कर्त्तव्य स्पष्ट है। जिन्होंने सत्याग्रहके प्रतिज्ञा-पत्रपर हस्ताक्षर नहीं किये हैं, वे सरकारको सम्पूर्ण सहयोग दे सकते हैं और जिन्होंने हस्ताक्षर किये हैं, वे तबतक सहयोग दे सकते हैं जबतक कि उनकी सत्याग्रह करने की तिथि नहीं आ जाती।

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

[अंग्रेजीसे]
अ० भा० कांग्रेस कमेटी फाइल सं० १२९४ ए, १९४१। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४५२. पत्र: प्रभुदयाल विद्यार्थीको

१९ फरवरी, १९४१

चि० परभुदयाल,

तुमारे जो कुछ करना काकासाहेवकी सम्मतिसे और आशीर्वादसे ही करना। तुम कहां भी रहो, जवतक कुछ भी उद्योग करके रोटी मक्खन नहिं पैदा करोगे मुझे संतोष नहिं मिलेगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११७०२)से

४५३. पी० वी० नायडूको लिखे पत्रका अंश[1]

[२० फरवरी, १९४१ के पूर्व][2]

यदि हिन्दू महासभा चाहे तो वह केन्द्रीय सरकारके पुनर्गठनमें भाग ले सकती है, लेकिन कांग्रेसके लिए ऐसा करने का प्रश्न तबतक नहीं उठता जबतक कांग्रेसकी माँगें[3] पूरी नहीं कर दी जाती।

कहा जाता है कि महात्मा गांधीने डॉ० नायडूको बताया कि उन्होंने हाल ही में बम्बईके 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित एक सम्पादकीय टिप्पणीका जो उत्तर[4] दिया है, वह कांग्रेसकी स्थितिका पूर्ण प्रतिनिधित्व करता है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-२-१९४१

४५४. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२१ फरवरी, १९४१

चि० प्रभा,

जयप्रकाशके बारेमें समझा। मेरे लिखनेका[5] भाव यह था कि जबतक तुझे वहाँ तेरी रुचिका काम नहीं मिला, तबतक तू बीमार रहती थी। अब तेरा काम

१. साधन-सूत्रके अनुसार, "कहा जाता है कि यह बात महात्मा गांधीने अखिल भारतीय हिन्दू महासभाके महामन्त्री डॉक्टर पी० वरदराजुलु नायडू द्वारा राजनीतिक गतिरोधको दूर करने के लिए दिये गये सुझावोंके उत्तरमें लिखी थी"। इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४१, खण्ड १, पृ० ४० के अनुसार "मद्रासमें डॉ० नायडूने सुझाव दिया था कि वाइसराय महोदयको राज्योंके मुख्य मन्त्रियों और भूतपूर्व कांग्रेसी मुख्य मन्त्रियोंकी बैठक बुलानी चाहिए, जिसमें हिन्दू महासभा, मुस्लिम लीग, तथा सिखों, ईसाइयों और दलित वर्गों द्वारा नामजद किये गये कुछ नेताओंको भी शामिल किया जाये"।

२. रिपोर्ट दिनांक "नागपुर, २० फरवरी" के अन्तर्गत छपी थी।

३. यहाँ आशय ७ जुलाई, १९४० को दिल्लीमें पारित कार्य-समितिके प्रस्तावसे है; देखिए खण्ड ७२, परिशिष्ट ४।

४. देखिए पृ० ३५०-५४।

५. देखिए पृ० ३६२।

ही तेरी दवा हो गया है। यह ठीक भी है। [हमारे दलमें] महादेव, कनैयो[1] और मैं होंगे। हम २७ की रातको [इलाहाबाद] पहुँचेंगे। शायद दो दिन रहना पड़े। देखता हूँ कि तू भी उसी रात पहुँचेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५४)से

४५५. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२२ फरवरी, १९४१

प्रिय सर तेजबहादुर,

आपकी बीमारीका[2] समाचार पाकर मुझे दुःख हुआ। कृपया तभी पत्र लिखिए जब आप बिलकुल ठीक हो जायें और शक्ति आ जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर तेजबहादुर सप्रू
१९ एल्बर्ट रोड
इलाहाबाद, यू० पी०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५८०)से। सी० डब्ल्यू० १०२८७ से भी; सौजन्य : नेशनल लाइब्रेरी

४५६. पत्र : मूलचन्दको

२२ फरवरी, १९४१

भाई मूलचंदजी,

आखरमें प्रतिज्ञा-पालनकी शक्ति ईश्वरने दी उसलिये धन्यवाद। वरवधु सुखी रहो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४१)से

१. नारणदास गांधीके पुत्र कनु गांधी
२. देखिए पृ० ३६९, पा० टि० ३।

४५७. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२२ फरवरी, १९४१

चि० आनन्द,

तुमारा खत मिला। इलाहाबादमें हि मिलो। सब हाल पढ़कर दुःख हुआ। ईश्वर करे वह हमें स्वीकार लें।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

४५८. प्रस्तावना : 'स्टेटस ऑफ इंडियन प्रिंसेस' की

निम्न सात अध्याय प्यारेलाल द्वारा भारतके नरेशोंकी स्थितिके गहन अध्ययनके परिणाम हैं। इन्हें बहुत पहले ही पुस्तिका-रूपमें प्रकाशित हो जाना चाहिए था, और यदि मैं कार्य-व्यस्त न रहता तो शायद हो भी जाते। लेखक स्वयं जेलमें हैं। अतः ये जैसे लिखे गये थे उसी रूपमें छप रहे हैं। ये सदाबहार हैं। इनमें किसी व्यस्त कार्यकर्ता या अध्येताको लगभग छः सौ नरेशोंकी स्थितिका पूरा चित्रण संक्षिप्त रूपमें मिल सकता है। इस पुस्तिकाका मुख्य गुण यह है कि इसमें जो भी बातें कही गई हैं उन्हें अविकृत कागजातसे लिया गया है। इस विराट् निरंकुश सत्ताका अस्तित्व ही ब्रिटिश लोकतन्त्रका सबसे बड़ा खण्डन है और यह न तो नरेशोंके लिए ही श्रेय की बात है और न उन दुःखी लोगोंके लिए शोभनीय है जो नरेशोंके विशुद्ध निरंकुश शासनके अधीन रहते हैं। यह उन नरेशोंके लिए श्रेयकी बात नहीं है कि अपनी गरिमाका अहसास रखनेवाले किसी भी सामान्य व्यक्तिको जितना अधिकार प्राप्त होना चाहिए, वे उससे ज्यादा अधिकार रखें। यह उन लोगोंके लिए भी श्रेयकी बात नहीं है जिन्होंने अपनी मौलिक मानव-स्वतन्त्रता चुपचाप छिन जाने दी। और शायद यह भारतमें ब्रिटिश शासनपर सबसे बड़ा कलंक है। किन्तु "नरेशोंका भारत" या "भारतीय भारत" की बात कितनी मिथ्या है, यह हम स्थितिके बहुत निकट होनेके कारण देख नहीं पाते। यह प्रणाली स्वयं अपने ही असहनीय भारसे टूट जायेगी। मेरा विनम्र अहिंसक प्रयास तीनों सम्बन्धित पक्षोंको इस त्रिविध पापको धो डालने के लिए राजी करना है। इनमें से कोई एक पक्ष भी निर्णायक कदम उठा सकता है, और

यदि उठा ले तो यह सभी पक्षोंको प्रभावित करेगा। लेकिन यदि तीनों पक्ष समान रूपसे इस पापकी महापातकताको स्वीकार कर लें और अपने संयुक्त प्रयत्नोंसे इसे धो डालें तो यह और भी शानदार बात होगी।

मो० क० गांधी

सेवाग्राम, वर्धा, २३ फरवरी, १९४१

[अंग्रेजीसे]
स्टेटस ऑफ इंडियन प्रिंसेस

४५९. सलाह : कलकत्ताके सत्याग्रहियोंको[1]

[२४ फरवरी, १९४१ या उसके पूर्व][2]

जो सत्याग्रही गिरफ्तार नहीं हुए हैं यदि वे सारे जिलेमें एक या दो महीनेतक भ्रमण करें और उसके बाद दिल्लीके लिए रवाना हों तो यह अनुचित न होगा। कुछ सत्याग्रही जिलेमें दौरा करें और कुछ दिल्ली जायें।

अशिक्षित हरिजन सत्याग्रहियोंका उल्लेख करते हुए महात्मा गांधीने कहा है कि यदि वे दिल्लीकी ओर कूच नहीं करते या आधे रास्तेसे ही लौट जाते हैं, तो उन्हें कुछ रचनात्मक कार्य करना चाहिए और कुछ लिखना-पढ़ना भी सीखना चाहिए।

महात्मा गांधी इस पक्षमें नहीं हैं कि सत्याग्रही लोग दो, तीन अथवा चारकी मंडली बनाकर दिल्ली जायें। वे चाहते हैं कि प्रत्येक सत्याग्रही अकेला ही वहाँ जाये।

दूसरे प्रश्नका उत्तर देते हुए महात्मा गांधीका कहना है कि जो सत्याग्रही दिल्ली नहीं जा रहे हैं उन्हें अपने ही प्रान्तमें सत्याग्रह करना चाहिए।

"जब लोगोंको मना किया जाये कि वे सत्याग्रहियोंको रास्तेमें खाना न दें तब सत्याग्रहियोंको क्या करना चाहिए?" इस प्रश्नके उत्तरमें महात्मा गांधीने कहा कि यदि उनके पास पैसा है तो भोजन खरीद लेना चाहिए या फिर भूखे रहना चाहिए या आगे बढ़ते जाना चाहिए; इस सम्बन्धमें कोई पक्का नियम नहीं बनाया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-२-१९४१

१ और २. गांधीजी "कलकत्ताके सत्याग्रहियोंको उत्तर दे रहे थे, जिन्होंने अपने दिल्ली-कूचके सम्बन्धमें उनकी सलाह माँगी थी"। यह रिपोर्ट दिनांक "वर्धागंज, २४ फरवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

४६०. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

२४ फरवरी, १९४१

चि० अमृतलाल,

शिवरात्रीकी रातको जिन्होंने व्रत रखा है वे शिवस्मरण करे और ज्यादा पवित्र और संयमी बनने का निश्चय करें।

सब लडके-लडकीको समझा दो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५६) से। सौजन्य: ए० के० सेन

४६१. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

सेवाग्राम, वर्धा
२५ फरवरी, १९४१

चि० मणिलाल और सुशीला,

सुशीलाका सुन्दर पत्र मिला। यात्राका वर्णन अच्छा है। उगाही भी ठीक हुई होगी।

यहाँ तो अभी मैं संघर्षके काममें व्यस्त हूँ। ईश्वर-कृपासे तबीयत ठीक रहती है।

चि० सीता[1],

तेरा पत्र मिला। अंग्रेजी अभी कच्ची ही है। लेकिन धीरे-धीरे सुधर जायेगी। अक्षर ठीक हैं। गुजराती भूल मत जाना।

तारीबहनकी तबीयत सुधर गई है। दिल्लीमें है और अभी वहीं रहेगी। तुम्हारे पत्र उसे भेज दिये हैं।

मनु मजेमें है। नानाभाई[2] सूरतमें बसने के लिए जाने का विचार कर रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९२०) से

१. मणिलाल गांधीकी पुत्री
२. नानाभाई इच्छाराम मशरूवाला, सुशीला गांधीके पिता

४६२. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

२५ फरवरी, १९४१

चि० विजया,

तू खुद पत्र नहीं लिखती और मुझसे पत्रकी आशा करती है? मनुभाईके सम्बन्धमें महादेवभाई लिखेंगे। नानाभाई 'भागवत' का पारायण करते हैं, यह मुझे बहुत अच्छा लगता है। विवाह-विधिकी पुस्तक प्राप्त करके भेजूंगा। शास्त्रीजीके पास काकाके द्वारा प्रकाशित की गई वही पुस्तक थी। अन्नपूर्णा अभी यहाँ नहीं आई। शास्त्रीजी अब फिर कष्ट भोग रहे हैं। कल मुझे इलाहाबाद जाना है, कमला [नेहरू] अस्पतालका उद्घाटन करने। रविवारको वापस आ जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

चि० विजयाबहन
दक्षिणामूर्ति ग्रामभवन
आंबला, सोनगढ़ होते हुए
काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१३७)से। सी० डब्ल्यू० ४६२९ से भी; सौजन्य: विजयाबहन म० पंचोली

४६३. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम
२६ फरवरी, १९४१

चि० मीरा,

मैंने कल जो-कुछ देखा उससे मैं बहुत खुश हुआ। तुम मौन धारण कर सकती हो। उसका मूल्य मैं समझता हूँ।[1] मैं आशादेवीको सूचित कर दूंगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४७२)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८६७ से भी

१. देखिए पृ० ३६१ भी।

४६४. पुर्जा : प्रेमाबहन कंटकको[1]

[२६ फरवरी, १९४१ के पूर्व][2]

लीलावतीबहनसे[3] कहना कि उसे अपना नहीं, स्त्री मात्रका विचार करना है। कांग्रेसकी खातिर नियमको भंग नहीं किया जा सकता और उसमें किसी स्त्रीको शामिल नहीं किया जा सकता। यह बात स्त्रीके लिए भी नुकसानदेह है। लेकिन जब किसी ईसाईकी बारी आयेगी, तब ईसाई स्त्रीको लिया जायेगा, हिन्दूकी बारी आयेगी तो हिन्दू स्त्रीको, मुसलमानकी बारी आयेगी तो मुसलमान स्त्रीको लिया जायेगा।

जो बहनें कमजोर अथवा बीमार हैं उन्हें फिरसे जेल नहीं जाना चाहिए। इसके अलावा कोई बहन अपने बच्चे लेकर जेल नहीं जा सकती।

'ए' और 'बी' श्रेणीके लोग विशेष सुविधाओंका जितना कम उपभोग करें उतना अच्छा है। सच पूछो तो 'सी' वर्गमें मिलनेवाली सुविधाओंसे ज्यादा सुविधाओंका उपभोग न करना हमारा आदर्श है।

जुर्माना देनेके पीछे उद्देश्य यह है कि जिस तरह हमने जेलका भय छोड़ दिया है उसी तरह हम जुर्मानेके भयसे भी मुक्त हो जायें। इसका अर्थ यह नहीं कि उधार लेकर भी हमें जुर्माना भरना चाहिए। लेकिन हमें अपनी बहुमूल्य चीजोंको कौड़ीके दाम भी नहीं बिकने देना चाहिए।

हमें ऐसा मानकर चलना होगा कि लड़ाई लम्बी चलेगी। समझौतेकी बात तो हमारी दुर्बलताकी निशानी है। अन्ततः विजय हमारी होगी, इतना निश्चित जानो।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४१७) से। सी० डब्ल्यू० ६८५६ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१ और २. प्रेमाबहनको नवम्बर, १९४० के अन्तिम सप्ताहमें तीन माहकी सजा दी गई थी। रिहा होनेके बाद वे सेवाग्राम गई थीं और स्त्री कैदियोंके सम्बन्धमें गांधीजी से कुछ प्रश्न किये थे। गांधीजी ने लिखकर उत्तर दिये थे ताकि वे दूसरी बार जेल जाने के समय उन्हें अपने साथ ले जा सकें। गांधीजी ने अपने हाथोंसे उत्तर लिखे थे, जिससे कि स्त्री कैदियोंको उनकी प्रामाणिकताके बारेमें कोई सन्देह न हो। गांधीजी २६ फरवरीको सेवाग्रामसे रवाना हो गये थे।

३. लीलावती मुंशी; बम्बईके मेयर पदके लिए क्रमसे विभिन्न सम्प्रदायोंके व्यक्ति चुने जाते थे। उस परिपाटीको खत्म करनेके लिए लीलावती मुंशी मेयर पदके लिए चुनाव लड़ना चाहती थीं।

४६५. सलाह : सिन्धके कांग्रेस विधानसभाई दलको

[२७ फरवरी, १९४१ के पूर्व][1]

'आजाद-व्यवस्था' का[2] पालन होना चाहिए और यदि ऐसा न हो सके तो विधानसभाके कांग्रेसी सदस्य वर्तमान मन्त्रिमण्डलको[3] पदच्युत करने में योग दें और एक नया मन्त्रिमण्डल बनाने में खान बहादुर अल्ला बख्शको सहायता दें।[4]

ऐसा समझा जाता है कि महात्मा गांधीने पहले यह मत प्रकट किया था कि आजाद-व्यवस्थाके भंगकी दशामें कांग्रेसी सदस्य त्यागपत्र देकर विधान-सभासे निकल आयें, किन्तु यह पूछे जाने पर कि क्या अभी भी उनका वही मत है, महात्मा गांधीने उपर्युक्त मत प्रकट किया, क्योंकि इस अवधिमें उन्हें प्रस्तुत विषय-सम्बन्धी मौलाना आजादके विचारोंका ज्ञान हो चुका था।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-३-१९४१

४६६. भाषण : कमला नेहरू अस्पतालके उद्घाटनके अवसरपर

इलाहाबाद
२८ फरवरी, १९४१

महात्मा गांधीने उस महान योजनाके[5] पूरा होने पर हर्ष व्यक्त किया जिसने स्वर्गीया कमला नेहरूकी अन्तिम इच्छाको साकार रूप दे दिया था। उन्होंने कहा कि वास्तुकलाकी दृष्टिसे कमला नेहरू अस्पताल अपनी किस्मका पहला अस्पताल है और इसमें रोगियोंके लिए जो सुख-सुविधाएँ मुहैया की गई हैं उससे महारानियाँतक लुब्ध हो सकती हैं। तथापि उन्होंने आशा व्यक्त की कि जिन लोगोंके हाथोंमें इस

१. यह सलाह दिनांक "कराची, २७ फरवरी" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

२. इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४१, खण्ड १, पृ० २५५ के अनुसार "व्यवस्था" इस बातकी हुई थी कि "खान बहादुर अल्ला बख्श और सर गुलाम हुसैनको शामिल किया जाये . . . और एक सर्वदलीय मन्त्रिमण्डल स्थापित किया जाये"।

३. जिसके मुख्यमन्त्री बन्दे अली खाँ थे।

४. अल्ला बख्शने ७ मार्चको अपना नया मन्त्रिमण्डल बनाया।

५. कमला नेहरू स्मारक अस्पतालका शिलान्यास १९ नवम्बर, १९३९ को गांधीजी के हाथों हुआ था; देखिए खण्ड ७०, पृ० ४१०-११।

अस्पतालका दैनिक प्रबन्ध है वे इस बातको नहीं भूलेंगे कि यह अस्पताल मुख्यतः उन गरीबोंके लिए है जिनके हितोंकी अवहेलना नहीं की जानी चाहिए और गरीबोंकी सेवा करना इस अस्पतालके व्यवस्थापकोंका बीजमन्त्र होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, १-३-१९४१

४६७. एक प्रस्तावना

[इलाहाबाद
१ मार्च, १९४१][1]

आनन्द हिंगोरानीने मेरे लेखोंका विभिन्न उचित शीर्षकोंके अन्तर्गत जो संकलन प्रस्तुत किया है वह मुझे पसन्द आया है। संकलनकी छपाई और जिल्द आकर्षक बनाने पर उन्होंने जो श्रम किया है उसे पाठक सराहे बिना नहीं रहेंगे।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

४६८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१ मार्च, १९४१

भाई घनश्यामदास,

तुम्हारा खत मिला। मेरा जाना निरर्थक और नुकसानकारक भी हो सकता है। नुकसानकारक इस निगाहसे कि मेरे जाने का परिणाम शून्यमें आवे तो निराशामें वृद्धि होगी। यों भी मेरा कायदे-आज़मसे मिलना अशक्य-सा लगता है। लेकिन राजाजीको मैंने खूब प्रोत्साहन दिया है। वे प्रयत्न भी करेंगे। नतीजा देखा जायगा। मेरा अभिप्राय है कि समझौता होनेवाला है नहीं। हमारे समझौतेके बाहर जो हो सकता है करना चाहिये। समझौतेके विश्वाससे बैठे रहने से बड़ा नुकसान होने का संभव है। मेरा अभिप्राय है कि समझौतेके बाहर सफल प्रयत्न हो सकता है।

मैंने सुन लिया कि तुम्हारा प्रयोग ठीक चल रहा है।

बापुके आशीर्वाद

मूल (सी० डब्ल्यू० ८०५२) से। सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

1. देखिए पृ० ३६६, पाद-टिप्पणी २।

४६९. भाषण : स्टुडेंट्स फेडरेशनके समक्ष[1]

इलाहाबाद
१ मार्च, १९४१

विद्यार्थी तबतक सत्याग्रह नहीं कर सकते जबतक वे आन्दोलनके दौरान अपनी पढ़ाई स्थगित रखनेको तैयार नहीं हो जाते।

महात्मा गांधीने यह भी कहा कि जो इस हदतक नहीं जा सकते वे रचनात्मक कार्य, विशेषतः खादीके प्रसार तथा साम्प्रदायिक एकताको बढ़ावा देने का कार्य कर सकते हैं। विद्यार्थियोंके दिमागमें भी साम्प्रदायिक भावनाकी छूत लग जाना अवांछनीय है।

गांधीजी ने अनुशासनकी आवश्यकतापर भी जोर दिया और कहा कि यह किसी भी संस्थाके लिए बहुत जरूरी है। हिंसातक में अनुशासनका होना जरूरी है, जैसा कि हिटलरके उदाहरणसे स्पष्ट है।

हड़तालोंके सम्बन्धमें गांधीजी ने अपने पुराने वक्तव्योंको[2] दुहराया और छात्रोंको चेतावनी दी कि वे समयसे पूर्व ही दलगत राजनीतिमें न पड़ें। उन्होंने छात्रोंसे अनुरोध किया कि वे सभी पक्षोंकी बात सुनें और विभिन्न विचार-धाराओंका अध्ययन करें। उन्होंने इस बातपर जोर दिया कि साम्प्रदायिक एकता लाने के कार्यमें छात्रगण महत्त्वपूर्ण योग दे सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
लीडर, २-३-१९४१

४७०. पत्र : शान्तिस्वरूपको

ट्रेनपर से
२ मार्च, १९४१

भाई शांतिस्वरूप,

तुम्हारा खत मिला है। तुमारी दलील बिलकुल ठीक है और तुमारे रिश्तेदारोंको मान्य होनी चाहिए।

मो० क० गांधीके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६७७) से

१. संयुक्त प्रान्त स्टुडेंट्स फ़ेडरेशनके कुछ सदस्य आनन्द भवनमें गांधीजीसे मिले थे।
२. देखिए पृ० १८९-९०, २१८-१९ और ३२६-२७।

४७१. पत्र : अब्दुल कय्यूमको

सेवाग्राम, वर्धा
३ मार्च, १९४१

प्रिय अब्दुल कय्यूम,

तुमने अच्छा किया कि मुझे पत्र लिखा। मेरा यह दृढ़ मत था कि रिपोर्ट[1] प्रकाशित की जानी चाहिए। लेकिन किसी-न-किसी कारणवश इसे प्रकाशित नहीं किया गया। मैं नहीं कह सकता कि अब उसे छापना बुद्धिमानीकी बात होगी या नहीं, लेकिन मैं राजेनबाबू और प्रोफेसर कृपलानीसे तथा सरोजिनी देवीसे भी इस बारेमें सलाह करूँगा और देखूँगा कि क्या किया जाना चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कांग्रेस कमेटी फाइल सं० १०१०। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. अब्दुल कय्यूम पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तसे केन्द्रीय विधान-सभाके सदस्य थे। अपने २६ फरवरीके पत्रमें उन्होंने लिखा था: "दिसम्बर १९३९ में तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष बाबू राजेन्द्रप्रसाद तथा मौलाना अबुल कलाम आजादने मुझे आदेश दिया था कि मैं सिन्ध जाऊँ और वहाँ सक्खरके साम्प्रदायिक दंगों और मंजिलगाहके मामलेकी जाँच-पड़ताल करूँ। . . . मैंने साम्प्रदायिक दंगोंके कारणोंके विषयमें अपनी जाँचकी रिपोर्ट दी थी और उस अभागे प्रान्तमें फिरसे साम्प्रदायिक एकता कैसे स्थापित की जा सकती है, इसके बारेमें कुछ सुझाव दिये थे। मंजिलगाहके सम्बन्धमें मैंने अपनी रिपोर्टमें यह कहा था कि वह एक मस्जिद है और उसके लिए ट्रिब्यूनल बैठाना अवांछनीय होगा और उसे मुसलमानोंको वापस दिया जाना चाहिए। इसके एवजमें मुसलमानोंको चाहिए कि वे अपने हिन्दू भाइयोंको वापस गाँवोंमें आने दें और उनके दिलोंमें अपने लिए विश्वास पैदा करें। . . . निस्सन्देह अपनी रिपोर्टमें मैंने इस विचारसे सिन्धमें अपने कांग्रेस संगठनकी आलोचना की है कि उसमें सुधार हो सके और वह अधिक लोकप्रिय बन सके। . . . अब, जब कि अदालती जाँच भी सम्पन्न हो चुकी है और सरकारने मंजिलगाह मुसलमानोंके हवाले कर दी है, मेरी रिपोर्टको प्रकाशित न किये जानेका मुझे कोई औचित्य दिखाई नहीं देता। 'जनता भी जान ले कि कांग्रेसकी रिपोर्टमें क्या जाँच-परिणाम दिये गये हैं।"

४७२. पत्र : कुसुम देसाईको

३ मार्च, १९४१

चि० कुसुम,

तू कैसी मूर्ख है! इतनी बीमार पड़ी हुई है और खबर भी नहीं देती। अभी तू बीमार तो है ही। जब रोज बिना थके पाँच मील तक चल सकने लायक स्वस्थ हो जायेगी तब अपना नाम भेजना।[1] इस बीच तुझसे जो बन सके वह सेवा किया कर और शरीरसे अच्छी होती जा। यहाँ आकर यदि अपनेको दिखा जा तो ज्यादा अच्छी बात है। महादेवभाई तो हैं ही। वे आज दिल्ली गये हैं। प्यारेलाल ६ तारीखको रिहा होंगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री कुसुमबहन देसाई
मेहता पोल, बड़ोदा

मूल गुजरातीसे: कुसुमबहन देसाई पेपर्स। सौजन्य: गांधी स्मारक संग्रहालय

४७३. पत्र : कृष्णचन्द्रको

३ मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

मुझे मनुबहनका हिसाब चाहिये।[2] उससे खर्च लेना है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

नियमोंका क्या ?[3]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७४) से

१. सत्याग्रहके लिए
२. देखिए पृ० ३५९ भी।
३. देखिए "पत्र : कृष्णचन्द्रको", पृ० ३६४।

४६०. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

२४ फरवरी, १९४१

चि० अमृतलाल,

शिवरात्रीकी रातको जिन्होंने व्रत रखा है वे शिवस्मरण करें और ज्यादा पवित्र और संयमी बनने का निश्चय करें।

सब लडके-लडकीको समझा दो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५६)से। सौजन्य : ए० के० सेन

४६१. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

सेवाग्राम, वर्धा
२५ फरवरी, १९४१

चि० मणिलाल और सुशीला,

सुशीलाका सुन्दर पत्र मिला। यात्राका वर्णन अच्छा है। उगाही भी ठीक हुई होगी।

यहाँ तो अभी मैं संघर्षके काममें व्यस्त हूँ। ईश्वर-कृपासे तबीयत ठीक रहती है।

चि० सीता[1],

तेरा पत्र मिला। अंग्रेजी अभी कच्ची ही है। लेकिन धीरे-धीरे सुधर जायेगी। अक्षर ठीक हैं। गुजराती भूल मत जाना।

तारीबहनकी तबीयत सुधर गई है। दिल्लीमें है और अभी वहीं रहेगी। तुम्हारे पत्र उसे भेज दिये हैं।

मनु मजेमें है। नानाभाई[2] सूरतमें बसने के लिए जाने का विचार कर रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९२०)से

१. मणिलाल गांधीकी पुत्री

२. नानाभाई इच्छाराम मशरूवाला, सुशीला गांधीके पिता

सत्यवतीने कुछ समय पहले मुझे पत्र भेजा था। वह यहाँ आने की धमकी तो देती है लेकिन कभी आ नहीं पाती।

गर्मीके बावजूद मैं ठीक-ठाक हूँ।

तुम सबको मेरा प्यार।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०३७२) से

४७६. भेंट : शंकरनको[1]

वर्धागंज
४ मार्च, १९४१

महात्मा गांधीने कांग्रेस सत्याग्रहियोंको घर-घर जाकर युद्ध-विरोधी प्रचार करने की अनुमति दे दी है, बशर्ते कि उन घरवालोंकी ओरसे इसपर कोई एतराज न हो। उन्होंने यह भी कहा कि इस प्रकारका सत्याग्रह अगले सप्ताहसे आरम्भ किया जायेगा।

श्री शंकरनने कहा कि महात्मा गांधीने सत्याग्रहके वास्ते १६०७ और कांग्रेसियों की सूचीका अनुमोदन किया है। उन्होंने कहा कि इस समय दक्षिण भारतसे पाँच महिलाओं-समेत १४० सत्याग्रही दिल्लीकी दिशामें कूच कर रहे हैं। महात्मा गांधीने जोर दिया है कि यदि दक्षिणके सत्याग्रहियोंको दिल्ली जाना है तो उन्हें हिन्दी सीख लेनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-३-१९४१

१. शंकरन तमिलनाडु प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्री थे।

४७७. पत्र : नारणदास गांधीको

सेवाग्राम
५ मार्च, १९४१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा। तुम्हारी भावना उत्तम है, लेकिन कनैयो उसतक पहुँच नहीं सकता। आभाके आगमनसे पहले उसका मन दृढ़ था। आभाके आने के बाद वह अनजाने ही आकर्षित होता गया, यह लोगोंने देखा है। मैंने पूछा तो उसे लगा कि बात तो सच्ची है। सगाई अभी न करें, यह हो सकता है, लेकिन ऐसा करना लोगोंको धोखा देने-जैसा लगता है। कनैयोकी स्थिति मेरी समझमें कुछ इस प्रकारकी है, "विवाह करूँगा तो आभासे ही। आभा नहीं मिली, तो सदाके लिए अविवाहित रह जाऊँगा।" मेरे विचारमें आभाको अभी तीन-चार बरस रुकना चाहिए। वैसे आभाका विकास तो दिन-प्रतिदिन हो रहा है। मेरी मृत्युके बाद भी विवाह तो आखिर इसीसे होगा। कनैयो ऐसे अस्थिर मनका नहीं है कि जल्दी अपने मनको बदल ले। फिर, आभा मेरी नजरमें ऊँचे प्रकारकी लड़की है। बहुत पढ़ी-लिखी नहीं है, लेकिन चतुर है। गुजराती तो आज भी समझ लेती है। बा के साथ तो वह यही भाषा बोलती है। यदि दोनों वहाँ रहें, तो वह ऐसी नहीं है कि सेवामें कोई कमी आने देगी, बल्कि ऐसी है कि जिसकी सेवा दी जायेगी, करेगी। मेरी तीव्र इच्छा तो तुम्हारी-जैसी ही थी। किन्तु उसे पूरी करने की शक्ति कनैयोमें नहीं है। लेकिन अब मेरी इच्छा है कि तुम दोनों अथवा जमना[1] अकेली ही यहाँ आकर आभाको देख जाये, तथा उसके पिताका भी परिचय प्राप्त कर ले। अगर कनैयोको विवाह करना ही है, तो हमारे लिए तो आभा रानी ही है। जिस आदर्शकी हम इच्छा करते हैं, वह उसमें है।[2]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिलम (एम० एम० यू०/२) से

१. नारणदास गांधीकी पत्नी
२. देखिए पृ० ३१२-१३।

४७८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

सेवाग्राम
६ मार्च, १९४१

पत्रकार कल्पनाके घोड़े दौड़ा रहे हैं, जिसके विरुद्ध मुझे जनताको आगाह करना होगा। मेरे सर तेजबहादुर सप्रूके यहाँ जाने और वहाँ अचानक ही कुँवर सर जगदीश प्रसादसे भेंट होने की बातको कोई महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए। तत्पश्चात् मैं पण्डित मालवीयसे मिलने गया और अगले दिन सवेरे श्री विजय-लक्ष्मी पण्डितसे, और अन्तमें मौलाना साहब अबुल कलाम आजादसे मिला। इन मुलाकातोंको भी अहमियत नहीं देनी चाहिए। ये सब मुलाकातें मैत्री-भावसे की गई थीं और जब मैं सेवाग्रामसे इलाहाबादके लिए रवाना हुआ था, उस समय उनकी कोई पूर्व-योजना नहीं थी। मैं तो केवल एक ही उद्देश्यसे गया था। उसके अलावा मैंने जो थोड़ा-बहुत और काम किया वह बिलकुल आकस्मिक था। मेरा तात्पर्य कुछ विद्यार्थियों और गढ़वाली मजदूरोंसे मुलाकातसे है। सर तेजबहादुरसे मैं इसलिए मिलने गया कि वे बीमार थे। हम दोनों पुराने मित्र हैं। वे मुझसे मिलने आनेवाले थे, लेकिन जब मुझे पता चला कि वे बीमार हैं तब मैंने ही उनके पास जाने का आग्रह किया। इसमें शक नहीं कि हमने राजनीतिक स्थिति और उससे भी ज्यादा हिन्दू-मुस्लिम समस्यापर बातचीत की। सर जगदीश भी, जो वहाँ आ गये और सर तेजबहादुरके साथ खाना खानेवाले थे, इस बातचीतमें शामिल हो गये। लेकिन इस बातचीतका रंचमात्र भी राजनीतिक महत्त्व नहीं है। हमने तो व्यक्तिगत रूपमें बातचीत की और किसी उद्देश्यके सम्बन्धमें नहीं। सर तेजबहादुर वर्त्तमान गतिरोधको दूर करने के लिए उत्सुक हैं (भला कौन नहीं है?)। वे किसी भी कीमतपर हिन्दू-मुस्लिम एकता चाहते हैं। सर तेजबहादुरको यह एकता स्थापित करने की मेरी योग्यताके बारेमें बहुत ज्यादा विश्वास है। सर जगदीश भी कोई कम उत्सुक नहीं हैं। लेकिन हमारी यह बातचीत विचारोंका मैत्रीपूर्ण आदान-प्रदानमात्र थी। जहाँतक मालवीयजी महाराजसे मिलने की बातका ताल्लुक है, वहाँ भी यही हुआ। वे वृद्ध हो गये हैं। उन्हें अब चालू घटनाओंके बारेमें कुछ नहीं बोलना चाहिए। वे बहुत कमजोर हैं। लेकिन देशमें हर दिन जो-कुछ भी होता है उसमें उनकी गहरी दिलचस्पी रहती है। वे जिस दिन 'भागवत' और 'गीता' का अध्ययन और चिन्तन करना छोड़ देंगे उसी दिन इन बातोंपर विचार करना भी छोड़ेंगे। ये चीजें उनके जीवनकी प्राणवायु हैं और वे तभी छूट सकेंगी जब उनकी आखिरी साँस छूट जायेगी। और कौन जाने कि उन चीजोंको वे शायद वहाँ भी अपने साथ ले जायें जहाँ मृत्युके बाद यह सूक्ष्म आत्मा जाती है। इन मित्रोंसे

मुलाकात कर सकना मेरे लिए सौभाग्यकी बात थी। लेकिन हमारी बातचीतका देशकी राजनीतिक स्थितिसे कोई सम्बन्ध नहीं है। और मौलाना तथा श्री विजय-लक्ष्मी पण्डितसे जेलमें मुलाकात करने का तो कतई कोई राजनीतिक महत्त्व नहीं हो सकता।

मैं जानता हूँ कि ऐसी मुलाकातोंका जो काल्पनिक विवरण प्रस्तुत किया जाता है और जिस शौकके साथ जनता उन्हें पढ़ती है, वह साम्प्रदायिक एकता स्थापित करने और राजनीतिक गतिरोधको दूर करने के लिए कोई समाधान ढूँढ़ने की इच्छा का द्योतक है। लेकिन इच्छा करने-भरसे हम उसे पूरा नहीं कर पायेंगे। यह इच्छा तभी पूरी हो सकती है यदि ऐसी इच्छा रखनेवाले सभी लोग समान कार्रवाई करें। सब कोई समान कार्रवाईकी खोजमें हैं। लेकिन उसके बारेमें अटकलें लगाने के कारण इस खोजमें बाधा पहुँचती है। जहाँतक कांग्रेसका ताल्लुक है, उसकी नीति और उसपर आधारित कार्रवाई सर्वविदित है। यह कहना कि कांग्रेस अपनी शर्तें मनवाने पर तुली हुई है, बहुत बड़ी गलतबयानी है। वाणीकी स्वतन्त्रता सभीके लिए है, उसी तरह जिस तरह कि आजादी सबके लिए होगी। आजादीका स्वरूप क्या होगा, इसका निर्णय कांग्रेस नहीं, बल्कि सारी जनता करेगी। और यदि इसे अहिंसक तरीकेसे प्राप्त करना है तो यह स्पष्ट है कि केवल बहुसंख्यकोंके मतका कोई विशेष महत्त्व नहीं होगा। आजादीके घोषणा-पत्रको अल्पसंख्यकोंकी सहमतिसे और उन अन्य सम्बद्ध हितोंको ध्यानमें रखकर तैयार करना होगा जो विशाल भारतीय जनसमुदायके हितोंसे मेल खाते हों।

चाहे जो हो, सभी पक्षोंको वाणीकी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए, फिर भले वह विचार-अभिव्यक्ति युद्धके विरुद्ध क्यों न हो। इसको लेकर कांग्रेसने सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू कर दिया है। जनताकी सामान्य इच्छाकी पूर्तिकी दिशामें यह कांग्रेसका योगदान है और जबतक हमें कोई बेहतर उपाय नहीं सूझ जाता तबतक सीधी कार्रवाईके प्रयत्नके रूपमें हमें सविनय अवज्ञा आन्दोलन जारी रखना होगा।

बम्बई-प्रस्तावकी मेरी व्याख्याके विरुद्ध कड़ी आपत्ति की गई है। इसे मैं सच्ची व्याख्या मानता हूँ। लेकिन यह व्याख्या एक व्यक्तिकी है। कांग्रेसके प्रस्तावोंकी व्याख्या करने अथवा उनमें परिवर्तन करने का मुझे कांग्रेसकी ओरसे कोई अधिकार नहीं मिला है। यह अनिवार्यतः अध्यक्षका, कार्य-समितिका और अन्ततः अ० भा० कांग्रेस कमेटीका कार्य है। मुझे तो केवल सविनय अवज्ञा आन्दोलनका संचालन करने का अधिकार है। लेकिन जब समझौता करने का समय आयेगा, तब समझौतेकी शर्तोंका निश्चय करने का कार्य कार्य-समितिका होगा। मेरा योग तो कार्य-समितिको सलाह देने तक सीमित होगा। मैंने बम्बई-प्रस्तावकी जो व्याख्या की है उसे कार्य-समिति चाहे तो अस्वीकार कर सकती है। कार्य-समिति अथवा अ० भा० कांग्रेस कमेटी पास किये गये प्रस्तावोंको बदल भी सकती है। इस बीच हर किसीको, चाहे वह कांग्रेसी हो अथवा अन्य व्यक्ति, बम्बई-प्रस्तावको आधार मानकर चलना है, मेरी व्याख्याको

नहीं। इसलिए मेरे इस वक्तव्यसे[1] कि महायुद्धके दौरान स्वतन्त्रताके अलावा और किसी भी शर्तपर सरकारसे समझौता नहीं हो सकता, लोगोंमें जो घबराहट फैल गई है वह मेरी समझमें नहीं आती।

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन, सं० ६, १९४२; फाइल सं० ३/४२/४१–पॉल० (१)। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

४७९. पत्र : शेरवुड एडीको

सेवाग्राम
६ मार्च, १९४१

प्रिय डॉ० एडी,

आपके कृपापूर्ण पत्रके लिए धन्यवाद। यदि आप सामान्य वक्तव्य[2] दें तो यह बेहतर होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

शेरवुड एडी
५२, वेंडर विल एवेन्यू
न्यूयॉर्क सिटी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. देखिए "पत्र: **टाइम्स ऑफ इंडिया** को", पृ० ३५१-५४।

२. शेरवुड एडीने अपनी पुस्तक **आइ सॉ गॉड डू इट** में गांधीजी के कथनोंको गलत उद्धृत किया था। उन्होंने लिखा था कि उनके एक प्रश्नके जवाबमें गांधीजी ने सशस्त्र सुरक्षाके पक्षमें और वह भी अमेरिका या किसी तटस्थ देशकी सेनाकी मददसे की गई सैनिक सुरक्षामें अपना विश्वास व्यक्त किया था। गांधीजी ने **हरिजन** के २८-७-१९४० के अंकमें (देखिए खण्ड ७२, पृ० ३१७-१८) इस बातसे इनकार किया कि उन्होंने उक्त उत्तर दिया था। साथ ही उन्होंने शेरवुड एडीसे अपनी भूल सुधारने के लिए कहा था।

४८०. पत्र : सुसाईको

सेवाग्राम, वर्धा
६ मार्च, १९४१

प्रिय डॉ० सुसाई,

आपका मामला कठिन है, लेकिन उसका उपाय आपके अपने हाथोंमें ही है। यदि कैथोलिक मत हिन्दू-धर्मके जितना ही दोषयुक्त है और यदि आपके मनमें कोई धर्मसंकट नहीं है, तो आपको अपने पहले धर्ममें ही वापस लौट आना चाहिए। यदि आप ऐसा नहीं करते हैं, तो आपको अन्य सुधारकोंकी नियति स्वीकार करके कैथोलिक धर्मपर लगे इस कलंकको दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७३९) से

४८१. पत्र : ईश्वर शरणको

६ मार्च, १९४१

प्रिय मुंशीजी,

आपका पत्र मिला। आपने धीरज और परिश्रमसे जो आश्रम खड़ा किया है उसे देखने जाने में मुझे कोई कष्ट नहीं, बल्कि आनन्द ही हुआ। जब भी सम्भव होगा, मैं वहाँ फिर आऊँगा। आपकी संस्था तो इस योग्य है कि उसे पूरा जन-समर्थन मिले। मानव-जातिके इस महत्त्वपूर्ण उद्देश्यकी सेवा करने के लिए ईश्वर आपको दीर्घायु करे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री मुंशी ईश्वर शरण
हरिजन आश्रम
इलाहाबाद

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२८९) से। सौजन्य : इलाहाबाद म्युनिसिपल म्यूजियम

४८२. पत्र : परीक्षितलाल मजमूदारको

६ मार्च, १९४१

भाई परीक्षितलाल,

वक्तव्य प्रकाशित कर दिया, यह अच्छा किया। यद्यपि अम्बालाल भाईने कहा तो है कि जबतक सरदार जेलमें है, तबतक वे भार वहन करेंगे। लेकिन इस कथनका सार्वजनिक उपयोग मत करना। फिर, उनकी इस बातसे हमारा प्रयत्न जरा भी शिथिल नहीं होना चाहिए। इसके विपरीत, हमारा यह प्रयत्न और भी बढ़ना चाहिए। एक-एक पैसा उगाह सकें, तो वह हमारे लिए अधिक गौरवकी बात होगी, और वह हमें फलेगी भी बहुत।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९६७)से। सी० डब्ल्यू० १५१ से भी; सौजन्य : परीक्षितलाल मजमूदार

४८३. पत्र : कृष्णचन्द्रको

सेवाग्राम
६ मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

इसे मैं गंभीर भूल महसुस करता हूँ। तुमारी प्रमाणिकताके बारेमें मैं निःशंक हूं। लेकिन गफलत बड़ा दोष है। एक पैसेकी भी हिसाबमें गलती नहिं होनी चाहिए। एक पैसेके घाटा या वृद्धिमें एक हजारकी विस्मृति हो सकती है, हुई है। हिसाब तो रोजका रोज होना चाहिये। इतना हि नहिं, सब चीज प्रतिक्षण लिखना चाहिये जैसे बेंकोंमें होता है।

तुमने वह [हिसाब लिखना] छोड़ा अच्छा नहिं है। चिमनलालने तो ठीक हि कहा लेकिन तुमारे रखना चाहिये था क्षमा मांगकर। अभी भी अगर दिल चाहे तो हो सकता है। प्रायश्चित यह है कि जितना घाटा आया है उतना पैसा घरसे मंगवाना और भर देना। घर भी कारण स्पष्टतया बता देना।

लज्जा कि तो कोई बात हि नहिं है। डोंडी पीटकर दोष कबूल करनेसे तुमारा भार हलका होता है, दूसरोंको सबक मिलता है।

कुछ पूछना है तो पूछो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७५) से

४८४. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

सेवाग्राम, वर्धा
७ मार्च, १९४१

प्रिय सर तेजबहादुर,

उम्मीद है कि आप बुखारसे बचे रहे हैं। यदि आप कायदे-आजमको और मुझे बुलाना चाहते हैं तो मैं अवश्य उपस्थित हो जाऊँगा।[1] लेकिन मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि निमन्त्रण भेजने से पहले आप अच्छी तरह विचार कर लीजिएगा। असफलताका असर बुरा होगा। और मुझे तो यह लगता है कि साम्प्रदायिक समझौतेका उचित समय अभी नहीं आया है। लेकिन यदि आप अन्यथा सोचते हैं तो मेरी चेतावनीपर ध्यान न दें।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५७९) से। सी० डब्ल्यू० १०२९१ से भी; सौजन्य : नेशनल लाइब्रेरी

१. सर तेजबहादुर सप्रूने २ मार्चके अपने पत्र (सी० डब्ल्यू० १०२९०) में गांधीजी से पूछा था : "१३ मार्चको बम्बईमें हम लोगोंकी एक बैठक होनेवाली है। यदि हममें से कुछ लोग किसी उपयुक्त तारीख और सुविधाजनक स्थानपर एक सम्मेलन बुलाने का और उसमें आपको, कायदे-आजम जिन्नाको तथा कुछ अन्य नेताओंको आपसी मतभेदोंपर चर्चा करने के लिए आमन्त्रित करने का निश्चय करते हैं, तो इसके बारेमें आपकी क्या राय होगी?"

२. इसके उत्तरमें सर तेजबहादुरने १० मार्चके अपने पत्र (सी० डब्ल्यू० १०२९२) में लिखा था : "आप निश्चिन्त रहें कि मुझे आपको तथा श्री जिन्नाको किसी सम्मेलनमें आमन्त्रित करने की कोई जल्दी नहीं है और मैं आपसे परामर्श किये बिना ऐसा कुछ नहीं करूँगा।"

४८५. पत्र : चमनलालको

सेवाग्राम
७ मार्च, १९४१

प्रिय चमनलाल,

मैं आपकी पुस्तक[1] अवश्य पढ़ूँगा और उसके बारेमें कुछ लिखकर आपको भेजूंगा।

हाँ, मैं चाहूँगा कि आप अपना सारा ध्यान फिलहाल हरिजन-कार्यकी ओर लगायें। आप लालाजीकी सोसायटीके मोहनलालको अपनी सेवाएँ अर्पित करें। वे हरिजन सेवक संघकी ओरसे उस कार्यके अध्यक्ष हैं। मेरे नामसे कोई व्यक्ति अलगसे काम नहीं करता है। आप श्री रामेश्वरी नेहरूसे भी, जिन्हें आप जानते ही होंगे, सम्पर्क स्थापित करें। बादमें यदि सब-कुछ ठीक हुआ तो आवश्यकता महसूस होने पर आप सविनय अवज्ञा भी करेंगे। आपको नियमपूर्वक चरखा चलाना चाहिए, अपनी पूनियाँ आप बनानी चाहिए और चरखेके शास्त्रको सीखना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. **हिन्दू अमेरिका?** चमनलालने गांधीजीसे अपनी इस पुस्तकके नये संस्करणके लिए एक छोटा-सा सन्देश भेजने का अनुरोध किया था। देखिए "पत्र : चमनलालको", २२-३-१९४१ भी।

४८६. पत्र : लक्ष्मी सत्यमूर्तिको

सेवाग्राम, वर्धा
७ मार्च, १९४१

प्रिय लक्ष्मी,

पिताजीसे कहना कि उन्हें इस तरह बीमार होने का कोई अधिकार नहीं है। उन्हें चिन्ताओंसे मुक्त रहना सीख लेना चाहिए। तब उन्हें अच्छी नींद आयेगी।[1]

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजीसे : एस० सत्यमूर्ति पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४८७. सलाह : सैयद महमूदको[2]

[८ मार्च, १९४१ के पूर्व][3]

रुग्ण सत्याग्रही सरकारके लिए बोझ बन जाता है और जेलमें रहते हुए वह अप्रत्यक्ष रूपसे अधिकारियोंको एक विषम स्थितिमें डाल देता है, जो वर्तमान सत्याग्रह आन्दोलनकी भावनाके विपरीत है।

महात्मा गांधीने डॉ० महमूदको सत्याग्रह करने की अनुमति तो नहीं दी है, लेकिन ऐसा समझा जाता है कि उन्होंने उन्हें स्वास्थ्य-लाभके लिए वर्धा आने के लिए कहा है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १०-३-१९४१

१. देखिए पृ० २९२ भी।

२ और ३. डॉ० सैयद महमूदने, जो कुछ समयसे बीमार थे, गांधीजी से मार्चके दूसरे सप्ताहमें सत्याग्रह करने की अनुमति माँगी थी। यह रिपोर्ट दिनांक "पटना, ८ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

४८८. तार : एगथा हैरिसनको[1]

वर्धागंज
८ मार्च, १९४१

एगथा हैरिसन
२ कैनवॉर्न कोर्ट
एल्बर्ट ब्रिज रोड, लन्दन

संघर्ष अनवरत रूपसे किन्तु बड़ी नरमीसे चल रहा है। सरकारी वक्तव्य स्पष्टतः भ्रामक बल्कि झूठा भी है।[2] लेकिन मैंने आशा नहीं छोड़ी है कि अहिंसा प्रभावकारी सिद्ध होगी।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५१८)से। फाइल सं० ३/३३/४०–पॉल० (१) भी; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

४८९. पत्र : गुरुबख्शसिंह सन्तको[3]

सेवाग्राम
८ मार्च, १९४१

प्रिय डॉ० सन्त,

सभी बातोंको ध्यानमें रखते हुए आपको सविनय अवज्ञा करने के निर्णयपर दृढ़ रहना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. यह तार एगथा हैरिसनके ६ मार्चके तारके उत्तरमें था, जो इस प्रकार था : "एन्ड्रयूज लीगेसी' (एन्ड्रयूजकी विरासत) में लिखे आपके शब्द हर क्षण मेरे सम्मुख रहते हैं, और जैसा कि मैं जानती हूँ, आपके सम्मुख भी रहते हैं। आप यदि तार द्वारा जानकारी देने की कृपा करें तो अच्छा होगा।" उक्त नोटके लिए देखिए खण्ड ७१, पृ० ४६०-६१।

२. यह वाक्य सेन्सरने निकाल दिया था।

३. यह गुरुबख्शसिंह सन्तके ५ मार्चके पत्रके उत्तरमें लिखा गया था, जिसमें उन्होंने गांधीजी से पूछा था कि क्या उन्हें सविनय अवज्ञा करनी चाहिए अथवा रचनात्मक कार्य करना चाहिए।

४९०. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको[1]

८ मार्च, १९४१

हाँ, केशवको उसका काम सौंप दो, लेकिन जहाँ मददकी जरूरत हो वहाँ उसकी मदद करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५११) से। सी० डब्ल्यू० ७१२६ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

४९१. पत्र : कोतवालको

सेवाग्राम, वर्धा
८ मार्च, १९४१

भाई कोतवाल,

१. अच्छा यह है कि तुम अपने इलाकेमें सत्याग्रह करो।

२. दिल्ली जाते हुए किसी रियासतकी हदमें लड़ाईके नारे न लगाये जायें, बल्कि रचनात्मक कार्यक्रमका प्रचार करते हुए आगे बढ़ा जाये। रेलसे सफर नहीं किया जा सकता।

३. अधिकारियोंको वक्तव्य भेजने की कोई जरूरत नहीं। एक बार भेज दिया, काफी है।

४. अगर वे लोग देशी रजवाड़ेवालोंको लौटाकर देशी राज्यमें छोड़ जायें, तो उन्हें फिर कूचसे शुरू कर देना चाहिए। पैदल दिल्ली पहुँचने के बाद मुझसे फिर पूछना। वह दूरकी बात है, इसलिए आज अभी मैं कुछ नहीं कह सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६०३) से

१. यह पत्र मुन्नालाल शाहके उस पत्रके उत्तरमें लिखा गया था जिसमें उन्होंने केशवको आश्रमके रसोई-घरका प्रबन्ध सौंपने के बारेमें गांधीजी से सलाह माँगी थी।

४९२. पत्र : पृथ्वीसिंहको

८ मार्च, १९४१

भाई पृथ्वीसिह,

तुमारा खत मिला। हम सब इंतजार थे। तुमारे मनको संतोष मिलता है यह अच्छी बात है। भाई अमृतलालपर मेरा विश्वास तो नहि रहा है, यह सहि है। लेकिन इसलिये तुमारे संबंध छोड़ना, ऐसे मैं कैसे कहूं? हां, अगर तुमारा भी विश्वास है कि वह विश्वासपात्र नहि है तब तो संबध छोड़ने का धर्म होता है।

हां मिराबेन आ गई है। खुश रहती है, तबीयत अच्छी है, रटण वही है।[1] आशा बांधकर बैठी है लेकिन चिंता नहि करती है। भगवत् स्मरणमें और कातने में दिन काटती है। बालकृष्णकी[2] कुटीरमें अकेली है। बुध और शनीको रातको मुझे मिल जाती है।[3] बाकी मौन सेवन करीब २।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८६२)से। सौजन्य : पृथ्वीसिह

४९३. पत्र : निर्मलानन्दको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
९ मार्च, १९४१

प्रिय भिक्षु,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम जो-कुछ कर रहे हो उसे जारी रखो। भला कोई सोनेकी घड़ी लेकर किसी आश्रममें जाये ही क्यों? तथापि यदि तुम्हारी अपील सफलीभूत हो तो अच्छा ही होगा।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३९५)से

१. मीराबहन पृथ्वीसिंहके साथ विवाह करना चाहती थीं, किन्तु वे उन्हें अपनी बहन मानते थे; देखिए खण्ड ७२, पृ० ४१७-८ भी।

२. बालकृष्ण भावे

३. देखिए पृ० ३६१।

४९४. पत्र : इब्राहीम रहीमतुल्लाको

९ मार्च, १९४१

प्रिय महोदय,

आपके दृढ़ हस्ताक्षरोंको देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं आपके साथ-साथ चलने की कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन देखता हूँ कि आपतक नहीं पहुँचा जा सकता। मैं किसी-न-किसी प्रकार आपकी पुस्तिकाओंको एक नजर अवश्य देख जाऊँगा। आशा है कि आप अपने हस्ताक्षरोंकी भाँति ही तरोताजा होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

४९५. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

९ मार्च, १९४१

चि० डाह्याभाई,

साथका पत्र[1] यदि सरदारको भेजा जा सकता हो तो खुला ही भेज देना या दे देना।

उम्मीद है, तुम्हारी गृहस्थी उत्तम चल रही होगी और बाबू[2] मजा करता होगा।

यह याद रखना कि तुम्हें और शान्तिकुमारको २० लाख इकट्ठे करने ही होंगे।[3] मैं आशा रखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई पटेल
६८ मरीन ड्राइव
बम्बई

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. विपिन डाह्याभाई पटेल, डाह्याभाई पटेलके सबसे बड़े पुत्र

३. डाह्याभाई पटेल और शान्तिकुमार मोरारजीने खादीके उत्पादनके लिए २० लाख रुपया इकट्ठा करना स्वीकार किया था।

[पुनश्च :]

मणिबहनसे मिलो तो कहना कि तबीयत खूब सुधारे।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो — ४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० १६०-१

४९६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

९ मार्च, १९४१

भाई वल्लभभाई,

मैं तुम्हें जान-बूझकर ही पत्र नहीं लिखता। महादेव दिल्लीमें है। इसलिए डाह्याभाईकी लिखावट देखकर लिखने का मन हो आया है। सब ठीक चल रहा है। अच्छे लोगोंमें कुछ बुरे भी आ ही जाते हैं।[1] पर इस बार बहुत ही कम हैं। आन्दोलन लम्बा तो जरूर चलेगा, परन्तु इसीमें हमारा हित है। पराजित होने-जैसी कोई बात नहीं है। वहाँ सब शान्त और श्रद्धापूर्वक कातते होंगे। मेरा विश्वास तो अपने स्वभावके अनुसार चरखेमें बढ़ता ही जा रहा है। भारतानन्द[2] की छोटी-छोटी खोजें सब-कुछ बड़ा सस्ता कर डालती हैं। मेरा स्वास्थ्य बहुत बढ़िया रहता है।

सबको,
बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
यरवडा सेंट्रल जेल
पूना

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो — २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २४६

१. गांधीजी का आशय ऐसे अवांछनीय तत्त्वोंसे है जो व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन करनेवालोंमें शामिल हो गये थे।

२. मॉरिस फ्रिडमेन, मैसूर राज्यमें एक पोलिश इंजीनियर, जो अपना पद त्यागकर सेवाग्राम चले गये थे। वे "धनुष तकली" के आविष्कारक थे।

४९७. पत्र : कृष्णचन्द्रको

९ मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

अमृतलालजी कहते है फलभाजी जो चाहे ले लेते हैं। चावी एक किसीके कब्जेमें नहीं रहती है। यह कैसे? अमृतलालजी को संतुष्ट करो वा चावी उनको सिपुर्द करो।

छनुरामजीको दो। लकडीके बाहर आकाश नीचे सोनेका कर दो।

बापुके आ०

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७६)से

४९८. पत्र : रघुवंश गौड़को

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
९ मार्च, १९४१

भाई रघुवंश[1],

तुमारे पास राजकुमारी बहन मेरे कहनेसे गई और जो कुछ कहा वह मेरी बात। . . .[2] बहनको जो खत तुमने लिखा है ठीक है। अब तुमारे घर जाना। यहांसे जो कुछ हो सकता है किया जायगा। तुमारे लिये रेल किराया दिया जायगा जो कानपुर पहुंचकर वापिस करेंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १३९)से

१. ओल्ड इंस्ट्रक्शनल फार्म, नवलगंज, कानपुरके
२. साधन-सूत्रमें यहाँ दो शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

४९९. निर्देश : कांग्रेस कमेटियोंको

[१० मार्च, १९४१ के पूर्व][1]

महात्मा गांधीने आन्ध्र और तमिलनाडुकी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंको निर्देश दिया है कि वे मद्रास शहरमें सत्याग्रहमें भाग लेने के निमित्त विभिन्न जिलोंसे आदमी न बुलायें। उनका यह भी निर्देश है कि घर-घर जाकर सत्याग्रह करना किसी भी प्रकारसे घरनेका रूप न ले और सत्याग्रही उन घरोंमें प्रवेश न करें जहाँ उनका स्वागत न हो।[2]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-३-१९४१

५००. पत्र : शचीन्द्रनाथ मित्रको

सेवाग्राम, वर्धा
१० मार्च, १९४१

प्रिय श्री शचीन्द्रनाथ मित्र,

गांधीजी के नाम लिखा आपका पत्र आया है। वे आजकल पत्रोंके उत्तर कम ही दे पाते हैं। यदि आपने ध्यानपूर्वक 'हरिजन' पढ़ा होता, तो आप भारत या किसी भी देशके सैन्यीकरणके विषयमें उनके विचारोंसे अवगत होते। अहिंसामें पूर्णतया विश्वास रखनेवाला सत्याग्रही किसी भी दशामें भारतका सैन्यीकरण बरदाश्त नहीं कर सकता। किन्तु ऐसे लोग कम और विरल ही हैं। अधिकांश लोग स्वाधीनता प्राप्त करने के अस्त्रके रूपमें तो अहिंसामें विश्वास रखते हैं; लेकिन जब बाहरी आक्रमणसे अपनी रक्षा करने के लिए विध्वंसक शस्त्रों और अन्य उपकरणोंके प्रयोगको निंद्य ठहराने की बात उठती है तो वे ऐसा नहीं कर पाते। इसके लिए, जैसा

१. यह रिपोर्ट दिनांक "मद्रास, १० मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।
२. देखिए "भेंट: शंकरनको", पृ० ३९० भी।

कि आपने ठीक ही कहा है, एक जीवन्त सिद्धान्तके रूपमें अहिंसामें असीम आस्था का होना जरूरी है और संसारको विनाशसे बचाने का यही एकमात्र रास्ता है।

हृदयसे आपकी,
अमृतकौर

श्री शचीन्द्रनाथ मित्र
५/२ कांटापुकुर लेन
बागबाजार
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१८४)से

५०१. भेंट : कन्नमवारको[1]

वर्धा
[११ मार्च, १९४१ के पूर्व][2]

यदि किसी स्थानीय निकायका कोई कर्मचारी सत्याग्रहमें भाग लेना चाहे तो उसे पहले अपने पदसे त्यागपत्र देना होगा।

महात्मा गांधीका तर्क यह लगता है कि स्थानीय निकायका जो कर्मचारी सत्याग्रह करने का इच्छुक हो, उसे अपने मालिक स्थानीय निकायसे समर्थनकी अपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

उसे ईश्वरमें पूर्ण विश्वास रखते हुए साफ दिल लेकर मैदानमें आना चाहिए।

महात्मा गांधीने यह भी कहा कि जिस स्थानीय निकायमें कांग्रेसियोंका बहुमत है, यदि उसके कर्मचारी सत्याग्रहमें भाग लें और इसके फलस्वरूप यदि सरकार उसका अनुदान रोक दे तो वह सरकारकी इस नीतिका कोई विरोध न करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-३-१९४१

१ और २. प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्री; यह रिपोर्ट दिनांक "नागपुर, ११ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

५०२. पत्र : पृथ्वीसिंहको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ मार्च, १९४१

भाई पृथ्वीसिंह,

तुमारा खत मिला। मीराबहन बारेमें दुःख मानने की आवश्यकता नहिं है। वह तो मानती है पूर्व जन्ममें तुमारे साथ वही संबंध था और भविष्यमें भी वही रहेगा। इस जन्ममें तुमको विस्मृति हुई है इसका उसे दुःख है और सुख भी। ऐसी मीरा बहनने आध्यात्मिक वस्तु बना रखी है और तपश्चर्या कर रही है। पुराणादि पढ़ती है और नित्य घंटोंतक कातती है, कमसे-कम १८०० तार कातती है। खुश रहती है।[1]

भाई अमृतलालके बारेमें मुझको तो बड़ा हि कटु अनुभव हुआ है। लेकिन तुमारा अनुभव मेरेसे उलटा हि है इसलिये कोई आशा नहिं दे सकता हूं। जैसा तुमारा अंतरात्मा कहे वही करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८६३)से। सौजन्य: पृथ्वीसिंह

५०३. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
१४ मार्च, १९४१

प्रिय अमृत,

इस प्रकार बिछुड़ना तो होता ही रहेगा,[2] लेकिन इसे हमें खुशी-खुशी झेलना चाहिए।

तुम्हारी गद्दीपर कु०[3] विराजमान है। चिन्ता मत करो। वहाँ भी अपनी दिनचर्या जहाँतक सम्भव हो जारी रखो।

पुस्तकालयमें कुछ नये परिवर्तन किये जा रहे हैं।

१. देखिए "पत्र: पृथ्वीसिंहको", पृ० ४०२ भी।

२. अमृतकौर दिल्ली चली गई थीं।

३. भारतम् कुमारप्पा

अमतुलसलामको तुम जैसी हालतमें छोड़ गई थी वैसी ही है। सीताको[1] बुखार है।

मेरा रक्तचाप १५६/९८ था। आजसे गर्मी शुरू हो गई है। मैंने सिरको गीले कपड़ेसे लपेट रखा है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९९८)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३०७ से भी

५०४. पुर्जा : कृष्णचन्द्रको

१४ मार्च, १९४१

मैंने जो काट डाला है उसे छोडकर बाकी लेने योग्य है। आश्रमके स्थायी वासीके लिये मैंने बताई हुई प्रतिज्ञा आवश्यक है, अन्यथा आश्रम स्थिर नहिं बन सकता है।

इसमें बताई हुई मंडली बनाकर नियमावली तुरत सुधारकर मेरे पास रखी जाय।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७७)से

५०५. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
१५ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

मैंने कल तुम्हें एक पत्र भेजा था। इस पत्रके साथ भा[रतन् कुमारप्पा]का पत्र है।

पद्मजा[2] आ गई है, किन्तु अभीतक उससे भेंट नहीं हुई है। गोसीबहन[3] आज जा रही है। प्यारेलाल कल रात आया। वह अपने दाँतोंकी खातिर नागपुर

१. भारतन् कुमारप्पाकी पत्नी
२. पद्मजा नायडू, सरोजिनी नायडूकी पुत्री
३. गोसीबहन कैप्टेन, दादाभाई नौरोजीकी पौत्री

गया हुआ था। महादेव देसाई अभी भी बम्बई और पूनाके बीच चक्कर काट रहा है। मेरा रक्तचाप १५६/९० है। वैसे सब ठीक है। सीताका ज्वर आज उतर गया है। शर्मा कल रवाना होगा। अमतुलसलाम अभी भी व्रताहारपर है। शास्त्रीकी दशामें स्पष्ट सुधार दिखता है।

आशा है, तुम आनन्दपूर्वक होगी। तुम्हारी ओरसे तार आना चाहिए था, किन्तु अभीतक तो मिला नहीं है। नन्दन[1] और रक्षाको[2] आशीर्वाद।

बापू

[पुनश्च:]

तुम्हारा तार आ गया है। परमात्माको धन्यवाद।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९९९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३०८ से भी

५०६. पत्र: कंचन मु० शाहको

सेवाग्राम, वर्धा
१५ मार्च, १९४१

चि० कंचन,

तारी तो आलसी है ही, लेकिन क्या तू भी उसके जैसी ही है? पत्र मिलने की सूचना क्यों नहीं दी? तारीके क्या हाल हैं? तेरा खान-पान कैसा चल रहा है? तेरे क्या हाल हैं? पूरा भोजन क्या तू ही बनाती है? आश्रममें जितनी बने, मदद करना। तू आश्रमके रसोईघरमें भोजन करने भी जा सकती है। प्रार्थना आदिमें भाग लेना। उन लोगोंको रोटी बनाना सिखाना। वहाँ तेरी तबीयत कैसी रहती है? तारीसे पत्र लिखने को कहना। मैं ठीक हूँ। शास्त्रीजीके घाव, लगता है, भर रहे हैं। महादेव बम्बई गये हैं। अमतुस्सलामको अभी भाजीका पानी ही देता हूँ। शहद भी लेती है। मुन्नालाल मजेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२७५) से। सी० डब्ल्यू० ७१२७ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

१ और २. रघुनन्दन शरण और उनकी पत्नी

५०७. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१५ मार्च, १९४१

चि० प्रभा,

तेरे पत्रकी मैं राह देख रहा था। तू एक तो आलसी हो गई है, फिर ऊपरसे माफी माँगती है। तुझे कार्ड तो तुरन्त लिख डालना था। जयप्रकाशका कहना ठीक है कि तू फिलहाल दो-चार दिनके लिए ही आ सकेगी। तू उसका इलाज तो कर नहीं सकती? क्या तू उससे जब चाहे तब मिल सकती है? उसे अस्पताल में कब लाते हैं? जेलमें रहने-सहने की व्यवस्था कैसी है? राजकुमारी दिल्ली गई। महादेव बम्बई या पूनामें है। गोशीबहन यहीं हैं। पद्मजा आज आई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५५) से

५०८. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

सेवाग्राम, वर्धा
१५ मार्च, १९४१

भाई विट्ठलदास,

गांधी सेवा सेनाके पास अखिल भारतीय चरखा संघका प्रमाणपत्र है, इसलिए क्या उसे 'खादी-पत्रिका' में स्थान नहीं मिलना चाहिए?

श्री गोशीबहन मुसलमान बहनोंमें काम करना चाहती हैं। यह वे मुख्यतः खादीके माध्यमसे करेंगी। उनका मार्ग-दर्शन करना और मदद करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९८) से

५०९. प्रस्तावना : 'पार्टिंग ऑफ द वेज'[1] की

'पार्टिंग ऑफ द वेज' जब लिखा गया तभी प्रकाशित हो जाना चाहिए था, यानी १० अगस्तके तुरन्त बाद। दुर्भाग्यवश इसका प्रकाशन अबतक रुका पड़ा है। मेरे हाथ तो यह अभी लगा है। मालूम हुआ है कि इस निबन्धके कुछ अंश 'एशिया' में प्रकाशित हो चुके हैं। मेरे विचारसे इस अमूल्य दस्तावेजसे जनता को वंचित रखना उचित नहीं होगा। मैंने इसे डॉ० राजेन्द्रप्रसाद और आचार्य कृपलानीको, जो वर्धामें हैं, दिखला दिया है। वे मेरी इस बातसे सहमत हैं कि इसे अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी ओरसे प्रकाशित किया जाना चाहिए। मैं जानता हूँ कि यदि सरोजिनी देवी यहाँ होतीं तो वे भी सहमत होतीं।

मेरा विश्वास है कि इसमें कांग्रेसकी स्थितिकी संयत किन्तु सशक्त भाषामें सही-सही अभिव्यक्ति हुई है।

ऊपर दिये उद्धरण[2] इसके मुख्य अनुच्छेद हैं। पहले उद्धरणमें दिखाया गया है कि क्या होना सम्भव था। दूसरेमें ब्रिटेनवासियोंके प्रति लेखकका प्रेम प्रकट होता है। तीसरा बहुत थोड़े शब्दोंमें यह दर्शाता है कि भारतमें ब्रिटिश शासन केवल जोर-जबरदस्तीके साथ ही किस प्रकार कायम रखा जा रहा है। और चौथा अनुच्छेद यह स्पष्ट करता है कि भारत जैसी स्वतन्त्रता चाहता है वह न तो ऐकान्तिक है और न उसमें किसी अन्य राष्ट्रके प्रति द्वेष-भाव है।

लेखकने यद्यपि अहिंसाके विषयमें एक भी शब्द नहीं लिखा है, लेकिन निबन्धको पढ़कर पाठक इसी अनिवार्य निष्कर्षपर पहुँचता है कि जवाहरलालकी कल्पनाकी, या कहें कांग्रेसकी कल्पनाकी स्वतन्त्रता सिवाय विशुद्ध अहिंसाके और किसी उपायसे प्राप्त नहीं की जा सकती, और हमारा वर्त्तमान संघर्ष इस भ्रातृघातक अमानवीय नर-संहारके बीच अहिंसाकी भावनाको जीवित रखने का प्रयास है। यह संघर्ष भारतकी स्वतन्त्रताकी दिशामें तो योगदान है ही, साथ ही विश्व-शान्तिकी दिशामें भी कुछ कम योगदान नहीं है।

मो० क० गांधी

सेवाग्राम, वर्धा, १६ मार्च, १९४१

[अंग्रेजीसे]

द पार्टिंग ऑफ द वेज

१. जवाहरलाल नेहरू द्वारा १० अगस्त, १९४० को लिखा यह निबन्ध अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी ओरसे १८ मार्च, १९४१ को प्रकाशित किया गया था।

२. देखिए परिशिष्ट ११।

५१०. पत्र : शचीन्द्रनाथ मित्रको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१६ मार्च, १९४१

प्रिय मित्र,

राजकुमारी यहाँसे चली गई है। मेरे लेखोंका और अध्ययन-मनन कीजिए और यदि फिर भी मनमें कोई शंका बनी रहे, तो मुझे दो माह बाद लिखिएगा।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१८५) से

५११. पत्र : मृदुला साराभाईको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ मार्च, १९४१

चि० मृदुला,

विकासगृह[2]-सम्बन्धी तेरा वक्तव्य मैं पढ़ गया। मुझे लगता है कि तू और पुष्पाबहन[3] मेहनतके साथ जन-सेवा कर रही हो। इसका अर्थ यह हुआ कि तुम स्त्री और पुरुष दोनोंकी सेवा करना चाहती हो। गरीब लड़कियोंके लिए तेरी संस्था बड़ा आश्रयस्थल है। तुझमें ऐसा कठिन काम करनेकी शक्ति है। ईश्वर उसमें और वृद्धि करे। बड़े-बूढ़ोंकी ओरसे अड़चनें डाली जाती हैं, यह खेदकी बात है। गनीमत यह है कि सब ऐसे नहीं हैं। अगर कुछ लोग तेरे काममें विघ्न डालते हैं, तो कुछ दूसरे उसमें मदद भी करते हैं। जो कानूनी उपाय हों, वे तो करने ही चाहिए। लेकिन गुंडाशाही जो चल रही है, उसके लिए तो सबसे अच्छा उपाय जाग्रत लोकमत ही है। इस लोकमतको बनानेके लिए तुझे ऐसे मामलोंको प्रकट करना चाहिए।

'विकासगृह' के लिए भवनकी जो योजना है, वह ठीक है। हाँ, आत्यन्तिक सादगीका ध्यान तो रखना ही पड़ेगा। भवन और उसमें रहनेवाले लोगोंका रहन-

१. देखिए "पत्र: शचीन्द्रनाथ मित्रको", पृ० ४०६-७ भी।
२. जो १९३७ में अहमदाबादमें स्थापित किया गया था
३. पुष्पाबहन मेहता, एक समाज-सेविका

सहन हिन्दुस्तान-जैसे गरीब देशके अनुरूप होना चाहिए। इस भवनके कामके लिए तुझे पैसेकी मदद अवश्य मिलनी चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि यह मदद तुझे मिलेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रतिकृतिसे : विकासगृहकी रिपोर्ट

५१२. सत्याग्रहियोंके लिए निर्देश[1]

[१७ मार्च, १९४१ के पूर्व]

शहरमें सत्याग्रह करनेके लिए गाँवोंसे लोगोंको मत लाइए।

यदि गिरफ्तारी न हो तो सत्याग्रही घर-घर घूम-घूमकर प्रचार करें, किन्तु यह प्रचार कभी घरनेका रूप न ले। जिन घरोंमें उनका स्वागत न हो वहाँ सत्याग्रही प्रवेश न करें।

स्थानीय निकायोंमें काम करनेवाले व्यक्ति नौकरियोंसे त्यागपत्र देनेके बाद ही सत्याग्रह करें।

किसी भी कांग्रेस कमेटीके निलम्बित किये जाने पर उसका कार्य-भार सत्याग्रहीके रूपमें अनुमोदित किसी व्यक्तिको सौंपा जाये।

जो सत्याग्रही महिलाएँ पदयात्रा करके दिल्ली जानेमें असमर्थ हों, वे अपने ही जिले और प्रान्तमें यात्रा करें।

दिल्लीकी ओर कूच करनेवाले सत्याग्रहियोंको हिन्दुस्तानीका कामचलाऊ ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए।

जिन सत्याग्रहियोंपर उपद्रवका आरोप लगाकर मुकदमा चलाया जाये उन्हें अपना बचाव नहीं करना है। किन्तु वे यह स्पष्ट कर दें कि उनका एकमात्र उद्देश्य युद्ध-विरोधी प्रचार जारी रखना है, और वे उपद्रवके आरोपको अस्वीकार कर दें।

कांग्रेसके हरिजन-सेवक रचनात्मक कार्योंमें जुटे रहें।

बन्दी सत्याग्रही भोजन करनेसे तभी इनकार करें जब भोजन अस्वास्थ्यकर और अभक्ष्य हो।

जिन सत्याग्रहियोंको जुर्माना करके छोड़ दिया जाये वे नये सिरेसे सूचना दिये बिना सत्याग्रह जारी रखें।

१. अ० भा० कांग्रेस कमेटीने इन्हें "सत्याग्रहियोंके मार्गदर्शनके लिए गांधीजी के निर्देश" के रूपमें जारी किया था।

जुर्माना भरने की सामर्थ्य रखनेवाले सत्याग्रही अदायगीसे न कतरायें, किन्तु उसके लिए उन्हें अपनी सम्पत्ति बेचने की आवश्यकता नहीं।

गाँववालोंकी सुविधा और सहूलियतके लिए गैर-गिरफ्तारशुदा सत्याग्रहियोंको प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी ओरसे प्रमाणपत्र या बिल्ले दिये जायें, जिससे सिद्ध होता हो कि वे स्वीकृत सत्याग्रही हैं। भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके अपने विशिष्ट बिल्ले हो सकते हैं।

जहाँ दफा १४४ लागू हो वहाँ सत्याग्रह नहीं किया जाये।

एक जेलसे दूसरी जेलमें तबादला होते समय सत्याग्रहियोंको बेड़ी और हथकड़ी आदि खुशीसे पहननी चाहिए।

दिल्लीकी ओर कूच करनेवाले गैर-गिरफ्तारशुदा सत्याग्रहियोंको युद्ध-विरोधी नारे लगाने और अन्य प्रकारसे युद्ध-विरोधी प्रचार करने के अतिरिक्त कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमका भी प्रचार करना चाहिए। जनताको यह समझाया जाये कि देशके सम्मुख अपने नेता द्वारा प्रस्तुत रचनात्मक कार्यक्रमका पालन ही संघर्षकी प्रगतिमें योगदानका सर्वोत्तम और सबसे अधिक प्रभावोत्पादक तथा साथ ही सबसे सुगम मार्ग है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-३-१९४१

५१३. मुकीम फारुकीको लिखे पत्रका सारांश[1]

[१७ मार्च, १९४१ के पूर्व][2]

महात्मा गांधीने यह मत प्रकट किया है कि छात्रोंके बीच फूट और झगड़े नहीं होने चाहिए। . . .

गांधीजी ने उत्तरमें अब यह सुझाव दिया है कि यह प्रस्ताव[3] मान लिया जाये कि सब विवाद दोनों पक्षों द्वारा मान्य एक निष्पक्ष जाँच-समितिके सम्मुख पेश किये जायें और समितिका निर्णय दोनों पक्षोंके लिए बाध्यकारी हो।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-३-१९४१

१ और २. यह अ० भा० स्टूडेंट्स फेडरेशनके महामन्त्री मुकीम फारूकीके पत्रके उत्तरमें था। उन्होंने "गांधीजी को नागपुरमें होनेवाले छात्र-सम्मेलनके बाद छात्र-संगठनोंमें उत्पन्न हुई फूटके बादकी घटनाओंसे अवगत कराया था"। यह सारांश दिनांक "नई दिल्ली, १७ मार्च" के अन्तर्गत छपा था।

३. रिपोर्टके अनुसार, "जाँच-समिति नियुक्त करने का प्रस्ताव प्रोफेसर कालेलकरने रखा था, जिनकी राय थी कि समितिको सभी विवादास्पद मामलोंकी, विशेषकर दोनों छात्र-संगठनोंकी प्राथमिक सदस्यताके मामलेकी जाँच-पड़ताल करनी चाहिए और जिन प्रान्तोंमें आवश्यक समझा जाये वहाँ नये सिरेसे चुनाव करवाने का आदेश देना चाहिए।"

५१४. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
१७ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

कुछ कागजात संलग्न हैं। नियत तिथिसे पहले ही अपना मतदान-पत्र भेज दो। चुनाव करने में मैं तुम्हारा कोई मार्ग-दर्शन नहीं करूँगा। अपनी इच्छाके अनुसार मतदान करो।

कल मैंने कोई पत्र नहीं भेजा।

प्यारेलाल कल सविनय अवज्ञा करेगा।

महादेव वृहस्पतिवारसे पहले नहीं लौटेगा। सम्भवत: 'हरिजन' २९ ता०[1] को निकल आयेगा। शास्त्रीका हाल ठीक ही है। गर्मी जारी है।

रक्तचाप नियन्त्रणमें है, किन्तु पत्र लिखते समयतक मापा नहीं गया है।

तुम्हारे छातेका उपयोग किया जा रहा है।

प्रभावती कल आ गई। वह कल जयप्रकाशके पास चली जायेगी — यानी अगर मैं उसके लिए तैयार होऊँ।[2]

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

वादमें तुम्हारे दो पत्र मिले। मैं मृदुलाको पत्र लिख रहा हूँ।[3] यों ही तो नहीं वता सकता कि क्या करना उचित होगा। रक्तचाप १३८/९० है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६७०) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४७९ भी

१. देखिए परिशिष्ट १२।
२. देखिए "पत्र: प्रभावतीको", पृ० ४११ भी।
३. देखिए पृ० ४१३।

५१५. अपील : सी० एफ० एन्ड्रयूज स्मारक-कोषके लिए

वर्धागंज
१८ मार्च, १९४१

कमला नेहरू स्मारक अस्पतालके[1] लिए कुछ देरसे सही, लेकिन बहुत देरसे नहीं, जनताने उदारतापूर्वक जो दान दिया उससे प्रेरित होकर मैं यह अपील निकाल रहा हूँ। कमला नेहरूकी यूरोप-यात्राके समय, जो उनकी अन्तिम यात्रा सिद्ध हुई, मैंने उनको दिये हुए वचनके मुताबिक जिस प्रकार उस अस्पतालके लिए चन्दा इकट्ठा करना अपना विशेष कर्त्तव्य माना था, उसी प्रकार एन्ड्रयूज स्मारकके लिए धन एकत्र करना भी मेरे लिए अनिवार्य कर्त्तव्य बन गया है। यदि डॉ० जीवराज मेहताका अथक प्रयत्न न होता, तो सम्भवतः मैं कमला स्मारकके लिए धन एकत्र न कर पाता। किन्तु एन्ड्रयूज स्मारकके लिए धन एकत्र करने के सिलसिलेमें डॉ० जीवराज मेहता-जैसा कोई सहायक मेरे पास नहीं है।

दीनबन्धुके निधनकी पहली पुण्य-तिथि निकट आ पहुँची है। मैं इतना दुर्बल और इतना व्यस्त हूँ कि चन्दा एकत्र करने के लिए यात्राएँ नहीं कर सकता। और दुःखकी बात यह है कि लोग कोषके लिए तेजीसे और स्वेच्छापूर्वक चन्दे नहीं दे रहे हैं। चार्ली एन्ड्रयूज तो सब जरूरतमन्दोंके मित्र थे। उन्होंने अमीर और गरीब, ईसाइयों और गैर-ईसाइयों अथवा अंग्रेजों और अन्य लोगोंके बीच कभी भेद नहीं किया। जिस-किसीको उनकी सहायताकी जरूरत हुई, उन्होंने मुक्त हृदयसे उसकी सहायता की। वे रात-दिन मानव-जातिकी सेवामें रत रहे। उन्होंने शान्तिनिकेतनको घर समझा और वहीं अपने व्यक्तित्वकी अभिव्यक्ति पाई। डॉ० रवीन्द्रनाथ ठाकुर उनके गुरु तथा मित्र थे। एन्ड्रयूज शान्तिनिकेतनके लिए चन्दा उगाहने में अग्रगण्य थे। अतः उनके लिए सबसे उपयुक्त स्मारक यही होगा कि जिसे उन्होंने अपना घर समझा, उसको कभी किसी चीजका अभाव न हो और अपने विस्तारके लिए उसके पास अतिरिक्त कोष हो। वास्तवमें तो गुरुदेवके नामपर ही सारी वित्तीय सहायता उपलब्ध हो जानी चाहिए। उन्होंने भारतका नाम चमकाया है। उनसे और उनकी संस्थासे बहुत लोगोंने महत्त्वपूर्ण सहायता प्राप्त की है। उनके बच्चे शान्तिनिकेतनमें शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। कितने ही घर उनकी कलाकृतियोंसे शोभित हो रहे हैं। उनकी कविता, उनके उपन्यासों, नाटकों और उनकी कलासे सहस्रों बालक-बालिकाओं, स्त्री-पुरुषोंके मन-मस्तिष्क समृद्ध हुए हैं।

यह भी एक पहेली है कि इन दो अमूल्य रत्नोंके नामपर ही सहज रूपसे धन क्यों नहीं प्राप्त हो गया। जिस स्मारकका नाम अपने-आपमें इतनी बड़ी

1. गांधीजीने २८ फरवरीको इलाहाबादमें इस अस्पतालका उद्घाटन किया था; देखिए पृ० ३८४-८५।

सिफारिश हो, उसके लिए विशेष रूपसे अपीलें जारी करने की आवश्यकता ही क्यों पड़नी चाहिए? जनताकी सहज प्रतिक्रियासे दीनबन्धुकी आत्मा सुखी होगी और रवीन्द्रनाथ ठाकुरमें नये प्राणोंका संचार होगा। इस विषयमें छात्रों, अध्यापकों, श्रमिक-वर्गके हित-चिन्तकों और कला-प्रेमियोंका क्या उत्तर है? उनके बीचसे ही पाँच लाख-जैसी तुच्छ राशि मात्र एक दिनमें एकत्र हो सकती है। गरीबोंके सच्चे मित्र दीनबन्धु ५ अप्रैलको चिर-निद्राकी गोदमें सोये थे; क्या ये सब लोग उस तिथि तक यह धनराशि जुटा लेंगे?

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-३-१९४१

५१६. पत्र: अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
१८ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हारे दो पत्र मिले। इस पत्रके साथ भाई फारुकीको लिखे पत्रकी[1] प्रतिलिपि भी है।

प्यारेलाल आज गिरफ्तार हो गया। कल निर्णय सुनाया जायेगा।

अभी मैं जल्दीमें हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०००)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३०९ से भी

१. फारुकीको लिखे पत्रके सारांशके लिए देखिए पृ० ४१५।

५१७. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

१८ मार्च, १९४१

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा निश्चय मुझे पसन्द आया है। ध्यान रखना कि तुम्हारी तबीयत खराब न हो जाये। प्रयत्न करो। इस बार तैयार न हो सको, तो दूसरी बार प्रयत्न करना। जो-कुछ तुमने सीखा होगा, वह इसमें काम आयेगा। तुम्हें इतनी मेहनत करनी पड़ेगी, इससे मालूम होता है कि सचमुच हम कितने कच्चे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५२२) से। सी० डब्ल्यू० ७१२२ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

५१८. तिलक बाल मण्डलको लिखे पत्रका अंश[1]

[१९ मार्च, १९४१ के पूर्व][2]

बोस-बन्धुओं और मेरे बीच कोई व्यक्तिगत झगड़ा नहीं है। हमारा मतभेद तो विचारधाराका है, जिसका कोई उपाय नहीं है।

सुभाषबाबूके पते-ठिकानेके बारेमें मैं उतना ही अनभिज्ञ हूँ जितने कि आम लोग हैं।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-३-१९४१

१ और २. यह पत्र तिलक बाल मण्डल (करांची) की उस अपीलके उत्तरमें था जिसमें गांधीजी से अनुरोध किया गया था कि सब लोग "अपने मतभेदको मिटाकर भारतकी राजनीतिक स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए एक हो जायें"। यह रिपोर्ट दिनांक "कराची, १९ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

५१९. पत्र : मिर्जा इस्माइलको

सेवाग्राम, वर्धा
१९ मार्च, १९४१

प्रिय सर मिर्जा[1],

आपके अत्यन्त स्नेहपूर्ण पत्रके लिए धन्यवाद। आपका मेरे प्रति जो व्यक्तिगत स्नेहभाव है, बल्कि कहूँ कि पक्षपात है, उसपर मुझे कभी शंका नहीं हुई है। आपकी मेरे प्रति यह भावना तो मेरे लिए अमूल्य निधिके समान है। उससे मुझे सुख मिलता है; किन्तु यदि मेरे शान्ति और सौहार्दके उद्देश्यको सफल होना है तो जो चीज मुझे चाहिए वह आपका सच्चा सहयोग है।

चूँकि आप ज़ानना चाहते हैं कि मैं क्या चाहता हूँ, इसलिए मेरे मनमें जैसे-जैसे बातें आती जाती हैं, मैं उन्हें यहाँ लिखता जाता हूँ।

मेरे मनमें यह बिलकुल स्पष्ट है कि ब्रिटिश भारतमें भाषणकी सच्ची स्वतन्त्रता नहींके बराबर है और 'देशी भारत' में तो उससे भी कम है और स्वतन्त्र न्यायपालिका नहीं है। दुर्भाग्यवश आप इससे भिन्न मत रखते हैं। अतः सहयोगके बहुत आसार नहीं हैं। आप एक-न-एक दिन इस मौलिक सत्यको मान लेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है। जबतक वैसा नहीं होता तबतक हम मतभेद ही रहने दें। आपके मुख्य न्यायाधीश अपने पदके लिए नितान्त अयोग्य व्यक्ति हैं। ऐसी दशामें सच्चा न्याय भला कैसे मिलेगा! मैं जानता हूँ कि ब्रिटिश भारतमें भी मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीश अयोग्य व्यक्ति हुए हैं। किन्तु मेरा तर्क यह है कि देशी राज्योंमें जाकर वे और भी बिगड़ जाते हैं। ये बातें मुझे इसलिए गड़ती हैं कि सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंमें अकेला मैं ही राजाओंका सच्चा मित्र हूँ। यह दावा ऊँचा भले हो किन्तु सत्य है। आप तो अब पद छोड़नेवाले हैं। कितना अच्छा हो कि सत्यको जिस रूपमें मैं महसूस करता हूँ, उसी रूपमें आप भी देख सकें!

आप सनदें वापस करके और जिन उम्मीदवारोंको नामंजूर कर दिया गया था उनके प्रति हुए अन्यायका निराकरण करके लोगोंके दुःखका शमन कर सकते हैं।[2] इस कार्यको जनता पसन्द करेगी। यों इसका कोई विशेष लाभ तो नहीं है, क्योंकि वकीलोंने दण्डको लाभमें परिवर्तित कर लिया है और वे कार्यकर्त्ता बन गये हैं। अस्वीकृत उम्मीदवारोंने अस्वीकृतिमें ही सन्तोष मान लिया है। किन्तु यदि सौहार्द जताने के लिए आप ऐसा कदम उठा सकें तो उसका एक अपना महत्त्व होगा।

१. मैसूर राज्यके दीवान
२. देखिए "पुर्जा: के० टी० भाष्यम्‌को", पृ० ३३८ भी।

कृपया भाष्यम् या अन्य लोगोंसे यह आशा न रखें कि वे आपसे भेंट करने का प्रयत्न करें, बल्कि मित्र-रूपमें उन्हें स्वयं बुलवा भेजिए। विश्वाससे ही विश्वास पैदा होगा। निःसन्देह पहल तो आपकी ओरसे ही होनी चाहिए।

मैं पट्टाभिसे[1] कह रहा हूँ कि शीघ्रातिशीघ्र आपसे मिलें।

मैं जानता हूँ कि अवकाश-प्राप्त करने के बाद भी आप उपयोगी सेवा करते रहेंगे। ईश्वर करे, आप दीर्घायु हों और आपके हाथों कुछ वास्तविक महान् कार्य बन पड़े।

आपका दिया चन्दनका डिब्बा हमेशा मेरे निकट ही रहता है और मैं उसमें अपनी छोटी-मोटी वस्तुएँ रखता हूँ।

मेरा यह पत्र व्यक्तिगत पत्र है। इसकी नकल नहीं बनाऊँगा। इसे मैंने किसी प्रकारके सार्वजनिक उपयोगके लिए नहीं लिखा है, न ही आपसे इसके प्रत्युत्तरकी अपेक्षा रखता हूँ। हाँ, आपकी इच्छा हो तो अलग बात है। आपके परिवारके सभी सदस्योंको मेरा स्नेह।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

पत्र लिखने के उपरान्त आपका लहसुन-सम्बन्धी पत्र मिला है, जिसके लिए धन्यवाद।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८२) से

५२०. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
१९ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

इसके साथ गौड़के बारेमें पत्र है। क्या किया जा सकता है?[2]

राधाकृष्ण[3] जानकीबहनके[4] लिए जो छोटी-सी मरहमकी डिबिया लाया था, क्या तुम्हें उसकी कुछ याद है कि वह कहाँ रखी होगी? मेरा खयाल है कि वह

१. डॉ० पट्टाभि सीतारामैया; वे अ० भा० देशी राज्य प्रजा-परिषद्की स्थायी समितिके सदस्य थे और कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें उसका प्रतिनिधित्व करने का अधिकार जवाहरलाल नेहरूके साथ-साथ उन्हें भी प्राप्त था।

२. देखिए "पत्र : रघुवंश गौड़को", पृ० ४०५ और "पत्र : अमृतकौरको", पृ० ४३० भी।

३. जमनालाल बजाजके भतीजे

४. जमनालाल बजाजकी पत्नी

मैंने तुम्हें किसी सुरक्षित स्थानपर रखने को दी थी। यदि तुम्हें याद हो तो तुम इच्छानुसार तार भेज दो या पत्र लिख दो।

प्यारेलालको ६ मासकी सज़ा मिली है।

महादेव कल आयेगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६७१) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४८० से भी

५२१. पत्र: कुँवरजी खेतसी पारेखको

सेवाग्राम; वर्धा
१९ मार्च, १९४१

चि० कुँवरजी,

बा को लिखा तुम्हारा पत्र मिला। मनुकी जाँचमें बहुत समय लग रहा है, लेकिन जबतक कोई निर्णय नहीं होता, तबतक वह अस्पतालमें ही रहे, यही ठीक है। मनुसे कहो कि वह अस्पतालसे ऊबे नहीं। बा को चिन्ता लगी रहती है। मुझे नहीं रहती। मैं समझता हूँ कि सारी सुविधाएँ अस्पतालमें ही मिल सकती हैं। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक है, यह सन्तोषकी बात है।

यहाँ काफी गर्मी पड़ने लगी है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

आज नीलूभाईका[1] पत्र मिला। ब्रह्मानन्दको बादमें लिखूँगा। चि० सुरेन्द्रने आश्रमके पैसे[2] चुका दिये या नहीं, यह अभीतक मेरी समझमें नहीं आया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७४६) से। सी० डब्ल्यू० ७२६ से भी; सौजन्य: नवजीवन ट्रस्ट

१. नीलकण्ठ मशरूवाला

२. जो मनुबहन मशरूवालाके इलाजपर खर्च हुए थे; देखिए "पत्र: सुरेन्द्र मशरूवालाको", पृ० ३५८-५९।

५२२. पत्र: गुलाम रसूल कुरैशीको

१९ मार्च, १९४१

चि० कुरैशी,

तुम्हारा पत्र मिला और मिले हुए भी तीन दिन हो गये हैं, लेकिन भूलसे जवाब देना रह गया। यह पत्र मैं इलाहाबाद ले गया था, लेकिन मुझे वहाँ पलभरकी भी फुरसत नहीं मिली। और बादमें यह पत्रोंके ढेरमें दब गया। आज अमतुस्सलामने याद दिलाई और मैंने तुरन्त निकलवाया।

वहाँ सब लोग मिले हुए समयका सदुपयोग कर रहे हैं, यह बहुत अच्छी बात है। ऐसा ही होना भी चाहिए। सबको बधाई।

स्वयं तुम्हें भी अपने विचारोंके शोधनका अमूल्य अवसर मिला। लोगोंका तुमसे बहुत अपेक्षा रखना स्वाभाविक ही है।

मौलाना दो भागोंसे आगे जा ही नहीं पाये।

साहित्य-सम्बन्धी जिम्मेदारी मैं किशोरलालको सौंप रहा हूँ। वे ही भेजेंगे।

स्थूल अहिंसा वह है जिसमें किसी मनुष्यका संहार नहीं होता अथवा उसे कोई शारीरिक चोट भी नहीं पहुँचाई जाती। सूक्ष्म अहिंसामें मन, वचन अथवा कर्मसे, किसीको दुःख देने के हेतुसे उसपर कोई प्रहार नहीं किया जाता; उसमें भलाईकी ही कामना की जाती है। सामान्यतया अहिंसाका विस्तार मनुष्योंतक ही सीमित है। लेकिन सच तो यह है कि अहिंसाकी कोई सीमा ही नहीं है। इसे पशुसे लेकर कीटाणु तक ले जाया जा सकता है। लेकिन इतनी दूरतक कोई नहीं जाता, और न जा ही सकता है। तथापि सामान्यतया अहिंसामें पशु भी आते हैं। मैं कांग्रेसमें इस अहिंसाकी बात नहीं करता। वहाँ इस अहिंसाकी बात हो भी नहीं सकती। मुसलमानोंको वह नहीं पटेगी, इसी तरह ईसाइयोंको और असंख्य हिन्दुओंको भी नहीं पटेगी। अतएव मैं आज जिस सूक्ष्म अहिंसाका पालन करने की बात करता हूँ वह मनुष्योंतक सीमित है। और मैं समझता हूँ कि यदि इतनी दूरतक भी हम जा सकें तो हमारे लिए यह बहुत है। समयके साथ इससे दूसरी प्रकारकी अहिंसा स्वयमेव आ जायेगी।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७७०)से। सौजन्य: गुलाम रसूल कुरैशी

५२३. पत्र : वल्लभराम वैद्यको

सेवाग्राम, वर्धा
२० मार्च, १९४१

भाई वल्लभराम,

अच्छा है, तुम मजेमें हिमालयका भ्रमण करके जड़ी-बूटियाँ प्राप्त करो। यहाँ जब चाहो तब आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २९१३)से। सौजन्य : वल्लभराम वैद्य

५२४. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा
२० मार्च, १९४१

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तू गई यह बहुत अच्छा हुआ। वहाँका काम पूरा हो जानेके बाद तुझे यहाँ जरूर आना है। जवाहरलालवाला लिफाफा बुकपोस्टसे भेजा जा रहा है। यहाँ सब ठीक चल रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५६)से

५२५. पत्र : जयसुखलाल गांधीको

२० मार्च, १९४१

चि० जयसुखलाल,

बहुत दिनोंके बाद तुम्हारा पत्र मिला। क्या अब तुम सिंधिया [कम्पनी]में नहीं हो? नहीं हो, तो क्या करते हो? हरजीवनसे[1] कहना कि कॉड लिवर ऑइल ले। इसमें वह दोष न माने। मृदुलाके[2] लिए अच्छा है कि वह भोजन भी बनाये और पढ़े भी। ऐसा करे तो उनका पढ़ा चमक उठेगा। कोई अच्छी नौकरानी मिल जायेगी, यह आशा मत करना। अमेचन्दके बारेमें समझा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२४) से।

५२६. पत्र : कुसुम देसाईको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२० मार्च, १९४१

चि० कुसुम,

तेरा पत्र मिला। तू मेरे साथ जितना कहती है उससे भी ज्यादा चली है। यहाँ एक सज्जन हैं, उनकी आयु तेरी जितनी होगी। वे एक फर्लांग भी न चल पाते थे। आज वे जितने चाहें उतने मील चल सकते हैं। तू आलसी है, इसका क्या किया जा सकता है? जब तू आलस्यको दूर करेगी और खूब रचनात्मक कार्य करेगी तभी तुझे अनुमति मिलेगी। तेरे लिए तो केवल यही एक कानून है। बा को लिखा तेरा पत्र मैंने देखा था। लेकिन चूंकि मैंने तुझे पत्र लिख दिया था, इसीसे बा ने लिखनेका विचार छोड़ दिया होगा। बा ठीक रहती है। तू यहाँ आये और अपना इलाज करवाये तो मैं तेरी तबीयतको ठिकाने पर ला सकता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजरातीसे : कुसुमबहन देसाई पेपर्स। सौजन्य : गांधी स्मारक संग्रहालय

1. हरजीवन कोटक
2. मनु ज० गांधी, जयसुखलाल गांधीकी पुत्री

५२७. अपील : कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंसे

२१ मार्च, १९४१

राष्ट्रीय सप्ताह[1] पास आ पहुँचा है। यह सप्ताह मनाने का दोहरा उद्देश्य है : (१) ६ तथा १३ अप्रैलको उपवास करके आत्म-शुद्धिकी उपलब्धि, तथा (२) अधिक जोर-शोरसे रचनात्मक कार्य करके जन-सामान्यकी जागरूकता बढ़ाना। १९१९की ६ठी अप्रैलको एकाएक और अप्रत्याशित रूपसे स्वदेशीकी जबरदस्त भावना तथा साम्प्रदायिक एकताका सामूहिक प्रदर्शन देखने को मिला था और उस दिन कांग्रेसके हिन्दू सदस्योंने हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यता-रूपी नासूरको निकाल फेंकने का दृढ़ निश्चय किया था। स्वदेशी भावना खादीपर केन्द्रित हुई, क्योंकि वही एक प्रमुख देशव्यापी ग्रामोद्योग था। १९१९ के बादके बीस वर्षोंके दौरान रचनात्मक कार्यक्रमका क्षेत्र बढ़ता ही गया है। अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघका सहारा पाकर दूसरे ग्रामीण उद्योग भी विकसित हो गये हैं। हिन्दुस्तानी तालीमी संघके माध्यमसे ग्रामीणोंमें शिक्षाका प्रसार हो रहा है। महिलाओंको राष्ट्रीय सेवामें शामिल करने का और इस प्रकार उन्हें पुरुषोंके बराबर दर्जा दिलाने का प्रबल प्रयास हुआ है। सक्रिय अहिंसाकी अभिव्यक्तिका एकमात्र उपाय है रचनात्मक कार्यक्रमका विस्तार और उसका कार्यान्वयन। सविनय अवज्ञाका यदि कोई स्थान है तो वह रचनात्मक कार्यक्रमके अन्तमें ही है, आरम्भमें कदापि नहीं। हमने अनुभव द्वारा यह बात समझी कि १९१९ में हमें इसलिए पीछे हटना पड़ा था कि रचनात्मक सेवाके माध्यमसे तैयारी किये बिना ही हम सत्याग्रह ठान बैठे थे। जबतक सत्याग्रहियोंने स्वैच्छिक आज्ञा-पालनकी कला न सीख ली हो, तबतक उनकी कानूनोंकी अवज्ञा कभी सविनय नहीं हो सकती। और वह ठोस सहयोगपूर्ण कार्य किये बिना, जिसमें सुनिश्चित अनुशासन तथा नियम-कायदोंके प्रति स्वैच्छिक और पूरे मनसे आज्ञाकारिता अपेक्षित है, यह असम्भव बन जाता है।

सत्याग्रह कुछ ही लोगोंके लिए वैध या कर्त्तव्य-रूप है, जब कि रचनात्मक कार्य किसी अहिंसक संस्थाके सभी सदस्योंके लिए अनिवार्य कर्त्तव्य है। और सत्याग्रह भी तभी प्रभावोत्पादक बन सकता है जब उसके पीछे बड़े पैमानेपर रचनात्मक प्रयास हो। सत्याग्रहकी सफलताका माप है रचनात्मक प्रयासकी सफलता। इसी कारण मैं आशा करता हूँ कि ६ से १३ अप्रैलतक के राष्ट्रीय सप्ताहमें सभी कांग्रेसी

१. रॉलट-अधिनियम (विधेयक २९, १९१९) के विरोधमें ६ अप्रैल, १९१९ को मुकम्मिल हड़ताल हुई थी। उसी वर्ष १३ अप्रैलको जलियाँवाला बागका हत्याकाण्ड भी हुआ था। इन दोनों दिनोंकी स्मृतिमें यह सप्ताह मनाया जाता था।

कार्यकर्त्ता रचनात्मक कार्यक्रममें अपना समय लगायेंगे। इस कार्यक्रममें खादी तथा अन्य ग्रामीण उद्योगोंका हमेशा ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है, क्योंकि आबालवृद्ध, स्त्री-पुरुष, सभी इसमें भाग ले सकते हैं और इस कार्यके परिणामकी अंकोंमें गणना की जा सकती है। आशा यही है कि इसका उत्तर कार्यकर्त्ता लोग पहले की अपेक्षा कहीं ज्यादा काम करके देंगे।

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन, सं० ६, १९४२, फाइल सं० ३/४२/४१–पॉलि० (१); सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २२-३-१९४१ भी

५२८. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
२१ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

कल नागा हो गया। तुम्हारी हिन्दी लिखावट बिलकुल निर्दोष है और वाक्य-रचना बहुत अच्छी है। यदि तुम वहाँ हिन्दीका यथासम्भव ज्यादासे-ज्यादा अभ्यास कर डालो तो तुम हिन्दीके लिए बहुत उपयोगी होगी। 'हरिजन' का प्रकाशन सम्भवतः २९ तारीखसे फिर चालू हो जायेगा।

रामनारायणके पत्र मुझे अच्छे नहीं लगे। उनसे सत्यको छिपाने की इच्छा दीखती है। मैंने उसे पत्र लिखा है और कहा है कि तुम्हें मेरा पत्र भेज दे। मैंने अपने पास उसकी कोई प्रतिलिपि नहीं रखी है।

विधि समिति[1] (लॉ कमेटी)के बारेमें तुम्हें पहले ही लिख चुका हूँ। मृदुलाके पत्रकी राह देख रहा हूँ।

सुशीलासे इलाज कराने के लिए बा दिल्ली गई है। सुशीलाका तार आया था कि वह उसका दिल्लीमें अच्छा इलाज कर सकेगी। बा खूब हिम्मती है, फौरन तैयारी कर डाली और बिना किसी साथके अकेले ही चली गई।

मुझे प्रसन्नता है कि तुम कॉलेजमें भारतीय रहन-सहन रखने का ही आग्रह रख रही हो। तुम्हारी दृढ़ताके आगे सारा अविवेकपूर्ण विरोध छँट जायेगा।

१. लाहौरमें बनाई गई विधि-समिति, जिसने सत्याग्रहियोंके ऐसे मामलोंको, जिनमें उसके मतानुसार स्पष्ट अन्याय हुआ था, हाइ कोर्टके सामने पुनः विचारके लिए पेश करने का फैसला किया था। अमृत कौरने दुनीचन्दको लिखे अपने १९ अप्रैल, १९४१ के पत्रमें कहा था: "लाहौरकी . . . बार एसोशिएशन कमेटी (विधि-समिति) द्वारा पुनर्विचारके लिए रखे गये मामलोंके बारेमें कुछ शिकायतें आई हैं। गांधीजी की रायमें ऐसी समिति बनाने का विचार अपने-आपमें बिलकुल सही है। लेकिन इसके कार्यमें सत्याग्रही न तो कोई दिलचस्पी लें, न हस्तक्षेप करें और न उसे बढ़ावा ही दें। इसे अपने-आप कार्य करने दिया जाये। इस विषयमें आप सत्याग्रहियोंको कड़े आदेश जारी कर दें।"

तुम्हारी पाठ्य पुस्तक मिली। मेरा पढ़ने का इरादा है। एक प्रति सुशीलाको भेज दो।

तुमने एन्ड्रयूज-स्मारकके लिए मेरी अपील[1] देख ही ली होगी। मैं चाहता हूँ कि तुम सभी प्रकारके लोगोंसे जितना चन्दा सम्भव हो, इकट्ठा कर लो।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू ४००१)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३१० से भी

५२९. पत्र: रुक्मिणी बजाजको

सेवाग्राम, वर्धा
२१ मार्च, १९४१

चि० रुक्मिणी,

तेरा २४ फरवरी, १९४१ का पत्र मेरे सामने है। आज ही दो पंक्तियाँ लिख पा रहा हूँ। आशा है तुझमें काफी ताकत आ गई होगी। विवाह निर्विघ्न सम्पन्न हो गया होगा। बा आज डॉ० सुशीलासे दवा कराने अकेली [दिल्ली] गई है। उसके मलद्वारमें फोड़ा-सा है।

दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

श्री रुक्मिणी देवी
मार्फत श्री बनारसीदास बजाज
ठठेरी बाजार, बनारस सिटी

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१२८)से। सौजन्य: बनारसीदास बजाज

१. देखिए पृ० ४१७-१८।

५३०. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२१ मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

महादेवभाईपर बोज रखा सो भी अच्छा नहिं। अब तो क्या किया जाय? मैं देख लूंगा कि० भाईपर[1] ऐसे बोज डालना पाप समजा जाय।

अकबरका समजा। देखता हूं क्या किया जा सकता है।

चिमनलालने क्या कहा? मुझे बताने से मैं कुछ कह सकुंगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७८) से

५३१. पत्र : चमनलालको

सेवाग्राम, वर्धा
२२ मार्च, १९४१

प्रिय चमनलाल,

मैं पूरी कोशिशके बावजूद तुम्हारी पुस्तक नहीं पढ़ सका हूँ। किन्तु एक सरसरी नजर डालने से पता चला है कि तुम्हारी कुछ उक्तियाँ इतनी चौंका देनेवाली हैं कि उनकी सत्यतापर सन्देह होता है। यदि वे वास्तवमें सत्य हैं तो शोध-कार्यमें तुम्हारा यह योगदान मामूली नहीं है। यदि तुम्हारा शोध-ग्रन्थ अमेरिकी लोग स्वीकार कर लेते हैं, तो अमेरिका व भारतके बीच सांस्कृतिक सम्बन्ध अवश्य स्थापित हो जायेगा।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू अमेरिका? के आरम्भिक पाठेतर पृष्ठ १८ के सामने छापी गई प्रतिकृतिसे

1. किशोरलालभाई

५३२. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम,
[२२ मार्च, १९४१][1]

चि० अमृत,

तुम यह पत्र[2] देखकर समझ जाओगी। मुझे इस विषयमें कुछ याद नहीं है। साथमें कमलाका[3] अत्यन्त रोचक पत्र है। चन्देलको दस रुपये भेजे जा रहे हैं।

विधि-समितिके[4] बारेमें तुमने जो-कुछ लिखा है, मैं समझ गया। चिन्ता मत करो। तुमपर कुछ भी जोर पड़े तो शिमला चली जाना। वहाँ एक सप्ताह भी बिताओगी तो तुम्हें लाभ होगा।

तुम्हारा तार मिला।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४००२) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३११ से भी

५३३. पत्र : कृष्णचन्द्रको

सेवाग्राम
२२ मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

तुमने कल जो कहा वह ठीक हि था, प्रस्तुत था। अगर संतोष नहिं हुआ है तो बार बार पूछो। प्रश्न महत्त्वका है। इसमें अहिंसाकी कसौटी है। दोनोंके दिलमें आकर्षण पैदा हुआ। उसे दोष समझकर निकाल देवे तो उनका जीवन

१. डाककी मुहरसे

२. अभिप्राय रघुवंश गौड़के २० मार्चके हिन्दी पत्रसे है, जिसके पीछे गांधीजी ने अमृतकौरको अपना यह पत्र लिखा है। रघुवंश गौड़ने लिखा था: "यू० पी० कृषि विभागकी जो फाइल मैंने राजकुमारीको दी थी उसे बिना किसी सूचनाके मेरे पास वापस भेज दिया गया है। आपसे प्रार्थना है कि बतायें इस विषयमें क्या किया जा रहा है। . . ." देखिए "पत्र : अमृतकौरको", पृ० ४२१-२२ और "पत्र : रघुवंश गौड़को", पृ० ४०५ भी।

३. मार्गरेट जोन्स, जो धात्री-कार्यकी शिक्षा लेने बम्बई गई थीं; देखिए "पत्र : मेरी बारको", ३१-३-१९४१ भी।

४. देखिए पृ० ४२७ पर पा० टि०।

खट्टा हो सकता। अगर उनकी वरदाश्त करें तो उनका संयम वढ़ सकता है और वे उत्तरोत्तर वढ़ सकते हैं। उस उन्नतिका आधार हमपर है। यहि बात उनके रहने के समर्थनमें है और पर्याप्त होनी चाहिये।

दूसरोंका ताप यहाँतक सहन करना जवतक हम उससे दव नहि जाते हैं। उनका एक प्रमाण यह है कि दूसरेपर हमारा प्रभाव पड़ता जाय। यह बाह्य प्रमाण है अंतर प्रमाण आत्माकी साक्षी। अगर हमारी निडरता वढ़ती जाय तो वह अहिंसा है अन्यथा कायरता।

ऐसे कहा जाय कि कोचरव [आश्रम][1] में सारा काम हि व्यवस्था थी। बाकी चीज उसके मातेहत रही। बाह्य कामोंमें जो मैं द० अ०[2] से लाया था वही था। मिलनेवालोंको मैं आश्रमके काममें लगा देता था अथवा वे आये वैसे ही चले जाते थे। और मेरा शरीर सव मजदूरीके कामको वरदाश्त करता था, इसलिए हर प्रवृत्तिमें मैं शामिल रह सकता था और सबके संपर्कमें प्रतिक्षण रहता था ऐसे कहा जाय। रहने का एक हि कमरा बड़ा था। इसलिए संपर्कमें सुभिता रहता था। यह आरंभ कालकी बात है। सारा कामके मानी प्रातःकालमें पानी भरना, कपड़े धोना, रसोई पकाना, अनाज-भाजी साफ करना, परोसना, पढ़ाना, इ०। यह सब क्रियाएँ एक पीछे एक होने के कारण कष्टदायी नहि थीं।

बाकी प्रश्नका उत्तर तो कल दिया गया।

तुमारा मत आपमें है और कुछ है तो पूछो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३७९) से

५३४. पत्र : श्रीरामको

सेवाग्राम, वर्धा
२२ मार्च, १९४१

भाई लाला श्रीराम[3],

एंड्रूज स्मारकके वारेमें आपसे पूर्ण मददकी आशा रखा हूं।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९४७) से

१. गांधीजी ने यह आश्रम २५ मई, १९१५ को शुरू किया था। इसे अहमदाबादमें जीवनलाल मजराप देसाईके बंगलेमें स्थापित किया गया था, जहाँ यह १९१७ में साबरमती आश्रमकी स्थापना होने तक चलता रहा।

२. दक्षिण आफ्रिका

३. दिल्लीके प्रमुख उद्योगपति लाला श्रीराम

५३५. सन्देश : मु० रा० जयकरको[1]

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
[२३ मार्च, १९४१ के पूर्व][2]

श्री जयकरसे कहना कि पुराने मित्रोंसे मिलने में तो मुझे हमेशा खुशी ही होगी। किन्तु व्यक्तिगत रूपसे चाहे मैं उनसे प्रत्येक पक्षपर चर्चा कर लूँ, पर कार्य-समितिके सदस्योंसे सलाह किये बिना मैं उन्हें कोई ऐसा आश्वासन नहीं दे सकता जिसके बलपर वे वाइसरायसे मिलने जा सकें। उन्हें कांग्रेस कार्य-समितिकी ओरसे दिये गये आश्वासनकी आवश्यकता पड़ेगी, और मुझे ऐसा कोई आश्वासन देने का अधिकार नहीं है। यही एक कठिनाई होगी, अन्यथा उनसे मिलने में तो मुझे बहुत ही हर्ष होगा। सम्भवतः वे भारी आशाएँ लेकर आयेंगे और मैं उनको पूरा करने में असफल रहूँगा। यही बात है, नहीं तो मुझे उनसे मिलने में किसी प्रकारकी भी आपत्ति नहीं हो सकती।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० १०३८७)से। सौजन्य : नेशनल लाइब्रेरी

१ और २. यह सन्देश महादेव देसाईके तेजबहादुर सप्रूके नाम लिखे २३ मार्चके पत्रसे उद्धृत किया गया है। पत्रमें लिखा था: "मेरा अन्दाजा है, श्री जयकरने बम्बईमें हुए उनके साथ मेरे वार्तालापसे आपको अवगत कराया होगा। उन्होंने मुझसे कहा था कि गांधीजीसे परामर्श करूँ और उनकी प्रतिक्रिया श्री जयकरको बताऊँ। इसपर [गांधीजीका] यह सन्देश मैंने उन्हें दिया था।... अब मुझे श्री जयकरका पत्र मिला है, जिसमें मुझसे यह सन्देश आपको देनेके लिए भी कहा गया है, ताकि आप आवश्यक कार्रवाई कर सकें।..."

५३६. तार : एगथा हैरिसनको

वर्धागंज
[२३ मार्च, १९४१ या उसके पूर्व][1]

एगथा हैरिसन
क्रैनबोर्न कोर्ट
एल्बर्ट ब्रिज रोड, लन्दन

बम्बई सुझावोंको[2] कांग्रेसका अनुमोदन मिलने की सम्भावना नहीं। मैं मौन रहूँगा।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५१९) से। सी० डब्ल्यू० ७८६२ से भी; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

५३७. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
२३ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हारा तार तुरन्त आ गया और उपयोगी था। मैं जानता था कि तुम्हें याद होगा कि वह[3] कहाँ रखी गई थी। अमतुस्सलामने और लीलावतीने भी सुझाव दिया कि बक्सेमें देखूँ। यह सुझाव मैंने यूँ ही उड़ा दिया। किन्तु उनका कहना सही था।

१. यह तार घनश्यामदास बिड़लाके नाम महादेव देसाईके २३ मार्चके पत्र (सी० डब्ल्यू० ७८६२) से लिया गया है। अपने पत्रमें देसाईने इस तारको एगथा हैरिसनके उस पत्रके गांधीजी द्वारा दिये "उत्तर" के रूपमें उद्धृत किया है जिसमें हैरिसनने "बम्बई-प्रस्तावके बारेमें गांधीजी की प्रतिक्रिया" मालूम करनी चाही थी। जी० एन० साधन-सूत्रमें मूल तारमें डाककी मुहरपर '२४ मार्च' की तारीख पड़ी हुई है।

२. तात्पर्य तेजबहादुर सप्रूकी अध्यक्षतामें बम्बईमें १३ से १६ मार्च तक होनेवाले निर्दलीय नेता सम्मेलन द्वारा पारित प्रस्तावसे है; देखिए परिशिष्ट १३।

३. मरहमकी डिबिया; देखिए "पत्र : अमृतकौरको", पृ० ४२१-२२।

मैंने फारुकीको जो पत्र[1] लिखा, वह मेरी दृष्टिमें बिलकुल उपयुक्त था। मैंने उन सबके-सब असंगत प्रश्नोंका उत्तर नहीं दिया है। मुझे पूरा विश्वास है कि मेरे पत्रका अनुचित लाभ उठाने में किसीको सफलता नहीं मिलेगी।

मुझे हर्ष है कि तुम्हें अपने कॉलेजकी अच्छी रिपोर्ट मिली।

यहाँ तो उबालनेवाली गर्मी पड़ रही है। तुम्हें आराम करना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च:]

नई दिल्लीके पतेके विषयमें खेद है।

इसके साथ प्यारेलालका पत्र रख रहा हूँ। मैंने उससे कहा था कि तुम्हें पत्र लिखे।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४००३)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३१२ से भी

५३८. पत्र: अमृतलाल चटर्जीको

सेवाग्राम
२३ मार्च, १९४१

प्रिय अमृतलाल,

तुम व्यर्थ ही चिन्तित हो। यदि विवाहित लोग ब्रह्मचारीका जीवन व्यतीत करें तो वे आश्रममें रह सकते हैं। किन्तु यदि कनु और आभा शादी करेंगे तो ब्रह्मचर्यका जीवन बितानेके लिए तो करेंगे नहीं। क्या यह बात स्पष्ट नहीं है?[2]

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यु० १४५७)से। सौजन्य: अमृतलाल चटर्जी

१. देखिए पृ० ४१५।

२. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", पृ० ३९१, और "पत्र: अमृतलाल चटर्जीको", पृ० ३१२-१३ भी।

५३९. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

सेवाग्राम, वर्धा
२३ मार्च, १९४१

भाई विट्ठलदास,

आशा है, तुम्हारी प्रदर्शनी आदि खूब सफल होंगी। हमारे संघर्षकी सफलता ऐसे रचनात्मक कार्योंके प्रसार और उनकी सफलतापर ही निर्भर है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९९) से

५४०. पत्र : कुँवरजी खेतसी पारेखको

सेवाग्राम, वर्धा
२३ मार्च, १९४१

चि० कुँवरजी,

अपनी राय[1] तो मैंने कल ही किशोरलालभाईको बता दी थी। मुझे लगता है कि सबको इकट्ठा करने की कोई जरूरत नहीं है। अगर डाक्टरकी भी यही राय हो, तो तुरन्त ऑपरेशन करा लेना चाहिए। पेटको चीरने में कोई जोखिम नहीं है। गाँठके बारेमें सब जान लेना मैं अत्यावश्यक मानता हूँ। सब इकट्ठा होंगे, तो वे कुछ मदद तो कर नहीं सकेंगे, फिर किराये आदिका खर्च क्यों उठाया जाये? प्रत्येक मामलेमें एक सीमाका ध्यान रखना जरूरी है। यह पत्र सबको पढ़वा देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७४७) से। सी० डब्ल्यू० ७२७ से भी; सौजन्य : नवजीवन ट्रस्ट

१. मनुबहन मशरूवालाकी बीमारीके सम्बन्धमें; देखिए "पत्र: कुँवरजी खेतसी पारेखको", पृ० ४२२, तथा "पत्र: कान्तिलाल गांधीको", पृ० ४४० भी।

५४१. पत्र : मगनलाल और मंजुला मेहताको

सेवाग्राम, वर्धा
२३ मार्च, १९४१

चि० मगनलाल और मंजुला,

इस पत्रके साथ जो पत्र है, उसका पेन्सिलसे लिखा अंश लौटा दिया गया था, क्योंकि उसमें उर्मीने पता गलत लिखा था। पेन्सिलकी लिखाई मुझे पसन्द नहीं आई, इसलिए वह फिर उसे स्याहीसे लिख लाई। उर्मी मजेमें है और होशियार होती जा रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६१४) से। सौजन्य : मंजुलाबहन म० मेहता

५४२. पत्र : प्रभुदयाल विद्यार्थीको

२३ मार्च, १९४१

चि० परभुदयाल[1],

श्रीरामजी शर्माको[2] लिखो कि 'सैनिक' बारेमें[3] महादेवभाईने अभिप्राय भेज दिया है। 'सैनिक' के बारेमें लड़ रहे हैं और दूसरे नामसे करना नहीं है। धर्म और दृढ़ताकी आवश्यकता है। तुमारा लेख निकम्मा है। बहुत अतिशयोक्तिसे भरा है। शास्त्रीजीके बदनका काफी हिस्सा बिलकुल साफ है। ऐसी दुर्गन्ध भी नहीं है। मैं उनको घंटे नहीं देता हूं। आजकल तो मालीश भी मैं नहीं देता हूं। मैंने तुमको बताया है कि तुमारी भाषा छीछरी है, क्योंकि विचार ऐसे हैं। तुमारेमें सत्यकी पूजा होनी चाहिए ऐसी नहीं है। अगर लिखना हि है तो शास्त्रीजीसे समझ लो। एक भी लाईन न लिखी जाय जिसके सत्यके बारेमें तुमने निश्चय रूपसे ज्ञान नहीं पाया हो।

बापुके आशीर्वाद

१. आगराके कांग्रेसी कार्यकर्ता
२. विशाल भारत के सम्पादक; आगरा षड्यन्त्र केस (१९४०-४१) के प्रमुख अभियुक्त; शिकार-सम्बन्धी अनेक पुस्तकोंके लेखक।
३. संयुक्त प्रान्त सरकारने सैनिकके प्रेसपर कब्जा कर लिया था और हिन्दी दैनिक सैनिकका प्रकाशन बन्द हो गया था। सैनिकके प्रबन्धकोंने सरकारकी इस कार्रवाईके विरुद्ध अपील दायर की थी।

[पुनश्च :]

लेख और रा० श० का खत वापस।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६९२) से

५४३. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
२४ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हारा छोटा-सा पुर्जा मिला।

तुम्हें वहाँ कैसा स्वागत मिलेगा, इसमें तुम्हें सन्देह कभी नहीं था। मुझे तो नहीं था। आशा है, तोफाको[1] हम सबकी याद है। तुम्हारा फूलोंके प्रति अनुराग मैं जानता हूँ। किन्तु इस विषयमें मैं तुम्हें यहाँ सन्तुष्ट नहीं कर सकता। यह स्थल इतना अव्यवस्थित-सा है कि फूलोंकी क्यारियाँ सजाना मुश्किल है।

यदि कुछ विघ्न न पड़ा तो 'हरिजन' ५ अप्रैलको निकल आयेगा।[2] शायद वह अहमदाबादसे निकलेगा। कुछ ऐसा लगता है कि चन्द्रशंकरने अपने कर्त्तव्यकी अक्षम्य उपेक्षा की है।

मैं आशा रखे हुए हूँ कि उसने जान-बूझकर बेईमानी नहीं की है। किन्तु जैसी उपेक्षा उसने दिखाई है उसका भी अन्ततः परिणाम तो लगभग वैसा ही होता है।

गर्मीके बावजूद मेरा स्वास्थ्य ठीक है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च:]

अमतुस्सलाम अच्छी है, दमासे मुक्त है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४००४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७३१३ से भी

१. अमृतकौरका पालतू कुत्ता

२. लेकिन हरिजन फिर शुरू नहीं हो सका और प्रकाशन दुबारा स्थगित करना पड़ा। देखिए "टिप्पणी : हरिजन के सम्बन्धमें", पृ० ४४७ और "पत्र : अमृतकौरको", पृ० ४२७-२८ तथा पृ० ४५० भी।

५४४. पत्र : मीराबहनको

२४ मार्च, १९४१

चि० मीरा,

क्या यही सर्वोत्तम नहीं होगा कि मैं उँधरूको तुम्हारे पास वापस भेज दूं? वह १२ से ४ बजे तक चौकीदारी करते हुए तुम्हारा सब काम भी कर सकता है। उस औरतके बारेमें कुछ और प्रबन्ध किया जा सकता है। साथमें . .[1] है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४७३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८६८ से भी

५४५. पत्र : मीराबहनको

२४ मार्च, १९४१

चि० मीरा,

तुम्हारा पुर्जा मिला। मेरे ध्यानमें तो कोई बात नहीं आई। मेरे लिए इतना ही काफी है कि तुम अशिष्टता बरत ही नहीं सकतीं। यदि तुम उँधरूको रख लो, तो सब दिक्कतें दूर हो जायेंगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४७४) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८६९ से भी

१. साधन-सूत्रमें यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

५४६. पत्र : रघुवंश गौड़को

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२४ मार्च, १९४१

प्रिय रघुवंश,

राजकुमारी बहनने कोशिश की, किन्तु असफल रही। ऐसी स्थितिमें तुम्हें कोई ऐसा रोजगार कर लेना चाहिए जिससे तुम्हारा ज्ञान वृथा न जाये। और साथ ही तुम्हें अहिंसाका अभ्यास करना चाहिए।[1]

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४०)से

५४७. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

सेवाग्राम, वर्धा
२४ मार्च, १९४१

चि० विजया,

तू तो बहुत पीछे पड़ जानेवाली लड़की है। पत्र देरसे लिखती है और जवाब जल्दी माँगती है। धोतियाँ आयेंगी, तो उन्हें काममें लाऊँगा। बा सुशीलासे इलाज कराने दिल्ली गई है। खास कुछ नहीं है। जो था वही है। लेकिन उसकी इच्छा हुई कि सुशीलासे इलाज कराया जाये। अब सुशीला यहाँ आकर लम्बे समयतक रह सके, यह तो सम्भव नहीं था, इसलिए बा को भेज दिया। मनुभाई खासा अनुभव प्राप्त करके आये होंगे। क्या वे ठीकसे घी लेते हैं? आशा है, नानाभाईकी तबीयत ठीक रहती होगी। शारदा अभी यहीं है।

तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१३९)से। सी० डब्ल्यू० ४६३१ से भी; सौजन्य: विजयाबहन म० पंचोली

१. देखिए "पत्र: रघुवंश गौड़को", पृ० ४०५, और "पत्र: अमृतकौरको", पृ० ४३० भी।

५४८. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेवाग्राम, वर्धा
२४ मार्च, १९४१

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। तू और शान्ति[1] दीर्घायु हों। अपने कुटुम्ब और समाजकी शोभा बढ़ाओ और सच्चे सेवक बनो।

बा सुशीलासे इलाज कराने दिल्ली गई है। एकाध महीना वहाँ रहेगी। बवासीरकी जगह उसे दर्द होता है। मनुके गाँठ-जैसी है, इसलिए लगता है कि ऑपरेशन कराना पड़ेगा। सरस्वती मजेमें होगी।

तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३६३)से। सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

५४९. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

२४ मार्च, १९४१

बा,

तू पत्र लिखना या किसीसे लिखाना। इस पत्रके साथ कान्तिका एक पत्र है। उसने एक ओर तेरे लिए लिखा है और दूसरी ओर मेरे लिए। मनुकी खबर आती रहती है। ऐसा लगता है, उसे ऑपरेशन कराना पड़ेगा। मैंने तो लिख दिया है[2] कि एक और डाक्टरको दिखाकर अगर उसकी भी यही राय हो, तो ऑपरेशन करा डाले। उसमें कोई जोखिम नहीं है। तू चिन्ता मत करना। अब जब तू वहाँ है, तो पूरा इलाज कराके अच्छी हो लेना।

यहाँ गर्मी बहुत पड़ रही है। मेरी चिन्ता मत करना। सब ठीक चल रहा है। खान-पान सब लीलावती[3] सँभालती है।

लक्ष्मी[4] और बच्चोंको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

१. कान्तिलाल गांधीके पुत्र
२. देखिए "पत्र : कुँवरजी खेतसी पारेखको", पृ० ४३५।
३. लीलावती आसर
४. देवदास गांधीकी पत्नी

[पुनश्च :]

मणिका[1] पत्र इस पत्रके साथ है। उसे व्योरेवार उत्तर देना। लक्ष्मी या सुशीला लिख देगी।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२४) से

५५०. पत्र : अद्वैतकुमार गोस्वामीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२४ मार्च, १९४१

भाई अद्वैतकुमार,

तुमारे खतका उत्तर बहुत देरसे देता हूं। समय नहि मिलता। वहांकी हालतके बारेमें मैं क्या लिख सकता हूं। बाबा राघवदास, मोहनलालजी इ०को मैं लिख तो नहि सकता। इसलिये जो हो सके वही अच्छा करने की चेष्टा करो।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १५१) से

५५१. पत्र : कृष्णचन्द्रको

सेवाग्राम
२४ मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

भाई कुंदरने[2] जो तैयार किया है उस नियमावलि[को] मैं पढ़ गया। अच्छी है। उसमें कुछ काट-छांट होना है तो किया जाय। नहि तो इसकी नकलें यहांके साइक्लोस्टाइलपर करवा लो। बादमें सुधारना तो कर हि सकते हैं।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३८०) से

१. मणिबहन पटेल
२. कुंदर दीवान, एक खादी कार्यकर्ता और मनोहर दीवानके भाई

५५२. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२४ मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

तुम समजे ही नहिं। व्यक्तिगत ख्याल आये तो मैं कह दूं। जल्दी होनेके कारण मैंने नहिं लिखा। गर्भमें प्रश्न तो यह है, आदमी ऐसा सरल नहिं रहता है। अगर विकार आया ऐसे हि वह कह दे तो यह आश्रम स्वर्गभूमी बन जाय। बादमें भले विवाह हो या न हो। . . .[1] ने अपना विकार छुपाया तो सही। मैंने पूछा तो कबूल किया। अब दोनोंकी चेष्टा किसीको न खटकती तो कौन कहे दोनों कहां तक चले जाते। इसलिये सच्चा नियम तो यह हो सकता है कि जिसके दिलमें विकार आया ऐसे हि कह देवे। लेकिन ऐसा कौन करेगा? इसलिये मैं असल बातपर कायम रहता हूं। हम जैसे होंगे और रहेंगे ऐसे ही दूसरे बनेंगे।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३८१) से

५५३. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२४ मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

चक्की, पैखाना ई० सब कोचरबमें था हि और मैं करता था।

तुमने प्रश्न ठीक हि पूछा है। आ उदाहरण मात्र था। . . .[2] को निकालना भी ऐसा हिं अन्याय होगा। नियम भंगके लिये तो सब निकले। लेकिन जो निखालसतासे अपनी वृत्ति बनावे उसको निकालने में अनुदारता है। अनुदारतामें से दंभ पैदा होता है। प्रश्न कठिन है। बारबार विचारोगे तो समाधान होगा। तुमारे प्रश्न की जड़में कोई दूसरा हि प्रश्न है। मैं सोचता हूं तुमारे भी सोचना।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३८२) से

१ और २. साधन-सूत्रमें नाम काट दिये गये हैं।

५५४. पत्र: बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीको

[२५ मार्च, १९४१ के पूर्व][1]

. . . जेल जाना स्वयं कोई पुण्य नहीं है। वह तो साधन-मात्र है। यदि आप उसके बिना ही लक्ष्यकी प्राप्ति कर सकें तो हम ऐसे अवसरका स्वागत ही करेंगे।

आपकी कठिनाइयोंकी मैं अच्छी तरह कल्पना कर सकता हूँ, किन्तु सफलताका मार्ग कठिनाइयोंसे भरा है। उनसे हमें घबराना नहीं है। यदि हमारे प्रयत्न अडिग और सच्चे हों तो सफलता निश्चित है। सत्याग्रहियोंकी गिरफ्तारी न होने पर मुझे कोई चिन्ता नहीं होती। आपको सरकारके इस कदमसे लाभ उठाना चाहिए। जो सत्याग्रही दिल्लीकी ओर कूच न करें वे अपने ही जिलोंमें काम करें और जिलोंको संगठित करें।

कुछ भी हो, ऐसे लोगोंकी तादाद हमेशा ही बहुत भारी होगी जो जेलसे बाहर रहेंगे। यदि ये लोग पूरी तरह संगठित किये जा सकें तो किसीको जेल जाने की जरूरत ही नहीं है।

मौलानाकी गिरफ्तारी अवश्य खेदजनक है, किन्तु वह तो होनी ही थी। जो भी कठिन कार्य सामने आयें, कार्यकर्त्ता उनको चुनौतीके रूपमें डटकर स्वीकार करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७-३-१९४१

५५५. तार: अमृतकौरको

वर्धा

२५ मार्च, १९४१

राजकुमारी अमृतकौर

जालंधर सिटी

केवल छात्राओंके सम्मुख भाषण दो। गुजरात जाना अनावश्यक है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४००५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३१४ से भी

१. यह पत्र दिनांक "कलकत्ता, २५ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

५५६. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
२५ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो तार चाहा था मैंने भेज दिया है। मैं नहीं चाहता कि तुम पुरुषोंकी सभाओं आदिमें भाग लो। तुम्हें सस्ता नहीं बनाया जाना चाहिए। छात्रोंकी सभाओंमें बेशक भाग लो, बशर्ते कि वे ठीक आचरण करें और वास्तवमें तुम्हें बुलाना चाहें। स्त्री-सभाओंमें तो हमेशा भाग लो। तुम्हें गुजरात जाने की आवश्यकता नहीं है।

मरहम यथास्थान ही मिल गया। वह जानकीबहनके लिए है।

मेरी तबीयत ठीक रहती है। [रक्तचाप] दोपहरको १४२/९० था।

महिलाओंके विषयमें मैंने अपना अन्तिम मत नहीं व्यक्त किया है। तुम्हें कुछ जल्दी तो नहीं है?

सप्रेम,

[पुनश्च:]

'हरिजन' ५ अप्रैलको अहमदाबादसे निकलेगा।[1]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४००६) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३१५ से भी

१. देखिए पृ० ४४७।

५५७. पत्र: अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
२६ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

संलग्न पत्र पढ़ना। बादमें इसे बेशक नष्ट कर देना।

यहाँ मौसम गर्म होता जा रहा है, हालाँकि मुझपर इसका असर नहीं पड़ा है।

मनु त्रिवेदीके पिता[1] आ गये हैं। उन-जैसे विरले ही व्यक्तियोंसे मैं मिला हूँ। वे वास्तवमें सज्जन पुरुष हैं। उन्हें रक्तचापकी शिकायत है और मैं उनका इलाज कर रहा हूँ, हालाँकि वे वर्धामें रह रहे हैं।

जानकीबहन ठीक चल रही हैं। मदालसाकी ओरसे अभी भी चिन्ता बनी हुई है। अमतुस्सलाम ठीक ही है। बाकी सब-कुछ वैसा ही है जैसा तुम देख गई थीं। बा को एक पोस्टकार्ड अवश्य डाल देना। उसे आज एक सुई लगवानी है। यह पत्र मैं सुबह चार बजेसे भी पहले लिख रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४००७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३१६ से भी

१. जयशंकर त्रिवेदी

५५८. पत्र : पटवर्धनको

२६ मार्च, १९४१

भाई पटवर्धन,

मैं कैसे कहूं अदालतमें जाना उचित है अथवा अनुचित है? मैं इतना स्पष्ट रूपसे कह सकता हूं कि तुमको अदालतमें जाने का पूर्ण अधिकार है और धर्म भी हो सकता है। लेकिन धर्म है या नहीं [इस] का निर्णय करने का मेरे पास सामान ही नहीं है। तुम्हारे हि सोच लेना। सबको इकट्ठा करने को मैंने कोशिश की। मैं निष्फल हुआ। फिर भी अगर सब मेरे पास आ जाओ तो मैं थोड़ा समय अवश्य दूंगा। लेकिन मेरी हिम्मत नहीं कि मैं सबको बुलाऊं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

५५९. तार: अमृतकौरको

वर्धागंज

२७ मार्च, १९४१

राजकुमारी अमृतकौर
जालंधर सिटी

चौदहकी सुबह दिल्ली पहुँच जाओ तो काफी है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४००८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३१७ से भी

५६०. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
२७ मार्च, १९४१

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। जयप्रकाशके बारेमें पढ़कर दुःख होता है। मालिश कराने के बाद वह ठंडे पानीसे नहा सकता है। देहको खूब रगड़ना चाहिए। बिना उबाले टमाटर खाना ठीक है। तू वापस लौटे, तब यहाँसे होकर जाना मत भूलना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५७)से

५६१. टिप्पणी : 'हरिजन' के सम्बन्धमें[1]

[२८ मार्च, १९४१ या उसके पूर्व][2]

ऐसी परिस्थितिमें 'हरिजन' को फिरसे चालू नहीं किया जा सकता। और यदि करें भी तो मुझे पक्का विश्वास है कि एक मास बीतते-न-बीतते हम विपत्तिमें फँस जायेंगे।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८६३)से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१ और २. यह टिप्पणी घनश्यामदास बिड़लाके नाम महादेव देसाईके २८ मार्चके पत्रसे उद्धृत की गई है। पत्र इस प्रकार था: "मनुष्य मनसूबे बाँधता है, पर होता वही है जो ईश्वर चाहता है। मैंने कल घोषणा की थी कि **हरिजन** ५ अप्रैलसे फिर चालू हो जायेगा, पर आज अकस्मात् टोटेनहमका पत्र आ पहुँचा जिसके कारण बापूने पुनःप्रकाशनका विचार बदल दिया। . . . शायद अब युद्धकी समाप्ति होने तक या तबतक जबतक कि कोई समझौता न हो जाये **हरिजन** चालू करना असम्भव होगा, लेकिन समझौतेकी रत्ती-भर भी आशा नहीं दीखती।" गृह-विभागके अतिरिक्त सचिव, सर रिचर्ड टोटेनहमके महादेव देसाईको लिखे पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट १४।

५६२. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
२८ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

मैं कल पत्र नहीं लिख सका। तुम्हारे पत्र मिल गये हैं। १४ तारीखसे पहले दिल्ली न जाने के विषयमें मैंने तुम्हें एक तार[1] भेजा है। मैंने अ[मृतलाल चटर्जी]को गुड फ्राइडेके बारेमें बताया था। उसने कहा, वह स्वयं ईसाई है और गुड फ्राइडेको वह सूलीपर भी चढ़ा, क्योंकि उसी दिन उसका विवाह हुआ।

विधि-समितिमें महिलाओंके योगदानके सम्बन्धमें अपना अन्तिम मत संलग्न कर रहा हूँ। मृदुलाने जोशीकी अच्छी क्षतिपूर्ति कर दी है।

इसके साथ जुबेरीका लिखा पत्र है। मेरा खयाल है कि तुम्हारा उसके साथ पत्र-व्यवहार हुआ है। कृपलानी कहता है कि पत्र उचित कार्रवाईके लिए तुम्हें भेज दिया गया है।

तुम्हारी हिन्दी लिखावट दिन-प्रतिदिन सुधरती जा रही है।

आशा है, शम्मीकी तबीयत पहलेसे अच्छी होगी।

बा ने एक इन्जेक्शन लिया था। कल भारतानन्दका ऑपरेशन हुआ। शैलेन बिलकुल ठीक है। शास्त्रीका लोभ तो बढ़ रहा है, किन्तु वे ठीक हैं।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४००९)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७३१८ से भी

१. देखिए पृ० ४४६।

५६३. पत्र : प्रभुदयाल विद्यार्थीको

२८ मार्च, १९४१

चि० परभुदयाल,

तुमारा खत मिला। इधर उधरकी बात छोडकर काकासाहेब कहें वही करो और जो काम वे दें उसे धर्म समजकर पूर्ण तन्मयतासे करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६९३)से

५६४. विश्व-शान्तिका एकमात्र उपाय

मेरे अन्दर यह विश्वास बढ़ता जा रहा है कि चारों ओर होनेवाले रक्त-रंजित विनाशके बीच मैं एक अतिशय निष्पाप परन्तु बहुत बड़ी सम्भावनाओंसे भरा हुआ आन्दोलन चला रहा हूँ। यद्यपि मैं इस आन्दोलनका प्रवर्तक हूँ तो भी मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि इसीके द्वारा स्थायी जागतिक शान्तिकी आशा हो सकती है। लड़ाईके जरिये शान्ति कभी नहीं आयेगी।

जिस आन्दोलनके लिए मैं जिम्मेवार हूँ, कदाचित वह एक निष्फल प्रयास ही साबित हो। अगर मैं अपने सिवा और किसीका प्रतिनिधि न होऊँ और अपने धर्मके प्रति प्रामाणिक रहूँ तो भी मैं सन्तुष्ट रहूँगा। परन्तु जहाँतक विश्व-शान्तिसे ताल्लुक है, वर्तमान समयकी दृष्टिसे वह प्रयत्न अपर्याप्त ठहरेगा। मौजूदा पीढ़ीके जीवित कालमें हमारा इष्ट फल प्राप्त करने के लिए राष्ट्रका बहुत बड़ा हिस्सा इस प्रयत्नके पीछे है, इसका अचूक और प्रत्यक्ष सबूत देना होगा। ऐसा सबूत सम्भव होने के पहले अभी बहुत-कुछ होना आवश्यक है। वर्तमान आन्दोलन उस दिशामें एक प्रयत्न है।

केवल प्रामाणिक प्रयत्न करना ही मनुष्यके बसकी बात है। सत्याग्रह आन्दोलनमें यह सूत्र अक्षरशः सत्य है कि फलदाता भगवान है। इसलिए श्रद्धा ही मेरे जीवनका अवलम्ब है, और दूसरे सत्याग्रहियोंके भी जीवनका अवलम्ब होना चाहिए। अभी तो लड़ाई शुरू ही हुई है। सच्ची परीक्षा, सच्चा बलिदान, तो अभी आगे आयेगा। मुझे हजारवीं बार फिरसे दुहराने दो कि इस लम्बी और विकट लड़ाईमें केवल गुणका ही महत्त्व रहेगा, संख्या या परिमाणका नहीं। इसमें द्वेषकी गुंजाइश ही नहीं है। झाँसा-पट्टीकी तो हरगिज नहीं।

सेवाग्राम, २९ मार्च, १९४१

सर्वोदय, मई, १९४१

५६५. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
२९ मार्च, १९४१

चि० अमृत,

इन्सान सोचता है, लेकिन होता वही है जो भगवान चाहता है। कल घोषणा की गई थी कि 'हरिजन' का प्रकाशन ५ अप्रैलसे फिर आरम्भ किया जायेगा। अब सरकारकी ओरसे एक पत्र[1] प्राप्त हुआ है, जो मेरे दृष्टिकोणसे तो लगभग निषेधात्मक ही है। इसलिए अब मैंने यह घोषणा की है[2] कि 'हरिजन' ५ अप्रैलको फिरसे आरम्भ नहीं होगा।

आज तुम्हारी ओरसे कोई डाक नहीं आई। निःसन्देह, मैं तुमसे प्रतिदिन एक पत्र लिखने की आशा नहीं रखता।

मेरा स्वास्थ्य ठीक चल रहा है। 'हरिजन' के इस दुबारा स्थगनसे एक प्रकारसे मेरे मनपर से एक बोझ हट गया है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६७२)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४८१ से भी

५६६. पत्र : चन्द्रगुप्त वार्ष्णेयको

सेवाग्राम
२९ मार्च, १९४१

भाई चंद्रगुप्त,

तुम्हारा पो० का० मिला। भाईके स्वर्गवाससे तुमारी मुश्केली मैं समज सकता हूं। आशा देवीको तुमारी गैरहाजरी चुभनेवाली है। तुमारे कामसे उनको काफी मदद मिलती थी।

बापुके आशीर्वाद

गांधीजी और राजस्थान, पृ० २६१

१. देखिए परिशिष्ट १४।
२. देखिए पृ० ४४७।

५६७. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
३० मार्च, १९४१

प्रिय अमृत,

आज तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे सुझाव तो युक्तियुक्त हैं। मैं जल्दबाजीमें कोई कदम नहीं उठाना चाहता। जो-कुछ पता चला है उससे मैं विचलित नहीं हुआ हूँ। किन्तु तुमने इफ्तिखारके[1] बारेमें जो-कुछ सुना है, यदि वह सत्य है तो वह एक गहरा आघात होगा। मुझे अब भी लगता है कि इस मामलेमें कुछ गम्भीर गलतफहमी है। तुम चुपचाप जो-कुछ जाँच-पड़ताल कर सको, कर लो और परिणाम मुझे बताओ।

हाँ, तुम्हारे कॉलेजसे १०० रुपये प्राप्त हुए हैं। मैंने एक पोस्टकार्ड भेजा है। पता बदलकर मैंने एक 'पत्रिका' और तीन-चार पत्र तुम्हें भेज दिये हैं।

'हरिजन' के प्रकाशनके स्थगित होने का दुःख मत मानना। इसका परिणाम शुभ ही होगा।

शम्मीके बारेमें जानकर दुःख हुआ। आशा करता हूँ, वह शीघ्र ही ठीक हो जायेगा। मैं बिलकुल स्वस्थ हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१०) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७३१९ से भी

१. मियाँ इफ्तिखारुद्दीन, अध्यक्ष, पंजाब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी; देखिए खण्ड ७४, "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", ६-७-१९४१ भी।

५६८. पत्र : कृष्णचन्द्रको

३० मार्च, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

रोजनिशिके[1] बारेमें तुमारे प्रश्नका उत्तर देना मुश्केल है। जैसे तुमको अच्छा लगे ऐसे करो। अनुभवसे पता चलेगा क्या उचित है। कोई खास चीज मुझको हि कहने की रहे उसे एक कागजपर अलग लिखना अच्छा होगा। तुमारे सरपे रो० नि० पढने का बोज न रहे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३८३) से

५६९. पत्र : एफ० मेरी बारको

सेवाग्राम, वर्धा
३१ मार्च, १९४१

तुम्हारा १८ फरवरीका पत्र मैंने अभी-अभी पढ़ा। परमात्मा जाने, यह पत्र तुम्हें कब मिलेगा। देखता हूँ, तुम्हें विविध प्रकारके अनुभव प्राप्त हो रहे हैं। आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य खूब बढ़िया होगा और तुम्हारे पिताजीका भी।

हाँ, तुम अपनी पुस्तक[2] लिख डालो। उससे कुछ भ्रामक धारणाएँ दूर हो जायेंगी।

यहाँ खूब गर्मी पड़ रही है। किन्तु फिलहाल कोई बीमार नहीं है।

यहाँ हालात कठिन हैं। मैंने 'हरिजन' के पुनः-प्रकाशनकी घोषणा कर दी थी, किन्तु सरकारसे प्राप्त एक पत्रने[3] मुझे अपनी घोषणाको रद्द करने पर बाध्य कर दिया।

डॉ० जीवराज मेहताकी कृपासे कमलाको एक बड़े-से अस्पतालमें प्रशिक्षण पानेका सुअवसर मिल गया है। वह बहुत खुश है। चन्देल खेड़ीमें अपना काम

१. डायरी

२. **बापू-कन्वर्सेशन्स एंड कॉरेस्पॉडेंस विद महात्मा गांधी,** इंटरनेशनल बुक हाउस लिमिटेड, बम्बई द्वारा १९४९ में प्रकाशित

३. देखिए परिशिष्ट १४।

कर रहा है। बेशक हम सबको यही आशा है कि तुम एक दिन वापस लौट आओगी।

शेष सब महादेव लिखेगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०८१) से। सी० डब्ल्यू० ३४११ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार

५७०. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
३१ मार्च, १९४१

प्रिय पगली,

आज तुम्हारे दो पत्र मिले। कलके नागेका कारण स्पष्ट हो गया।

महिलाओंके सम्बन्धमें अपना सुनिश्चित मत तुम्हें भेज चुका हूँ।

शाह मेरे पास अभीतक फटका भी नहीं है। फारुकी मेरे पत्रका[1] कोई खास या देर तक अनुचित लाभ नहीं उठा सकेगा। मैंने जो स्थिति अपनाई है, वह इस प्रकारके लगभग सभी मामलोंमें ठीक और युक्तियुक्त है। पंच-फैसला कराने में भयकी तो कोई बात नहीं होनी चाहिए। निर्णायक या निर्णायकोंको चुनना तो हमेशा अपने वशकी बात है। मैं तुमसे सहमत हूँ कि कांग्रेसको एक दलके रूपमें छात्रोंको संगठित करने का प्रयास नहीं करना चाहिए। किन्तु व्यक्तिके रूपमें कांग्रेसियोंको इससे कौन रोक सकता है? तुम्हें ऐसी बातोंसे व्यथित नहीं होना चाहिए। अपना यथाशक्य प्रयत्न कर लेने के बाद समझदारी इसीमें है कि जो-कुछ होना है उसे होने दें।

पंजाब कांग्रेसके मामलोंमें मैं तुम-जितना क्षुब्ध नहीं हूँ। किसी बड़ी प्रजातान्त्रिक संस्थामें अकस्मात ही कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती। उसमें भले लोग भी होंगे और बुरे भी। यदि कुल मिलाकर बुरे ही हों तो संस्था बुरी तरह बदनाम हो जायेगी। अत. स्वयं बिना परेशान हुए तुम सारे प्राप्य तथ्य मेरे सामने रखो। फिर मैं देखूँगा कि क्या कार्रवाई की जा सकती है।

मेरी अपीलके[2] जवाबमें कुछ विशेष राशि नहीं जुटी है। इसी उद्देश्यसे मलकानी अहमदाबाद और दिल्ली गया है। मुझे विश्वास है वह कुछ धन तो एकत्र कर ही लेगा। यदि कुछ न हुआ तो मुझे स्वयं कुछ स्थानोंका चक्कर लगाना पड़ेगा। देखें, क्या होता है।

१. देखिए पृ० ४२५।
२. एन्ड्रयूज स्मारक-कोषके लिए; देखिए पृ० ४१७-१८।

मैं अब भी बिलकुल स्वस्थ हूँ। अमतुस्सलामकी दशा निश्चित रूपसे सुधरी है। भगवती भी पहलेसे बेहतर है। जानकीबहनने बा की गद्दी ले ली है और मदालसाने तुम्हारी। जानकीबहन सामान्य भोजन लेने लगी हैं। किन्तु मदालसाको अभी भी देख-भालकी आवश्यकता है। यहाँ आजकल कहने लायक कोई बीमारी नहीं है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६७३)से। सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४८२ से भी

५७१. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको

सेवाग्राम
३१ मार्च, १९४१

चि० मगन,

अगर तुम समझो कि तुम्हें साथके पत्रका[1] जवाब देना चाहिए, तो भेजना। अन्यथा यह पत्र तो वापस भेज ही देना।

तुम दोनोंका बहुत आग्रह है, इसलिए उमिको भेज दूंगा। मन नहीं होता, क्योंकि यहाँ उसका ठीक विकास हो रहा है। साथ जाने को कोई मिल जाये तो भेज दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १६१६)से। सौजन्य: मंजुलाबहन म० मेहता

१. मगनलाल मेहताके बड़े भाई रतिलालके ससुर प्रभाशंकर पारेख द्वारा लिखा पत्र, जिसमें शिकायत थी कि मगनलाल मेहताने अपने कुटुम्बके प्रति अपना नैतिक दायित्व पूरा नहीं किया।

५७२. पत्र : दिनेशसिंहको

सेवाग्राम, वर्धा
३१ मार्च, १९४१

चि० दिनेश[1],

तुम्हारा खत मिलनेसे आनंद हुआ। हो सके तो दीनबंधु एन्ड्रयूज स्मारकके लिये विद्यार्थीओंसे चंदा इकट्ठा करो और भेजो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६७५) से

५७३. तार : एगथा हैरिसनको

वर्धागंज
१ अप्रैल, १९४१

एगथा हैरिसन
क्रैनबोर्न कोर्ट
एल्बर्ट ब्रिज
लन्दन

विचार-विमर्शके लिए हमेशा तैयार हूँ।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५२०) से

१. अनुमानतः कालाकांकरवाले, जो बादमें अनेक वर्षोंतक भारत सरकारके विदेश मन्त्री रहे।

५७४. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
१ अप्रैल, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हें अपना पेट गड़बड़ नहीं करना चाहिए। हमारा समझौता तो यह है कि जल्दी-जल्दी खाने के बजाय खाया ही न जाये। तुम्हें यह भी मालूम है कि तुम केवल फलोंके रसपर भी रह सकती हो। खाने में कुछ ज्यादा समय लगे तो लगने दो, लेकिन स्वास्थ्यको खतरेमें न डालो।

शाहकी कोई सूचना नहीं है।

यदि तुम एन्ड्रयूज स्मारकके लिए चन्दा इकट्ठा न कर सको तो चिन्ता मत करना।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०११) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३२० से भी

५७५. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

१ अप्रैल, १९४१

प्रिय अमृतलाल,

तुम्हें अव्यवस्थाको व्यवस्थामें बदलना है। सूची ठीक ही लगती है। इसमें परिवर्तन तो हमेशा ही हो सकता है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४५८) से। सौजन्य: अमृतलाल चटर्जी

५७६. पत्र : मगनलाल और मंजुला मेहताको

सेवाग्राम, वर्धा
१ अप्रैल, १९४१

चि० मगन और मंजुला,

ऊर्मिसे आज बात की। वह तो जैसा मैं कहूँ वैसा करना चाहती है। यहाँका कार्यक्रम छोड़ना भी अच्छा नहीं लगता और तुम दोनोंकी इच्छाकी अवमानना भी नहीं करना चाहती। मेरी सलाह है कि तुम मईके महीनेमें यहाँ आ जाओ और ऊर्मिको यहीं रहने दो। लेकिन इतना बरदाश्त न कर सको, तो तार करना। जैसा तुम चाहोगे, करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १६१७)से। सौजन्य : मंजुलाबहन म० मेहता

५७७. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

सेवाग्राम
१ अप्रैल, १९४१

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम और बावलो[1] जाओ, इसमें मुझे आपत्ति नहीं है। हाँ, वहाँ तुम अपना स्वास्थ्य ठीक रख सकोगे, इसमें मुझे सन्देह है। और दूसरोंको मैं भेजना नहीं चाहता, क्योंकि मेरी मान्यता है कि यहाँके लोग यहीं [संघर्षकी] तैयारी करें। समय जरा ज्यादा लगेगा, तो कोई हर्ज नहीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५२१)से। सी० डब्ल्यू० ७१२३ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१. नारायण देसाई, महादेव देसाईके पुत्र

५७८. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१ अप्रैल, १९४१

बा,

तेरा पत्र मिला। ऐसा लगता है कि तुझे अच्छी होने में समय लगेगा। लेकिन अगर बिलकुल अच्छी हो सके, तो समय लगने में कोई हर्ज नहीं। तू ठीक जगह है, इसलिए मैं चिन्ता नहीं करता। यहाँ सब ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२४)से

५७९. पत्र : कृष्णचन्द्रको

सेवाग्राम, वर्धा
१ अप्रैल, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

हां, तुमारे खतमें दोष है। अच्छा है कुछ तो तुमने देख लिये। मुझको लिखा सो तो अच्छा हि था जबतक दिलमें वह भूत पैदा होता है। लेकिन हुवा वही दोष है। व्यवस्थापक तो कोई होना हि चाहिये और व्य[वस्थापक]को सबकुछ कहने का अधिकार है। अधि[कार] पदको है पदाधिकारीको नहि। अर्थात पदाधिकारी कैसा भी हो उसकी परवाह न की जाय। यह एक अर्थ [में] 'समरथको नहि दोष गुसाईं' है। अंग्रेजीमें "किंग कैन डू नो रॉन्ग"[1] है। हम हिंदीमें यह दोष करीब २ सर्वसामान्य है। संपूर्ण व्यवस्थापक हम कहां ढुंढे?

चि०[2] कैसे हैं यह चर्चा अब अनावश्यक हो गई।

गुणदोषपर भी उनकी टीका ठीक थी। अगर मैं उस रसोडेमें जाने का समय निकाल सकुं तो अवश्य जाऊं और मेरा दूध साथ ले जाउं। क्योंकि मैं उसे दूसरा वर्गका नहि मानता हूं। वह सस्ता, यह मेंघा है। शायद वहां मसालाकी ही छुट है यहां नहि। वहां अगर असुविधा न पैदा हो तो कोई २ वक्त हमारेमें से कोई जाते रहे तो अच्छा हि है।

१. मूलमें यह अंग्रेजी लिपिमें लिखा हुआ है।
२. चिमनलाल

सु०[1] को चि० ने कहा वह भी ठीक था उसका स्वभाव देखते हुए। अब वक्त हो गया।

बापूके आ०

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३८४)से

५८०. टिप्पणी : अमृतलाल चटर्जीकी डायरीमें[2]

सेवाग्राम
[१ अप्रैल, १९४१][3]

हाँ, आभा और वीणाको कहीं बाहर भेज देना ही अच्छा होगा --- शायद दोनोंको बाड़ी[4] भेज देना ठीक होगा। सन्देहसे बचा नहीं जा सकता। यहाँ हम जैसा खुला जीवन व्यतीत करते हैं उसमें हम जो भी करते हैं उसपर लोगोंकी निगाह तो पड़ेगी ही।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३४७)से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१. सुशीला

२. अमृतलाल चटर्जीके अनुसार उन्होंने गांधीजी को अपने ८ जनवरी, १९४१ के पत्रमें "सुझाव दिया था कि सभी आश्रमवासी नियमित रूपसे अपनी दिनचर्या और दैनिक विचारोंको अपनी डायरीमें अंकित करें और उसे गांधीजी को दिखाते रहें, ताकि वे प्रत्येक आश्रमवासीके विचार और कार्यको समझकर उसे आवश्यक सलाह देते रहें। गांधीजी ने इसे स्वीकार कर लिया और १ अप्रैलसे निजी डायरी रखने की व्यवस्था आरम्भ हुई।" इस तिथिको कनु गांधीके साथ हुए अपने वार्तालापका ब्योरा अमृतलाल चटर्जीने डायरीमें लिखा था। वार्तालापका विषय "अमृतलाल चटर्जीकी पुत्री आभा (अब आभा गांधी) तथा कनु गांधीके बीच बढ़ते हुए मैत्री-भावको लेकर दो आश्रमवासी महिलाओंके बीच दबे स्वरसे होनेवाली चर्चा थी।" चटर्जीने गांधीजी की सलाह माँगी थी।

३. अमृतलाल चटर्जीके अनुसार

४. उड़ीसाका बाड़ीकट आश्रम

५८१. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२ अप्रैल, १९४१

चि० कृष्णचंद्र,

मेरा खत न समजें। व्य०[1] होना हि चाहिए। वह कोई भी हो उसके पदको मान है। विक्टोरिया १७ वर्षकी थी राणी बनी। बूढ़ा पामर्स्टन[2] उसके पैरों पड़ा। यह ब्रिटिश सभ्यता है। विक्टोरिया नादान थी। पामर्स्टनको क्षोभ नहि हूआ। तुमको चि०[3] से क्या? मैं तो पंचमकी स्थितिमें हूं। मेरे होते हुए व्यवस्थापककी चले तब तो तंत्र बना, न चले तो तंत्र न बना। अगर यहां न बना तो कहीं नहि बनेगा, तो सत्याग्रहका लोप होगा।[4]

बापुके आ०

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३८५) से

५८२. टिप्पणी : अमृतलाल चटर्जीकी डायरीमें[5]

२ अप्रैल, १९४१

यह बात सही नहीं है। इस दोहे पर मनन करो:

जड़ चेतन गुन-दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार॥[6]

यदि इसका अर्थ न समझो तो रामदासजी[7] से पूछ लेना।

बापु[8]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३४७) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१. व्यवस्थापक

२. हेनरी जॉन टेम्पल, वाइकाउंट पामर्स्टन (१७८४-१८६५); विक्टोरियाके राज्यकालमें दो बार, १८५५ में और १८५९ से १८६५ में अपनी मृत्युपर्यन्त प्रधानमन्त्री-पदपर रहे।

३. चिमनलाल

४. देखिए "पत्र : कृष्णचन्द्रको", पृ० ४५८-५९ भी।

५. अमृतलाल चटर्जीके अनुसार उन्होंने अपनी डायरीमें दिनांक २ अप्रैलके अन्तर्गत "आश्रमकी तत्कालीन व्यवस्थाकी तीखी आलोचना की थी, जिसके अनुसार आश्रमका प्रबन्ध आश्रमवासियोंकी एक समितिके बजाय एक चुने हुए प्रबन्धकके हाथमें था। उन्होंने एक घटनाकी चर्चा करते हुए प्रबन्धकपर एक आश्रमवासीके विरुद्ध गलत निर्णय करने और उसका समर्थन करने के लिए एक अन्य आश्रमवासीको फुसलाने का आरोप भी लगाया था।"

६. **रामचरितमानस** के बालकाण्डसे; गांधीजी ने इन्हें देवनागरी लिपिमें ही लिखा था।

७. रामदास गुलाटी, जो एक अवकाश-प्राप्त इंजीनियर और सेवाग्राम आश्रमके पुराने अन्तेवासी थे।

८. हस्ताक्षर यहाँ और अगले शीर्षकमें देवनागरी लिपिमें हैं।

५८३. टिप्पणी : शैलेन्द्रनाथ चटर्जीकी डायरीमें

सेवाग्राम
२ अप्रैल, १९४१

यदि तुम परीक्षाका विचार छोड़ दो तो मैं तुम्हें कलकत्ता भेज सकता हूँ।[1] तुम्हें अपनी योग्यतानुसार उचित पद और पदोन्नति मिलेगी।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२९५) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

५८४. टिप्पणी : शैलेन्द्रनाथ चटर्जीकी डायरीमें

सेवाग्राम
२ अप्रैल, १९४१

बुरा तो नहीं है। यही जानकारी तुम दो पन्नोंमें भी दे सकते हो। प्रयत्न करो, तो सफल हो जाओगे। क्या तुम अपने कामपर दौड़ते हुए जाते हो? यदि जाते हो, तो यह अच्छी आदत है। किन्तु मेरे विचारमें स्वास्थ्यकी वर्त्तमान दशामें तुम केवल बहुत ही हल्की कसरत-भर कर सकते हो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२९६) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१. सतीशचन्द्र दासगुप्तके पास काम करने के लिए; देखिए "पुर्जा : अमृतलाल चटर्जीको", पृ० ४६८।

५८५. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
३ अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

आज तुम्हारे दो पत्र आ पहुँचे। ऐसा क्यों हुआ? यह तीसरी बार हुआ है।

मैं कल तुम्हें पत्र नहीं लिख सका।

जुवेरीके नाम तुम्हारा पत्र और लाला दुनीचन्दको भेजे तुम्हारे उत्तर और सुझाव बिलकुल सही हैं। देखें, क्या होता है।

यदि मृदुलामें कमियाँ हैं, तो बड़े अच्छे गुण भी हैं। उसके आश्रमके[1] चौकीदारकी हत्या हो गई। वह जरा भी भयभीत नहीं हुई है। वह खूब शान्ति और साहसके साथ परिस्थितिका सामना कर रही है। ऐसी लड़कियोंको तुम्हें प्रोत्साहन देना है। उस-जैसी स्त्री कम देखने को मिलेगी।

महादेवने तुम्हें 'हरिजन' के बारेमें विस्तारसे लिखा है।

आशा करता हूँ कि शम्मी बिलकुल स्वस्थ नहीं तो पहलेसे बेहतर होगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१२) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३२१ से भी

१. विकासगृह; देखिए "पत्र: मृदुला साराभाईको", पृ० ४१३-१४ भी।

५८६. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

३ अप्रल, १९४१

चि० मुन्नालाल,

तुमने लिखा, यह अच्छा किया। बहुत-सी समस्याएँ समय सुलझा देगा। जिसमें तुम्हें सन्तोष मिले, ऐसा जीवन तुम्हींको खोजना पड़ेगा, क्योंकि तुम्हारा सन्तोष और कौन समझ सकता है? स्वतन्त्र कार्यके लिए तो गुंजाइश हमेशा ही है। और मुझसे मुक्त तो तभी होगे, जब तुम खुद ही चाहोगे। इसलिए बाजी पूरी तुम्हारे ही हाथमें है। फिर भी तुम घबराओ, तो इसका क्या उपाय है? मदद करने के लिए ईश्वर तो है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५०८) से। सी० डब्ल्यू० ७१२८ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

५८७. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

३ अप्रैल, १९४१

चि० मुन्नालाल,

सेवाग्राममें जो सभा हुई, उसके बारेमें सुना था। मेरी आलोचना वाजिब थी। हम किसी भी बातकी उपेक्षा नहीं कर सकते।

हाँ, अगर कोई गाँव तुम्हें अनुकूल लगे तो वहाँ रहो। लेकिन अभी तो तुम्हें कोई एक संकल्प अवश्य पूरा करना चाहिए। तभी माना जायेगा कि तुमने एक कदम उठाया। तुम्हारा अन्तिम संकल्प शुभ है। खादीकी सब परीक्षाएँ दो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५१०) से। सी० डब्ल्यू० ७१२४ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

५८८. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
४ अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला।

मैंने जान-बूझकर तुम्हारे किसी प्रश्नका उत्तर न दिया हो, ऐसी बात नहीं। यदि चूक हुई हो तो प्रश्न या प्रश्नोंको दोहरा दो। असली बात तो यह है कि तुम्हें पत्र लिखते समय तुम्हारे पत्र तो मेरे सामने कभी होते ही नहीं। मुझे तो स्मरण-शक्तिका ही आसरा लेना पड़ता है।

मुझे शंका थी कि पत्रका वजन कुछ ज्यादा था। तुमने ठीक किया कि मेरी भूल मुझे जता दी।

हाँ, लाइब्रेरीमें आवश्यक परिवर्त्तन हो गया है। मेरे विचारमें तुम्हें जगह पसन्द आयेगी। अब वह बाकायदा एक कमरा है, आश्रमका सबसे ठंडा कमरा। मदालसा वहाँ आराम करती है।

मीराको गर्मी सहन नहीं होती। वह आज नासिक जा रही है।[1] तुम्हें प्यारेलालकी पुस्तिकाकी[2] एक प्रति भेज रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१३) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७३२२ से भी

१. चोरवाडके लिए जाते हुए; देखिए "पत्र : मीराबहनको", पृ० ४७१ भी।
२. स्टेट्स ऑफ इंडियन प्रिंसेस

५८९. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

सेवाग्राम
४ अप्रैल, १९४१

चि० मुन्नालाल,

"स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।"[1]

इसलिए तुम्हें तो अभी अपनी परीक्षाओंपर ही ध्यान केन्द्रित रखना है। वह तुम्हारे लिए कामधेनु सिद्ध होगा। परीक्षाओंमें दोष तो रहता ही है। वह भी तुम परीक्षाएँ देकर ही सुधार सकोगे। मैं इसमें तुम्हारा बहुत भला देखता हूँ।

जिस गाँवमें सब खादी पहनते हैं, जिसमें निजी उपयोगकी सब खादीका उत्पादन होता है, जिसमें सब लोग कपास-सम्बन्धी किसी-न-किसी प्रक्रियामें अपना निश्चित समय लगाते हैं, जिसमें सब लोग अपने कोल्हूका तेल ही व्यवहारमें लाते हैं, जहाँ अपने यहाँ या पड़ोसमें बनाये गये गुड़का ही उपयोग किया जाता है, जहाँ हाथका पिसा आटा और हाथके कुटे चावल खाये जाते हैं, और इस प्रकार जितने बन सकें गृह-उद्योग चलते हैं, जिसमें कोई निरक्षर नहीं है, जिसमें रास्ते साफ रहते हैं, शौचादि निर्धारित स्थानमें किया जाता है, कुएँ साफ रहते हैं, साम्प्रदायिक सौहार्द है, छुआछूत बिलकुल नहीं है, जहाँ गायका दूध, घी आदि सबको साधारण मात्रामें मिलता है, जहाँ कोई बेकार नहीं है, जहाँ चोरी, झगड़े आदि नहीं होते, साथ ही जहाँ लोग सब प्रकारसे जन-सेवकका मान करते हैं, वह गाँव सुधरा हुआ माना जाना चाहिए। इतना आजकी स्थितिमें सम्भव है। इसमें समय कितना लगेगा, यह नहीं कहा जा सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५०७) से। सी० डब्ल्यु० ७१३० से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

१. **भगवद्गीता,** अध्याय ३, श्लोक ३५

५९०. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
४ अप्रैल, १९४१

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। मैं तुझे खास तौरपर बुलाना नहीं चाहता और न मुझे तुझसे कुछ खास कहना है। लेकिन बाप जैसे अपनी बेटीको अकारण भी अपने पास रखना चाहता है, वैसी ही मेरी स्थिति समझ। लेकिन तेरा पहला कर्त्तव्य है जयप्रकाशकी सेवा करना; इसलिए अगर तू यहाँ न ही आ सके, तो भी मुझे असन्तोष नहीं होगा। मुझे लिखती रहना। बा इलाज कराने दिल्ली गई है। उसे बवासीर है। लौटने में अभी उसे समय लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५८) से

५९१. तारका मसौदा : लेडी हार्टोगको[1]

[५ अप्रैल, १९४१ के पूर्व][2]

ब्रिटेन द्वारा भारतको गुलामीसे मुक्त किये बिना यह गतिरोध समाप्त होना असम्भव है। यहाँ विशुद्ध निरंकुशताका शासन है। भविष्य चाहे कितना ही अन्धकारपूर्ण क्यों न हो हमारी दशा इससे बदतर नहीं हो सकती। हमें पूर्ण सत्य और अहिंसाके अलावा और कोई उपाय नहीं सूझता। इसी रीतिसे शीघ्र ही मिल-जुलकर प्रयत्न करने पर फल-प्राप्ति सम्भव है।

[अंग्रेजीसे]

होम, पॉलिटिकल, फाइल सं० ३/३३/४०-पॉलि० (१)। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१ और २. गांधीजी ने रामेश्वरी नेहरूके लिए यह मसौदा तैयार किया था; देखिए पृ० ४६७ पर पुनश्चवाला अंश। गृह विभागके खुफिया विभागकी ३ मई, १९४१ की एक गैर-सरकारी टिप्पणीसे प्रकट होता है कि रामेश्वरी नेहरूने मसौदेमें परिवर्तन करके उसको निम्न रूपमें भेजा था: "सन्देश के लिए धन्यवाद। अगले मास सम्मेलनमें इसपर चर्चा होने के बाद परिणाम सूचित किया जायेगा। मेरा अपना विचार तो यह है कि ब्रिटेन द्वारा भारतको आजाद किये बिना गतिरोध समाप्त होना असम्भव है। (यहाँ घोर निरंकुशता छाई हुई है।) संयुक्त प्रयास केवल पूर्ण अहिंसात्मक पद्धतिसे ही सम्भव होगा।"

५९२. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
५ अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

महादेव बम्बईमें है, मीरा नासिकमें और आनन्द हिंगोरानी मेरे सामने बैठे पंखा खींच रहे हैं। वह यहाँ दो-चार दिन रहेंगे। इस समय सुबहके १०-३५ बजे हैं।

इसके साथ तीन पत्र भेज रहा हूँ। हैस्केलका पत्र मैंने ध्यानपूर्वक पढ़ लिया है। पत्र अच्छा है और उसका उत्तर युक्तियुक्त होना चाहिए। पत्र या उसमें दिये तर्कपर दत्त या किसी और विद्वान ईसाईसे चर्चा करके अपना उत्तर भेजना। यदि तुम मेरे साथ चर्चा किये बिना इसका उत्तर न भी भेजना चाहो तो भी चर्चा कर लेना। हमारी स्थितिका समर्थन करनेवाला कोई व्यक्ति तुम्हें मिले तो देखना।

आशा है तुम्हें प्यारेलालकी पुस्तिका मिल गई होगी।

आजकल गर्मी पहलेसे कुछ सह्य हो गई है। रातके समय ठंडक रहती है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे लौटने पर बातचीत कर लेंगे कि पंजाबके मामलेमें क्या किया जाये। क्या महादेवने तुम्हें नहीं बताया कि लेडी हार्टोगके तारके जवाबका मसौदा[1] बनाकर मैंने रामेश्वरीके पास भेज दिया था? तुमने उसे देखा होगा। तुम्हारा मसौदा भी अच्छा है, किन्तु मेरा शायद कुछ बेहतर है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७३२३ से भी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

५९३. पुर्जा : अमृतलाल चटर्जीको

सेवाग्राम
५ अप्रैल, १९४१

१. यदि तुम्हारे सुझावपर अमल किया जाये तो उससे अहिंसापर आधारित लोकतन्त्रका विकास नहीं होगा। उसमें बहुत अधिक यान्त्रिकता है।

२. तुम्हारा यह सुझाव तो सही है कि मैं प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक बातमें व्यक्तिगत रुचि लूँ, किन्तु चूँकि आश्रमका अस्तित्व ही राष्ट्रीय सत्याग्रहके विकासके निमित्त है अतः मुझे सभी तत्त्वोंको प्रधान उद्देश्यकी संगतिमें ही बिठाना पड़ता है। ध्यान रखो कि और सब क्रियाकलापोंके समान ईश्वर अन्ततः इसका भी संचालन कर रहा है।

३. मैं बताना भूल गया कि महिला आश्रम जुलाईसे पहले नहीं खुलता, इस कारण लड़कियोंको उससे पहले वहाँ नहीं भेजा जा सकता। किन्तु उनके ही भलेके लिए उचित है कि उन्हें फौरन आश्रमसे हटा लिया जाये।

४. मैं शैलेनको बता ही चुका हूँ[1] कि यदि वह सतीशबाबूके साथ काम करने को तैयार हो तो मैं उसे उनके पास भेज सकता हूँ।

५. सभी बातों पर विचार करके मैं यही सोचता हूँ कि तुम्हारे अपने तथा अपने परिवारके पूर्ण विकासकी खातिर यह बात विचारणीय है कि तुम्हारा वापस बंगाल जाकर वहीं अपने जीवनका नया आरम्भ करना क्या उचित न होगा। वहीं तुम्हारा स्वाभाविक स्थान है। यह देखते हुए कि यहाँ आश्रममें कदम-कदमपर तुम्हारे चित्तको क्लेश पहुँचता है, मेरा प्रस्ताव विचारणीय है। तुम्हारे बंगालमें रहते हुए भी मैं हमेशा तुम्हारा हित-चिन्तन करता ही रहूँगा। मेरा तो एकमात्र उद्देश्य यह है कि तुम्हारा सब प्रकारसे भला हो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४५९) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१. देखिए पृ० ४६१।

५९४. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

५ अप्रैल, १९४१

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा लिखना ठीक है। मजेमें मूल[1] चले जाओ। शर्त यह है कि बीमार पड़ो तो तुरन्त लौट आना। कंचनको वहाँ बुलाने का लोभ बिलकुल मत करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५०५) से। सी० डब्ल्यू० ७१३२ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

५९५. सन्देश : बुनियादी तालीमी सम्मेलनको[2]

सेवाग्राम, वर्धा
६ अप्रैल, १९४१

मैं आशा रखता हूँ कि सम्मेलनको इस बातकी प्रतीति हो जायेगी कि इस प्रयासकी सफलता सरकारी सहायतासे अधिक स्वावलम्बनपर निर्भर है, क्योंकि सरकारका रुख अनुकूल हो तो भी उसे स्वभावतः ही सावधानी बरतनी होती है। हमारा यह प्रयोग सम्यक् प्रयोग हो, इसके लिए यह जरूरी है कि इसे किसी जगह बिना किसी मिलावट या बाहरी हस्तक्षेपके चलाया जाये।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
टू यिअर्स ऑफ वर्क

१. चाँदा जिलेका एक गाँव

२. यह सन्देश जामिया नगर, दिल्लीमें होनेवाले द्वितीय बुनियादी तालीमी सम्मेलनके लिए भेजा गया था।

५९६. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
६ अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

आज हम सब उपवास कर रहे हैं।[1] अखण्ड कताई जारी है। गर्म हवा चल रही है।

तुम्हारी दी हुई सब खबरोंको पढ़कर मन दुःखी हुआ। किन्तु उन गरीब स्त्रियोंका जो हाल तुमने भेजा है वह आशाजनक है।

साथमें कोचीनसे आया हुआ एक पत्र है। मूल पत्र अपने पास ही रखकर तुम्हें उसकी नकल भेज रहा हूँ।

तुमने बरामदा बड़ा करने और दूसरी ओर भी एक बरामदा बनानेके बारेमें पूछा था। तुम्हारे लौटने पर ही यह सब होगा।

मैंने मीराको गुजराती व्याकरणकी तुम्हारी एक पुस्तक ले लेनेकी इजाजत दे दी है। वह उसका सँभालकर उपयोग करेगी।

आज अब बस करता हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३२४ से भी

१. राष्ट्रीय सप्ताहके सिलसिलेमें; देखिए "अपील: कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंसे", पृ० ४२६-२७।

५९७. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
६ अप्रैल, १९४१

चि० मीरा,

मुझे डर था कि रेलमें तुम्हें कष्ट होगा। हाँ, तुम चोरवाड जा सकती हो।[1] हरखचन्दभाईका[2] पत्र मिल गया है। उन्हें तुम्हारे जा सकने की बड़ी खुशी है। मैं तार नहीं दे रहा हूँ, क्योंकि आज रविवार है और तार भी तुम्हें पत्रसे पहले नहीं मिलेगा।

सप्रेम,

बापू

श्री मीराबाई
मार्फत सेठ जीवनलाल मोतीचन्द
नासिक

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४७५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८७० से भी

५९८. पुर्जा : आनन्द तो० हिंगोरानीको

सेवाग्राम, वर्धा
६ अप्रैल, १९४१

अहिंसात्मक आचारमें विरोधीके प्रति — चाहे वह पिता हो या और कोई — सहिष्णुता और उदारताकी अपेक्षा होती है। इससे उल्टा व्यवहार एक प्रकारकी हिंसा होगी।

हमारी बहुत-सी कठिनाइयाँ हमारे अज्ञानसे पैदा होती हैं। अनियन्त्रित भावना उतनी ही बेकार है, जितनी अप्रयुक्त भाप।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी। जी० एन० ४७२ से भी

१. मीराबहनने लिखा है: "पहाड़ीवाली कुटियामें बहुत ज्यादा गर्मी होने के कारण बापू मुझे चोरवाड भेज रहे थे जो जूनागढ़ रियासतमें समुद्र-तट पर स्थित था। वहाँ जाते हुए मैं रास्तेमें नासिक रुकी थी।" देखिए "पत्र: अमृतकौरको", पृ० ४६४ भी।

२. चोरवाड-निवासी हरखचन्द मोतीचन्द शाह

५९९. टिप्पणी : शैलेन्द्रनाथ चटर्जीकी डायरीमें[1]

सेवाग्राम
६ अप्रैल, १९४१

मैंने लोगोंकी डायरियोंका एक-एक शब्द पढ़नेका जिम्मा तो नहीं लिया है। तुम्हारी डायरीपर मैंने सबसे अधिक ध्यान दिया। यदि तुम चाहते हो कि मैं पढ़ूं तो तुम्हें संक्षेपमें लिखना होगा। तुमने तो बहुत विस्तारसे लिखा है — लगभग एक लेख ही लिख डाला है। मैंने सारे चिह्नांकित अंश पढ़े। वेतनके बारेमें मैं कोई आश्वासन नहीं दे सकता। तुम्हें अपनी योग्यतानुसार वेतन मिलेगा। उससे अधिक कुछ मिलना तो दानस्वरूप होगा। आज तुम एक बोझ हो और जब पढ़ने लगोगे तो और भी भारी बोझ बन जाओगे। किन्तु यदि धनोपार्जन आरम्भ कर दो तो तुम्हारा भार घट जायेगा और तुम थोड़े दिनोंमें ही बचत भी कर सकोगे। इसका अर्थ है ईमानदारीसे कड़ा श्रम करना। आशा है तुम ऐसा कर सकोगे।

तुम अपनी खुराकका ध्यान नहीं रख रहे हो। तुम या तो स्वयं उसपर अंकुश रखो या फिर डॉ० दासको वैसा करने दो। मुझे पक्का विश्वास है कि मालिश बन्द करवाकर मैंने ठीक किया। तुम बहुत कोमल बनते जा रहे हो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२९७) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

६००. सन्देश : मैसूर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकके लिए[2]

[७ अप्रैल, १९४१ के पूर्व][3]

मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि रचनात्मक कार्यक्रमको अन्ततक लगनपूर्वक और सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया जाये, तो आज जो असहाय हैं उनके पास

१. अमृतलाल चटर्जीके अनुसार शैलेन्द्रनाथ चटर्जीने दिनांक ६ अप्रैलको अपनी डायरीमें लिखा था कि "उसे दुःख है कि गांधीजी ने उसकी पूरी डायरी नहीं पढ़ी. . . और यह कि यदि उसके पिता तथा गांधीजी की यही इच्छा हो तो वह उच्च शिक्षाका विचार छोड़कर नौकरी करने को तैयार है बशर्ते कि सन्तोषजनक वेतन और उज्ज्वल भविष्यवाली नौकरी हो। शैलेन्द्रनाथने लम्बे उपवासके उपरान्त कुछ अधिक मात्रामें खा लेनेके फलस्वरूप हुए अपने कष्टका भी उल्लेख किया था।"

२ और ३. यह सन्देश मैसूर कांग्रेसके चतुर्थ अधिवेशनके लिए भेजा गया था जो ७ अप्रैल, १९४१ को हुआ था।

ऐसी शक्ति आ जायेगी जैसी इससे पहले उनके पास कभी नहीं थी, और करोड़ों लोगोंके लिए अहिंसापर आधारित स्वराज्यका यही सच्चा आधार है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-४-१९४१

६०१. टिप्पणी : आश्रमवासियोंके लिए

७ अप्रैल, १९४१

जो सूत्रयज्ञ चल रहा है (राष्ट्रीय सप्ताहके सम्बन्धमें १२ घंटेके दो अखण्ड और ता० ६ तथा १३ को २४ घंटेके अखण्ड) उसमें इतना किया जाये :

(१) हरएककी पूनीका वजन।

(२) उसमें कितना वजन सूत निकला?

(३) कचरा कितना रहा? सब टूटा हुआ सूत इकट्ठा किया जाये। उसका उपयोग है।

(४) तारका अंक, मजबूती, समानता।

(५) प्रत्येक गुंडीपर कातनेवालेका नाम दिया जाये।

बापू

बापूकी छायामें, पृ० ३८३

६०२. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
७ अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। मिस्सी रोटी बनानेकी विधि अपने पास ही रख लूँगा। उसमें कोई विशेष बात नहीं है। बा अक्सर ही बनाती है। और यदि मेरी अनुमति हो तो ऐसी रोटी अक्सर ही बनती रहे। बेसनके उपयोगके कारण कड़ा श्रम करनेवालोंको छोड़कर शेष सबके लिए वह गरिष्ठ पड़ती है। उसमें भाजीकी मात्रा पर्याप्त नहीं है। उससे तो हमारी रोटी कहीं अच्छी और हलकी होती है।

मुझे प्रसन्नता है कि तुम अपना जालंधरका काम समाप्त कर सकीं।

बा को शायद एक महीना दिल्लीमें रहना पड़े। सुशीलाका विचार है कि वह उनको बिलकुल स्वस्थ बना देगी। बा दो दिनोंके लिए तुम्हारे पास भी आ सकती है।

मुझे तो नहीं लगता कि मैं सरदार सुन्दरसिंहसे कभी मिला हूँ। इसी कारण मैं पत्र नहीं लिख रहा हूँ।

आशा है हमारी नई खोजके अनुसार तुम अपनी उचित देखभाल कर रही होगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१६) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३२५ से भी

६०३. पुर्जा: अमृतलाल चटर्जीको

सेवाग्राम
७ अप्रैल, १९४१

१. मुझे जो-कुछ कहना था, कह चुका। तुम्हारा विकास तभी होगा जब तुम्हें यह भान हो जायेगा कि जीवनमें धन-पक्ष ऋण-पक्षसे बड़ा है। यह एक आश्चर्य-जनक किन्तु सत्य बात है कि किसी व्यक्तिपर किसी तत्त्वके वास्तविक स्वरूपका नहीं, बल्कि उसकी कल्पनामें उसका जो स्वरूप है उसीका प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार वे दो सिखभाई जो यहाँ रहने आये थे मुझसे बोले कि यहाँकी जो कमियाँ उन्हें दृष्टिगोचर हुईं उनके लिए तो वे पहलेसे ही तैयार थे, किन्तु आश्रममें जो नई और अच्छी बातें उन्हें दिखीं उनपर उनकी श्रद्धा जाग्रत हुई। और वह बंगाली कैदी (जिसका नाम मैं भूल रहा हूँ) जो यहाँ आया था, उसे यहाँ कुछ भी अच्छाई नहीं दिखी। वास्तविकता तो कोई नहीं जानता, यहाँ तक कि मैं जो इसका संस्थापक हूँ, मैं भी नहीं जानता। भगवान ही इस स्थानका वास्तविक स्वरूप पहचानता है।

२. हाँ, यदि वीणा और आभा सन्देहभरे वातावरणमें रहने का गुर जानती हों तो बेशक यहाँ रहें।

३. शैलेनकी समस्या टेढ़ी है। मुझे भय है कि वह अपने लिए, तुम्हारे लिए और इस प्रकार समाजके लिए भार ही बना रहेगा।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४६०) से। सौजन्य: अमृतलाल चटर्जी

६०४. टिप्पणी: शैलेन्द्रनाथ चटर्जीकी डायरीमें[1]

सेवाग्राम
७ अप्रैल, १९४१

यह तो अच्छा है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२९८)से। सौजन्य: अमृतलाल चटर्जी

६०५. पत्र: वल्लभराम वैद्यको

सेवाग्राम, वर्धा
७ अप्रैल, १९४१

भाई वल्लभराम,

अच्छा किया जो वहाँ[2] पहुँच गये। खूब अनुभव प्राप्त करोगे। यात्रा समाप्त होने के बाद अगर जरूरत हुई तो तुम्हारी समस्यापर फिरसे विचार करेंगे। जीवनलालभाईने अभी तो मुझसे कुछ नहीं पूछा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २९१६)से। सौजन्य: वल्लभराम वैद्य

१. अमृतलाल चटर्जीके अनुसार, शैलेन्द्रनाथने ७ अप्रैलको अपनी डायरीमें लिखा था कि "गांधीजी की सलाह मानते हुए वह पढ़ाई छोड़कर किसी भी वेतनपर कोई भी नौकरी करने को तैयार है बशर्ते कि नौकरीमें भविष्य उज्ज्वल हो। ऐसा करने में शैलेन्द्रका उद्देश्य गांधीजी को उसकी माता तथा छोटे भाई-बहनों की सहायता करने की जिम्मेदारी और बोझसे मुक्त करना था।" देखिए पिछला शीर्षक तथा "टिप्पणी: शैलेन्द्रनाथ चटर्जीकी डायरीमें", पृ० ४७२ भी।

२. हिमालयपर; देखिए पृ० ४२४ भी।

६०६. पत्र : प्रभावतीको

सेवाग्राम, वर्धा
७ अप्रैल, १९४१

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तू व्यर्थ चिन्ता करती है। अरे, तू तो भाग्यशाली है। जितनी तुझसे बनती है, मेहनत करती है। सफलता देना भगवानके हाथ है। मेरे साथ कम रहने को मिलता है, तो इसमें क्या हर्ज है? इच्छा होना स्वाभाविक है, लेकिन सभी इच्छाएँ पूरी कहाँ होती हैं? तेरा स्थान जयप्रकाशके पास है, अथवा जहाँ कर्त्तव्य ले जाये वहाँ है।

इसलिए तू निश्चिन्त होकर अपने कर्त्तव्यमें लगी रह। बा अभी दिल्लीमें ही है। उसका घाव भरने में समय लगेगा। चिन्ता करने-जैसी कोई बात नहीं है। वह दिल्लीमें प्रसन्न रहती है।

राजकुमारी १६ तारीखको आयेगी। सुशीला भी दो-तीन दिनके लिए आयेगी। गर्मी तो यहाँ जोरकी पड़ ही रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५६४)से

६०७. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

वर्धागंज
८ अप्रैल, १९४१

मैंने एक रिपोर्ट[1] देखी है जो श्री मुकुन्दलाल सरकार तथा श्री आर० एस० रुइकरके साथ हुई मेरी भेंटकी किसी 'विशेष संवाददाता' द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट बताई गई है। मुझे ऐसा कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि इसमें एक मैत्रीपूर्ण बात-चीतको शरारतन तोड़-मरोड़कर पेश किया गया है।

मैं कभी-कभार ही भेंट देता हूँ। और जब देता हूँ तो प्रकाशनसे पहले उसका मसौदा देखने का आग्रह करता हूँ। जहाँतक मुझे पता है, मेरी कुटियामें कोई भी नहीं था जो किसी प्रकारकी रिपोर्ट भेज सकता और मैं उम्मीद करता हूँ कि उन दो मित्रोंमें से कोई भी 'विशेष संवाददाता' नहीं बना होगा।

१. देखिए परिशिष्ट १५।

मैं पुनः अनुरोध करता हूँ कि सम्पादक-गण मुझपर विशेष कृपा करके मेरे साथ हुई किसी भी भेंटकी रिपोर्ट छापने से पहले यह निश्चय कर लें कि वह मेरे द्वारा अधिकृत होनी चाहिए। यदि किसी सार्वजनिक उद्देश्यको हानि न पहुँचती हो तो फिर कितनी भी गलतबयानी क्यों न की जाये, मुझे उसकी चिन्ता नहीं होती।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-४-१९४१

६०८. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
८ अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

साथमें दो पत्र हैं। धर्म यश देवका पत्र विचित्र है। तुम उसको स्पष्ट भाषामें एक कड़ा पत्र लिख देना। उसका अपना कर्म ही उसे धिक्कार रहा है।

तुम्हारा लाहौरका कार्यक्रम बहुत थकानेवाला है। मैं तो सन्तोषकी साँस तब लूँगा जब तुम अपने कोनमें पुनःस्थापित हो जाओगी। पूरे कमरेके बजाय केवल एक कोना या दीवारके सायका कुछ हिस्सा घेरकर बैठना कितना अच्छा है। फिर भी जब गर्म हवा चलती है, जैसी कि अभी चल रही है, तब मुझे लोभ हो जाता है कि तुम्हें महीना-एक शिमलामें बितानेको कहूँ। किन्तु मैं जानता हूँ कि तुम कहीं और सुखी नहीं रहोगी।

बा की दशा निश्चित रूपसे सुधरी है, किन्तु लगभग एक मासतक उसके आने की सम्भावना कम ही है। सुशीला शायद ईस्टरके दिनोंमें यहाँ आ जाये। कंचन दिल्लीसे वापस आ गई है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३२६ से भी

६०९. पत्र : जगन्नाथको

सेवाग्राम, वर्धा
८ अप्रैल, १९४१

प्रिय जगन्नाथ,

तुमने जो वृत्तान्त सुनाया वह खेदजनक है। तुम सम्पादकसे क्यों नहीं मिलते? मैं कोई वक्तव्य नहीं निकाल सकता। हाँ, यदि 'हरिजन' का प्रकाशन होता तो मैं ऐसी सब बातोंसे निपट सकता था।

हाँ, महादेवने मुझे सब-कुछ बताया था। राजकुमारीके लौटने पर मैं देखूंगा कि क्या करना सम्भव है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३४९) से। सौजन्य: जगन्नाथ

६१०. टिप्पणी : अमृतलाल चटर्जीकी डायरीमें[1]

अप्रैल, १९४१

१. शैलेन्द्रके लिए जो-कुछ कर सकता हूँ करूँगा।

२. उपाय तो यह है कि दूसरोंके दोषोंकी तरफसे बुद्धिमान बन्दरकी तरह आँखें मूंदे रहो। तब उनसे तुम्हें कष्ट नहीं पहुँचेगा। तुम हिन्दीमें और संक्षेपमें लिखने का प्रयत्न क्यों नहीं करते?

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३४८) से। सौजन्य: अमृतलाल चटर्जी

१. अमृतलाल चटर्जीके अनुसार उन्होंने ८ अप्रैलको अपनी डायरीमें "आश्रममें अपने साथ रहनेवाले अपने पुत्र शैलेन्द्रके विषयमें चिन्ता प्रकट की थी और व्यक्तिके सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकासके लिए आश्रमके वातावरणमें अनुकूलताका अभाव बताते हुए उसके बीच स्वयं रहने की कठिनाई भी व्यक्त की थी।"

६११. पत्र : पृथ्वीसिंहको

सेवाग्राम, वर्धा
८ अप्रैल, १९४१

भाई पृथ्वीसिंह,

तुम नियमपूर्वक पत्र लिखते हो, यह मुझे बहुत अच्छा लगता है। तुम इतनी अधिक मेहनत कर रहे हो, इसका अर्थ यह है कि तुम्हें अवश्य सफलता मिलेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६४६)से। सी० डब्ल्यू० २९५७ से भी; सौजन्य : पृथ्वीसिंह

६१२. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

८ अप्रैल, १९४१

चि० मुन्नालाल,

कंचन आज सवेरे आ पहुँची। वह प्रसन्न है। चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

श्री मुन्नालाल शाह
खादी कार्यालय
पो० आ० मूल
जिला चांदा

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५०१) से। सी० डब्ल्यू० ७१३३ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

६१३. पत्र : डॉ० रघुवीरसिंह अग्रवालको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
८ अप्रैल, १९४१

भाई अग्रवाल,

वालजीभाई[1] गरीब सेवक हैं। बरसोंसे मेरे साथ काम कर रहे हैं। उनके लड़केसे बिलका तीन रुपया कैसे लिया जाये? उसकी आंख अच्छी होने का विश्वास दिला सकते हो? शायद वालजीभाईको नहि जानते होगे। लड़केका नाम महेन्द्र है। वह मुझे पूछता है। जाना कि नहि।

मो० क० गांधीके आशीर्वाद

डा० अग्रवाल
१५, दरिया गंज
दिल्ली

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९६६५-ए) से। सौजन्य : डॉ० एम० एस० अग्रवाल

६१४. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
९ अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा नियमित पत्र मिला है।

इसके साथ तीन पत्र रखता हूँ। दो मैंने पढ़ लिये हैं।

एक महीने तक बा के आने की सम्भावना नहीं है, न ही सुशीला आयेगी। बा को उसकी आवश्यकता है।

महादेव शायद ११ तारीखको आयेगा।

भगवती हवा बदलने के लिए रायपुर गया है।

शास्त्रीजीकी खुराक दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है और उनकी हालतमें सुधार जारी है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१८) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७३२७ से भी

१. वालजी गो० देसाई

६१५. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
१० अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

महादेव आ गया है। उसका कार्यक्रम श्रमसाध्य रहा।

देखा, तुम्हारे मनकी बात मैंने कैसे पहले ही जान ली! मुझे अचानक याद आया कि तुमने बरामदेके विषयमें लिखा था। खयाल तो ठीक है, किन्तु नया हिस्सा तुम्हारे आने पर ही बनेगा। मेरे यहाँ काम करनेवाले कम और काम ज्यादा है। इसी कारण किसी काममें जल्दबाजी नहीं की जा सकती। कोई जल्दी भी नहीं है। मैंने लाइब्रेरीमें जो परिवर्तन किये हैं उनसे मैं बहुत ही खुश हूँ। मदालसाके लिए तो लाइब्रेरी वरदान सिद्ध हुई है। वह दिनमें दससे ढाई बजे तक वहीं विश्राम करती है। अमतुस्सलाम भी अक्सर वहाँ विश्राम करती है और कटि-स्नान लेती है। द्वार भी खुल जाता है।

मीरा काठियावाड़के एक समुद्र-तटवर्ती स्थान, चोरवाड गई है।

तुम खूब बची! परन्तु जीवन बचते रहने की घटनाओंका एक सिलसिला ही है, क्योंकि मृत्यु हमें चारों ओरसे घेरे हुए है।

शक्तिसे अधिक काम न करना।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०१९)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३२८ से भी

६१६. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१० अप्रैल, १९४१

चि० मीरा,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। यहाँ तो हम गर्मीमें उबल रहे हैं, किन्तु आशा है कि चोरवाडमें मौसम अच्छा होगा और अन्य सब-कुछ ठीक-ठाक होगा। महादेव वापस आ गया है।

सप्रेम,

बापू

श्री मीराबहन
श्री हरखचन्द मोतीचन्दकी वाड़ी
चोरवाड, जूनागढ़ होते हुए, काठियावाड़

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४७६) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८७१ से भी

६१७. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

१० अप्रैल, १९४१

महादेवसे सुना कि तू बहुत बीमार हो गया था। अब पूरा आराम करना। मैंने तुझे आगाह किया था। किसीको अपनी शक्तिके बाहर काम नहीं करना चाहिए। लेकिन यह तो बीते समयकी बात हुई। अब वर्त्तमानको सँभाल, तो सब ठीक हो जायेगा। महादेव कहता है कि तेरी पार्टी टूट गई और तू उसका अफसोस करता है। लेकिन अफसोस करना व्यर्थ है। जितनी मेहनत तुझसे बनी तूने की; तो फिर अब चिन्ता काहे की? परिणाम घटित होनेमें तो और भी अनेक संयोग काम करते हैं। उन सबपर थोड़े ही तेरा अधिकार है? तूने जो किया, बहुत किया। जब पूर्ण स्वस्थ हो जायेगा, तो फिर कॉर्पोरेशनपर अपना प्रभाव डालेगा — फिर चाहे पार्टी हो या न हो।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १८०-८१

६१८. पत्र : मॉरिस फ्रिडमैनको

[१० अप्रैल, १९४१ के पश्चात्][1]

प्रिय मॉरिस,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे उपवासकी बात तो मैंने कभी सोची ही नहीं। मेरा तो खयाल था कि तुम्हें यहाँ खिलाया-पिलाया जा रहा है। मुझे उम्मीद है कि उससे तुम्हारे स्वास्थ्यपर कोई बुरा असर नहीं पड़ा होगा। मुझे इस बातका एहसास था और मैं इससे दुःखी भी था कि तुम्हारे सिद्धान्तके बारेमें मैं तुम्हें कोई सन्तोष नहीं दे पाया। अफ़सोस की बात यह है कि जो लोग अपने सिद्धान्तके लिए समर्थन चाहते हैं वे आसानीसे सन्तुष्ट नहीं होते। वे तभी सन्तुष्ट होते हैं जब हम उनसे सहमत हों। यह कोई दोष नहीं है। यह अक्सर शक्तिका परिचायक होता है। यदि सभी अनुसन्धानकर्त्ताओं और आविष्कारकोंने विरोधका सामना होते ही हथियार डाल दिये होते तो वे आज कहाँ होते? इसलिए यदि तुम्हें अपने सिद्धान्तमें जीवन्त आस्था है तो तुम्हें हताश नहीं होना चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. गांधीजी ने यह पत्र फ्रिडमैनके १० अप्रैलके पत्रके उत्तरमें लिखा था।

६१९. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको[1]

[१० अप्रैल, १९४१ के पश्चात्][2]

चि० काका,

जो कोयाजी[3] कहे, वही खाना। अन्यथा उसके साथ न्याय नहीं होगा। यदि सेक्रेटरी मिल जाये, तो तुम धीरेसे अलग हो सकते हो। रेहाना वहाँ है, यह अच्छा हुआ।

'सर्वोदय' वाली बात समझा।

जल्दी अच्छे हो जाओ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९४८)से

६२०. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
११ अप्रैल, १९४१

प्रिय पगली,

मदालसाने इस कागजका एक हिस्सा फाड़ लिया था। मेरी त्रिमूर्ति[4] देखने पर उसकी कविता फूट पड़ी, वही उस टुकड़ेपर थी। वह टुकड़ा भी साथ रख रहा हूँ।

इस पत्रके साथ तीन और पत्र हैं। तुम्हारे आने तक इन पत्रोंको रोक रखने के बजाय इन्हें तुम्हारे पास भेज देना ही अच्छा है।

नीला कागज है तो सुन्दर, किन्तु उसमें एक दोष है। इस अँधेरे कमरेमें लिखावट पढ़ना कठिन हो जाता है। तुम स्वयं आजमा लेना।

आशा है, तुम शक्तिसे बाहर काम नहीं करोगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०२१) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७३३० से भी

१ और २. यह पत्र द० बा० कालेलकर द्वारा १० अप्रैल, १९४१ के गांधीजी को लिखे पत्रपर लिखा गया था।

३. डॉ० कोयाजी, बम्बईके एक सुप्रसिद्ध चिकित्सक

४. लगता है कि यहाँ तात्पर्य तीन बन्दरोंवाली मूर्तिसे है।

६२१. पत्र : आर० के० एल० नन्दकौल्यारको

सेवाग्राम, वर्धा
११ अप्रैल, १९४१

प्रिय नन्दकौल्यार[1],

कृपा करके दिवंगत श्री रामलिंग मुदलियारके निधनपर मेरा संवेदना-सन्देश श्री आर० विश्वनाथ मुदलियार तथा श्री पचि अम्माल तक पहुँचा दीजिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कांग्रेस कमेटी फाइल सं० १२९८, १९४०-४१। सौजन्य: नेहरू-स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

६२२. तार : अमृतकौरको

वर्धा
१२ अप्रैल, १९४१

राजकुमारी
५० एम्प्रेस रोड
लाहौर

दिल्ली मत रुकना। सप्रेम।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०२०)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७३२९ से भी

१. आर० के० एल० नन्दकौल्यार, अ० भा० कांग्रेस कमेटीके कार्यालयमें निरीक्षक

६२३. तार: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[1]

वर्धा
१२ अप्रैल, १९४१

गुरुदेव
शान्तिनिकेतन

चार बीसी पर्याप्त नहीं। भगवान करे आप पाँच पूरी करें। सप्रेम।[2]

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२९९) से। सौजन्य: विश्वभारती

६२४. पत्र: वर्धाके डिप्टी कमिश्नरको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ अप्रैल, १९४१

डिप्टी कमिश्नर
वर्धा

प्रिय महोदय,

श्री रामकृष्ण बजाज, जो एक भूतपूर्व विद्यार्थी और सेठ जमनालाल बजाजके पुत्र हैं, मंगलवार, १५ अप्रैलको सुबह ८ बजे गांधी चौक, वर्धामें, सामान्य युद्धविरोधी नारे लगाकर सविनय अवज्ञा करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३४७। प्यारेलाल पेपर्स भी; सौजन्य: प्यारेलाल

१. यह तार रवीन्द्रनाथकी ८० वीं वर्षगाँठपर भेजा गया था जो १४ अप्रैलको थी।

२. **हिन्दू**, १५-४-१९४१ के अनुसार रवीन्द्रनाथ ठाकुरने इस तारका उत्तर इस प्रकार दिया था: "आपके सन्देशके लिए धन्यवाद। यदि अस्सी वर्ष जीना ढिठाई है तो सौ वर्ष जीना असह्य हो जायेगा।"

६२५. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
१२ अप्रैल, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हारी वेनागा डाक आ गई है। जो-कुछ भी कहो, सफेद या मोतिया रंगके कागजसे बढ़कर और कोई कागज नहीं।[1]

मैं खुश हूँ कि जिन सब लोगोंसे मिलना उचित था उनसे तुम मिल रही हो। (इतना लिखने के बाद ऐसे जोरोंकी नींद आई कि कलम छूट गई और मैं सो गया।)

तुम्हारा तार मिला। हाँ, तुम दिल्लीमें मत रुकना।[2] आशा है तुमने आर्य-नायकम्को अपनी इस असमर्थताकी सूचना दे दी होगी। दो दिन फालतू मिल जाने से तुम्हें वहाँका काम करने का अधिक मौका मिल जायेगा।

दुर्गा[3] पहलेसे कुछ अच्छी है। महादेव बम्बई गया है। वह सोमवार या मंगलवारको लौटेगा। तुम तो बुधवारको वापस आ रही हो। अतः तुम्हें यह मेरा अन्तिम पत्र है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६७४) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४८३ से भी

१. देखिए पृ० ४८४ भी।
२. देखिए पृ० ४८५ भी।
३. महादेव देसाईकी पत्नी

६२६. पत्र : मीराबहनको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१२ अप्रैल, १९४१

चि० मीरा,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हें स्थान पसन्द आया। तुम जैसा एकान्त चाहती हो, आशा है वह तुम्हें मिल जायेगा। हरखचन्दभाई तो हीरा हैं। वह दायें हाथसे क्या देते हैं इसका पता उनके बायें हाथको भी नहीं होता। उन्हें मेरा प्यार कहना।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४७७) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८७२ से भी

६२७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेवाग्राम
१२ अप्रैल, १९४१

चि० प्रेमा,

सासवड़से तेरा पत्र मिला था। कल जेलसे लिखा पत्र मिला। वहाँका वर्णन पढ़कर मुझे खूब आनन्द हुआ। यदि सब बहनें एकदिल होकर रहें और श्रद्धापूर्वक रचनात्मक काम करती रहें, तो मुझे विश्वास है कि इससे स्वराज्य नजदीक आयेगा।

६ तारीखको यहाँ बच्चों और बीमारोंको छोड़कर सबने २४ घंटेका उपवास किया। आज भी यही संकल्प है। कुछ अखण्ड चरखे चल रहे हैं। एक अखण्ड पींजन और कुछ अखण्ड तकलियाँ भी चल रही हैं। इनका आयोजन करने में बावला और कनुका बड़ा हाथ है। सब उत्साहसे काम कर रहे हैं।

अब तेरे प्रश्न :

१. उपवासके विषयमें तो इतना ही कह सकता हूँ कि वह मेरे जीवनका अंग है। कभी भी आ सकता है। इस समय तो वह मेरे सामने नहीं है। परन्तु मेरा बल उसकी शक्तिमें और उसके प्रति मेरी श्रद्धामें रहा है। सत्याग्रही अन्तमें मरकर अपनी टेक रखेगा, जैसे हिंसावादी दूसरोंको मारकर टेक रखता है। कितना

बड़ा भेद! इसलिए किसीको मेरे उपवासकी सम्भावनाको सरपर लटकती तलवार के रूपमें देखना ही नहीं चाहिए। आनेवाला ही होगा तो उसका स्वागत करना और प्रार्थना करना कि ईश्वर उसे सहन करने का बल मुझे दे।

२. 'हरिजन' बन्द हो गया, क्योंकि दिल्लीसे अकल्पित पत्र[1] मिला। उस-परसे देखा जा सका कि सरकारकी वृत्ति 'हरिजन' का स्वागत करने की नहीं थी; और इस बारकी लड़ाईमें 'हरिजन' को लड़ने का कारण नहीं बनाना है।

३. वर्त्तमान राजनीतिका असर मुझपर कुछ नहीं है, क्योंकि मैंने समझ लिया है कि अभी कुछ नहीं हो सकता। इसीलिए मैंने कहा है कि यह लड़ाई लम्बी है। इसीमें हमारा हर प्रकारसे श्रेय है।

महादेव फिर एक दिनके लिए आज बम्बई गया है। दुर्गाको बीमार छोड़कर गया है। दोनों हिम्मतवाले हैं। इन दोनोंने सोच-समझकर अपनी आहुति दी है।

सब बहनोंको मेरा आशीर्वाद।

बा अभी दिल्लीमें है। उसकी तबीयत ठीक होती जा रही है, परन्तु समय लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४१८) से। सी० डब्ल्यू० ६८५७ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

६२८. पत्र : लक्ष्मीश्वर सिन्हाको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ अप्रैल, १९४१

प्रिय लक्ष्मीश्वर,

मैंने तुम्हारा पत्र[2] खूब ध्यानपूर्वक पढ़ डाला। तुम्हें [संचालनके लिए] एक स्वतन्त्र संस्था देना कठिन है। तुम्हें वर्त्तमान संस्थामें काम कर सकना चाहिए और आशा करनी चाहिए कि अपने सहयोगियोंको अपनी बातसे सहमत करवा लोगे। मैं यह भी चाहता हूँ कि तुम मुझे अपनी आवश्यकताएँ बता दो।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

श्री लक्ष्मीश्वर सिन्हा
१३, लैन्सडाउन टैरेस
पो० आ० कालीघाट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४७४) से। सौजन्य : ए० के० सेन

१. देखिए परिशिष्ट १४।
२. लक्ष्मीश्वर सिन्हाने बुनियादी तालीम कार्यक्रमको कार्यान्वित करने के लिए अपनी योजना भेजी थी।

६२९. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१३ अप्रैल, १९४१

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला। किसी प्रकारसे प्रमाणपत्र ले लो। जाजूजी यहां नहिं है। आने पर उनसे पूछुंगा।

बापुके आशीर्वाद

श्री हेमप्रभादेवी
खादी प्रतिष्ठान
सोदपुर
कलकत्ता होते हुए

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३६) से

६३०. रामकृष्ण बजाजके वक्तव्यका मसौदा[1]

[१४ अप्रैल, १९४१ या उसके पूर्व][2]

श्रीमान्,

मेरा मामला कुछ हद्तक असामान्य है। मैं एक भूतपूर्व छात्र हूँ। छात्र-जगतमें आज जो अराजकता फैली हुई है, उसके सन्दर्भमें इस तथ्यका उल्लेख करना आवश्यक है। मेरी उम्र १८ वर्षसे कम होते हुए भी मुझे छात्र-जगतका और बाहरी दुनियाका काफी ज्ञान है और मैं सभी विषयोंमें अनुशासनकी आवश्यकता समझता हूँ। इसी कारण मैंने अपने माता-पिता तथा अन्य गुरुजनोंका आशीर्वाद प्राप्त करके ही यह कदम उठाया है। अपने माता-पिताके हाथों मुझे जीवनके प्रत्येक अंगमें

१ और २. साधन-सूत्रमें काका कालेलकरने बताया है कि रामकृष्ण बजाज द्वारा अदालतमें दिये जानेवाले वक्तव्यका यह मसौदा गांधीजी ने तैयार किया था। रामकृष्ण बजाजके सत्याग्रह करने से एक दिन पूर्व अर्थात् १४ अप्रैलको गांधीजी ने सेवाग्राममें उन्हें यह वक्तव्य भली प्रकार समझा दिया था; देखिए "पत्र: वर्धाके डिप्टी कमिश्नरको", पृ० ४८६।

अहिंसा-पालनका व्यावहारिक प्रशिक्षण मिला है। अभी-अभी मेरी मैट्रिककी परीक्षा समाप्त हुई है। मैंने स्कूली पढ़ाईका आरम्भ कुछ देरीसे किया। मेरे माता-पिताने हम बच्चोंका नियमित स्कूली शिक्षण १९२० के असहयोगके दिनोंमें ही, जब मेरा जन्म भी नहीं हुआ था, स्थगित कर दिया था। किन्तु हम सबका लालन-पालन स्वतन्त्र वातावरणमें हुआ है। इस कारण जब मेरी इच्छा स्कूल जाकर सामान्य शिक्षण प्राप्त करने की हुई तो मुझे अनुमति मिल गई। फिर भी वर्तमान संघर्षका आरम्भ होने पर मेरा मन अस्थिर हो उठा और मुझे महसूस हुआ कि आजादीकी खोजमें मुझे जिस व्यावहारिक अनुभवकी उपलब्धि होगी उसका मूल्य उस सामान्य शिक्षणसे कहीं अधिक होगा जिसके विषयमें प्रत्येक स्कूली छात्रको पता है कि उसका ध्येय जनताके हितसे अधिक शासकोंके हितकी उद्देश्य-पूर्ति है। और यदि इस ज्ञानके बावजूद छात्र उसी शिक्षा-प्रणालीके पाठ्यक्रमको अपनाते हैं तो उसका कारण यह है कि इतने लम्बे अरसेसे उसी एक प्रणालीका प्रचलन रहा है और वह जीवनमें कोई दर्जा पाने में सहायक होती है। विदेशी प्रभुत्वके कारण ही हम ऐसी अधोगति को प्राप्त हो गये हैं। मैं इस संघर्षकी ओर इसके राजनीतिक महत्त्वके बजाय उसके नैतिक महत्त्वके कारण आकृष्ट हुआ हूँ। मैं जानता हूँ कि यदि भारत अहिंसाका एक पूर्ण उदाहरण बन सके तो वह मानव-जातिकी प्रगतिमें अद्भुत योगदान देगा। मेरा युवा मन इसी चित्रमें रमा हुआ है और ऐसे उदात्त तथा यशोमय लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए बड़ेसे-बड़े कष्टको भी मैं तुच्छ ही समझूँगा।

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३४७-४८

६३१. पत्र : प्रफुल्लचन्द्र घोषको

सेवाग्राम, वर्धा
१४ अप्रैल, १९४१

प्रिय प्रफुल्ल,

तुम्हारा २८ मार्चका पत्र यथासमय मिल गया था। उत्तर देने में मुझे कुछ देरी हो गई।

हाँ, असमान और कमजोर सूत तो नकली सिक्केके समान ही बेकार है। मुझे तो जेलोंसे सूतके कुछ बहुत उत्कृष्ट नमूने प्राप्त हुए हैं।

मेरा स्वास्थ्य काफी अच्छा है और कुमारप्पाका भी। हाँ, मैं नैनी जेलमें मौलाना साहबसे मिला था। वे काफी अच्छे थे और विजयालक्ष्मी भी। विजयालक्ष्मी तो अब रिहा हो चुकी है। सरदारकी सेहत ठीक है और वह फालतू समयमें हमेशा कताई करते रहते हैं।

कुमारप्पा भी स्वस्थ और ठीक-ठाक हैं। वे आज हवा बदलने के लिए कुन्नूर जायेंगे। राजेन्द्रबाबूकी तबीयत ठीक चल रही है। वे यहाँ चार-पाँच दिनोंमें आ जायेंगे।

वहाँके सब लोगोंको मेरा यथायोग्य।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७८१) से

६३२. टिप्पणी : सेवाग्रामके सेवकोंके लिए

१५ अप्रैल, १९४१

लड़के या बड़े आपसमें या लड़कियोंसे निरर्थक मजाक न करें। कामकी बातमें निर्दोष विनोदको जगह है। वह एक कला है। प्रथम तो बगैर कारण मौन ही धारण करना शुद्ध बोलीकी जड़ है।

आश्रममें इर्दगिर्द बहुत गन्दगी रहती है। इसलिए एक आश्रमवासीको जिम्मेवारी सिरपर लेनी चाहिए . . .[1] अहिंसामें शौच तो आता ही है।

बापू

बापूकी छायामें, पृ० ३८३

१. मूलमें यहाँ कुछ छोड़ा गया है।

६३३. पत्र : प्रेमनाथ बजाजको

१५ अप्रैल, १९४१

प्रिय प्रेमनाथ,

आपकी शिकायत सही है। मैंने पत्रका उत्तर इसलिए नहीं दिया, क्योंकि मैं प्रश्नपर अच्छी तरहसे विचार नहीं कर सका, और इसलिए मैं कतराता रहा। अब भी यही स्थिति है। मैं यह नहीं चाहूँगा कि मेरी जैसी-तैसी लिखी चीजको मेरी रायके रूपमें पेश किया जाये। मुझे डर है कि आपको मेरी रायके बिना ही अपना काम चलाना होगा।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

६३४. पुर्जा : अमृतलाल चटर्जीको

[१५ अप्रैल, १९४१][2]

मेरे लिए जो-कुछ रखा गया उसके सिवाय बाकी व्यवस्था बिलकुल उचित थी। चिमनलाल और मुन्नालाल दोनोंके लिए आमोंको दवाई मानकर, विशेष रूपसे मँगाया गया था। मैं तो उनके बहाने ही लाभभोगी बन गया हूँ। यदि मैं लेने से इन्कार करूँ तो घोर तर्क-वितर्क होगा। हमारे यहाँ बच्चोंको दूसरे स्थानोंकी तुलनामें काफी मिलता है। किन्तु तुम भी सही हो। आम तो मानो मुसीबतकी जड़ हो। किसी दूसरे फलकी ओर लोगोंका ध्यान इतना नहीं खिंचता जितना आमकी ओर। इसके प्रति इतना मोह न रखने की हमें आदत डालनी चाहिए। किन्तु सभीको थोड़ा-बहुत मिलेगा, क्योंकि हमारे पास तीन पेटी-भर आम हैं।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४६१) से। सौजन्य: अमृतलाल चटर्जी

१. देखिए "पत्र: प्रेमनाथ बजाजको", पृ० २५३ भी।
२. तिथि-निर्धारण अमृतलाल चटर्जीके कथनानुसार किया गया है।

६३५. पत्र : रघुवंश गौड़को

सेवाग्राम, वर्धा होते हुए
१५ अप्रैल, १९४१

चि० रघुवंश,

तुमारा खत मिला। मुझे शक नहि है मेजीस्ट्रेटको लिखा है सो गलती है। फाका का यह केस हरगीज नहि है। किसी कोलेजको हम मजबूर कैसे करें? जो ज्ञान पाया है उसका उपयोग करो और आजीविका पैदा करो। मुझे अच्छा लगेगा। अगर हठ छोडोगे तो। रा० कु० बहनने तो तुमारे लिये बहुत कष्ट उठाया।

बापुके आशीर्वाद

श्री रघुवंश गौड़
मार्फत खैर आश्रम
अलीगढ़[1]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १४१) से

१. मूलमें पता अंग्रेजी लिपिमें है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

एक अजीव योजना[1]

जैसा अनुमान था, कांग्रेस कार्य-समितिने वम्बईकी अपनी बैठकमें कांग्रेसके नीति-निर्देशनका कार्य श्री गांधीको सौंपना स्वीकार कर लिया। कार्य-समितिके प्रस्तावमें ये तीन प्रमुख मुद्दे हैं: कांग्रेस ब्रिटिश सरकारके लिए युद्ध-परिचालनके मामलेमें उलझन पैदा नहीं करना चाहती, सार्वजनिक सविनय अवज्ञा नहीं की जायेगी लेकिन "अहिंसापर आधारित अपनी नीतिपर अमल करने की पूरी स्वतन्त्रता" पर कांग्रेसको आग्रह करना ही होगा। प्रथम दो मुद्दोंपर सर्वत्र सहमति होगी। प्रस्तावमें कहा गया है कि "खतरे और संकटकी घड़ीमें ब्रिटिश राष्ट्रने जैसी वहादुरी और कष्ट-सहनकी क्षमता दिखाई है कांग्रेसजन उसकी सराहना किये विना नहीं रह सकते। उसके प्रति कांग्रेसजनोंके दिलमें कोई दुर्भावना नहीं हो सकती और सत्याग्रहकी भावना कांग्रेसको ऐसा कोई भी कार्य करने से रोकती है जिसका उद्देश्य उसको उलझनमें डालना हो।" यह प्रशंसा तथा आश्वासन समयोचित हैं और इनका सर्वत्र स्वागत किया जायेगा। समाजके सभी वर्गोंके लोगोंको इस वातसे राहत मिलेगी कि श्री गांधी कांग्रेसके नीति-निर्धारक अधिनायकके रूपमें चाहे और कोई कार्रवाई क्यों न करें, लेकिन सामूहिक अव्यवस्था नहीं फैलाई जायेगी।

लेकिन प्रस्तावके कुछ अन्य पहलुओंसे और इतवारको श्री गांधीने उसका जो खुलासा प्रस्तुत किया है, उससे आशंकाएँ पैदा होंगी। पहली वात तो यह है कि प्रस्तावमें स्पष्ट कर दिया गया है कि ब्रिटिश सरकारको युद्धमें सशर्त सहयोग देने की कांग्रेसकी जो पेशकश थी वह अव रद्द हो चुकी है। इसके सिवा श्री गांधीने खूब विस्तारसे वताया है कि "अहिंसापर आधारित अपनी नीतिपर अमल करने की पूरी स्वतन्त्रता" पर कांग्रेसके जोर देने का असली मतलव क्या है। उन्होंने अपने इस इरादेका भी ऐलान किया है कि वह पुनः वाइसराय महोदयसे मिलकर उनसे यह घोषणा करने का अनुरोध करेंगे कि कांग्रेस "युद्ध-विरोधी प्रचार और युद्ध-प्रयत्नोंमें सरकारके साथ सहयोग न करने का प्रचार करती रह सकती है।" यदि ऐसी घोषणा कर दी जाती है, तो सविनय अवज्ञा नहीं की जायेगी। यदि यह घोषणा नहीं की जाती तो श्री गांधीको सोचना पड़ेगा कि उन्हें क्या कार्रवाई करनी चाहिए, लेकिन वे सत्याग्रहको टालने की भरसक कोशिश करेंगे। यह अजीवो-

[1] देखिए पृ० ५५।

गरीब पेशकश अव्यवहार्य भी है और पूर्णतया तर्कहीन भी। श्री गांधी कहते हैं कि वे ब्रिटिश सरकारको किसी भी प्रकारकी उलझनमें डालना नहीं चाहते तथापि उसी साँसमें वे यह भी कहते हैं कि उन्हें एक ऐसा कार्य करने की अनुमति दी जाये जिससे भारतके युद्ध-प्रयत्नोंमें बाधा पहुँचेगी और इस तरह शत्रुको मदद मिलेगी। कांग्रेसी समाचारपत्रोंतकने यह बताया है कि इन दोनों विचारोंमें मेल बैठाना नामुमकिन है। भारतके युद्ध-प्रयत्नोंमें बाधा डालनेवाली कोई भी चीज ब्रिटिश सरकारके लिए परेशानीका कारण होगी; इसके सिवा वह कुछ हो ही नहीं सकती।

इस तरहके दृष्टिकोणका कारण स्पष्टत: यूरोपीय संघर्षके बारेमें भारी गलत-फहमी है। अपने भाषणमें श्री गांधीने दो बड़ी विचित्र बातें कही हैं। पहली यह कि यूरोपकी जनता यह नहीं जानती कि वह किस चीजके लिए युद्ध कर रही है। दूसरी यह कि भारत सरकार कांग्रेसको स्वतन्त्रताके नामपर युद्ध-विरोधी अभि-यान चलाने की अनुमति प्रदान करके भारतकी आजादीको अभिव्यक्ति दे। हम श्री गांधीको यह भरोसा दिला सकते हैं कि अंग्रेज जनता यह बहुत अच्छी तरह जानती है कि वह किस चीजके लिए युद्ध कर रही है। किसी ऐसे व्यक्तिको छोड़कर, जो ठोस तथ्योंकी तरफसे जानबूझकर आँखें बन्द कर लेता है, बाकी किसीके लिए भी अब यह बहाना करने का वक्त खत्म हो चुका है कि यह लड़ाई सिर्फ तथाकथित 'साम्राज्यवाद' की दो प्रतिस्पर्धी प्रणालियोंके बीचकी लड़ाई है। श्री गांधीको 'माइन काम्फ' पढ़ना चाहिए; उन्हें उन लोगोंके भाषणोंका भी अध्ययन करना चाहिए जो नाजी-उद्देश्योंका प्रतिपादन करते हैं; और इस बातपर ध्यान देना चाहिए कि हिटलरने यूरोपके तटस्थ देशोंके साथ क्या सलूक किया है। उन्हें हैम्बर्ग-स्थित भूतपूर्व भारतीय ट्रेड-कमिश्नर श्री पटेलकी रिपोर्ट भी देखनी चाहिए जिसमें शान्तिके समयमें जर्मनीके अन्दर अपनाये गये नाजी तरीकोंपर भरपूर प्रकाश डाला गया है। ये सारी चीजें उस खतरेको बड़ी ही स्पष्टताके साथ उजागर कर देती हैं जिसके विरुद्ध ब्रिटेन और उसके मित्र-राष्ट्र लड़ रहे हैं। यह एक ऐसा खतरा है जो संयुक्त राज्य अमेरिकामें सबसे अधिक तीव्रताके साथ महसूस किया जा रहा है। यदि श्री गांधी सही हैं, तो ब्रिटिश जनता गलत है; और उसीकी तरह अमेरिकी जनताका भारी बहुमत भी गलत है और वे सभी स्वतन्त्र फ्रांसीसी, डच, बेल्जियन, नार्वेजियन पोल तथा डेन लोग भी गलत हैं जो अपने देशको हिटलरके अत्याचारसे बचाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

प्रजातन्त्र और तानाशाहीके बीचका मौलिक भेद तो एक बच्चा भी समझता है। प्रजातन्त्रमें लोगोंको उस हदतक अधिक-से-अधिक वैयक्तिक स्वतन्त्रता प्राप्त होती है जिस हदतक कि वह सुशासनमें बाधक नहीं होती। तानाशाहीमें मानव-जातिको यन्त्रवत् चलनेवाले प्राणियोंका एक समूह माना जाता है जिसका संचालन कुछ चुने हुए मुट्ठीभर लोगोंको करना है। श्री गांधीसे लेकर नीचे तकका एक भी कांग्रेसी ऐसा नहीं है जो यह न कहता हो कि तानाशाही व्यवस्था और उसमें

निहित सामूहिक गुलामीको वह घिनौनी चीज समझता है। अतः जब हम श्री गांधीको शान्तिपूर्वक यह घोषणा करते देखते हैं कि अन्य देशोंके लोगोंके साथ-साथ अंग्रेज लोग भी यह नहीं जानते कि वे किस चीजके लिए युद्ध कर रहे हैं, तो सहसा विश्वास नहीं होता। श्री गांधीको यह भी जानना चाहिए कि युद्ध-विरोधी प्रचार तथा भारतमें होनेवाले युद्ध-प्रयत्नसे सहयोग न करने का प्रचार शत्रुको समर्थन देने की वकालत जैसा है। उनकी योजनासे इस देशमें पंचमांगियोंकी एक सेना तैयार हो जायेगी, और हिटलर बिल्कुल यही चीज चाहता है। बेशक श्री गांधी जानते हैं कि हिटलरने अभी तक प्रजातन्त्रका नाश करने में जो सफलता प्राप्त की है उसकी सीधी-सादी तरकीब यह रही है कि उसने प्रजातन्त्रका नाश करने के लिए उसी स्वतन्त्रताका प्रयोग किया जो प्रजातन्त्र प्रदान करता है। यदि श्री गांधी वास्तवमें प्रजातन्त्रमें विश्वास रखते हैं तो वे यह दावा नहीं कर सकते कि इस युद्धका भारतके लिए कोई महत्त्व नहीं है और भारतकी जनताको इसमें कोई भाग न लेने की अनुमति होनी चाहिए। हमें हार्दिक विश्वास है कि वे वाइसरायके पास जाने से पहले अपनी स्थितिपर पुनर्विचार करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, १७-९-१९४०

परिशिष्ट २

अस्तित्वको ही खतरा[1]

बम्बईमें हुई कांग्रेसकी बैठककी कार्यवाहियोंकी जो रिपोर्ट अखबारोंमें प्रकाशित हुई है उसपर से उन्हें समझना बहुत मुश्किल है। शब्दोंके उस घने जंगलमें से गुजरते हुए अन्तर्विरोधके बाद अन्तर्विरोधके जो दर्शन होते हैं उससे अन्धकार और भी घना हो जाता है। जो एक ठोस मुद्दा नजर आता है वह श्री गांधीका यह वक्तव्य है कि यदि वाइसराय उन्हें यह आश्वासन दे दें कि कांग्रेसजनोंको इस बात की अनुमति होगी कि वे युद्ध-प्रयत्नोंसे असहयोग करने का सार्वजनिक रूपसे प्रचार कर सकते हैं — यहाँ उन्होंने इस बातपर जोर दिया है कि असहयोग अहिंसात्मक होना चाहिए — तो उनकी ओरसे किसी प्रकारका सत्याग्रह नहीं होगा, और सार्वजनिक सविनय अवज्ञा तो किसी भी हालतमें नहीं की जायेगी। इसपर हमारे मनमें पहला सवाल तो यह उठा कि कांग्रेस हमेशा ही ऐसे दुष्कर आश्वासनोंकी माँग क्यों करती रहती है और इस मांगको वह छोड़ ही क्यों नहीं देती? जिस प्रकार ब्रिटिश सरकारने उन लोगोंके काममें बाधा नहीं डाली है जो शान्तिवादको नैतिक कर्त्तव्य मानकर उसका प्रचार करते हैं, उसी प्रकार भारतमें भी सरकारने इस प्रकारके प्रचारपर

१. देखिए पृ० ५६।

कोई प्रतिवन्ध कभी नहीं लगाया है। क्वेकर तथा अन्य नैतिक आपत्तिकर्त्ताओंको युद्ध-कालमें तबतक कोई दण्ड नहीं दिया जाता जवतक कि वे कोई ऐसा कार्य नहीं करते जिसका उद्देश्य शत्रुको मदद देना हो। जो लोग सैनिकों, नौसैनिकों तथा वायु-सैनिकोंका मत-परिवर्तन करने और युद्ध-कार्यमें प्रत्यक्ष रूपसे लगे इन अथवा अन्य लोगोंको गैर-कानूनी काम करने के लिए फुसलाने की कोशिश करते हैं, वे स्पष्टतः शत्रुकी सहायता कर रहे हैं। जब राष्ट्रकी समूची जनताके लिए कानूनन फ़ौजमें भर्ती होना अनिवार्य हो, जैसा कि इस वक्त ब्रिटेनमें है, तब तो कोई विभाजन-रेखा खींचना और भी कठिन हो जाता है। काम करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति एक तरहसे युद्धके लिए काम कर रहा है। तथापि असैनिक सेवामें लगे किसी सामान्य आदमी-का यदि मत-परिवर्तन हो जाये और वह यह मानने लगे कि एक अत्यन्त पवित्र उद्देश्य-के लिए लड़े जानेवाले युद्धतक में योद्धाके रूपमें भाग लेना गलत है, तो इससे उसके कामके उत्पादनमें कोई बाधा नहीं पड़ेगी। यही वह दृष्टिकोण है जो आज ब्रिटेनमें बर्दाश्त किया जाता है और भारतमें भी अवतक बर्दाश्त किया गया है। स्वयं श्री गांधीके इस अजीबोगरीब प्रस्तावतक को, कि ब्रिटेनको हिटलरके समक्ष दयनीय रूपसे आत्म-समर्पण कर देना चाहिए, उनके ही अनुरोधपर, युद्ध-मन्त्रिपरिषद्-के सामने पेश किया गया था, और मन्त्रिपरिषद्ने उसे एक सद्भावपूर्वक दी गई राय मानते हुए आदरके साथ इसपर विचार किया था और उन्हें एक शिष्ट उत्तर भेजा था।

आप जो-कुछ चाहते हैं, वह आपको जब मिल चुका है, तो आप वाइसरायसे ऐसा मुश्किल बयान देने के लिए क्यों कहते हैं? बहुत-से लोग हैं जो ऐसे किसी वक्तव्यको तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करेंगे और उसकी ओटमें शत्रुको भारत-विजय करने में मदद देने की कोशिश करेंगे। श्री गांधीके भाषणके अन्य अंशोंमें इसपर प्रकाश पड़ता है। उनके दिमागमें जो बात है, वह है कांग्रेसके पदाधिकारियों तथा कार्यकर्त्ताओं-की भारी संख्यामें गिरफ्तारी, जिसकी सूचना समाचारपत्रोंमें, विशेषकर संयुक्तप्रान्तमें, लगातार प्रकाशित की जा रही है। उनके बारेमें तफसीली ब्योरा तो नहीं दिया जाता, लेकिन आम तौरपर ये गिरफ्तारियाँ प्रतिरक्षा-कानूनके अन्तर्गत होती हैं और युद्धके सम्बन्धमें भाषण देने की वजहसे होती मालूम पड़ती हैं। श्री गांधीका कहना है कि वे वाइसरायका ध्यान इस ओर दिलाना चाहते हैं कि अपने अहिंसक असहयोग-के सिद्धान्तके कारण युद्धके दौरान कांग्रेसके अस्तित्वके 'समाप्त' हो जाने का खतरा पैदा हो गया है, और वे चाहते हैं कि कांग्रेसजनोंको अपने सिद्धान्तका प्रचार करने की स्वतन्त्रता दी जाये।

हमने कई बार इस सिद्धान्तकी आधारभूत अनैतिकता और अन्तर्विरोधी प्रकृतिके बारेमें अपने विचार प्रकट किये हैं। असहयोग शान्तिका नहीं, युद्धका तरीका है। यों तो निहत्थे और रक्षाहीन लोगोंके लिए युद्ध करने अथवा अपनी रक्षा करने का यह काफी युक्तिसंगत तरीका है, लेकिन इसका आध्यात्मिक मूल्य उतना ही है जितना किसी युद्धका, बल्कि कहें कि उससे भी कम है; क्योंकि यह तरीका आध्या-

त्मिकताका झूठा दावा करता है। इसमें पाखण्ड और कपटसे काम लिया जाता है, सामूहिक दम्भ और मिथ्याचार होता है, द्वेषकी भावनाएँ भड़काई जाती हैं, और साथ ही जीवनको जीने-योग्य बनाने के लिए जिन मूल्योंकी रक्षा आवश्यक है उनके लिए सच्चा पौरुष न दिखाकर उसकी कमी भाषाके एक अत्यन्त हिंसात्मक प्रयोग द्वारा पूरी की जाती है। जो राष्ट्र इस सिद्धान्तको स्वीकार करेगा, उसके भाग्यमें गुलामीके सिवा कुछ नहीं होगा, और वह चापलूस पाखण्डियोंकी ऐसी पीढ़ियाँ पैदा करता रहेगा जो अपने मालिकोंके तलुए चाटेंगी जबकि मालिक उन्हें दुत्कारेंगे। यह सिद्धान्त भारतके योग्य नहीं है, और यदि कांग्रेस इसपर अड़ी रहती है, तो कांग्रेसका वास्तवमें 'उन्मूलन' हो जायेगा। ऐसा इसलिए होगा, क्योंकि या तो भारत इस सिद्धान्तको बिल्कुल ठुकरा देगा, या फिर कांग्रेस देशमें इतना जहरीला वातावरण पैदा कर देगी कि ब्रिटेन भारतको उन तीन-चार तानाशाही शक्तियोंसे बचा नहीं पायेगा, जो भारतकी बंदरबाटके लिए कृतसंकल्प हैं। वैसी स्थितिमें एक संस्थाके रूपमें कांग्रेसका फिर नामतक सुनाई नहीं पड़ेगा।

एक देशमें दूसरे देशोंको जीतने की लालसा और एक अनाक्रामक देशमें शान्तिवादकी भावना, ये दो जहर ऐसे हैं जो मिलकर युद्धको जन्म देते हैं। अंग्रेज शान्तिवादियोंकी जवाबदेही बहुत बड़ी है। उन्होंने एक ऐसे देशमें तो आत्मसमर्पणके सिद्धान्तका प्रचार किया जिसे युद्धकी कतई कोई अभिलाषा नहीं थी, लेकिन उनमें बर्लिन और रोमके चौराहोंपर खड़े होकर उसी सिद्धान्तका प्रचार करने और फलस्वरूप जेल जाने का साहस नहीं था। असहयोग करनेवालोंकी स्थिति उनसे बेहतर है। असहयोगियोंने भारत सरकारके खिलाफ संघर्ष किया है और वे जेल भी गये है। लेकिन उन्होंने शान्तिवादी होने का ढोंग करके अपना मामला खराब कर लिया है। क्वेकर या अन्य शान्तिवादियोंसे हमारा कोई झगड़ा नहीं है। शान्तिवादी अपने अन्तःकरणके अनुसार कार्य करता है, लेकिन वह दूसरोंका मत-परिवर्तन करने का प्रयास नहीं करता, वह किसीके मामलेमें दखल नहीं देता, और युद्ध-कालमें राष्ट्रीयताका विचार किये बिना हर व्यक्तिको अपनी सच्ची सहायता और सहानुभूति प्रदान करके वह वास्तविक भलाईका काम करता है। लेकिन जो व्यक्ति युद्धके समय अप्रतिरोध और आत्म-समर्पणका प्रचार करता है — फिर ऐसा करने में उसका उद्देश्य चाहे जो हो — वह वैसा करके राष्ट्रकी जिजीविषाको कमजोर करता है, उस देशको नष्ट करने और शत्रुके हवाले करने में मदद करता है। ऐसे नेतृत्वमें रहते हुए कांग्रेस भारतको कुछ नहीं दे सकती। साथ ही हमें इसमें भी सन्देह है कि अधिकारीगण सभी स्थानोंपर कांग्रेसजनोंकी गिरफ्तारीके मामलेमें बुद्धिमत्तासे काम ले रहे हैं — संयुक्त प्रान्तके सम्बन्धमें तो यह सन्देह सबसे अधिक है। ब्रिटेन अथवा भारतमें अभीतक किसी व्यक्तिको महज इसलिए गिरफ्तार करने का चलन नहीं है कि वह शान्तिवादी विचार व्यक्त करता है, हालाँकि खुद हमें समझमें नहीं आता कि जीवन-मरणके युद्धमें संलग्न कोई राष्ट्र ऐसे आक्रामक शान्तिवादको किस तरह सहन कर सकता है जो स्पष्टतः शत्रुके लिए सहायक सिद्ध होगा। लेकिन हाल ही में यह देखने के बाद कि युद्ध-प्रयत्नोंमें

मदद देने की कोशिश करनेवाले कुछ लोगोंने जब फासिज्म-विरोधी दिवस मनाने का प्रयत्न किया तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया, हमें यह शक हुए बिना नहीं रह सकता कि अन्यायको रोकने के लिए शायद हमेशा पूरी सावधानी नहीं बरती जाती। जो आदमी क्रान्ति, हिंसा अथवा युद्ध-प्रयत्नोंमें बाधा डालनेवाली किसी भी प्रकारकी कार्रवाईका प्रचार करता है, उसे गिरफ्तार करना जरूरी है। लेकिन अभी भी यह अधिकारी वर्गका काम बिलकुल नहीं है कि वे किसी व्यक्तिको अपने अहिंसात्मक प्रकृतिवाले निजी विश्वासोंको व्यक्त करने से रोकें, और युद्धके नाम-पर कांग्रेसका अस्तित्व मिटाने की कोशिश करना तो उनका काम बिलकुल ही नहीं है। खतरा तो यह है कि कांग्रेस अपनी हस्ती खुद मिटा देगी, उसमें किसीके हस्तक्षेपकी जरूरत नहीं है। यही हाल पाकिस्तान-समर्थक और उन निहित-स्वार्थ लोगोंका भी है —— जिनमें से कुछ अंग्रेज भी हैं —— जो नौकरीपेशा या व्यापारी वर्गके हैं और युद्ध-प्रयासोंमें बाधा बने हैं। जीवित रहने के लिए अभी हमें अपने अनेक पूर्वग्रहोंको छोड़ना होगा तथा नये दृष्टिकोण तथा नये नेतृत्वका विकास करना होगा।

[अंग्रेजीसे]
स्टेट्समैन, १७-९-१९४०

परिशिष्ट ३

लॉर्ड लिनलिथगोका पत्र[1]

शिमला
३० सितम्बर, १९४०

प्रिय श्री गांधी,

२७ और ३० सितम्बरको हमारी जो बातचीत हुई उसकी पृष्ठभूमि क्या थी और परिणाम क्या रहा, इसे मैं यदि संक्षेपमें लिख दूँ तो मेरी रायमें सहूलियत रहेगी।

जैसा कि आपको याद होगा, आपने १८ सितम्बरको मुझे पत्र लिखकर अनुरोध किया कि मैं आपको मुलाकातका वक्त दूँ। आपने अपने पत्रमें बताया कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके हालके प्रस्तावमें जिस स्थितिकी चर्चा है उसके बारेमें आप न केवल कांग्रेसके मार्गदर्शकके नाते बल्कि व्यक्तिगत मित्रके नाते भी विचार-विमर्श करने को उत्सुक हैं। कहने की जरूरत नहीं कि मैं आपके साथ मसलेपर विचार करने के लिए बिलकुल तैयार था, और अबतक हम दो बार बातचीत कर चुके हैं। . . .

इन वार्ताओंमें स्थितिपर विस्तारसे विचार किया गया है और युद्धकालके दौरान वाक्-स्वातंत्र्यके प्रश्नपर इनमें विशेष रूपसे चर्चा हुई। इस विषयमें आपने कहा कि युद्ध-परिचालनके मामलेमें सम्राटकी सरकारको किसी भी प्रकारकी उलझनसे

१. देखिए पृ० ७७।

बचाने के लिए आप बहुत उत्सुक हैं, लेकिन साथ ही आपने यह भी स्पष्ट कर दिया कि आपकी दृष्टिमें यह अत्यावश्यक है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और किसी भी नागरिकको युद्ध-प्रयत्नोंके बारेमें अपने विचारोंको व्यक्त करने की पूरी स्वतन्त्रता हो, शर्त यही होगी कि यह अभिव्यक्ति पूर्णतः अहिंसात्मक हो।

मैंने आपको बताया कि युद्धके विरुद्ध नैतिक आपत्ति करनेवालोंके सम्बन्धमें ब्रिटेनमें कानूनके अन्तर्गत किस प्रकारकी विशेष व्यवस्था की गई है। मोटे तौरपर यह व्यवस्था ऐसी है जिसके अन्तर्गत नैतिक आपत्तिकर्ता यद्यपि युद्ध करने के कर्त्तव्य-से मुक्त माना जाता है और उसे अपने विश्वासको सार्वजनिक रूपसे प्रकट करने तक की छूट है, तथापि उसे अपनी युद्ध-विरोधी भावनाको इस हदतक ले जाने की छूट नहीं है कि वह अन्य लोगोंको, चाहे वे सैनिक हों या युद्ध-सामग्री तैयार करने-वाले कर्मचारी, राजभक्ति छोड़ने या अपने प्रयत्नोंको बन्द करने के लिए कह सके।

आपने मुझपर यह स्पष्ट कर दिया कि आप उक्त प्रकारकी व्यवस्थाको भारतकी परिस्थितियोंमें नाकाफी समझते हैं, और यह कि भारतमें, जहाँ की परिस्थितियाँ आपकी दृष्टिमें ब्रिटेनकी परिस्थितियोंसे सर्वथा भिन्न हैं, यह अत्यावश्यक है कि भारतीय आपत्तिकर्त्ताको, चाहे वह युद्धमात्रका विरोधी हो अथवा वर्तमान युद्धमें भारतके भाग लेने का विरोधी हो, अपने विचारोंको व्यक्त करने की स्वच्छंदता होनी चाहिए।

हमारी बातचीतसे यह बात और साफ हुई कि आप स्वयं तो युद्ध-कार्यमें लगे कर्मचारियोंको कारखानोंमें युद्धके उपकरण आदि बनाना बन्द करने के लिए नहीं कहेंगे, तथापि आपकी दृष्टिमें यह बात अत्यावश्यक हो सकती है कि कांग्रेस-जन तथा गैर-कांग्रेसजन, दोनोंको इस बातकी छूट हो कि वे भाषण आदिके जरिये देशभरके लोगोंसे यह अपील कर सकें कि वे भारतके युद्ध-प्रयत्नोंमें ऐसा कोई योगदान न करें जिसका मतलब रक्तपातमें भारतका शरीक होना हो।

मैंने बहुत ध्यानपूर्वक आपकी दलील सुनी, और हमने स्थितिका विस्तारपूर्वक और गहराईके साथ विश्लेषण किया। परन्तु अन्तमें मुझे आपको स्पष्ट रूपसे यह बता देना अपना कर्त्तव्य लगा कि आप जो-कुछ करने को कहते हैं उससे न केवल भारत-के युद्ध-प्रयत्नोंमें निश्चय ही बाधा पड़ेगी, बल्कि युद्ध-परिचालनमें ब्रिटेनके लिए वह उलझन भी पैदा होगी जिसे टालने के लिए कांग्रेस अपनेको उत्सुक बताती है। मैंने यह भी बता दिया था कि जिस प्रकारके व्यापक वाक्-स्वातंत्र्यकी आपने माँग की है उससे युद्ध-प्रयत्नोंमें दखलन्दाजी होगी, जिसे स्वीकार कर लेना जाहिर है स्वयं भारतके हितमें, खास तौरसे युद्धकी इस सबसे नाजुक घड़ीमें, सम्भव नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-१०-१९४०

परिशिष्ट ४

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[1]

आनन्द भवन, इलाहाबाद
२ अक्तूबर, १९४०

प्रिय बापू,

लगभग छः हफ्ते पहले, जब मैं योजना-समितिकी बैठकके सिलसिलेमें बम्बईमें था, मुझे एक विचित्र अनुभव हुआ, जिसके कारण तबसे मुझे अक्सर क्लेश होता रहा है। पिछली बार जब आप बम्बईमें थे, मुझे आपको उसके बारेमें तभी बता देना चाहिए था। लेकिन कार्य-समिति और अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी बैठकोंमें ध्यान उलझा होने के कारण मैं भूल गया। डाकसे मैं आपको उसके बारेमें लिखना नहीं चाहता था।

मैं योजना-समितिकी बैठकसे मध्यान्तरमें दोपहरके खाने के लिए लौटा था। मुझे शीघ्र ही वापस जाना था और मेरे पास वक्त कम था। उसी समय एक अंग्रेज नवयुवक मेरी बहनके घर आया। वह खादी पहने हुआ था—कमीज, ढीला पाजामा और टोपी। उसने मुझे बताया कि वह सेनामें अफसर है—सेकेंड लेफ्टिनेंट—और उसने सेनाको छोड़ने और उसका नतीजा भोगने का फैसला कर लिया है। उसने एक पत्र-की नकल मुझे दिखाई और बताया कि वह उसने अपने कमांडिंग अफसरको दिया था और वहाँसे शिमला-स्थित आर्मी हेडक्वार्टर्सको भेज दिया गया है। मैंने उसे पढ़ा और विस्मित रह गया। वह एक बहुत ही सुन्दर वक्तव्य था। मैं उसकी एक नकल संलग्न कर रहा हूँ और आप उसे खुद पढ़ सकते हैं।

उसका नाम नेपियर था। वह उस नेपियरका प्रपौत्र था जिसको सिन्धका विजेता बताया जाता है। उसी समयसे इस परिवारका सेनासे घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। लगता है परिवारकी हालत गिर गई थी, नवयुवक नेपियर युद्ध आरम्भ होने के कुछ वर्ष पूर्व एक सिपाहीके रूपमें सेनामें भर्ती हुआ था। लेकिन चूँकि वह एक होनहार लड़का था, और शायद उसके परिवारकी वजहसे भी, उसे सैंडहर्स्ट (सैनिक विद्यालय) के लिए छात्रवृत्ति मिल गई और बादमें वह एक कमिशन अफसर बन गया। युद्ध आरम्भ होने के एक या दो महीने बाद उसे उसकी रेजिमेंटके साथ भारत भेज दिया गया। उसे मध्य भारतमें महू नामक स्थानपर नियुक्त किया गया। लगता है कि अपने साथी अफसरोंसे उसका मेल नहीं बैठा। उनकी अपेक्षा वह प्रकृतिसे अधिक गम्भीर और बुद्धिमान था और उसको भारतके प्रति, विशेष रूपसे गरीब वर्गोंके

१. देखिए पृ० ८७।

प्रति खिचाव महसूस होने लगा। वह आफिसर्स मेसोंमें जाने से कतराता और अपना समय बाजारोंमें या अन्य स्थानोंपर छोटे-मोटे दूकानदारों, मजदूरों आदिसे बातचीत करने में बिताता था। उसने हिन्दुस्तानी सीखने की कोशिश की। मेरा खयाल है कि वह अपने वेतनका एक खासा अंश गरीबोंको दे देता था।

उसके साथी अफसरोंको यह बात पसन्द नहीं आई। कमांडिंग अफसरने इस विषयमें उससे बात की और दोनोंमें कई बार बहस हुई। उसे अपने व्यवसायसे, विशेष रूपसे भारतमें नौकरी करने से अधिकाधिक अरुचि होने लगी। वह उसे छोड़ना चाहता था, लेकिन युद्ध-कालमें ऐसा करना सम्भव नहीं था। अन्तमें उसने संलग्न पत्र अपने कमांडिंग अफसरको दे दिया।

उसकी रेजिमेंटका तबादला महूसे झाँसी हो गया। इससे उसे झाँसीमें अपनी रेजिमेंटमें पहुँचने के लिए डेढ़ या दो दिनका समय मिल गया। उसने अन्तिम कदम उठाने का फैसला कर लिया और अपनी वर्दी बेच डाली। ऐसा करने के पीछे उसका उद्देश्य अपने सैनिक जीवनको निश्चित रूपसे समाप्त करना था, और साथ ही कुछ पैसा खड़ा करना था। विशेष रूपसे वह यह नहीं चाहता था कि उसे भारतसे इंग्लैंड भेज दिया जाये।

उसके बाद उसने मुझसे सम्पर्क स्थापित करने के लिए इलाहाबाद टेलिफोन किया और उसे पता चला कि मैं बम्बईमें हूँ। उसने मेरा पता लिया, सीधे बम्बई आया और स्टेशनसे मेरी बहनके घर पहुँचा।

मेरे लिए यह एक अजीब स्थिति थी, और मैं भौचक्का रह गया। मेरे मनमें इस २५ वर्षीय और अत्यन्त ईमानदार युवकके प्रति सहानुभूति उमड़ आई, लेकिन मेरी समझमें नहीं आया कि क्या किया जाये। बम्बई आकर उसने सेनासे भागने का अपराध किया था और सो भी युद्ध-कालमें। सैनिक कानूनमें यह सबसे गम्भीर अपराध है, और एक-दो दिनके भीतर उसकी गिरफ्तारी और कोर्ट मार्शल होना निश्चित था। मुझे उससे पता चला कि उसे अगले दिन सुबह झाँसीमें कामपर उपस्थित होना है। बस इतनी ही गुंजाइश थी कि अगर वह अगली ट्रेन पकड़ ले, जिसके छूटने का समय थोड़ी देर बाद ही था, तो वह समय रहते झाँसी पहुँच सकता था।

मैं नेपियरसे और अधिक विस्तारसे बात करना चाहता था, लेकिन योजना-समितिकी बैठकके लिए मुझे पहले ही काफी देर हो चुकी थी। अगर उसे अगली ट्रेनसे वापस झाँसी पहुँचना था तो यही आखिरी मौका था। मुझे लगा कि उसे अवश्य वापस जाना चाहिए। सेनासे भागने का अभियोग लगने से अन्य परिणामोंके सिवा असली मामला भी उलझ जाता। उसने सैनिक अधिकारियोंके सामने अपनी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर दी थी, और उस मुद्देपर वह उनसे लड़ भी सकता था। मेरे लिए यह कल्पना करना कठिन था कि अपने विश्वासकी घोषणा कर देने के बाद वह ब्रिटिश सेनामें बना रहेगा; न ही मैं यह समझ पा रहा था कि वह उससे किस प्रकार निकले। सैनिक अधिकारी ऐसी चीजकी इजाजत नहीं देते। उसका क्या होगा, यह तो मैं नहीं सोच सका, लेकिन इतना स्पष्ट लगता था कि उसे काफी

मुश्किलोंका सामना करना पड़ेगा। हर सूरतमें मुझे लगा कि इस सवालको सेनासे भागने के सवालके साथ मिलना नहीं चाहिए। इसलिए मैंने उसे सलाह दी कि वह अगली गाड़ीसे झाँसी चला जाये और वहाँ अपने कमांडिंग अफसरको अपनी उपस्थितिकी सूचना दे। मैंने उसे यह भी सलाह दी कि वह खादीके कुर्ते-पाजामेमें उनके सामने न जाये। उसने कहा कि उसके पास हाफ-पेंट वगैरह है और वह उन्हें पहन लेगा। मैंने पूछा कि क्या उसके पास पर्याप्त पैसे हैं। उसने कहा कि उसके पास मतलब-भरके काफी पैसे हैं।

उसने मेरी सलाह मान ली और कहा कि वह वापस चला जायेगा। मैंने उससे कहा कि यदि सम्भव हो तो वह मुझे या मेरी बहनको पत्र लिखकर सूचित करे कि क्या हुआ। तबसे हमें उसकी कोई सूचना नहीं मिली है। मुझे बताया गया है कि झाँसी भेजी जानेवाली हर रेजिमेंटको शीघ्र ही मिस्र भेज दिया जाता है। मैं अब पता लगाने की कोशिश कर रहा हूँ कि नेपियरकी रेजिमेंटका क्या हुआ। यह बहुत मुमकिन है कि उसके विचारों और सेनासे उसके भागने के कारण उसे हिरासतमें रखा गया हो और पत्र लिखने से रोक दिया गया हो, और बादमें भारत-से बाहर भेज दिया गया हो।

उसका चेहरा मेरी आँखोंके आगे घूमता रहता है और मैं अक्सर सोचता हूँ कि क्या मैंने उसे ठीक सलाह दी थी।

सस्नेह आपका,

[संलग्न : नेपियरका पत्र]

अगस्त, १९४०

इस तथ्यको मद्देनजर रखते हुए कि [मेरा] देश युद्धमें संलग्न है और किसी अफसरके लिए सामान्य तरीकेसे अपने कमिशन पदसे इस्तीफा देना सम्भव नहीं है, मैं अपने कमांडिंग अफसरके अनुरोधपर यहाँ अपने सुचिन्तित विचार व्यक्त कर रहा हूँ, और मेरा विश्वास है कि इन विचारोंकी मेरे अपने पदपर बने रहने से संगति नहीं बैठती। मेरे परिवारकी ब्रिटिश सेनामें सेवाकी पिछले १५० वर्षोसे अखण्ड परम्परा रही है, और मेरे एक पूर्वजने भारत-विजय करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। लेकिन इस बातसे कहीं ज्यादा गर्व मुझे अपने इन विचारोंपर है।

मैं भारतमें ब्रिटिश शासनके विरुद्ध हूँ। मेरी राय है कि किसी भी देशमें वहाँ-के निवासियोंका ही शासन होना चाहिए, क्योंकि सभी चीजोंसे स्वतन्त्रताका महत्त्व ज्यादा है। इसका महत्त्व भोजनसे भी ज्यादा है, लेकिन भोजनका भी अपना महत्त्व है। भारतमें किसीको आजादी नहीं है, और आबादीके बहुत बड़े हिस्सेको अपर्याप्त भोजन ही नसीब है। यह एक ऐसी सचाई है जो किसी भी अंग्रेजको साफ दिखाई पड़ सकती है, बशर्ते कि वह किसी शामको क्लबमें सुरापानके लिए जाने के बजाय गाँवकी ओर निकल जाये और उसे देखे।

मैं ब्रिटिश साम्राज्यके विरुद्ध हूँ। मैं मानता हूँ कि यह धन कमानेके उद्देश्यसे बनाया गया एक संघ है जिसका प्रसार इंग्लैंडके व्यापारियोंने "साम्राज्यके गौरव और देशी जातियोंके उत्थान" की झूठी आड़में किया है। मैं इसे ब्रिटेनके अधिकांश लोगोंके लिए बुरा समझता हूँ, भारतके लिए बुरा समझता हूँ, और दुनियाके लिए बुरा समझता हूँ। हिटलरशाही और बोल्शेविज्मसे ब्रिटिश साम्राज्यवादमें जो फर्क है वह सिर्फ यह है कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद कुछ लोगोंको तो स्वतन्त्रता और भोजन देता है, और बाकीको इनमें से कुछ भी नहीं देता। हिटलरशाही और साम्यवाद सबको भोजन तो देते हैं, लेकिन आजादी किसीको नहीं देते। मैं आधुनिक यूरोपीय सभ्यताके विरुद्ध हूँ। यह भव्य नाम उस अराजकताका है जो उत्तरी सागरके आस-पास फैली हुई है। मेरे लिए यह मानना कठिन है कि जो लोग इस समय लोभ और भयसे उद्भूत एक उन्मत्त संघर्षमें रत हैं वे संसारके लिए कल्याणकारी शक्ति हो सकते हैं। यूरोपीय सभ्यताने वस्तुओंके निर्माणके साधन उत्पन्न किये हैं, लेकिन उससे भी अधिक कुशलताने निर्मित वस्तुओंके विनाशके साधन पैदा किये हैं। आम आदमी-के मनपर इनका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रभाव यह हुआ है कि उसकी विचार-क्षमता नष्ट हो गई है और जो लोग विचार कर सकते हैं उनके प्रति उसके मनमें अवि-श्वासका भाव पैदा हो गया है। इस बातको युद्ध-कालमें बिलकुल स्पष्ट रूपसे देखा जा सकता है, जब हर आदमीके पास काम और पैसा है और वह अपने साथी इन्सानोंकी हत्या करने में सुखपूर्वक जुटा हुआ है। शान्तिकालमें बेरोजगारी, भुखमरी और तंगहाली होती है। इस स्थितिमें कोई खराबी है, इसे निश्चय ही एक अंग्रेज भी देख सकता है।

संस्कृति और सभ्यताका प्रसार अंग्रेज करें इसके मैं विरुद्ध हूँ। एक औसत अंग्रेजको अपने तनकी इतनी ज्यादा फिक्र है कि वह अपने मनकी ओर ध्यान नहीं देता। बेशक शरीर ठीक और चुस्त होना चाहिए, और उसे चुस्त रखने के लिए श्रम भी जरूरी है, लेकिन लोग ऐसा क्यों मानते हैं कि मनको श्रमकी जरूरत नहीं है। अंग्रेजके लिए स्वस्थ शरीरमें दुर्बल मनका होना सन्तोषकी बात है, जब कि दुर्बल शरीरमें क्रियाशील मनका होना उसकी निगाहमें तिरस्करणीय है। अंग्रेजोंका जीवन-दर्शन लगभग निरपवाद रूपसे इसी सिद्धान्तपर आधारित है, जो कि पूर्वके जीवन-दर्शनका ठीक उलटा है। मैं स्वेच्छासे ऐसी कूढ़मग्ज मनोवृत्तिके प्रसारमें अंग्रेजों-की मदद नहीं कर सकता। जहाँतक मनुष्यके उस तीसरे अंश — आत्मा कहलानेवाले दुर्ग्राह्य तत्त्वका प्रश्न है, औसत अंग्रेज उसकी बिलकुल ही उपेक्षा करता है। अंग्रेज जाति एक अधार्मिक जाति है। निम्न वर्गके लोगोंको इस बातको मानने में कोई हिचक नहीं है, और उच्च वर्ग धर्मको एक सामाजिक कार्य मानते हैं। दम्भ और नासमझीके वशीभूत हो वे यकीन कर बैठते हैं कि वे ईसाई हैं, हालांकि व्यवहारमें वे अपने धर्मके महान आदेशोंकी बिलकुल अवहेलना करते हैं। यदि आज इंग्लैंडमें ईसामसीह प्रकट हो जायें, तो वे लोग उन्हें एक नितान्त अवांछनीय व्यक्तिके रूपमें देखेंगे। ईसाई धर्ममें प्रतिदिन प्रार्थना करने का विधान है। आप जो यह पत्र पढ़

रहे हैं, क्या रोज प्रार्थना करते हैं? क्या आप किसी सार्वजनिक स्थानपर घुटनोंके बल बैठकर अपने ईश्वरके सामने प्रार्थना करेंगे? लेकिन भारतीय लोग रोज ऐसा करते हैं। मैं स्वयं धार्मिक व्यक्ति नहीं हूँ, और मैं इसे खेदकी बात समझता हूँ। मैं ईसाई नहीं हूँ, लेकिन साथ ही मैं ईसाई होने का ढोंग भी नहीं करता। इसके बावजूद मुझे अपने कमांडिंग अफसरकी निगाहमें अपनी अवांछनीयताका दुःख है। यह एक ऐसी चीज है जो कोई भी भला अंग्रेज नहीं करेगा, चाहे वह ईसाई हो अथवा न हो। न ही मैं अधार्मिक होते हुए भी उन लोगोंके विश्वासोंकी खिल्ली उड़ाता हूँ जिनके वर्तमान अज्ञान और अन्धविश्वासका कारण एक ऐसी सरकार है जिसने उन्हें कुछ सिखाने की बात तो दूर रही, डेढ़ सौ वर्षोंमें इस बातकी कोशिश भी नहीं की कि उन्हें खाने को पर्याप्त भोजन मिल जाये। मुझे हिन्दू धर्मके साथ उतनी ही सहानुभूति है जितनी ईसाई धर्मके साथ, और अंग्रेजोंके मुकाबले भारतीय लोगोंके साथ मेरी सहानुभूति कहीं ज्यादा है।

स्वयं अंग्रेजोंके प्रति बहुत ही कम यूरोपीयोंके मनमें विरोध भाव है, लेकिन अधिकांश यूरोपीय अंग्रेजोंके उस पाखण्डका विरोध करते हैं जिसके चलते वे दूसरोंकी कीमतपर अपना घर भरते हैं और ऐसा करते हुए भी भ्रमवश यह मानते हैं कि वे मनुष्यजातिके उद्धारक हैं।

बहुत थोड़े भारतीय हैं जो अंग्रेजोंको या उनके शासनको पसन्द करते हैं। छावनियोंके अन्दर और उनके बाहर सर्वत्र यही स्थिति है। जिन लोगोंका कामकाज अंग्रेजोंके ऊपर निर्भर करता है वे अपने मनकी बात मनमें ही रखते हैं। लेकिन छावनियोंके बाहर रहनेवाला हर ऐसा व्यक्ति जो सरकारी पेंशन नहीं पाता है, खुशीसे अपने दिलकी बात कह देगा। जहाँतक सेनामें नियुक्त भारतीयोंकी, खास तौरसे कमिशन प्राप्त अफसरोंकी बात है, उनके दिलकी बातका पता कोई भी ऐसा व्यक्ति लगा सकता है जो इसके लिए काफी तकलीफ उठाने को तैयार हो। लेकिन इसकी सम्भावना कम ही है, क्योंकि एक औसत अंग्रेज इस देशमें तीस वर्ष रहने के बाद भी यहाँकी भाषा मुश्किलसे ही बोल पाता है। लेकिन यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है; और इसका जवाब केवल 'हाँ' या 'ना' नहीं है। भारतमें सभी प्रश्नोंके एकाधिक उत्तर होते हैं।

अन्तमें मैं यह जोर देकर कहना चाहूँगा कि यह रास्ता मैंने भली-भाँति सोच-विचार किये बिना नहीं अपनाया है, और न ही मैंने अपने कमांडिंग अफसरसे क्षणिक आवेशमें यह कहा था कि बेहतर यही होगा कि मैं सेना छोड़ दूँ। मैं अच्छे पदपर हूँ; मेरा वेतन मोटे तौरपर मेरी आवश्यकतासे दूना है, (इसका श्रेय सरकारकी वदान्यताको है जिसकी आवश्यकता मेरी अपेक्षा यहाँकी जनताको कहीं अधिक है जिसकी कीमतपर सरकार इतनी वदान्य है), इसके अतिरिक्त वह छात्रवृत्ति है जो मैंने रॉयल मिलिटरी कॉलेजमें थोड़ा परिश्रम करके प्राप्त की थी। अब मैं उसे छोड़ने के लिए तैयार हूँ, मैं यह व्यवसाय छोड़ने को तैयार हूँ जिसमें मेरी सदैव तीव्र दिलचस्पी रही है, और मैं उन सभी मित्रों और सम्बन्धियोंसे

सम्बन्ध विच्छेद करने के लिए तैयार हूँ जो इंग्लैंडमें हैं। 'तैयार हूँ' सही शब्द नहीं है। 'आशा करता हूँ' ज्यादा उपयुक्त होगा। ऐसा मैं 'बाजार' के प्रत्येक भारतीय-की सलाहके विरुद्ध कर रहा हूँ जो मुझे यही विश्वास दिलाता है कि यद्यपि वह ब्रिटिश सरकारके मुकाबले एक 'भारतीय' सरकार ज्यादा पसन्द करेगा, फिर भी इस मामलेमें उसका कुछ करने का इरादा नहीं है, क्योंकि उसकी रोजी-रोटी अंग्रेजों-के ऊपर निर्भर करती है। मुझे भली-भाँति पता है कि मैं कुछ भी क्यों न करूँ, उससे सागरमें, जिसमें इस समय एक अभूतपूर्व रक्त-मंथन चल रहा है, तनिक भी अन्तर नहीं आयेगा। लेकिन यदि इस पागल विश्वमें चल रहे आम संघर्षमें भाग लेना ही पड़े तो निश्चय ही कोई कापुरुष ही होगा जो अपने विश्वासके अनुसार एक सही उद्देश्यकी खातिर नहीं लड़ेगा, भले ही उसके पास कोई जमा-पूँजी न हो। भोजनकी अपेक्षा स्वतन्त्रता कहीं ज्यादा महत्त्व रखती है।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४०। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

परिशिष्ट ५

लॉर्ड लिनलिथगोका पत्र[1]

वाइसराय हाउस
नई दिल्ली
२४ अक्तूबर, १९४०

प्रिय श्री गांधी,

मैंने आपके २० अक्तूबरके पत्रपर यथासम्भव ध्यानपूर्वक विचार किया है और आपका २१ तारीखका तार देखा है। मैंने जो आगे पूछताछ की और जो कागजात आपने मुझे भेजे हैं उनसे १९ अक्तूबरके अपने तारमें व्यक्त किया गया मेरा यह विचार पुष्ट हो गया है कि केन्द्रीय सरकारने सेंसरके कोई आदेश जारी नहीं किये थे। किया यह गया था कि स्थानीय सम्पादकोंको यह सलाह दी गई थी कि वे, अपने ही हितको ध्यानमें रखते हुए, ऐसी हर सामग्रीको जाँचके लिए भेजें जो हानिकर रिपोर्ट हो सकती है और जिसके प्रकाशनके परिणामस्वरूप उन्हें भारत प्रतिरक्षा कानूनके अन्तर्गत दण्डका भागी होना पड़ सकता है। मुझे बताया गया है कि यह एक सामान्य कार्यप्रणाली है जिसके जरिये संदिग्ध मामलोंमें समाचार-पत्र सलाह प्राप्त कर सकते हैं।

२. आपको जो तरीका ठीक लगता है उस तरीकेसे एक सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाने की स्वतन्त्रताकी आपकी इच्छाको मैं बेशक समझ सकता हूँ और

१. देखिए पृ० १२३ और १४६।

मैं यह भी समझ सकता हूँ कि इस उद्देश्यसे आप प्रचारके सामान्य साधनोंके जरिये जनता तक अबाध रूपसे अपनी बात पहुँचाने की स्वतन्त्रता चाहते हैं। यद्यपि आप स्पष्टतः मुझसे यह विश्वास करने को कहते हैं कि यदि आपको ये सुविधाएँ नहीं मिलेंगी तो आपके द्वारा आरम्भ किया गया यह आन्दोलन ज्यादा खतरनाक सिद्ध होगा, तथापि मैं मानता हूँ कि स्वयं आपकी इच्छा यह है कि यह आन्दोलन अपने घोषित उद्देश्यमें — भारतके युद्ध-प्रयत्नोंमें कोई सहायता न देने के लिए लोगोंको राजी करने के उद्देश्यमें — सफलता प्राप्त करे। इसलिए मैं ऐसा मानता हूँ कि आपको दिये गये किसी भी अवसरका प्रयोग पूरी तरह इसी उद्देश्यके लिए किया जायेगा। आपने जो मुझसे ऐसी योजनामें सहयोग करने को कहा है, उसके विषयमें मैं आपको, जैसा कि मैंने सितम्बरके अन्तमें अपनी बातचीतके दौरान स्पष्ट किया था, एक बार फिर स्पष्ट कर दूँ कि इस देशमें सम्राटकी सरकारके प्रतिनिधिके नाते मुझे स्वयं और देशकी सुरक्षाके लिए जिम्मेदार भारत सरकार — दोनोंको ही एक सुनिश्चित कर्त्तव्यका पालन करना है और ऐसे किसी भी कार्यके विरुद्ध, जिसका *परिणाम युद्धके परिचालनकी दृष्टिसे हानिकर हो और जिससे कानूनका उल्लंघन* होता हो, कानूनी कार्रवाई की जायेगी, इस विषयमें मेरे द्वारा किसी प्रकारके सन्देहकी गुंजाइशको रहने दिया जाना छलपूर्ण ही होगा और मेरे अथवा भारत सरकारके ऊपर जो औपचारिक दायित्व है उनको मद्देनजर रखते हुए हमारे लिए ऐसे कार्यों-को चुपचाप स्वीकार कर लेना सम्भव नहीं होगा। युद्ध-परिचालनको प्रभावित करनेवाले एक विशेष प्रकारके भाषणों या कार्योंकी वह सीमा क्या हो जिसतक उन्हें नजरन्दाज किया जा सकता है, इस बारेमें आपके और सरकारके विचारोंके इस टकरावसे मुझे कितना दुःख है; आप जानते ही हैं। लेकिन अन्ततः एक ऐसी स्थिति आयेगी ही जहाँ उनपर, जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, इंग्लैंडकी तरह यहाँ और साम्राज्यमें सभी जगह कानूनी कार्रवाई करनी होगी।

हृदयसे आपका,
लिनलिथगो

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८५३ ए) से। सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

परिशिष्ट ६

सुभाषचन्द्र बोसका पत्र[1]

कलकत्ता
२३ दिसम्बर, १९४०

महादेवभाई जब मुझसे प्रेसिडेन्सी जेलमें मिले थे तब मैंने उनकी मार्फत आपको एक सन्देश भेजा था। मैंने उनसे आपको यह बताने का अनुरोध किया था कि यदि आप कोई आन्दोलन आरम्भ करेंगे तो हमारी सेवाएँ, वे जिस योग्य भी हैं, पूरी तरह आपको समर्पित होंगी। मैंने उनसे आपसे यह अनुरोध करने को भी कहा था कि आप बंगालमें विवादको समाप्त करने के लिए पहलकदमी करें, ताकि बंगाल प्रान्त अपनी पूरी ताकतसे आन्दोलनमें शामिल हो सके। मैंने सोचा था, चूँकि आप अधिनायक नियुक्त किये गये हैं, अतः आप आसानीसे कांग्रेसकी ओरसे इस मसलेको हाथमें ले सकते हैं।

उस समय मेरी हार्दिक आशा यह थी कि आप एक जन-आन्दोलन आरम्भ करेंगे, जैसा कि आपने १९२१, १९३० और १९३२ में किया था, हालाँकि महादेव-भाईने मुझे बताया था कि आप व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाकी बात सोच रहे हैं। आज, यह स्पष्ट है कि आप द्वारा आरम्भ किया गया आन्दोलन स्वतन्त्रताकी हमारी राष्ट्रीय माँगके मुद्देपर नहीं है। न ही यह आन्दोलन एक जन-आन्दोलन है। यदि सरकार युद्ध-विरोधी भाषणोंकी छूट दे दे तो मुझे लगता है कि आन्दोलन समाप्त हो जायेगा। इसके बावजूद हम इस तरहके आन्दोलनके साथ, हालाँकि इसका उद्देश्य और स्वरूप सीमित है, उस हदतक सहयोग करना चाहेंगे जहाँ-तक अपनी राजनीतिक स्थितिके साथ संगति रखते हुए हम वैसा कर सकते हैं। हम जानना चाहेंगे कि क्या आप हमारा सहयोग, वह जिस योग्य भी हो, स्वीकार करेंगे—और यदि हाँ, तो आप हमारे सहयोगके इस प्रस्तावके सिलसिलेमें हमसे क्या करने की इच्छा रखेंगे। हमारा यह प्रस्तावित सहयोग इस अर्थमें बिना शर्त है कि कांग्रेस हाइकमानके विरुद्ध हमारी कुछ भी शिकायतें क्यों न हों, वे हमारे रास्तेमें बाधक नहीं होंगी। अगर कभी हाइकमान हमारे साथ अनुचित और अन्यायपूर्ण व्यवहार करेगा तो हमें उसीके अनुसार जवाब देना होगा। हमें इस समय मौलाना अबुल कलाम आजादके मनमाने और उद्धत कार्यके विरुद्ध लड़ना पड़ सकता है। लेकिन इसके कारण हम देशके सामने इस समय जो ज्यादा बड़े सवाल हैं उनकी तरफसे आँखें बन्द नहीं रखेंगे, और उनपर आप हमारा पूरा-

१. देखिए पृ० २८७।

पूरा सहयोग प्राप्त कर सकते हैं, जिस हदतक कि वह हमारी राजनीतिक स्थिति-के साथ संगत है।

बंगालकी स्थितिके बारेमें मैंने महादेवभाईको बताया था कि यदि आप एकता चाहते हैं तो आपके वैसा कहने भरकी देर है, वह हो जायेगी। उसके लिए बस इतना ही जरूरी है कि आपके और मेरे भाई शरत बाबूके बीच बातचीत हो जाये। तबसे स्थिति और खराब हो गई है। आपने इस मामलेमें खामोश और उदासीन रहना ठीक समझा है। मौलाना उस पागलपनके रास्तेपर अन्धाधुन्ध बढ़े चले जा रहे हैं जिसे वह अनुशासनात्मक कार्रवाईका नाम देते हैं। मैं उसकी पर-वाह नहीं करता, क्योंकि अगर उनकी इच्छा है और वे चाहते हैं तो हम उन्हें वैसा ही जवाब देने को तैयार हैं। वे हमारी सार्वजनिक स्थितिपर तनिक भी असर नहीं डाल सकते। वे इस प्रान्तकी जनताके सामने अपनेको हास्यास्पद ही बना रहे हैं और इस तरह कांग्रेसके नामको धूलमें मिला रहे हैं। चूंकि मौलानाके कार्यको आपका मौन समर्थन प्राप्त लगता है, अतः मैं इस मामलेमें आपसे हस्तक्षेप करने को नहीं कह रहा हूँ। मैं केवल इतना चाहता हूँ कि हमपर थोपे गये इस दुर्भाग्यपूर्ण उपदृश्यके बावजूद हमें बड़े सवालोंपर परस्पर सहयोग करना चाहिए। जहाँतक हमारा सवाल है, हम सहयोग करने को उत्सुक हैं। पूरी ईमानदारीके साथ मैं आपको अपना सहयोग देने का प्रस्ताव कर रहा हूँ।

मैं यह पत्र अपने एक सम्बन्धीके हाथ भेज रहा हूँ जो नागपुर जा रहे हैं। मैंने उनको जवाबके लिए रुकने को कहा है।

आपका स्वास्थ्य कैसा है? अखबारोंमें फिर चिन्ताजनक खबरें आ रही हैं। मेरा स्वास्थ्य सुधर रहा है, लेकिन धीरे-धीरे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-२-१९४१

परिशिष्ट ७

सर जे० जी० लेथवेटका पत्र[1]

वाइसराय कैम्प, सुन्दरवन
४ जनवरी, १९४१

प्रिय श्री गांधी,

आपके ३० दिसम्बरके पत्रके लिए धन्यवाद। मैंने इसे वाइसराय महोदयके सामने पेश कर दिया है। अपने २७ दिसम्बरके पत्रके विषयमें मुझे यह कहना है कि उसमें मैंने केवल आपके सन्देशके लिए वाइसराय महोदयकी निजी सहायता और

१. देखिए पृ० २९१ और ३१३।

हस्तक्षेपकी आपकी प्रार्थनाके विषयमें लिखा था; उसमें लिखी बातोंको आप उन कारणोंकी विशद व्याख्या कतई न समझें जिनके चलते वह निर्णय लिया गया जिसकी आपने शिकायत की है, और यह बिलकुल स्पष्ट है कि उसमें वाइसराय महोदयकी निजी भावनाओंके बारेमें जो मंतव्य है उनका भारतमें प्रचारके प्रश्नसे कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता। तथापि यह बात आप साफ देख सकते हैं कि जहाँतक आपके द्वारा की गई उस व्यक्तिगत प्रार्थनाका प्रश्न है, यदि हम अन्य सम्बन्धित कारणोंको छोड़ भी दें तो जिन कारणोंकी चर्चा मैंने अपने पत्रमें की थी महज उन्हीं कारणों-वश किसी कार्यकारी सरकारके प्रधानके लिए, केवल व्यक्तिगत आधारपर, एक ऐसे दस्तावेजके सम्प्रेषणके लिए विशेष कदम उठाने का सवाल ही नहीं पैदा होता जिसके बारेमें वे इसके सिवा कुछ मान ही नहीं सकते कि उसमें प्रेषितीके सामने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथ्योंको गलत ढंगसे प्रस्तुत किया गया है।

वाइसराय महोदयने मुझसे यह भी लिखने को कहा है कि चूँकि इस पत्र-व्यवहार-को, जो बिलकुल व्यक्तिगत स्तरपर शुरू हुआ था, आपका ३० दिसम्बरका पत्र शासकीय दायरेमें खींच ले जाता है, और चूँकि उनकी दृष्टिमें यह बात महत्त्व रखती है कि व्यक्तिगत और शासकीय दायरोंको परस्पर मिलाया न जाये, इसलिए उनको लगता है कि गलतफहमी टालने की दृष्टिसे उनके सामने बहुत ही अनिच्छापूर्वक यह तय करने के सिवा दूसरा कोई चारा नहीं है कि मौजूदा मामलेमें संचारके वर्तमान माध्यमका उपयोग अब आगे न किया जाये।

लेकिन उन्होंने यह भी लिखने को कहा है कि आपके पत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें व्यक्त आपके रवैयेकी वह कद्र करते हैं।

हृदयसे आपका,
जे० जी० लेथवेट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे: लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य: राष्ट्रीय अभि-लेखागार

परिशिष्ट ८

सर जे० जी० लेथवेटका पत्र[1]

वाइसराय हाउस, नई दिल्ली
२८ जनवरी, १९४१

प्रिय श्री गांधी,

आपके १६ जनवरीके पत्रके लिए अनेक धन्यवाद। उसे मैंने वाइसराय महोदयके सामने पेश कर दिया है। उन्हें आपका फैसला देखकर अत्यन्त खुशी हुई है। उन्होंने कहा है कि मैं आपको बता दूं कि अधिकारीवर्गको परेशानीमें डालने के बारेमें आपने अपने पत्रमें अपने रवैयेपर जो बल दिया है उसकी वे बहुत कद्र करते हैं।

मैं देखता हूँ कि आपके पत्रके साथ संलग्न वक्तव्य समाचारपत्रोंमें किस कारण नहीं छप सके, इस बारेमें आपको कुछ गलतफहमी हुई है। भारतीय समाचारपत्रोंमें प्रकाशित होनेवाली किसी सामग्रीपर सेंसर लगाने जैसी कोई चीज है ही नहीं, और न आपके दोनों वक्तव्योंके बारेमें कोई निषेधाज्ञा ही जारी की गई है। तथापि आपत्तिजनक खबरोंके प्रकाशनके सम्बन्धमें भारत प्रतिरक्षा कानूनके प्रावधानोंको देखते हुए जिन समाचारोंके विषयमें शक हो, उन्हें समाचार-एजेंसियाँ और सम्पादक चाहें तो स्वेच्छासे सलाहके लिए भेज सकते हैं। ऐसे मामलोंमें सलाह देते समय प्रेस-सलाहकारोंके सामने एक यही विचारणीय सवाल रहता है कि प्रस्तुत सामग्रीमें कोई ऐसी आपत्तिजनक बात तो नहीं है जिसके प्रकाशनके कारण सम्बन्धित व्यक्तिके ऊपर भारत प्रतिरक्षा कानूनके अन्तर्गत अभियोग चल सकता हो। उदाहरणार्थ आप देखेंगे कि कांग्रेस प्रतिज्ञा-पत्र तथा स्वतन्त्रता दिवसके बारेमें आपके अपने वक्तव्य[2] दोनोंको यद्यपि प्रेस-सलाहकारोंके पास इसी प्रकार सलाहके लिए भेजा गया था, तथापि उनके प्रकाशनकी स्वीकृति दे दी गई, क्योंकि उनका युद्ध-परिचालनमें बाधा डालने के लिए किये जानेवाले आन्दोलनसे कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं था। दूसरी ओर, मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि आपके पत्रके साथ संलग्न दोनों वक्तव्य[3] इसी प्रकारके थे। यद्यपि इनके काफी अंश कमसे-कम युद्धकी दृष्टिसे बिना किसी आपत्तिके प्रकाशित किये जा सकते थे, तथापि दोनों वक्तव्योंमें कई अंश ऐसे थे जो स्पष्टतया इस उद्देश्यसे लिखे गये थे या इस बातकी-सम्भावना थी कि उनसे आपके सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें लगे लोगोंको प्रोत्साहन या निर्देश प्राप्त हों। आज इस आन्दोलनका जो

१. देखिए पृ० ३१४।
२. देखिए पृ० ३०४-५।
३. देखिए पृ० ३०२-३ और ३०६-८।

स्वरूप है, उसमें जनताके बीच ऐसे नारे लगना शामिल है जिनका उद्देश्य जनताको युद्ध-प्रयत्नोंमें शामिल होने से मना करना है। भारत प्रतिरक्षा कानूनके शब्दोंमें इनका उद्देश्य जनता अथवा उसके किसी वर्गके आचार-विचारपर इस तरह प्रभाव डालना है कि उससे ब्रिटिश भारतकी प्रतिरक्षाको या प्रभावपूर्ण युद्ध-परिचालनको नुकसान पहुँच सकता है।" ऐसे अंशोंके रहते इन वक्तव्योंको सम्बन्धित सम्पादक या प्रेस-एजेन्सीको अभियोगके खतरेमें डाले विना प्रकाशित नहीं किया जा सकता था। प्रेस-सलाहकारोंने समाचारपत्रोंको इन्हें प्रकाशित न करने की सलाह देकर स्पष्ट रूपसे मात्र अपना कर्त्तव्य पूरा किया था। उनकी सलाह मानने के लिए बेशक समाचारपत्र बाध्य नहीं थे, लेकिन मेरे खयालसे जिस खतरेके प्रति उन्हें सचेत कर दिया गया था, उसी खतरेको उठाने की आप उनसे आशा नहीं रख सकते। अतः आप देखेंगे कि आपकी ओरसे जब ऐसे वक्तव्य प्रकाशनार्थ उन्हें प्राप्त होते हैं, तब वे कैसी दुविधामें पड़ जाते हैं। वाइसराय महोदयको विश्वास है कि आप यह समझ सकेंगे कि किसी भी देशमें प्रेसकी आजादीका अर्थ अभियोग लगे बिना कुछ भी छापने का अधिकार नहीं है और न हो सकता है, विशेषकर इतनी भारी आपातस्थितिमें तो बिलकुल नहीं हो सकता। प्रेस-सलाहकारोंका प्रेसकी आजादीमें हस्तक्षेप किये बिना जो सलाह उन्होंने दी वैसी सलाह देना और समाचारपत्रोंका उस सलाहको स्वीकार करना पूरी तरह उचित था।

हृदयसे आपका,
जे० जी० लेथवेट

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट ९

तेजबहादुर सप्रूका पत्र[1]

२८ जनवरी, १९४१

प्रिय महात्माजी,

आपका २५ जनवरीका पत्र मुझे कल मिला, उसके लिए धन्यवाद। 'ट्वेन्टियेथ सेन्चुरी' में प्रकाशित मेरे लेखकी ओर आपका ध्यान गया, यह जानकर मुझे खुशी हुई।

समाचारपत्रोंमें मैंने पढ़ा था कि आप श्री जिन्नासे मिलने बम्बई गये थे, लेकिन आप दोनोंके बीच वास्तवमें क्या बातचीत हुई, मुझे मालूम नहीं। गत ६ या ७ अगस्तको बम्बईमें डॉ० बर्गरके दवाखानेमें महज संयोगवश मेरी मुलाकात श्री जिन्नासे हुई थी। वे मेरे पास आये और अपने साथ चाय पीने के लिए आमन्त्रित

१. देखिए पृ० ३२४ और ३३९।

किया। तदनुसार मैं अगले दिन उनके पास गया और लगभग डेढ़ घंटे तक मेरी उनके साथ बातचीत हुई। दिल्लीमें आप दोनोंके बीच जो बातचीत हुई थी, और वाइसरायकी उपस्थितिमें आप दोनोंके बीच जो मतभेद उठे थे, उसके बारेमें उन्होंने मुझे बताया। उसपर से मैंने तो यही समझा कि यद्यपि कांग्रेसकी कुछ राजनीतिक माँगों पर आप दोनोंके बीच आम बातचीत हुई थी, परन्तु साम्प्रदायिक मसला उस बातचीतका विशेष मुद्दा नहीं था।

आज्ञा हो तो मैं कहूँगा कि आपका यह कहना बिलकुल सही है कि हमें अपने घरेलू झंझटोंका निपटारा स्वयं ही करना है और इस बातका विचार किये बिना करना है कि हमारी संयुक्त माँगोंको अंग्रेज स्वीकार करेंगे या नहीं। मेरा तो हमेशासे यही विचार रहा है। मुझे खेद है कि साम्प्रदायिक स्थितिको एक लम्बे अरसेसे बिगड़ने और बदसे बदतर होते जाने दिया गया है और मेरा दृढ़ विश्वास है कि मात्र यही एक प्रश्न है जिसपर हममें से प्रत्येकको (और आपके प्रभावको देखते हुए विशेषकर आपको) ध्यान देना है। क्योंकि मुझे भय है कि जबतक हमारे बीच ये मतभेद कायम रहेंगे तबतक वास्तविक स्वशासनकी उपलब्धि कठिन होगी, और उसे बरकरार रखना तो और भी दुष्कर होगा।

क्रिसमस सप्ताहके दौरान प्रान्तीय मुस्लिम लीगके अधिवेशनके सिलसिलेमें नवाब मुहम्मद इस्माइल और नवाब लियाकत अली खाँ यहाँ आये थे। नवाब मुहम्मद इस्माइल, जो मेरे पुराने मित्र हैं, मुझसे मिलने आये, और मैं नवाब लियाकत अली खाँसे एक ऐसे व्यक्तिके घरपर मिला जो हम दोनोंके मित्र हैं। हमने खुलकर और सौहार्दपूर्वक बातचीत की और मेरे दिमागपर यह छाप पड़ी कि यद्यपि समझौतेका कार्य काफी कठिन होगा, फिर भी हताश होने की जरूरत नहीं है। पाकिस्तानके प्रश्नपर मैंने श्री जिन्नाके साथ कोई बातचीत नहीं की। मैं समझता हूँ कि मुस्लिम लीगने अपने बहुत सारे राजनीतिक और संवैधानिक विचारोंको समाहित करनेवाला एक सुविधाजनक शब्द 'पाकिस्तान' अपना लिया है। यदि इसका अर्थ भारतका विभाजन है तो मुझे यह कहनेमें कोई हिचक नहीं कि मैं इसका कट्टर विरोधी हूँ। परन्तु यदि इसका अर्थ कुछ-एक राजनीतिक विचारोंपर पुनर्विचार तथा कतिपय संवैधानिक प्रावधानोंकी पुनर्व्यवस्था करना है तो उनपर विचार-विमर्शसे इनकार नहीं किया जा सकता। परन्तु हर हालतमें, किसी भी पक्षके लिए यह मुनासिब नहीं होगा कि वह साम्प्रदायिक समझौतेके उद्देश्यसे शुरू की जानेवाली बातचीतके लिए दूसरे पक्षपर किसी प्रकारकी पूर्व शर्त लादे। मुझे तो ऐसा कोई कारण नहीं दिखता जिसकी वजहसे श्री जिन्ना आपसे मिलने से इनकार करें। यदि वे ऐसा रुख अख्तियार करते हैं तो उनका आपसे मिलने से इनकार करना न केवल उनकी ओरसे अशिष्टताका प्रदर्शन करना ही होगा बल्कि वे निश्चित रूपसे दोषी भी साबित होंगे।

आप अपने पत्रमें लिखते हैं कि "वे तबतक कोई समझौता नहीं चाहते जबतक कि वे लीगकी स्थिति इतनी सुदृढ़ न बना लें कि वे शासकों समेत सबपर अपनी शर्तें थोप सकें" और कि आपका "कई बार उन्हें पत्र लिखने का

मन तो करता है किन्तु कलम उठाने तक साहस छूट जाता है"। फिर भी आपमें अपार साहस है और आप इतने महान हैं कि आप तुच्छ औपचारिकताओंसे ऊपर उठ सकते हैं। मुझे कोई कारण नहीं दिखता कि आप उन्हें एक सर्वथा भद्रतापूर्ण पत्र क्यों नहीं लिखें — जैसा कि आप हमेशा ही करते हैं — जिसमें आप उन्हें बतायें कि देशके हितकी खातिर आप उनसे मिलकर उनके साथ सारी परिस्थिति-पर विचार-विमर्श करना चाहेंगे, ताकि यह खोजा जा सके कि क्या कोई ऐसा सम्मान-जनक समझौता सम्भव है जो सभी सम्बन्धित पक्षोंके लिए सन्तोषप्रद हो। यदि वे सन्तोषजनक प्रतिक्रिया दिखाते हैं तो मेरे खयालसे आपको आगे बढ़ना चाहिए। उससे आपकी, कांग्रेसकी तथा आम हिन्दुओंकी स्थिति ऊँची और मजबूत होगी। यदि उन्होंने आपके अनुरोधपर कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाई अथवा कोई आक्रामक रुख अपनाया तो इससे उन्हें तथा जिस दलका वे प्रतिनिधित्व करते हैं उसको नुकसान पहुँचे बिना नहीं रह सकता। मेरा अपना विश्वास तो यह है कि दोनों पक्ष एक-दूसरेसे जितना दूर होंगे उतनी अधिक गलतफहमियाँ पैदा होंगी और समझौतेका काम उतना ही अधिक कठिन हो जायेगा।

फिर, आप अपने पत्रमें लिखते हैं: "लेकिन यदि आपको भरोसा है तो आप किसी दूसरेके सुझावकी प्रतीक्षा किये बिना स्वयं उनसे क्यों नहीं मिल लेते?" व्यक्तिगत रूपसे उनसे या किसी दूसरे व्यक्तिसे मिलने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन अपनी स्थितिके बारेमें जिस वास्तविक कठिनाईका मैं अनुभव कर रहा हूँ वह यह है कि मैं कांग्रेस अथवा हिन्दुओंका प्रतिनिधित्व करने का दावा नहीं कर सकता। मैं उन्हें यह सुझाव देते हुए लिख सकता हूँ (और मैं ऐसा करने के लिए बिलकुल तैयार हूँ) कि उन्हें आपसे मिलना चाहिए, अथवा यदि आप उन्हें यह लिखें कि आप उनसे मिलना चाहते हैं तो उन्हें आपका स्वागत करना चाहिए तथा आपके साथ विचार-विमर्श करना चाहिए। लेकिन आपकी अनुमतिके बिना मैं उन्हें यह नहीं लिख सकता। यदि आप मुझे अनुमति दें तो मैं नवाब मुहम्मद इस्माइलको भी लिख सकता हूँ जिनके बारेमें मैं जानता हूँ कि वे एक बहुत नेक आदमी हैं और मेरा विश्वास है कि वे शान्ति और मेल-जोलका सच्चे दिलसे स्वागत करेंगे। आप निश्चिन्त रहें कि मैं चाहे श्री जिन्नाको लिखूँ या नवाब इस्माइलको अथवा किसी और को, मैं आपकी अथवा किसी दूसरे व्यक्तिकी ओरसे किसी प्रकारका कोई वादा नहीं करूँगा। मैं तो बातचीत शुरू करने के लिए सुझाव ही दे सकता हूँ। अबतक मैंने श्री जिन्ना अथवा किसी दूसरे मुसलमान मित्रको इस विषयपर किसी भी प्रकारका कोई पत्र नहीं लिखा है, तथा गत डेढ़ वर्षोंमें वाइसराय अथवा दिल्ली या शिमला-स्थित किसी भी अंग्रेज अधिकारीको पत्र लिखने की बात भी सावधानीके साथ टालता आया हूँ। मैं वाइसरायसे सितम्बर १९३९ में आखिरी बार मिला था। अपने इन विचारोंको मद्देनजर रखते हुए मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जिन मतभेदोंकी वजहसे आज एक दल दूसरे दलसे तथा राजनीतिज्ञोंका एक वर्ग दूसरे वर्गसे अलग हो गया है, उन मतभेदोंके रहते मेरे उनसे मिलने या उन्हें लिखने

से कोई लाभ नहीं होगा। इसी विश्वासकी वजहसे गत महीने मैंने समाचारपत्रोंको दिये अपने वक्तव्य तथा 'ट्वेन्टियेथ सेन्चुरी' में लिखे अपने लेख, दोनोंमें साम्प्रदायिक समझौते और श्री जिन्नाके साथ आपकी मुलाकातकी वांछनीयतापर जोर दिया था। खुद मैं ब्रिटिश नीतिकी इस आम आलोचनाको कोई खास महत्त्व नहीं देता कि भारत मन्त्री और वाइसरायने अल्पसंख्यकोंको प्रतिनिषेध (वीटो)का अधिकार दे दिया है। उन्होंने ऐसा किया हो अथवा न किया हो, यह जिम्मेदारी हमारी है कि हम अपने घरको ठीक करें और यदि हमने एक बार ऐसा कर लिया तो मेरे खयालसे हमें ऐसी शक्ति प्राप्त हो जायेगी जिसका दिल्ली, शिमला अथवा ह्वाइटहॉलके किसी भी व्यक्तिके लिए राजनीतिक आधारपर विरोध करना असम्भव हो जायेगा।

यह मेरा दुर्भाग्य है कि कुछ राजनीतिक प्रश्नोंपर अनेक देशवासियोंसे मेरा मतभेद है और मेरी बहुत दृढ़ मान्यताएँ हैं, लेकिन साम्प्रदायिक समझौतेका मार्ग प्रशस्त करने के लिए मैं यथाशक्ति कुछ भी करने के लिए तैयार हूँ, क्योंकि उसे मैं इस या उस राजनीतिक सिद्धान्तकी कोरी शास्त्रीय विवेचनाकी अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। संक्षेपमें, यदि आप अनुमति दें तो श्री जिन्ना तथा कुछ अन्य मुसलमान मित्रोंको पत्र लिखने के लिए मैं बिलकुल तैयार हूँ। कोई बाहरी व्यक्ति या दोनों सम्प्रदायोंका कोई नेकनीयत मित्र एक सम्मेलन आयोजित करने के लिए पहल करे, इसके बजाय मैं यह चाहूँगा कि उपयुक्त समयपर आप खुद ऐसा सम्मेलन बुलाने के लिए पहल करें। कुछ मित्रोंने इस बारेमें मुझे लिखा है, लेकिन अभी तक मुझे इस बातका यकीन नहीं हो पाया है कि किसीके व्यक्तिगत रूपसे ऐसा सम्मेलन बुलाने अथवा वाइसरायसे मिलने से कोई लाभ होगा। यह काम तो आप तथा श्री जिन्नापर ही छोड़ दिया जाना चाहिए, और मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि इस विषयमें आप पहल करें तो अच्छा परिणाम निकल सकता है।

सादर,

हृदयसे आपका,

महात्मा मो० क० गांधी
सेवाग्राम
वर्धा

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२७८) से। सौजन्य: नेशनल लाइब्रेरी

परिशिष्ट १०

तेजबहादुर सप्रूका पत्र[1]

१२ फरवरी, १९४१

प्रिय महात्माजी,

मुझे आपका ९ फरवरीका पत्र कल मिला। मुझे आपसे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि ६ फरवरीके मेरे पिछले पत्रने आपको कुछ क्षुब्ध कर दिया था। मुझे तो कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता कि ऐसा क्यों होना चाहिए था। . . .

अपने १ फरवरीके पत्रमें आप लिखते हैं: "कायदे-आजम जिन्नाका कहना है कि मैं उनसे एक हिन्दूकी हैसियतसे केवल हिन्दुओंकी तरफसे ही बात कर सकता हूँ। मैं यह नहीं कर सकता। यदि मैं उन्हें लिखूं कि मैं उनसे मिलना चाहता हूँ तो वे मुझसे भेंट करना अस्वीकार नहीं करेंगे। लेकिन इसका परिणाम मुझे मालूम है।" इस समय जैसी भावना है उसे देखते हुए यह बात बिलकुल समझमें आनेवाली है कि वे आपको रास्तेमें सबसे बड़ा रोड़ा मानें। उस पत्रके अन्तमें आपने मुझे लिखा है: "लेकिन आप अपने ढंगसे जिस किसीके सहयोगसे इस मामलेमें प्रयास करना योग्य समझें उसके सहयोगसे प्रयास अवश्य करें।" इस वाक्यसे मुझे यह विश्वास हो गया कि मैं अपने ढंगसे जिन्नाको पत्र लिखकर यह सुझाव देनेके लिए स्वतन्त्र हूँ कि उन्हें आपसे मुलाकात करनी चाहिए।

जिन्नाको लिखे अपने पत्रकी एक नकल मैं यहाँ संलग्न कर रहा हूँ। उससे आपको पता चलेगा कि अन्य बातोंके अलावा मैंने उन्हें यह लिखा है: (क) "मैं न इस पार्टीका प्रतिनिधित्व करता हूँ और न उस पार्टीका। न मैं शर्तें पेश कर सकता हूँ और न ही स्वीकार कर सकता हूँ। मैं आपसे व्यक्तिगत रूपमें अपील भर कर सकता हूँ—एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे जो पक्के तौरपर और सचाई-के साथ यह मानता है कि मुसलमान भारतका अभिन्न अंग हैं और अन्य जातियोंके साथ उनके स्वैच्छिक सहयोगका असर अनिवार्यतः इस बातपर पड़ेगा कि देश किस रूपमें, किस हदतक और किस तेजीसे प्रगति करता है।" इसके बाद मैंने उन्हें लिखा: (ख) "मैं सोचता हूँ कि बातचीतसे, अगर एक घिसा-पिटा मुहावरा इस्तेमाल करनेकी इजाजत दें तो, खुले दिलसे बातचीत करनेसे, हो सकता है कि कुछ सन्तोषजनक परिणाम निकल आयें।"

उन्हें मैंने जो सुझाव दिये हैं वे इस प्रकार हैं: "अतः मैं अपनी ओरसे और किसी दूसरे आदमी या किसी दूसरी पार्टीको अपने विचारों या सुझावोंसे बाँधे

१. देखिए पृ० ३५० और ३६९। यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

बिना यह सुझाव देने का साहस करता हूँ कि (१) आपको पहले तो श्री गांधीसे मुलाकातके लिए सहमत हो जाना चाहिए और उसके बाद निजी बातचीतका दायरा दूसरे लोगोंतक भी बढ़ाया जा सकता है। (२) उसके बाद यदि आप और अन्य नेता ऐसा समझें कि एक संयुक्त सम्मेलन बुलाने से देशके सर्वोत्तम हितोंकी सेवा होगी तो आप सब उस दिशामें आवश्यक कदम उठा सकते हैं। यदि मेरे सुझाव-पर आपका जवाब यह है कि आप श्री गांधीसे मिलने और बातचीत करने को तैयार हैं तो मैं उनको पत्र लिखकर उनसे आग्रह करूँगा कि वे आपसे बम्बईमें या अन्य जो भी स्थान आपको सुविधाजनक लगे वहाँ मिल लें। मुझे पूरी आशा है कि वे आपसे बम्बई या अन्य किसी सुविधाजनक स्थानपर मिलने और विचार-विमर्श करने के लिए राजी हो जायेंगे।"

सारी स्थितिपर ध्यानपूर्वक विचार करने के बाद मुझे श्री जिन्नाको लिखे अपने पत्रपर खेद अनुभव करने का कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता। मेरे लिए उनसे इस प्रकारका कोई आश्वासन माँगना तो युक्तियुक्त नहीं था कि जब आप लोगोंकी मुलाकात होगी तो वे आपके साथ किसी समझौतेपर अवश्य पहुँच जायेंगे। समझौतेका आधार क्या हो, यह तो आपके, उनके और अन्य लोगोंके तय करने की चीज है। लेकिन मेरी रायमें किसी पक्षके लिए यह उचित नहीं होगा कि वह दूसरेके ऊपर ऐसी कोई पूर्व शर्त लगाये या ऐसा कोई आश्वासन माँगे।

मैं कतई यह नहीं चाहता कि अगर किसी और तरीकेपर विचार या अमल किया जा रहा है तो उनको लिखा मेरा पत्र उसमें बाधा डाले। इसीलिए मैंने इस मामलेसे बिलकुल हाथ खींच लेने का फैसला किया है। यदि श्री जिन्ना मुझे कोई पत्र लिखते हैं और यदि वह सन्तोषजनक हुआ तो मैं उसकी सूचना आपको दे दूँगा, और उसके बारेमें आप क्या निर्णय करते हैं यह आपके ऊपर छोड़ दूँगा। लेकिन मुझे लिखे आपके पिछले पत्रको ध्यानमें रखते हुए, जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, मैं इस मामलेको और आगे नहीं बढ़ाऊँगा।

अभिवादन सहित,

हृदयसे आपका,

महात्मा मो० क० गांधी
सेवाग्राम
वर्धा

संलग्न

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२८३) से। सौजन्य: नेशनल लाइब्रेरी

परिशिष्ट ११

'पार्टिंग ऑफ द वेज़' से उद्धृत अंश[1]

भारतके दिलोदिमागमें एक द्वंद्व चल रहा था। फासिज्म और नाजीवादके प्रति जनतामें भारी नफरत थी और उन्हें विजयी देखने की लोगोंको कोई इच्छा न थी। यदि भारतको किसी प्रकार आश्वस्त कराया जा सकता कि वर्त्तमान युद्ध एक नूतन विश्व-व्यवस्थाके लिए, वास्तविक स्वतन्त्रताके लिए लड़ा जा रहा है, तो भारत सचमुच अपना सारा प्रभाव और शक्ति युद्धमें झोंक देता। लेकिन साम्राज्यवादसे हमारी जान-पहचान पुरानी थी, बहुत पुरानी, और हम दोनोंमें पीढ़ियोंसे सम्पर्क चला आ रहा था। हम एक-दूसरेको जानते थे, एक-दूसरेको शककी निगाहसे देखते थे और एक-दूसरेसे पूरी-पूरी नफरत करते थे। पृष्ठभूमिके रूपमें हमारे पीछे विद्वेष, शोषण, कटुता और कभी न पूरे होनेवाले वायदोंका एक सौ अस्सी वर्ष पुराना इतिहास था, जिसके दौरान विध्वंसकारी तथा प्रतिक्रियावादी गतिविधियोंको उकसाया गया और भारतकी राष्ट्रीय एकताको नष्ट करने का प्रयास किया गया। हमारे लिए इन जबरदस्त बाधाओंको पार करना या मनमें पड़ गई गाँठोंको निकाल फेंकना कोई आसान बात न थी। फिर भी, हमने कहा कि हम ऐसा करेंगे। लेकिन जनतामें एक ऐसा जबरदस्त किन्तु सुखकर मनोवेग पैदा किये बिना, जिससे देशकी हवा ही सहसा बदल जाये और जनतामें व्याप्त भय तथा मनकी गाँठें समाप्त हो जायें, हम उसकी कोशिश भी नहीं कर सकते थे। ऐसा सुखद मनोवेग तभी पैदा किया जा सकता था जब स्पष्ट रूपसे स्वतन्त्रताकी घोषणा कर दी जाती और प्रशासनमें जनताकी इच्छाको क्रियान्वित करने के लिए तत्काल कदम उठाये जाते। जबतक ऐसा नहीं हो जाता, तबतक भारतका कोई भी व्यक्ति या समूह यहाँके लोगोंको युद्धमें स्वेच्छापूर्वक सहयोग देने के लिए प्रेरित नहीं कर सकता। आज कोई भी युद्ध लड़ने के लिए जन-समर्थन प्राप्त करना जरूरी है, यहाँतक कि निरंकुश शासनवाले देशोंमें भी सतत प्रचार करके जनताको उत्तेजित किया जाता है। लोकव्यापी दुर्भावना या उदासीनताका वातावरण होने पर पेशेवर सेना कोई युद्ध कारगर तरीकेसे नहीं लड़ सकती। अतः भारतकी प्रतिरक्षाका संगठन करने या युद्ध-प्रयत्नमें भारतके शामिल होने के अपेक्षाकृत संकुचित दृष्टिकोणसे भी यहाँ एक लोकप्रिय प्रतिनिधि सरकारका होना जरूरी था। साम्राज्यवाद जोर-जबरदस्ती कर सकता है; लेकिन वह जनताका समर्थन और उसकी सद्भावना हासिल नहीं कर सकता।

१. देखिए पृ० ४१२।

मैं इस बातको दोहराता हूँ कि यह कहना गलत है कि हमारे रास्ते अलग हो जाने की कोई नई बात हुई है, क्योंकि हमारे रास्ते कभी एक थे ही नहीं। लेकिन ब्रिटिश सरकारकी इस घोषणाने उस कमज़ोर धागेको भी अन्तिम रूपसे तोड़ दिया है जिससे हमारे मानस अभीतक जुड़े हुए थे और इस बातकी तमाम उम्मीदोंपर पानी फेर दिया है कि हम आगे कभी भी एक साथ कदम मिलाकर चलेंगे। मुझे इस बातका दुःख है, क्योंकि ब्रिटिश साम्राज्यवाद और सभी साम्राज्यवादोंसे मेरी शत्रुता होने के बावजूद मैंने इंग्लैंडकी बहुत-सी खूबियोंको प्यार किया है और मेरी इच्छा थी कि भारत तथा इंग्लैंडके बीच रेशम-जैसे कोमल भावनात्मक बन्धन बरकरार रखे जायें। ये भावनात्मक बन्धन तभी बने रह सकते हैं जब हम आजाद हों। भारतके लिए स्वतन्त्रता बेशक मैंने भारतके लिए ही चाही थी, लेकिन मैं इसे इंग्लैंडके हितार्थ भी चाहता था। हमारी वह आशा चकनाचूर हो गई है, और लगता है नियतिने हमारे भविष्यको किसी दूसरे ही ढंगसे गढ़ दिया है। सहयोगका रास्ता हमारे लिए नहीं है; सौ वर्ष पुरानी शत्रुता जारी रहेगी और भावी संघर्षोंमें बढ़ती ही जायेगी। और कभी-न-कभी जब विच्छेद होगा, जो होगा जरूर, तो मित्रोंके रूपमें नहीं बल्कि शत्रुओंके रूपमें होगा।

ब्रिटिश सरकार कहती है वह एक महत्त्वपूर्ण वर्गपर कोई ऐसी शासन प्रणाली थोपने के लिए जोर-जबरदस्ती नहीं करेगी जिसे वह वर्ग नापसन्द करता है। इसका विकल्प निश्चय ही यह है कि जिन अन्य वर्गोंको वह शासन-प्रणाली पसन्द है, उनपर वह जोर-जबरदस्ती करेगी। भारतमें ब्रिटिश सरकारका कार्य वास्तवमें क्या रहा है, और आज क्या है? उसका काम रहा है, अपना नियन्त्रण और अपनी विशेष स्थिति कायम रखने के लिए भारतकी समूची जनतापर, जनताके हर वर्गपर जोर-जबरदस्ती करना। ब्रिटिश उद्योगोंकी खातिर भारतीय उद्योगोंका दमन करना। एक ऐसी आधिपत्य-सेना तैयार रखना जिसका मुख्य कार्य भारतीय जनतापर दबाव डालना है। भारतीय नरेशोंकी हस्ती कायम रखने के लिए उनकी प्रजाको अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश करना। यह सुनकर बड़ा अचरज होता है कि ब्रिटिश सरकार जोर-जबरदस्ती नहीं करना चाहती। वह भारतमें इसके अलावा करती ही क्या है?

भारतका लक्ष्य है, एक ऐसे एकताबद्ध, स्वतन्त्र प्रजातान्त्रिक देशकी स्थापना जो एक विश्व-संघमें अन्य स्वतन्त्र राष्ट्रोंके साथ घनिष्ठ रूपसे सम्बद्ध हो। हम स्वाधीनता चाहते हैं, लेकिन पुराने ढंगकी संकुचित और एकान्तिक स्वाधीनता नहीं चाहते। हमारा विश्वास है कि अलग-थलग और एक-दूसरेसे लड़ते रहनेवाले राष्ट्रवादी राज्योंका जमाना लद चुका है।

[अंग्रेजीसे]
पार्टिंग ऑफ द वेज

परिशिष्ट १२

महादेव देसाईका पत्र डेज्मंड यंगको[1]

सेवाग्राम, वर्धा
२२ मार्च, १९४१

प्रिय श्री यंग,

'हरिजन' का प्रकाशन फिर शुरू करने के विषयमें आपके साथ मेरा जो पत्र-व्यवहार हुआ था, उसके बारेमें वर्धा लौटने पर गांधीजी के साथ मेरी बातचीत हुई है। श्री श्रीनिवासन भी यहीं थे और वह गांधीजी से उसका प्रकाशन फिर शुरू करने का आग्रह करने के लिए ही विशेष रूपसे आये थे। थोड़ा विचार-विमर्श करने के बाद ही मैं यह पत्र आपको लिख रहा हूँ।

हालाँकि हमारे पत्र-व्यवहारमें ऐसा कुछ नहीं है जिससे हमें 'हरिजन' पुनः चालू करने के लिए प्रोत्साहन मिले, फिर भी इसमें कोई शक नहीं कि मेरे और आपके बीच तथा सर रिचर्ड टॉटेनहम और श्री श्रीनिवासनके बीच हुई अनौपचारिक बातचीतमें काफी कुछ ऐसा था जिससे एक अनुकूल फैसला करने में मदद मिल सकती थी। और सबसे बड़ी बात यह है कि श्री श्रीनिवासन तथा स्थायी समितिके अनेक सदस्योंकी, और आम पाठकोंकी भी आग्रहपूर्ण इच्छा है, जिसकी उपेक्षा सम्भवतः गांधीजी नहीं कर सकते। अतः वे इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि इतने व्यापक रूपसे प्रकट की गई इच्छाके अनुसार कार्य न करना यदि अनुचित नहीं तो अशिष्टतापूर्ण अवश्य होगा। अतः हम 'हरिजन' का प्रथम अंक २९ मार्चको निकालने का इरादा रखते हैं।

लेकिन ऐसा करने से पूर्व आपको पुनः यह बता देना मेरा कर्त्तव्य है कि गांधीजी और मैं, हम दोनों ही सत्याग्रह-आन्दोलनके साथ अपनेको पूर्णतया अभिन्न समझते हैं और हमारे इस तादात्म्यका रंग और उसकी छाप 'हरिजन' के हमारे सम्पादन-कार्यपर पड़े बिना नहीं रह सकते, हालाँकि उसका एकमात्र उद्देश्य इस संघर्ष तथा रक्तपात भरे जगतमें अहिंसाकी भावनाको जीवित रखना होगा। अतः यदि आप यह महसूस करते हों कि पत्रका प्रकाशन पुनः जारी न करना ही हमारे लिए बेहतर होगा, तो आप केवल एक तार भेज दें। मैं उसका गलत अर्थ नहीं लगाऊँगा, और चूँकि मैंने पत्रका प्रकाशन फिरसे आरम्भ करने के निर्णयकी

१. देखिए पृ० ४१६।

अभीतक घोषणा नहीं की है, इसलिए मैं सार्वजनिक रूपसे भी इस बारेमें कुछ नहीं कहूँगा।

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२९३) से

परिशिष्ट १३

निर्दलीय नेताओंके सम्मेलनमें पारित प्रस्ताव[1]

१४ मार्च, १९४१

ब्रिटेनको अपने वीरतापूर्ण संघर्षमें जो मुश्किलें उठानी पड़ रही हैं भारतको जहाँ उनसे लाभ नहीं उठाना चाहिए, वहाँ सम्मेलन यह भी चाहता है कि भारतकी घरेलू समस्याओंको इतना तूल न दिया जाये जो भारतके लिए अहितकर हो। यह सम्मेलन वर्तमान गतिरोधकी समाप्तिकी खातिर पहले कदमके रूपमें और एक स्थायी संविधान लागू न होने तक इस चीजपर जोर देना चाहता है कि गवर्नर-जनरलकी कार्यकारिणी परिषद्के पुनर्गठनकी तुरन्त आवश्यकता है।

सम्मेलनके विचारसे वर्त्तमान [कार्यकारिणी] परिषद्, जिसमें महामान्य वाइसराय तथा महामान्य कमान्डर-इन-चीफके अलावा इंडियन सिविल सर्विसके तीन यूरोपीय सदस्य हैं और दो गैर-सरकारी तथा एक इंडियन सिविल सर्विसका — इस प्रकार तीन भारतीय सदस्य हैं, संकटकी इस घड़ीमें भारतके युद्ध-प्रयत्नोंको संगठित करने तथा उनका निर्देशन करनेकी दृष्टिसे न तो उपयुक्त है और न पर्याप्त रूपसे प्रातिनिधिक ही है। यह सम्मेलन इस बातके लिए उत्सुक है कि भारतकी प्रतिरक्षाको एक ठोस आधार प्रदान किया जाये और इस महान देशके जान व मालके साधनोंका न केवल अपने देशकी सीमाओंकी रक्षाके लिए, बल्कि भारतके सर्वोच्च हितोंके अनुरूप ब्रिटेनवासियोंकी भी यथासम्भव अधिकसे-अधिक सहायता करनेके लिए ज्यादासे-ज्यादा लाभप्रद उपयोग किया जाये।

उपरोक्त कारणोंसे इस सम्मेलनकी राय है कि समूची कार्यकारिणी परिषद् ऐसे गैर-सरकारी भारतीयोंकी होनी चाहिए जो देशके सार्वजनिक जीवनके महत्त्वपूर्ण क्षेत्रोंसे लिये गये हों। स्वाभाविक रूपसे इसका अर्थ यह होगा कि सभी विभाग, जिनमें वित्त तथा प्रतिरक्षा जैसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विभाग भी शामिल हैं, भारतीयोंको सौंप दिये जायें।

सम्मेलनको इस बातपर कोई आपत्ति नहीं है कि युद्धके दौरान यह पुनर्गठित केन्द्रीय सरकार ताजके प्रति जिम्मेदार रहेगी, और जहाँतक प्रतिरक्षाका सवाल है,

[1] देखिए पृ० ४३२।

देशकी प्रतिरक्षा सेनाके कार्यकारी प्रमुखके रूपमें कमान्डर-इन-चीफकी स्थिति जो है, वही रहेगी। साथ ही सम्मेलनकी यह पुख्ता राय है कि पुनर्गठित सरकारको विभागीय अध्यक्षोंका एक समूह मात्र नहीं होना चाहिए, बल्कि उसे नीतिविषयक सभी महत्त्वपूर्ण मामलोंको संयुक्त और सामूहिक उत्तरदायित्वके आधारपर निपटाना चाहिए। सभी अन्तर्साम्राज्यीय और अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंके सम्बन्धमें पुनर्गठित सरकारको औपनिवेशिक दर्जा प्राप्त सरकारोंके समान ही माना जाना चाहिए।

सम्मेलनकी यह भी राय है कि पुनर्गठित केन्द्रीय सरकार अपना काम सुचारु रूपसे कर सके इसके लिए एक अनुकूल वातावरण तैयार करनेकी दृष्टिसे यह आवश्यक है कि सरकारके पुनर्गठनके साथ ही साथ सम्राटकी सरकार इस बातकी घोषणा भी कर दे कि युद्ध समाप्त होनेके बाद एक निश्चित अवधिके अन्दर-अन्दर भारत वैसी ही स्वतन्त्रताका उपभोग करने लगेगा जैसी कि ब्रिटेन और औपनिवेशिक दर्जा प्राप्त देश कर रहे हैं, ताकि सम्राटकी सरकारके इरादोंकी सचाईके बारेमें इस देशकी जनताके मनमें जो सन्देह और शंकाएँ हैं वे दूर हो जायें।

यह सम्मेलन अपने अध्यक्ष राइट ऑनरेबिल सर तेजबहादुर सप्रूको अधिकार प्रदान करता है कि वे इस प्रस्तावके मुद्दोंको महामान्य वाइसराय तथा भारतमन्त्रीतक पहुँचा दें और इसके उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए अन्य आवश्यक कदम उठायें।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन एनुअल रजिस्टर, खण्ड १, पृ० ३०७-८

परिशिष्ट १४

सर रिचर्ड टोटेनहमका पत्र महादेव देसाईको[1]

गोपनीय

गृह विभाग, नई दिल्ली
२७ मार्च, १९४१

प्रिय श्री महादेव देसाई,

श्री डेज्मंड यंगने 'हरिजन' के प्रकाशनके सम्बन्धमें आपके साथ हुआ अपना पत्र-व्यवहार[2] मुझे दिखाया है। मेरे खयालसे यदि मैं भारत सरकारकी स्थिति स्पष्ट कर दूँ तो यह सुविधाजनक होगा। पहली बात तो यह है कि सरकारके प्रकाशन न करनेकी सलाह देनेका प्रश्न ही नहीं उठता। 'हरिजन' का प्रकाशन फिर शुरू किया जाये अथवा नहीं, इसका निर्णय वास्तवमें स्वयं पूरी तरह श्री

१. देखिए पृ० ४४७, ४५० और ४८९।
२. देखिए परिशिष्ट १२।

गांधीके हाथमें है। यह एक ऐसा मामला है जिसमें किसी भी प्रकारका प्रभाव डालने में सरकारकी कोई दिलचस्पी नहीं है। दूसरी बात, आप भारत प्रतिरक्षा कानूनकी उन मर्यादाओंसे बेशक अवगत होंगे जिनका उल्लंघन करनेवाले समाचार और टिप्पणियोंको प्रकाशित करने पर कानूनी कार्रवाई की जा सकती है। मुझे विश्वास है कि यदि मैं आपसे अत्यन्त मित्रतापूर्वक यह कहूँ कि इस कानूनका व्यापक रूपसे अमल जरूरी है, तो इससे आप मुझे गलत नहीं समझेंगे। फिर भी, मुझे आपके पत्र-व्यवहारपर से यह समझकर खुशी होती है कि यदि श्री गांधी वास्तवमें प्रकाशन पुनः चालू करने का फैसला करेंगे तो वह सरकारको उलझनमें डालने की नहीं, बल्कि उसकी मदद करने की आशासे करेंगे।

हृदयसे आपका,
रि० टोटेनहम

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२९४)से

परिशिष्ट १५

आर० एस० रुइकरके साथ गांधीजीकी बातचीत[1]

[३० मार्च, १९४१ या उसके पूर्व][2]

गांधीजी: क्या मैं आपको अपना बचाव पेश करने और अपीलमें रिहा होने पर बधाई दे सकता हूँ?

रुइकर: आपके और श्रीयुत सुभाष बोसके बीच बुनियादी मतभेद क्या है, मैं समझ नहीं पाया हूँ।

गां०: श्री बोसने मुझे जो पहला पत्र लिखा, क्या उससे वह स्पष्ट नहीं हो जाता?

रु०: नहीं, मुझे तो स्पष्ट नहीं होता।

गां०: बुनियादी मतभेद अहिंसाके विषयमें है।

रु०: जहाँतक वर्त्तमान संघर्षका प्रश्न है, श्रीयुत बोस तथा फॉरवर्ड ब्लॉक दोनों ही इस बातको मानते हैं कि उसे अहिंसात्मक रूपसे चलाना होगा।

गां०: नहीं, अहिंसाका अर्थ है कि अहिंसाके प्रतीकमें भी आपका विश्वास हो, वह प्रतीक है — चरखा, हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यता-निवारण।

१. देखिए पृ० ४७६।

२. साधन-सूत्रमें इसे "**हिन्दुस्तान स्टैन्डर्ड,** कलकत्ताके सेवाग्राम-स्थित विशेष संवाददाता द्वारा ३० मार्च, १९४१ को भेजा गया एक समाचार" बताया गया है।

रु० : जहाँतक अन्तिम दो बातोंका सवाल है, हमारा विश्वास उनमें है।

गां० : नहीं, अहिंसाका असली प्रतीक है चरखा, और श्रीयुत बोस उसकी खिल्ली उड़ाते हैं।

रु० : पण्डित जवाहरलाल और मौलाना आजादके बारेमें आप क्या कहेंगे?

गां० : लेकिन पण्डित जवाहरलाल मेरे द्वारा निर्धारित सभी शर्तोंको मानने को तैयार हो गये हैं। जब उन्होंने सहमत होने के बाद अपनी स्वीकृति भिजवा दी, तब ही मैंने उन्हें दूसरा सत्याग्रही बनने की अनुमति प्रदान की। अभी भी वे जेलसे खबर भेजते रहते हैं कि वे नियमित रूपसे कताई कर रहे हैं। अतः उनकी चरखेमें आस्था है, कमसे-कम जहाँतक वर्तमान संघर्षका सम्बन्ध है वहाँतक तो है ही।

रु० : मान लीजिए, एक व्यक्तिकी अहिंसामें आस्था है और वह हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा छुआछूत-निवारणके लिए कार्य करने को तैयार हो, लेकिन चरखेमें उसका विश्वास न हो, तो क्या आप यह कहेंगे कि उसके और आपके बीच यह बुनियादी मतभेद है?

गां० : नहीं, यदि मैं सेनाका जनरल हूँ, तो अपना प्रतीक मैं स्वयं चुनूँगा। और जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, चरखा ही अहिंसाका प्रतीक है।

रु० : गांधीजी, आपका अहिंसाका दर्शन एक विश्व-दर्शन और विश्व-नीति है। क्या आप हिन्दू-मुस्लिम एकताको अमेरिका या इंग्लैंडमें भी एक प्रतीकके रूपमें प्रस्तुत करेंगे?

गां० : नहीं, स्पष्टतः ऐसा नहीं हो सकता। जहाँतक भारतका सम्बन्ध है, अहिंसाका प्रतीक चरखा है और जो सेनामें शामिल होना चाहता है, उसे सेनापतिकी शर्तें माननी ही पड़ेंगी।

रु० : महात्माजी, क्या आप मुस्लिम लीगके साथ कभी-न-कभी कोई समझौता हो जाने की बात नहीं सोचते?

गां० : हाँ।

रु० : क्या आप आशा रखते हैं कि मुस्लिम लीग चरखेको अहिंसाके प्रतीक-के रूपमें स्वीकार कर लेगी, और आप उनके साथ सहयोग करेंगे?

गां० : नहीं।

रु० : आप किस शर्तपर लीगके साथ समझौता करेंगे?

गां० : ऐसे समान आधारोंपर जिनपर हम एकसाथ कार्य कर सकें।

रु० : क्या आप मेरी इस बातसे सहमत नहीं हैं कि मुस्लिम लीगकी अपेक्षा श्रीयुत सुभाष बोस तथा फॉरवर्ड ब्लॉकके साथ समझौता करने के लिए समान आधार अधिक है?

गां० : हाँ, मैं यह मानता हूँ कि लीगकी अपेक्षा श्रीयुत बोस और मेरे बीच समझौतेके अधिक समान आधार हैं। लेकिन चूँकि श्रीयुत बोस कांग्रेसमें रहकर कार्य करने पर जोर देते हैं, अतः मैं उनके साथ कार्य नहीं कर सकता। यदि वे

कांग्रेससे बाहर चले जाते हैं, तो हमारे बीच समझौतेके और अधिक समान आधार हो जायेंगे।

रु० : क्या हम यह समझें कि श्रीयुत सुभाष बोसके साथ सहयोगकी आशा केवल तभी की जा सकती है जब वे कांग्रेससे बाहर चले जायें?

गां० : हां, मैं उन्हें एक महान पुरुष मानता हूँ और उनकी प्रशंसा करता हूँ, और यदि वे कांग्रसमें रहने के बजाय कांग्रेससे बाहर चले जाते हैं, तो उनके साथ सहयोगके अवसर कहीं अधिक होंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]

फ्री प्रेस जर्नल, ४-४-१९४१

१. गांधीजी ने बादमें कहा था कि यह रिपोर्ट "एक मैत्रीपूर्ण बातचीतकी शरारतन तोड़-मरोड़कर पेश की गई" रिपोर्ट है; देखिए पृ० ४७६-७७।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, अहमदाबाद: पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय, जहाँ गांधीजी से सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं; देखिए खण्ड १, पृ० ३५५।

नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

म्युनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद।

राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय और पुस्तकालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय; देखिए खण्ड १, पृ० ३५५।

राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली।

विश्वभारती, शान्तिनिकेतन।

'टाइम्स ऑफ इंडिया': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'फ्री प्रेस जर्नल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'भावनगर समाचार': भावनगरसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'लीडर': इलाहाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'सर्वोदय': वर्धासे प्रकाशित हिन्दी मासिक; सम्पादक: काका कालेलकर और दादा धर्माधिकारी।

'हरिजन' (१९३३-५६): हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधान और गांधीजी की देखरेख में प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'हरिजनबन्धु' (१९३३-५६): हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधान और गांधीजी की देखरेखमें प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'हरिजन सेवक' (१९३३-५६): हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधान और गांधीजी की देखरेखमें प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक।

'हितवाद': नागपुरसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

प्यारेलाल पेपर्स: नई दिल्लीमें प्यारेलालके पास उपलब्ध कागजात।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी: स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित।

विकासगृहकी रिपोर्ट, १९३९-४१ (गुजराती)।

'इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४१', खण्ड १ (अंग्रेजी): सम्पादक: नृपेन्द्रनाथ मित्र, द एनुअल रजिस्टर ऑफिस, कलकत्ता।

'गांधी और राजस्थान': सम्पादक: शोभालाल गुप्त, राजस्थान राज्य गांधी स्मारक निधि, भीलवाड़ा, राजस्थान, १९६९।

'गांधी शताब्दी स्मारक ग्रन्थ — युग पुरुष': सम्पादक: ताराचन्द वर्मा, चिन्मय प्रकाशन, जयपुर।

'टू यिअर्स ऑफ वर्क' (अंग्रेजी): दूसरे बुनियादी तालीमी सम्मेलन, जामियानगर, दिल्ली की रिपोर्ट, अप्रैल, १९४१, हिन्दुस्तानी तालीमी संघ।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद': सम्पादक: काकासाहब कालेलकर, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली, १९५३।

'पार्टिंग ऑफ द वेज़' (अंग्रेजी): जवाहरलाल नेहरू, जे० बी० कृपलानी, महामन्त्री, अ० भा० कां० कमेटी, स्वराज भवन, इलाहाबाद, १९४१।

'बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी): सम्पादक: जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५८।

'बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने' (गुजराती): सम्पादिका: मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती): सम्पादिका: मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५९।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापू — कन्वर्सेशन्स एण्ड कॉरेस्पोंडेन्स विद महात्मा गांधी' (अंग्रेजी): एफ० मेरी बार, इंटरनेशनल बुक हाउस लिमिटेड, बम्बई, १९४९।

'बापूकी छायामें': बलवन्तसिंह, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४७।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष': हीरालाल शर्मा, ईश्वर शरण आश्रम मुद्रणालय, प्रयाग, १९५७।

'बापूके पत्र — ८: बीबी अमतुस्सलामके नाम': सम्पादक: काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६३।

'बापूज लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी): सम्पादक: मीराबहन, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९४९।

'मध्यप्रदेश और गांधी': सूचना और प्रकाशन निदेशालय, मध्यप्रदेश, १९६९।

'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी' खण्ड ६ (अंग्रेजी): डी० जी० तेंडुलकर, विट्ठलभाई के० झवेरी और डी० जी० तेंडुलकर, बम्बई, १९५२।

'स्टेटस ऑफ इंडियन प्रिंसिज' (अंग्रेजी): प्यारेलाल, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९४१।

'हिन्दू अमेरिका?' (अंग्रेजी): सम्पादक: क० मा० मुन्शी और आर० आर० दिवाकर, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, १९६०।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१२ सितम्बर, १९४० – १५ अप्रैल, १९४१ तक)

१२ सितम्बर : गांधीजी बम्बई पहुँचे; अबुल कलाम आजाद, सरदार पटेल, पं० नेहरू और कांग्रेस कार्य-समितिके अन्य सदस्योंके साथ अनौपचारिक बातचीत की।

१३ सितम्बर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए।

१५ और १६ सितम्बर : अ० भा० कां० क० को बैठकमें भाषण दिया।

१७ सितम्बर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए।

१८ सितम्बर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया; वर्धाके लिए रवाना हो गये।

१९ सितम्बर : वर्धा पहुँचे, सेवाग्राम पैदल गये।

२० सितम्बर : अ० भा० कां० क० के प्रस्तावके अनुसार कांग्रेसके भावी कार्यक्रमके बारेमें गांधीजीके साथ चर्चा करनेके लिए च० राजगोपालाचारी वर्धा पहुँचे।

२५ सितम्बर : महादेव देसाई और प्यारेलालके साथ गांधीजी शिमलाके लिए रवाना हो गये।

२६ सितम्बर : सुबह दिल्ली पहुँचे; शामको शिमलाके लिए रवाना हो गये।

२७ सितम्बर : शिमलामें वाइसरायसे भेंट की।

२९ सितम्बर : हरिजन नेताओंसे भेंट की।

३० सितम्बर : वाइसरायसे भेंट की; दिल्लीके लिए रवाना हो गये।

१ अक्टूबर : दिल्लीमें भूलाभाई देसाई और जे० बी० कृपलानीके साथ लम्बी बातचीत की; अपने ७२वें जन्मदिवसके उपलक्ष्यमें हरिजन कालोनीमें आयोजित कार्यक्रममें शामिल हुए; वर्धाके लिए रवाना हो गये।

२ अक्टूबर : सेवाग्राममें अपने जन्मदिवसके उपलक्ष्यमें आयोजित सभामें भाषण दिया।

१० अक्टूबर : प्रफुल्लचन्द्र घोषके साथ बातचीत की।

११ अक्टूबर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए।

१२ और १३ अक्टूबर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया।

१३ अक्टूबर : कांग्रेस कार्य-समिति द्वारा गांधीजीको व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा की योजना स्वीकृत। गांधीजी विनोबा भावेसे बातचीत करनेके लिए पवनार पहुँचे।

१५ अक्टूबर : सेवाग्राममें जारी किये गये वक्तव्यमें कहा कि विनोबा भावे व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलनको आरम्भ करनेवाले पहले सत्याग्रही होंगे।

१७ अक्टूबर : पवनारमें विनोबा भावेने युद्ध-विरोधी भाषण देकर व्यक्तिगत सत्याग्रहकी शुरुआत की।

१८ अक्टूबर : पून.के जिलाधीशने 'हरिजन' तथा सम्बद्ध साप्ताहिकोंके सम्पादकोंको नोटिस जारी किया जिसमें उनसे विनोबा भावेके सत्याग्रहसे सम्बन्धित सभी समाचारोंको प्रकाशनसे पूर्व दिल्लीमें चीफ प्रेस एडवाइजरको भेजे जानेका निर्देश दिया गया था।

२१ अक्टूबर : भारत सुरक्षा अधिनियमके अन्तर्गत विनोवा भावेको गिरफ्तार कर लिया गया।

गांधीजीने एक वक्तव्य द्वारा कांग्रेसियोंसे अगला कदम उठानेमें जल्दबाजी न करनेका अनुरोध किया।

२४ अक्टूबर : 'हरिजन', 'हरिजनवन्धु' और 'हरिजन सेवक' को अस्थायी रूपसे बन्द किये जानेकी घोषणा की।

३० अक्टूबर : जवाहरलाल नेहरूके साथ सात घंटे तक बातचीत की।

४ नवम्बर : वाइसरायको अपने उपवास करनेकी इच्छा की सूचना दी।

५ नवम्बर : वर्धामें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए।

६ नवम्बर : वर्धामें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया।

कांग्रेस द्वारा व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलनकी मियाद बढ़ानेके लिए राजी होने पर अपने प्रस्तावित उपवासका विचार छोड़ दिया।

७ नवम्बर : कांग्रेस कार्य समिति की बैठकमें शामिल हुए।

८ नवम्बर : कांग्रेस कार्य समितिकी बैठकमें भाग लिया।

१३ नवम्बर : लगभग १५०० व्यक्तिगत सत्याग्रहियोंकी एक सूची तैयार की।

१५ नवम्बर : श्रीलंकाके मन्त्री सेनानायकेको भेंट दी।

१६ नवम्बर : अमतुस्सलामको भेजे तारमें कहा कि "मै सिन्धमें सविनय अवज्ञा बन्द कर रहा हूँ"।

१७ नवम्बर : वल्लभभाई पटेलकी गिरफ्तारी।

१८ नवम्बर : 'स्टेट्समैन' के आर्थर मुअरने गांधीजीसे भेंट की।

२३ नवम्बर : गांधीजीने चीन सरकारके युआन परीक्षा-विभागके अध्यक्ष माई-चिताओ-के साथ बातचीत की।

२४ नवम्बरके पूर्व : अखिल भारतीय छात्र संघके महासचिव श्री एम० एल० शाहको भेंट दी।

२९ नवम्बर : समाचारपत्रोंको दिये गये वक्तव्यमें गांधीजीने विद्यार्थियोंको राष्ट्रीय हेतुके लिए हड़तालोंका सहारा न लेकर व्यक्तिगत ढंगसे अपनी सहानुभूति व्यक्त करने पर जोर दिया।

३ दिसम्बरके पूर्व : तार द्वारा राजेन्द्र प्रसादको सविनय अवज्ञा आन्दोलनसे सम्बन्धित प्रदर्शनोंको रोकनेका निर्देश दिया।

५ दिसम्बर : सुभाषचन्द्र बोस की रिहाई।

६ दिसम्बर या उसके पूर्व : बरदा प्रसन्न पाइनको भेजे तारमें गांधीजीने सुभाषचन्द्र बोस और शरतचन्द्र बोस पर लगाये प्रतिबन्ध हटाये जानेकी सिफारिश करनेमें अपनी असमर्थता प्रकट की।

६ दिसम्बर : समाचारपत्रोंको दिये वक्तव्यमें कहा कि सम्पूरणसिंहका दृष्टान्त दूसरे लोगोंके लिए इस बातकी चेतावनी है कि "थोथे और अर्थहीन अनुशासन" का कोई मूल्य नहीं है।

७ दिसम्बर : समाचारपत्रोंको दिये वक्तव्यमें बम्बईकी जनतासे अपील की कि वह "खेलकूद सम्बन्धी नियमावलीमें सुधार कर ले और जातिके आधार पर खेले जानेवाले मैचोंको समाप्त कर दे"।

१६ दिसम्बरके पूर्व : सिन्धके एक राजनीतिक कार्यकर्त्ता, हंसराज राधारको लिखे पत्रमें राज्य कांग्रेसको "व्यक्तिगत या सामूहिक किसी भी प्रकारकी सविनय अवज्ञा" करनेसे मना किया।

१७ दिसम्बर : २४ दिसम्बरसे ४ जनवरी तक सत्याग्रह स्थगित करनेके निर्देश दिये।

२० दिसम्बर : समाचारपत्रोंको दिये वक्तव्यमें जनतासे "सम्पूरणसिंहके आचरणके सम्बन्धमें कोई निश्चित मत" न बनानेका अनुरोध किया।

२१ दिसम्बर : अखिल भारतीय छात्र-सम्मेलनमें आये मद्रासके प्रतिनिधियोंको भेंट दी।

२४ दिसम्बर : हिटलरको लिखे पत्रमें उनसे "मानवताके नाम पर युद्ध रोक देनेकी" अपील की।

२५ दिसम्बरके पूर्व : दुनीचन्दको भेजे पत्रमें सत्याग्रह करनेवालोंके लिए शर्तें बताईं।

२७ दिसम्बर : अकाली नेता मास्टर तारासिंहको बातचीतके लिए सेवाग्राम बुलाया। (मास्टर तारासिंहने अहिंसाके प्रश्न पर अपने तथा गांधीजीके बीच लम्बे पत्र-व्यवहारके बाद कांग्रेससे इस्तीफा दे दिया था।)

२९ दिसम्बर : सुभाषचन्द्र बोसको पत्रमें लिखा : "रही बात तुम्हारे ब्लॉक द्वारा सविनय अवज्ञामें शामिल होनेकी तो मेरा खयाल है कि तुम्हारे और मेरे विचारोंमें मौलिक रूपसे जो भेद है उसे देखते ऐसा सम्भव नहीं है।"

५ जनवरी : २८ दिसम्बरसे ४ जनवरी तकके अन्तरालके बाद सत्याग्रह पुनः आरम्भ किया गया।

१० जनवरी : सेवाग्राममें गांधीजीने सत्याग्रहियोंसे कहा कि "जिस प्रकार सत्याग्रही से कारावासका स्वागत करनेकी अपेक्षा रखी जाती है उसी प्रकार उससे अन्य प्रकारके दण्डकी, जैसे जुर्मानेकी भी, अपेक्षा की जाती है"।

१० जनवरी या उसके पश्चात् : पंजाबके कांग्रेसियोंको भेजे सन्देशमें कहा कि "वे अहिंसाके गुणमें जीवन्त आस्था रखें तो वे सब सत्याग्रहके लिए चुन लिये जायेंगे।"

११ जनवरी : स्वतन्त्रता दिवस अर्थात् २६ जनवरीके दिन सविनय अवज्ञा न करनेके लिए निर्देश दिये।

प्रो० आर० कूपलैंडको भेंट दी।

१२ जनवरी या उसके पूर्व : अब्दुल गफ्फार खाँको लिखे पत्रमें गांधीजीने लाल कुर्ती आन्दोलनकारियोंको सीमाप्रान्तमें सत्याग्रह करनेकी इजाजत दे दी।

१२ जनवरी : सत्याग्रहियोंको दिये गये निर्देशोंमें घोषणा की कि अबुल कलाम आजाद का कोई उत्तराधिकारी नहीं होगा तथा कहा : "... अल्पकालीन कारावास का दण्ड पानेवाले सभी सत्याग्रहियोंको समझ रखना चाहिए कि हर बार रिहाई होते ही उन्हें फिरसे सत्याग्रह करने जाना है जब तक कि संघर्षका अन्त न हो जाये।"

१७ जनवरी : सेवाग्राममें विनोबा भावेको आशीर्वाद दिया जिन्होंने १५ जनवरीको अपनी रिहाईके बाद दुबारा सविनय अवज्ञा आरम्भ की थी।

सुभाषचन्द्र बोस कलकत्तामें एलजिन रोड स्थित अपने मकानसे लापता हो गये।

२३ जनवरी के पूर्व : गुजरात कालेजके विद्यार्थियोंको भेजे सन्देशमें गांधीजीने कहा कि यदि बातचीतसे उन्हें न्याय प्राप्त नहीं होता है तो उन्हें हड़ताल करने का अधिकार है।

२४ जनवरी : कांग्रेसियोंको "छोटी-छोटी बातों" के सम्बन्धमें भी आचारके नियमोंका पालन करनेकी सलाह दी।

२८ जनवरी : समाचारपत्रोंके सम्पादकोंको लिखे पत्रमें निवेदन किया कि "वे अनुचित प्रतिबन्धोंकी परवाह न करके सत्याग्रह सम्बन्धी सभी समाचारोंको पूरा-पूरा छापें और इस तरह अपनी स्वतन्त्रताका आग्रह करें"।

१ फरवरीके पूर्व : मनोरंजन चौधरीको लिखे पत्रमें बंगालके हिन्दू महासभाई नेताओंके सुझावानुसार बंगालके मुस्लिम लोग मन्त्रिमण्डलके विरुद्ध सत्याग्रह आन्दोलन का नेतृत्व करनेसे इन्कार कर दिया।

४ फरवरी : सरोजिनी नायडू और जे० बी० कृपलानीसे बातचीत की।

९ फरवरी : तेज बहादुर सप्रूको भेजे पत्रमें मु० अ० जिन्नाको तबतक पत्र लिखनेसे इन्कार कर दिया तबतक उन्हें यह पता नहीं चल जाता कि "वे किसी समझौते पर आना चाहते हैं"।

१० फरवरी : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' को भेजे पत्रमें लिखा : "आपके अविश्वासके बावजूद, मैं अपने इस विश्वास पर दृढ़ हूँ कि पतित से पतित व्यक्ति पर भी अहिंसाका अनुकूल प्रभाव पड़ सकता है।"

१३ फरवरी : पंजाबके कांग्रेसियोंके नाम सन्देशमें रचनात्मक कार्यके महत्व पर जोर दिया।

१६ फरवरी : मुकुन्दलाल सरकारको लिखे पत्रमें सुभाषचन्द्र बोसके साथ अपने मतभेदोंको "बहुत महत्वपूर्ण और बुनियादी" बताया, और लिखा : "हिंसा द्वारा प्राप्त हुई स्वतन्त्रताके अन्तस्तत्त्व अहिंसा द्वारा प्राप्त स्वतन्त्रताके अन्तस्तत्त्वोंसे निश्चय ही भिन्न होंगे"।

तेजबहादुर सप्रूके नाम पत्रमें मु० अ० जिन्नासे मिलनेमें अपनी असमर्थता प्रकट की।

२० फरवरी या उसके पूर्व : पी० वी० नायडूको भेजे पत्रमें लिखा कि "केन्द्रीय सरकारके पुनर्गठनमें" कांग्रेस द्वारा भाग लेनेका "प्रश्न तब तक नहीं उठता जब तक कांग्रेसकी माँग पूरी नहीं कर दी जाती।"

२४ फरवरी या उसके पूर्व : कलकत्ताके सत्याग्रहियोंको भेंट दी।

२६ फरवरी : गांधीजीने विजयानगरमके महाराजकुमार द्वारा सत्याग्रह प्रतिज्ञा की शर्तोंको पूरा न करनेकी स्थितिमें सत्याग्रह करने देनेकी अनुमति नहीं दी।

२७ फरवरी : इलाहाबादमें। आनन्द भवनमें ठहरे।

२८ फरवरी : हरिजन आश्रम देखने गये; कमला नेहरू स्मारक अस्पतालका उद्घाटन किया; विधान सभासे बंगाल दलके त्यागपत्रके प्रश्न पर बंगालके कांग्रेसी नेताओंके साथ बातचीत की। गढ़वालके हरिजनोंकी ओरसे आये शिष्टमण्डलसे भेंट की।

महादेव देसाईके साथ तेजबहादुर सप्रूसे भेंट की; बादमें मदनमोहन मालवीयसे भेंट की।

१ मार्च : संयुक्त प्रान्त छात्र संघकी सभामें भाषण दिया। नैनी सैन्ट्रल जेलमें विजयलक्ष्मी पण्डित और अबुल कलाम आजादसे भेंट की। सुबह ११ बजे वर्धाके लिए रवाना हो गये।

२ मार्च : सेवाग्राम पहुँचे।

४ मार्च : समाचारपत्रोंको दिये वक्तव्यमें गांधीजीने इलाहाबादमें तेजबहादुर सप्रू और दूसरे लोगोंके साथ हुई भेंटवार्ताके बारेमें "पत्रकार जो कल्पनाके घोड़े दौड़ा रहे हैं" उसके विरुद्ध जनताको आगाह किया।

७ मार्च : तेजबहादुर सप्रूको लिखे पत्रमें मु० अ० जिन्नासे मिलनेका सुझाव तो मान लिया लेकिन कहा कि "मुझे तो यह भय है कि साम्प्रदायिक समझौते का उचित समय अभी नहीं आया है"।

सिन्धमें खान बहादुर अल्लाबक्शको प्रधानमंत्री पदकी शपथ दिलाई गई।

१० मार्चके पूर्व : गांधीजीने आंध्र और तमिलनाडु कांग्रेस कमेटियोंको निर्देश दिये कि वे मद्रास शहरमें सत्याग्रहमें भाग लेनेके निमित्त विभिन्न जिलोंसे आदमी न बुलायें।

११ मार्चके पूर्व : बनारस सेन्ट्रल जेलमें सत्याग्रही कैदी शिब्बनलाल सक्सेनाको तार द्वारा भूख-हड़ताल छोड़नेके लिए कहा।

१३-१६ मार्च : बम्बईमें तेजबहादुर सप्रूकी अध्यक्षतामें निर्दलीय नेता सम्मेलन हुआ।

१६ मार्च : जवाहरलाल नेहरूके लेख "पार्टिंग आफ द वेज़"की प्रस्तावनामें गांधीजीने लिखा कि लेखको पढ़कर पाठक इसी अनिवार्य निष्कर्ष पर पहुँचता है कि स्वतन्त्रता सिवाय विशुद्ध अहिंसाके और किसी उपायसे प्राप्त नहीं की जा सकती।

१८ मार्च : सी० एफ० एन्ड्रयूज स्मारक कोषके लिए अपील जारी की।

२१ मार्च : कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंसे अपील करते हुए इस बातकी आशा व्यक्त की कि वे अप्रैलमें राष्ट्रीय सप्ताहके दौरान अपना समय रचनात्मक कार्यक्रममें लगायेंगे।

२३ मार्चके पूर्व : मु० र० जयकरके नाम सन्देशमें कहा कि "पुराने मित्रोंसे मिलने में तो मुझे हमेशा खुशी ही होगी। किन्तु . . . कार्य-समितिके सदस्योंसे सलाह किये बिना मैं उन्हें कोई आश्वासन नहीं दे सकता"।

२९ मार्च : सरकारकी ओरसे पत्र आनेके कारण गांधीजीने 'हरिजन' के पुनर्प्रकाशन का विचार बदल दिया।

'सर्वोदय' में गांधीजीने इस बात पर जोर दिया कि "इस लम्बी और विकट लड़ाईमें केवल गुणका ही महत्त्व रहेगा, संख्या या परिणामका नहीं"।

१ अप्रैल : सेवाग्राममें आश्रमवासियों द्वारा निजी डायरी रखनेकी व्यवस्थाका आरम्भ किया गया।

६ अप्रैल : बुनियादी तालीमी सम्मेलनको दिये गये सन्देशमें कहा कि "हमारा यह प्रयोग सम्यक प्रयोग हो, इसके लिए यह जरूरी है कि इसे किसी जगह बिना किसी मिलावट या बाहरी हस्तक्षेपके चलाया जाये।"

७ अप्रैल : मैसूर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकके लिए दिये सन्देशमें कहा कि रचनात्मक कार्यक्रम "करोड़ों लोगोंके लिए अहिंसा पर आधारित स्वराज्यका सच्चा आधार है।"

तेजबहादुर सप्रूने दिल्लीमें वाइसरायसे भेंट की।

८ अप्रैल : समाचारपत्रोंको दिये गये वक्तव्यमें गांधीजीने कहा कि श्री रुइकर और सरकारके साथ हुई मेरी भेंटकी रिपोर्टमें "एक मैत्रीपूर्ण बातचीतको शरारतन तोड़-मरोड़कर पेश किया गया है"।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

ए

ख

छ

ज

प

फ

म

र

ल

ह

ज्ञ